इसी समय बाजू से कामटे की आवाज़ आई : " लाइट्स रेडी हैं, पुरी साहब । "

पुरी कुरसी को झटककर उठ खड़े हुए । " ओह ! लाइट्स रेडी हैं ! "

असिस्टंट कैमरामैन बैनर्जी ने गली में बैठे हुए कैलाश की ओर देखा । कैलाश ने मुस्कुराकर उसे ठेंगा दिखाया ।

पुरी ने प्रॉडक्शन मैनेजर दवे से कहा कि सरला देवी को सेट पर बुलवा भेजे । दवे ने सटपटाकर उत्तर दिया कि अभी वह स्टूडिओ ही नहीं पहुँची है । बस फिर क्या था, उबल तो रहे थे, उफन पड़े पुरी साहब :

" साढ़े दस बजनेवाले हैं और महारानी का पता नहीं ! कब आएँगी ! कब मेकअप करेंगी ! हीरोइन क्या हुई दर्दे सर हो गई यह बला मेरे लिए तो । लाइट्स ऑफ़ । " चुरुट फेंककर पुरी साहब धड़ाम-से कुरसी पर बैठ गए । इस बार कुरसी से कोई आवाज़ न निकली ।

कैमरामैन कामटे ने कहा : " लाइट्स ऑफ़ । "

फटाफट सब लाइट बंद हो गए और सेट पर अँधेरा छा गया ।

मोहन ने ५५५ सिगरेट का डिब्बा कैलाश के आगे बढ़ाया और सलमा ने कहा:

" हाँ, कैलाश, तुम वह कहानी बताने चले थे, पूरी करो उसे । "

" शुरू से ? "

" नहीं, जहाँ कल छोड़ी थी उसके बाद से। शुरू का हिस्सा मोहन को फिर कभी सुना देना । "

" अच्छा, सुनो, " कैलाश ने कहा । " हाँ — तो फिर — रात भर वकील साहब को नींद न आई । बिस्तर पर पड़े-पड़े वह करवटें बदलते रहे और उनके दिमाग़ में बस वही एक ख़याल उठता रहा, वही एक ख़याल उनके दिल को सताता रहा — मोहनी का ख़याल !.... आज से अठारह साल पहले, गर्मियों की उस निर्जन दुपहरी के सन्नाटे में, क़ानून की किताबों से लदी आलमारियों के पीछे, गर्द भरी गंदी दरी पर जिसे लिटाकर उन्होंने अपना मन शांत किया था — उसी मोहनी का ख़याल आज रात वकील साहब की नींद हराम किये हुए था... "

प्रॉडक्शन मैनेजर दवे ने दफ़्तर में जाकर *ग्रेट इंडिआ पिक्चर्स* के निर्माता और स्टूडिओ के मालिक, सेठ शांतिभाई देसाई, को जब सूचित किया कि सरला देवी के न आने से अब तक *रेशमी रूमाल* का शूटिंग शुरू न हो पाया है तो वह बहुत झल्लाया । देसाई देखने में तो इतना दुबला, पतला और मच्छर की तरह था, सूरत भी मच्छर की ही तरह थी, पर आवाज़ बड़ी बुलंद थी । जब वह ग़ुस्सा होता, चीखता, चिल्लाता तो दफ़्तर में ही नहीं, मेकअप रूम, म्युज़िकरूम, कैन्टीन और सुतार खाते तक में सन्नाटा छा जाता ।

"इस हिरविन की बच्ची ने तो हद कर दी," सेठ चीख रहा था। "अग्यारा बजे से पहले तो आती ही नई कबी। साड़ेअग्यारा बज रहे हैं। कब बनेंगा *रेसमी रूमाल!* कब खतम होंगा पिक्चर इंस तरे? .... मे *रेसमी रूमाल* का सूटिंग बंद कर दूंगा, इस्टूडिओ को ताला लगा दूंगा, पन इंस—इस कमबखत हिरविन के नाज मे नई उठा सकता! मे प्रोडयूसर नई हुआ, गुलाम हो गया इन आर्टिस्टों का! सुनो—जैसे ई सरला आए मेरे कू खबर देना। आज मे वो दुरुस्त करूँगा उसकू कि उसके होस ठिकाने आ जाएँगे। समजे?"

इसी समय सरला की गाड़ी का हॉर्न सुनाई पड़ा। सेठ शांतिभाई देसाई और दवे ने खिड़की के बाहर देखा और फिर एक दूसरे की ओर।

"सरला देवी की गाड़ी का हॉर्न है," दवे ने कहा।

सेठ शांतिभाई फ़ौरन अपनी रिवाल्विंग चेअर से उठ खड़ा हुआ, मानो कुरसी की सीट में लिपटी हुई ततैया नें उसकी चूतड़ में ज़ोर से काट खाया हो। धोती की लाँग ठीक करता हुआ वह दरवाज़े की ओर लपका।

बाहर, दालान का भारी भरकम फ़ौलादी फाटक खुला, गोरखे ने सलाम ठोंका और सफ़ेद रंग की लम्बी-चौड़ी नई कॅडिलेक ने बड़ी शान से अंदर प्रवेश किया। ठीक दफ़्तर और स्टूडिओ के बीच आकर गाड़ी रुक गई और सफ़ेद वर्दी में ड्राइवर बाहर निकला और पीछे का दरवाज़ा खोलने के लिए बढ़ ही रहा था कि सेठ शांतिभाई देसाई लपका और आगे बढ़कर उसने चट से गाड़ी का पिछला दरवाज़ा खोल दिया। मुस्कुराती हुई सरला देवी, रेशम की फूलदार बैंगनी रंग की साड़ी में लिपटी, बाहर निकली।

"नमस्ते, सेठ!"

"नमस्ते—नमस्ते—आइए, सरला देवी।"

"आज ज़रा देर हो गई। क्या करूँ, सुबह आँख ही नहीं खुली!"

सेठ शांतिभाई ने झुककर ज़मीन पर गिरा हुआ सरला का रूमाल उठाया और बड़ी विनय के साथ, तानकर मुस्कुराता और हें-हें करता हुआ, उसे रूमाल वापस देते हुए कहने लगा: "कोई वांदा नई। मे समजा देर कैसे हो गई। कहीं एक्सिडंट-वेक्सिडंट तो नई हुआ! बस एक कलाक से दफ्तर में वैठे-वैठे मे येच सोच रहा था। आइए—नमस्ते, बेनजी—नमस्ते, माँजी।"

सरला की मोटी-ताज़ी बहन बाहर निकली, उसके बाद बहनजी की तेरह साल की बिटिया निकली और उसके बाद बूढ़ी माँ पान का डिब्बा लिए बाहर आई। सामने की सीट पर से गोआनीज़ आया, रोज़ी, सरला का मेकअप बॉक्स लिए उतर आई। दफ़्तर के बरामदे में खड़े लोग सेठ की चापलूसी देखकर दंग थे।

"दवे," सेठ ने पुकारा।

"जी, सेठ साहब," बाज़ू में खड़े हुए दवे ने उत्तर दिया और सकपकाता आ

सरला को हाथ जोड़ता हुआ, वह सामने आया।

"मैडम कू ले जाव।"

"आइए, मैडम।"

दवे के साथ सरला देवी स्टूडिओ की ओर चल पड़ी। साथ में सरला का खान्दान भी चला। उसकी गोआनीज़ आया, रोज़ी, हाथ में मेकअप बॉक्स लिए स्टूडिओ के बराबर में बने हुए मेकअप रूम की ओर जाने लगी।

सेठ शांतिभाई देसाई, चप्पल घसीटता, अपने दफ़्तर में वापस लौट आया और प्याली में छोड़ी हुई चाय पीने लगा। चाय ठंडी हो चुकी थी, पर शांतिभाई पी ही गया। न पीता तो दो पैसे का व्यर्थ में घाटा जो हो जाता।

सेट पर सरला देवी के पहुँचते ही एक बिजली-सी दौड़ गई। बैठे हुए लोग उठ खड़े हुए, खड़े हुए लोग चलने-फिरने लगे, और जो अँधेरा-अँधेरा-सा था वह एकदम ही, दो-चार लाइट के ऑन हो जाने से, जगमग हो उठा; मानो व्याह-मंडप में सहसा दुलहन आ गई हो; या किसी वीरान स्टेशन पर, बड़ी प्रतीक्षा के बाद, मेलगाड़ी धड़धड़ाती आन पहुँची हो और उसने प्लैटफ़ॉर्म पर के यात्रियों व कुलियों में एक लहर-सी पैदा कर सर्वत्र हंगामा बरपा कर दिया हो।

डिरेक्टर पुरी कुरसी से अपने को छुड़ा रहे थे जब सरला ने कहा:

"नमस्ते, पुरी साहब!"

"आइए, आइए, सरला देवी, नमस्ते!"

"आप लाइटिंग कीजिए, मैं तब तक तैयार हो जाऊँगी।"

कैमरामैन कामटे अमरीकन पत्रिका *अमेरिकन सिनेमेटोग्राफ़र* देख रहा था जो बौखलाकर उठा और अपनी बौखलाहट दबाकर मुस्कुराता हुआ बोला: "लाइट्स तैयार हैं, मैडम!"

"ओह! अच्छा, मैंने कहा, पुरी साहब, होटल से चाय-वाय तो मँगवाइए, मैंने आज जल्दी में ब्रेकफ़ास्ट नहीं लिया।"

सेट की गली में बैठे हुए कैलाश ने सरला की ओर से सलमा की ओर देखा और उठ खड़ा हुआ।

"जल्दी में!" सलमा ने दबी ज़बान से व्यंग्यात्मक कहा।

पुरी साहब कह रहे थे: "देखो, बॉय, मैडम के लिए एक कप चाय बनाकर—"

परंतु सरला बीच में बोल पड़ी: "एक कप चाय, दो टोस्ट और एक ऑमलेट बनाकर जल्दी ले आओ।"

"जी, अभी लाया," कहता हुआ स्टूडिओ के होटल का छोकरा चला गया।

"दवे," सरला ने पुकारा।

"इस हिरविन की बच्ची ने तो हद कर दी," सेठ चीख़ रहा था। "अग्यारा बजे से पहले तो आती ही नई कबी। साड़ेअग्यारा बज रहे हैं। कब बनेंगा *रेसम रूमाल!* कब खतम होंगा पिक्चर इस तरे? .... मे *रेसमी रूमाल* का सूटिंग बंद कर दूँगा, इस्टूडिओ को ताला लगा दूँगा, पन इस—इस कमबखत हिरविन के नाज मे नई उठा सकता! मे प्रोड्यूसर नई हुआ, गुलाम हो गया इन आर्टिस्टों का! सुनो—जैसे ई सरला आए मेरे कू खबर देना। आज मे वो दुरुस्त करूँगा उसकू कि उसके होस ठिकाने आ जाएँगे। समजे?"

इसी समय सरला की गाड़ी का हॉर्न सुनाई पड़ा। सेठ शांतिभाई देसाई और दवे ने खिड़की के बाहर देखा और फिर एक दूसरे की ओर।

"सरला देवी की गाड़ी का हॉर्न है," दवे ने कहा।

सेठ शांतिभाई फ़ौरन अपनी रिवाल्विंग चेअर से उठ खड़ा हुआ, मानो कुरसी की सीट में लिपटी हुई ततैया ने उसकी चूतड़ में ज़ोर से काट खाया हो। धोती की लाँग ठीक करता हुआ वह दरवाज़े की ओर लपका।

बाहर, दालान का भारी भरकम फ़ौलादी फाटक खुला, गोरखे ने सलाम ठोंका, और सफ़ेद रंग की लम्बी-चौड़ी नई कॅडिलेक ने बड़ी शान से अंदर प्रवेश किया। ठीक दफ़्तर और स्टूडिओ के बीच आकर गाड़ी रुक गई और सफ़ेद वर्दी में ड्राइवर बाहर निकला और पीछे का दरवाज़ा खोलने के लिए बढ़ ही रहा था कि सेठ शांतिभाई देसाई लपका और आगे बढ़कर उसने चट से गाड़ी का पिछला दरवाज़ा खोल दिया। मुस्कुराती हुई सरला देवी, रेशम की फूलदार बैंगनी रंग की साड़ी में लिपटी, बाहर निकली।

"नमस्ते, सेठ!"

"नमस्ते—नमस्ते—आइए, सरला देवी।"

"आज ज़रा देर हो गई। क्या करूँ, सुबह आँख ही नहीं खुली!"

सेठ शांतिभाई ने झुककर ज़मीन पर गिरा हुआ सरला का रूमाल उठाया और बड़ी विनय के साथ, तानकर मुस्कुराता और हें-हें करता हुआ, उसे रूमाल वापस देते हुए कहने लगा: "कोई वांदा नई। मे समजा देर कैसे हो गई। कहीं एक्सिडंट-बेक्सिडंट तो नई हुआ! बस एक कलाक से दफ्तर में वैठे-वैठे मे येच सोच रहा था। आइए—नमस्ते, बेनजी—नमस्ते, माँजी।"

सरला की मोटी-ताज़ी बहन बाहर निकली, उसके बाद बहनजी की तेरह साल की बिटिया निकली और उसके बाद बूढ़ी माँ पान का डिब्बा लिए बाहर आई। सामने की सीट पर से गोआनीज़ आया, रोज़ी, सरला का मेकअप बॉक्स लिए उतर आई। दफ़्तर के बरामदे में खड़े लोग सेठ की चापलूसी देखकर दंग थे।

"दवे," सेठ ने पुकारा।

"जी, सेठ साहब," बाजू में खड़े हुए दवे ने उत्तर दिया और सकपकाता आ

सरला को हाथ जोड़ता हुआ, वह सामने आया।

"मैडम कू ले जाव।"

"आइए, मैडम।"

दवे के साथ सरला देवी स्टूडिओ की ओर चल पड़ी। साथ में सरला का खान्दान भी चला। उसकी गोआनीज़ आया, रोज़ी, हाथ में मेकअप बॉक्स लिए स्टूडिओ के बराबर में बने हुए मेकअप रूम की ओर जाने लगी।

सेठ शांतिभाई देसाई, चप्पल घसीटता, अपने दफ़्तर में वापस लौट आया और प्याली में छोड़ी हुई चाय पीने लगा। चाय ठंडी हो चुकी थी, पर शांतिभाई पी ही गया। न पीता तो दो पैसे का व्यर्थ में घाटा जो हो जाता।

~

सेट पर सरला देवी के पहुँचते ही एक बिजली-सी दौड़ गई। बैठे हुए लोग उठ खड़े हुए, खड़े हुए लोग चलने-फिरने लगे, और जो अँधेरा-अँधेरा-सा था वह एकदम ही, दो-चार लाइट के ऑन हो जाने से, जगमग हो उठा; मानो व्याह-मंडप में सहसा दुलहन आ गई हो; या किसी वीरान स्टेशन पर, बड़ी प्रतीक्षा के बाद, मेलगाड़ी धड़धड़ाती आन पहुँची हो और उसने प्लैटफ़ॉर्म पर के यात्रियों व कुलियों में एक लहर-सी पैदा कर सर्वत्र हंगामा बरपा कर दिया हो।

डिरेक्टर पुरी कुरसी से अपने को छुड़ा रहे थे जब सरला ने कहा:

"नमस्ते, पुरी साहब!"

"आइए, आइए, सरला देवी, नमस्ते!"

"आप लाइटिंग कीजिए, मैं तब तक तैयार हो जाऊँगी।"

कैमरामैन कामटे अमरीकन पत्रिका *अमेरिकन सिनेमेटोग्राफ़र* देख रहा था जो बौखलाकर उठा और अपनी बौखलाहट दबाकर मुस्कुराता हुआ बोला: "लाइट्स तैयार हैं, मैडम!"

"ओह! अच्छा, मैंने कहा, पुरी साहब, होटल से चाय-वाय तो मँगवाइए, मैंने आज जल्दी में ब्रेकफ़ास्ट नहीं लिया।"

सेट की गली में बैठे हुए कैलाश ने सरला की ओर से सलमा की ओर देखा और उठ खड़ा हुआ।

"जल्दी में!" सलमा ने दबी ज़बान से व्यंग्यात्मक कहा।

पुरी साहब कह रहे थे: "देखो, बॉय, मैडम के लिए एक कप चाय बनाकर—"

परंतु सरला बीच में बोल पड़ी: "एक कप चाय, दो टोस्ट और एक ऑमलेट बनाकर जल्दी ले आओ।"

"जी, अभी लाया," कहता हुआ स्टूडिओ के होटल का छोकरा चला गया।

"दवे," सरला ने पुकारा।

प्रॉडक्शन मैनेजर, दवे, लपककर आया। "जी, मैडम," उसने सविनय कहा।

"देखो, ऐय्यर से मेरा चेक माँग लाओ।"

"मैडम, अभी अकाउंटंट आया नहीं होगा।"

"तब तो ऐय्यर के आने तक रुकना होगा। बिना चेक के मूड नहीं आएगा—"

"आप ठीक बोलती, मैडम," सरला के पीछे अभी-अभी आकर खड़े हुए व्यक्ति ने कहा। "ये है आपका चेक।" उसने हाथ बढ़ाकर चेक सरला को थमा दिया।

सरला मुस्कुराने लगी। चेक की जाँच करने के बाद उसे अपने पर्स में रखती हुई वोली: "बड़ा भारी तिलक लगाया है! क्या रोज़ पूजा करते हो, ऐय्यर ?"

दवे हँस पड़ा। सरला ने मज़ाक़ अपनी शर्म मिटाने के लिए किया था। मज़ाक़ पर दवे का हँसना उसे अच्छा लगा। परंतु ऐय्यर को आग लग गई। पैसे देते समय न जाने क्यों हर अकाउंटंट की जान निकलने लगती है। उस पर सरला ने मज़ाक़ किया था।

"जी, मैडम," ऐय्यर ने कहा और फिर अकाउंटंट होने के नाते, बिना झिझक व बिना किसी संकोच के, बेधड़क ही बोल पड़ा: "और रोज भगवान से येच केहता हूँ कि हे भगवान, अगले जनम में मेरे कू भी फिलम की हीरोइन बनाना!"

दवे को बड़े ज़ोर की हँसी आई पर वह न हँसा। उसका हँसना सरला को अवश्य खल जाता और वह उसे कभी क्षमा न करती। सो वह न हँस सका, परंतु पास में खड़े हुए दो-चार लाइट्मैन हँस पड़े। सरला को ग़ुस्सा आया पर वह पी गई और स्वयं हँसने लगी और खिलखिलाकर हँसने लगी। शर्म मिटाने का यह सरल उपाय था।

सेट के बीचोबीच सरला और उसे घेरे लोगों को हँसता देख पुरी मन ही मन खीझ उठा। 'एक तो महारानी इतनी देर करके स्टूडिओ पहुँची और तिसपर देर से पहुँचने के लिए क्षमा माँगना तो दूर रहा, सेट पर खड़ी-खड़ी हँसी-मज़ाक़ कर रही है,' उसने सोचा।

"मैंने कहा, सरला देवी," पुरी ने मुस्कुराकर आगे बढ़ते हुए कहा, "आप जाकर मेकअप करें। मैं आपका ब्रेकफ़ास्ट वहीं मेकअप-रूम में भिजवा दूँगा।"

"ओ. के." सरला ने कहा और वह मेकअप करने चली गई। साथ में उसका खान्दान भी गया।

ऐय्यर नफ़रत से सरला को ताकता रहा जब तक कि वह दरवाज़े के बाहर न निकल गई, फिर वह स्वयं भी बाहर चला गया।

पुरी साहब फिर कुरसी में धँसकर नया चुरुट सुलगाने लगे ही थे कि उन्होंने देखा गली में से सलमा चली आ रही थी। सलमा इस ढंग से आ रही थी कि सबका ध्यान अपनी ओर आकर्षित किए हुए थी। सब जानते थे सलमा जो उठी है, जो सेट के बीचोबीच चली आ रही है, तो अवश्य ही कुछ न कुछ होनेवाला है।

"हीरोइन दो घंटे लेट आई तो कुछ नहीं, कहीं मैं पाँच मिनट लेट आती तो पुरी साहब सारा स्टूडिओ सर पे उठा लेते !" सलमा ने पुरी की ओर शरारतन ताककर शिकायत की, फिर सरला देवी की नक़ल करते हुए उसी के लहजे में उसने कहना शुरू किया : "अ— बॉय, हमारे लिए भी एक कप चाय, दो टोस्ट और एक ऑमलेट बनाकर जल्दी ले आओ।"

मोहन ने लाइट काटने के पंखे की आकृतिवाले एक प्लायवुड पर बाज़ू में पड़े हुए किसी के चप्पल रखे और होटल के बॉय की तरह लपककर वह सामने आया और चाय के ट्रे की तरह प्लायवुड को सामने करता हुआ बोला : "जी, मैडम। यह हाजिर है।"

सब लोक हँस पड़े और बड़ी देर तक हँसते रहे। पुरी का पेट भी बड़ी देर तक हिलता रहा और कुरसी खचखचाती रही। सेट पर की मनहूसियत दूर करने में सरला का जवाब न था। इसीलिए जिस दिन उसकी शूटिंग होती स्टूडिओ के कर्मचारियों की तबीअत बहाल रहती। इसीलिए यह अट्ठाईस वर्षीया सुंदर युवती निर्माता और निर्देशक से लेकर कुलियों तक की चहेती थी। उसके अल्हड़ स्वभाव और बेलगाम ज़बान के कारण ही उसकी मित्रमंडली उसे 'पटाखा' कहकर सम्बोधन किया करती थी। वास्तव में वह एक पटाखा ही थी, एक विचित्र प्रकार का पटाखा—ऐटम बॉम्ब और फूलझड़ी का विलक्षण सम्मिश्रण।

पूरे एक घंटे बाद सरला देवी मेकअप करके, सीन की पोशाक से सजधज के, मोरनी की चाल में, इतराती हुई सेट पर पधारी। साथ में बूढ़ी माँ, मोटी बहन, बहन की बिटिया और गोआनीज़ आया थीं। दवे ने लपककर कुनबे को कुरसियाँ दीं।

"मैं तैयार हूँ, पुरी साहब," सरला देवी ने कहा। "बोलिए, क्या करना है मैंने ?"

पुरी ने पास आकर समझाते हुए कहा : "आप यहाँ से ज़ीना उतरकर आती हैं और मोहन से, जो यहाँ खड़ा है, कहती हैं—अ—अ—डायलॉग आपको पता हैं।"

"जी नहीं, मुझे नहीं पता डायलॉग।"

पुरी ने बिगड़कर पुकारा : "सिन्हा !"

"जी," बाज़ू में खड़े हुए कैलाश सिन्हा ने उत्तर दिया।

"तुमसे मैंने हज़ार मरतबा कहा है कि सब आर्टिस्ट्स को एक दिन पहले डायलॉग दे दिया करो, पर तुम—"

"जी मैंने डायलॉग कल दे दिए थे इन्हें।"

सरला कुछ सटपटाई पर तुरंत ही कुछ त्योरी चढ़ाकर बोली : "हाँ,

मगर काग़ज़ मैं शायद घर पर भूल आई।" फिर कुछ मुस्कुराकर उसने पुरी से कहा: "*आय एम सॉरी!*"

सरला की मुस्कुराहट का उत्तर पुरी ने मुस्कुराहट से दिया और कहा: "ख़ैर, कोई बात नहीं।" फिर वह अपने असिस्टंट, सिन्हा, की ओर मुड़ा। मुड़ते ही पुरी की बनावटी मुस्कुराहट लोप हो गई और माथे पर बल पड़ उठे। "अभी लिखकर दे दो, पाँच मिनट लगेंगे।"

सिन्हा ने अपने जेब से एक काग़ज़ निकाला। डायलॉग के परचे घर पर भूल आने की सरला की आदत से सिन्हा अनभिज्ञ न था। कुशल असिस्टंट की तरह वह डायलॉग की एक अधिक प्रति अपने साथ सदा ही रखता था। डायलॉग लिखा हुआ वह काग़ज़ उसने सरला की ओर बढ़ाया। "लीजिए, मैडम," उसने कहा।

सरला की नाक कट गई और बीच सेट पर सबों के सामने कट गई और वह भी एक अदना असिस्टंट के हाथों कट गई। उसने बिना चारों ओर देखे ही भाँप लिया कि उपथिस्त व्यक्ति उस पर हँस रहे हैं और सिन्हा को मन ही मन शाबाशी दे रहे हैं। उसने सिन्हा के हाथ से काग़ज़ खींच लिया और चट-से बहुत तन्मय होकर डायलॉग पढ़ने लगी। परंतु सिन्हा ताड़ गया कि सरला डायलॉग नहीं पढ़ रही है, पढ़ने का बहाना कर रही है, वास्तव में उसे वह मन ही मन गालियाँ दे रही है। सिन्हा ने सोचा आज उससे भद्दी ग़लती हो गई। उसने तुरंत ही जेब स काग़ज़ निकालकर इस तरह न थमाना चाहिए था—

इसी समय पुरी ने कहा: "रिहर्सल।"

"लाइट्स ऑन," कामटे ने चिल्लाया।

सेट पर लाइट चकाचक चमक उठे।

"चलिए, एक रिहर्सल हो जाए। आइए, सरला देवी," पुरी ने कहा और सिन्हा की ओर देखकर: "तुम डायलॉग पर ध्यान रखना।"

रिहर्सल शुरू हो गया। मोहन को डायलॉग याद थे। सरला काग़ज़ के सहारे डायलॉग बोले जा रही थी। चार, पाँच, छः रिहर्सल हो गए।

"शूटिंग," पुरी ने चिल्लाया।

"ऑल लाइटस् ऑन" कामटे ने कहा।

बची-खुची तमाम बत्तियाँ जल उठीं। कैमरा असिस्टंट फ़ासला नापने की टेप लिए आगे बढ़ा और टेप का छोर उसने ज़ीने पर चढ़ी हुई सरला की नाक से छुआ दिया। मेकअपमैन शीशा और पाउडर का पफ़ लिए सरला और मोहन के पास पहुँचा। मेकअप सँवारा गया। क्लैपर-बॉय क्लैप-स्टिक लिए कैमरे के सामन आन खड़ा हुआ। क्लैप पर लिखा था: "ग्रेट इंडिआ पिक्चर्स। रेशमी रूमाल। सीन नं. ५३। शॉट नं. १। टेक नं. १। तारीख़ २२ अप्रैल, १९५८।"

"साउंड रेडी ?" पुरी ने पूछा।

"रेडी," साउंड रिकॉर्डिंग-रूम से साउंड इंजीनिअर की आवाज़ लाउडस्पीकर द्वारा गूँजती हुई आई।

"सायलेंस ऑन द सेट," सिन्हा ने कहा। सेट पर एकदम खामोशी छा गई।

"साउंड स्टार्ट," पुरी ने कहा।

दो घंटियाँ सुनाई दीं।

"कैमरा," कामटे ने कहा।

असिस्टंट ने स्विच दबाया।

कैमरा चल पड़ा।

क्लपर-बॉय ने क्लैप चटकाई।

और पुरी ने कहा: "ऐक्शन।"

ऐक्टिंग शुरू हो गई।

सरला ज़ीना उतरकर नीचे आई और ड्रॉइंग-रूम में मोहन को अकेला खड़ा हुआ देख आनंद और आश्चर्य का भाव अभिनीत करती हुई बोली: "अरे! तुम यहाँ खड़े हुए हो, रमेश! कब आए?"

मोहन चौंककर मुड़ा और सरला को देखकर मुस्कुराता हुआ बोला: "तुमने पिक्चर चलने का वादा किया था। चलोगी नहीं?"

"हाँ, हाँ, थोड़ी देर ठहरो; मैं पिताजी से कह आऊँ।"

"कट—" सिन्हा बोल पड़ा, "कट।"

कैमरा बंद हो गया। सब लोग सिन्हा की ओर देखने लगे।

"क्यों, कट क्यों किया?" सरला ने गुस्से से भन्नाकर पूछा।

"'कह आऊँ' नहीं, मैडम, 'पूछ आऊँ' बोलिए," सिन्हा ने उत्तर दिया। पुरी ने सर हिलाकर सिन्हा का समर्थन किया।

"ओह! पूछ आऊँ.... अच्छा, चलिए," सरला बोली।

"रिटेक," पुरी ने कहा। "साउंड रेडी?"

फिर शूटिंग शुरू हो गई। सीन दोहराया गया। फिर सरला से कुछ ग़लती हुई। जब डायलॉग बराबर याद न हों तो एक नहीं दस ग़लतियाँ होती हैं, और फिर अगर कलाकार के दिल में दर्द या दिमाग़ में गुस्सा समाया हुआ हो तो वह एक हज़ार ग़लतियाँ करता है।

अबकी बार ग्यारहवाँ टेक चल रहा था और सरला कह रही थी: "अरे! तुम यहाँ खड़े हो, रमेश? कब आए?"

"तुमने पिक्चर चलने का वादा किया था। चलोगी नहीं?"

"हाँ, हाँ, थोड़ी देर ठहरो; मैं पिताजी से दरयाफ़्त कर लूँ।"

"कट," सिन्हा ने चिल्लाकर सीन फिर तोड़ दिया।

यह ग्यारहवीं बार सीन टूटा था। सेठ शांतिभाई के कानों पर आज के रिटेक की खबर पहुँच चुकी थी और यही देखने के लिए कि किस कारण घंटे भर से रिटेक पर रिटेक हुए जा रहे हैं, सैकड़ों रुपये की फ़िल्म बर्बाद की जा रही है, कौन आर्टिस्ट रिटेक ले रहा है, वह शॉट शुरू होने से पहले सेट पर आकर पीछे अँधेरे में खड़े हो गए थे।

सरला तमककर पूछ रही थी : "क्यों ? अब क्या हुआ ?"

"'दरयाफ़त कर लूँ' नहीं, 'पूछ आऊँ'," सिन्हा ने विनयपूर्वक, बल्कि विशेष विनयपूर्वक उत्तर दिया। विशेष विनयपूर्वक इसलिए कि वह जानता था आज हीरोइन बिगड़ी हुई है।

"एक ही मतलब है," सरला ने भन्नाकर कहा। "'दरयाफ़त कर लूँ' और 'पूछ आऊँ' में फ़रक ही क्या है ?"

"अगर 'दरयाफ़्त कर आऊँ' ही बोलना है, मैडम, तो ठीक से 'दरयाफ़्त' बोलिए, 'दरयाफ़त' नहीं।

मोहन मुस्कुरा दिया। कुछ लोग और भी मुस्कुराए और कुछ अपनी मुस्कुराहट दबा गए।

सरला खीझ उठी। "उफ़ ! कैसे-कैसे बेवक़ूफ़ों से पाला पड़ा है !"

"किसे बेवक़ूफ़ कह रही हैं आप ?" सिन्हा ने पूछा।

"तुम्हें। तुम कट करनेवाले कौन होते हो ? याद रखो तुम एक असिस्टंट हो। डिरेक्टर पुरी साहब हैं, तुम नहीं।"

"पुरी साहब ने ही मुझे कहा हुआ है कि अगर डायलॉग ठीक न हों तो कट कर दो। डायलॉग ठीक बुलवाना मेरा काम है। आप ग़लती करें तो मुझे दुरुस्त करना ही होगा।"

"तुम क्या दुरुस्त करोगे ! मैं तुम्हें दुरुस्त कर दूँगी ! पुरी साहब—सेठ—इस गँवार को यहाँ से अलग कर दो।"

सिन्हा को ग़ुस्सा आ गया। "इतना ताव न खाइए, सरला देवी," उसने तमककर कहा, "कहीं मेरे मुँह से भी कुछ उलटा-सीधा निकल जाएगा तो पछताएँगी।"

बाज़ू में बैठी हुई सलमा उठकर खड़ी हो गई। वह जानती थी मामला बढ़ गया है।

"सिन्हा !" आगे आते हुए सेठ ने डाँटकर चिल्लाया।

"तुम मुझे गाली दोगे ?" सरला लाल-नीली होकर सिन्हा से पूछ रही थी।

"गाली तो तुमने दी है।"

"सेठ, मैं कहे देती हूँ, या तो स्टूडिओ में मैं रहूँगी या यह बदतमीज़ ही रहेगा, हाँ। सुना आपने ?"

सेठ शांतिभाई ने नफ़रत के साथ सिन्हा की ओर ताककर चबा-चबाकर कहा : " सिन्हा, तुमकू नोकरी से अलग किया गया। समझे ? दस तारीक कू आके अपनी तनखा ले जाना। जाव यहाँ से। "

" थैंक यू, सेठ ! " सिन्हा ने कहा और डायलॉग की फ़ाइल कुरसी पर रखकर कैमरे के पीछे सेट की बल्लियों के ऊपर पड़ा हुआ अपना कोट उठाने लगा " दरयाफ़्त ! हुँ ! "

सरला जोश में थी। " क्या बकता है ! गधा कहींका ! " उसने कहा।

सलमा ने देखा, मोहन ने देखा कोट लिए सिन्हा फ़ौरन मुड़ा। उसकी आँखों से आग बरस रही थी। वह सीधा सरला की ओर बढ़ रहा था। सलमा जानती थी वह सरला की ओर क्यों बढ़ रहा था। सभी जानते थे। सरला भी जानती थी। सरला ने सिन्हा को ' गधा ' कह दिया था। वह कहना नहीं चाहती थी, पर उसके मुँह से निकल गया था —' गधा '। सिन्हा गाली नहीं सह सका और वह बढ़ रहा था। गाली देनेवाले के मुँह पर बिना चाँटा मारे अब वह न रहेगा। सेठ और पुरी भी बस देखते के देखते ही रह गए। सरला की बूढ़ी माँ, मोटी बहन, बहन की बिटिया और गोआनीज़ आया, रोज़ी, भी बस सहमी हुई देखती रह गईं। सरला पास आते हुए सिन्हा को यों ताकने लगी जैसे शेर के पिंजरे में बढ़ते हुए शेर को बकरी ताकती है। सरला काँप उठी, ज़ोरों से काँप उठी।

और सलमा ने मन में कहा : " हाजी मलंगबाबा ! एक चाँटे पर एक चादर चढ़ाऊँगी ! "

सरला के पास पहुँचकर सिन्हा एक क्षण रुका। दोनों की आँखें चार हुईं। सरला की आँखें, जो अभी-अभी, डायलॉग भूलते समय, बिगड़ी हुई शेरनी की आँखों की तरह चिनगारियाँ छोड़ रही थीं, अब, गाली देने के बाद, ' गधा ' कहने के बाद, शेर के पिंजरे में दुबकती हुई बकरी की आँखों की तरह निस्तेज और निष्प्राण हो रही थीं। सरला की आँखों में अब क्षमा-याचना थी। उसकी आँखें मानो कह रही थीं : ' मुझे माफ़ कर दो, सिन्हा ! ' गधा ' शब्द मेरे मुँह से भूल से निकल पड़ा था, जिसके लिए मुझे रंज है। मुझे माफ़ कर दो . . . . ' इसी समय सिन्हा का हाथ ऊपर को उठने लगा और फिर चटाक-से ज़ोरों की आवाज़ हुई।

मगर नहीं, सिन्हा ने तमाचा नहीं मारा था, हाथ में पकड़ा हुआ कोट झटका था, सरला के ठीक मुँह के सामने झटका था, इतने ज़ोर से झटका था कि सरला चौंक पड़ी थी।

पुराने कोट से निकली हुई गर्द सरला के मुँह के सामने अभी उड़ ही रही थी कि सिन्हा मुड़ा, और धीरे-धीरे, सबों के बीच से होता हुआ, सेट के बाहर,

ग्रेट इंडिआ पिक्चर्स के स्टूडिओ के बाहर, फाटक के बाहर चला गया।

कैलाश सिन्हा पैदल ही चलता हुआ दादर से परेल आया और परेल से बायकला ब्रिज। अब भी उसने बस न ली और न ट्रैम ही पकड़ी। उसके सर में तूफ़ान उठ रहा था। उसका सर फटा जा रहा था। आज उसकी नौकरी ही नहीं गई बल्कि उसका अपमान भी हुआ था। अमीरी ने ग़रीबी को पाँव तले रौंदकर रख दिया था। कैलाश सोच रहा था, अपने बारे में, अपनी ज़िंदगी के बारे में।

बी. ए. की परीक्षा देकर, सात वर्ष पहले, वह रेल के थर्ड क्लास के डिब्बे में बैठकर बम्बई आया था — सिनेमा में प्रवेश करने, डिरेक्टर बनने। पिछले सात वर्षों में क़्या-कुछ नहीं हुआ, उसने कितनी-कुछ मुसीबतें नहीं झेलीं। उसे याद है बम्बई आकर वह गिरगाँव में *माधवाश्रम* में ठहरा था। महाराष्ट्रियन समाज का यह एक प्रमुख होटल है। पूरे तीन महीने यहाँ ठहरा था। वह यहीं पर था जब बी. ए. का उसका परीक्षाफल समाचारपत्रों में निकला था। नागपुर विश्वविद्यालय से वह सेकंड डिविज़न में पास हुआ था। फ़र्स्ट डिविज़न के लिए अधिक पढ़ाई की आवश्यकता होती है। वह जानता था कि वह पास अवश्य होगा और सेकंड डिविज़न में ही होगा। मॉरिस कॉलेज में वह आर्ट्स् का विद्यार्थी था। कॉलेज की सोशिअल गैदरिंग का वह जनरल सेक्रेटरी था, हिन्दी और इंग्लिश लिटररी सोसायटी का सेक्रेटरी था, ड्रामा सोसायटी का सेक्रेटरी था, कॉलेज और अंतरकॉलेजीय डिबेट्स में बराबर भाग लेता आया था, हर रोज़ शाम को टेनिस और हर शनीचर, इतवार को दोस्तों के साथ ताश खेलता आया था, हफ़्ते में दो बार थिएटर जाकर सिनेमा देखा करता था — इतना प्रगाढ़ कार्यक्रम उसके विद्यार्थी-जीवन की दिनचर्या में होते हुए अगर उसे सेकंड डिविज़न मिला तो सराहनीय ही था। फ़र्स्ट डिविज़न तो किसी भी पुस्तक-चाट बेवक़ूफ़ को मिल सकता था। फिर अगर उसे सरकारी नौकरी की दरकार होती तो वह फ़र्स्ट डिविज़न के लिए भी प्रयत्न करता, परंतु सरकारी नौकरी से उसे चिढ़ थी।

उसके पिता नागपुर में अच्छे वकील थे, कांग्रेस के अच्छे कार्यकर्ता थे, नागपुर कॉर्पोरेशन के मेम्बर थे। पिताजी चाहते थे कि कैलाश भी वकालत करके उनका हाथ बँटाए, उनकी जमी-जमाई प्रैक्टिस से लाभ उठाए। पर कैलाश ने वैसा नहीं किया। बी. ए. के परचे देकर वह सीधा बम्बई आ गया — सिनेमा डिरेक्टर बनने। वह सात वर्ष पहले की बात है। न जाने कितने स्टूडिओ की उसने ख़ाक छानी, कितने प्रोड्यूसरों, स्टारों, डिरेक्टरों के उसने चक्कर काटे, कितने फिनांसरों और ब्रोकरों से उसने मुलाक़ातें कीं, पर कुछ न हुआ। वह डिरेक्टर न बना। असिस्टंट डिरेक्टर मात्र बनकर रह गया। और आज वह भी न रहा। यानी सात वर्षों में उसने कुछ भी प्रगति न की।

दोपहर की धूप में यही सब सोचता हुआ कैलाश फुटपाथ पर चला जा रहा था और बम्बई की लाल-लाल बसें और ट्रैमें घरघराती, खड़खड़ाती हुई उसके बाज़ू से गुज़री जा रही थीं। सड़कों पर व फुटपाथ पर जनसमुदाय समुद्र की तरह लहरा रहा था और समुद्र की इन विचलित लहरों में कहीं काई जमे, चिकने, गोल पत्थर की तरह कैलाश ढुलक रहा था। कैलाश को फिर *माधवाश्रम* के दिन याद आने लगे। वह तीन महीने जो उसने उस होटल में काटे थे उसे कभी न भूलेंगे। अपने घर से इतनी दूर, पराये देश में, बम्बई में होटल के एक छोटे से कमरे में—जिसमें तीन पलंग औरों के भी थे—उसने तीन महीने यानी लगभग नव्वे दिन बिताये थे! उसका कमरा ठीक रसोईघर के ऊपर था। तमाम दिन कमरे में खाने की बू आया करती थी—कढ़ी की बू, मसालों की बू, हींग की बू! कमरे के अंदर उसके तीन साथी बराबर बदलते रहते थे और वक़्त-बेवक़्त कमरे में आते-जाते रहते थे। कैलाश का उस कमरे में दम घुटा जाता था। कमरे की गर्मी और पलंग के खटमल अलग हैरान किए जाते थे। बिस्तर पर पड़ा-पड़ा वह थक जाता। तमाम दिन तो वह घूमता नहीं रह सकता था। और कमरा उसे रास न था। शाम को वह बिना उद्देश्य के घूमने निकल जाता, सड़कों पर चलने लगता। उसके साथ उन्हीं सड़कों पर हज़ारों अन्य स्त्री, पुरुष और बच्चे चल रहे होते। चलकर वह कभी चौपाटी जाता, कभी हैंगिंग गार्डन और कभी दूसरी सड़क पर आता, कभी किसी और गली में निकल जाता। जहाँ जाता मनुष्यों की भीड़ दिखाई देती, हज़ारों की भीड़, लाखों की भीड़। और इस भीड़ के बीच कैलाश बम्बई में बिलकुल अकेला था। उसे याद है उसने नागपुर अपनी माँ को एक पत्र में उन दिनों लिखा था: 'बम्बई में इतनी भीड़ को देखकर मुझे अकेला-अकेला लगता है!'

पर आज कैलाश अकेला नहीं। पिछले सात वर्षों में उसका वह अकेलापन कबका जाता रहा। अब वह बम्बई में रम गया है। बम्बई की काली-काली सड़कें, लाल-लाल बसें और ट्रैमें, झटका खाती हुई भीड़, बम्बई की उमस, बम्बई की बेतहाशा बारिश, बम्बई की खिचड़ी ज़बान, बम्बई का धुआँ, बम्बई की वह विशेष ध्वनियाँ—इन सब से कैलाश को अब एक विचित्र लगाव हो गया है, और बम्बई की यही मायानगरी कैलाश को कभी थपेड़े और कभी ठोकरें बराबर लगाती जा रही है।

नौ मील का अंतर पाँव चलकर कैलाश कोलाबा पहुँचा—अपने घर कोलाबा में स्ट्रैंड सिनेमा के पीछे *सी व्यू* नामक एक पुरानी तीन मंज़िला इमारत है, एक पारसी क़ी इमारत है, इमारत क्या है चाल है, ज़रा अच्छे प्रकार की चाल। इसमें भाँति-भाँति के लोग रहते हैं। ग़रीब पारसी भी हैं, ईसाई भी हैं, कुछ हिंदू भी हैं, एक चीनी परिवार भी है। इसी चाल के तीसरे मंज़िले का २९ नम्बर का

ब्लॉक कैलाश का 'घर' है जहाँ वह अपने दो मित्रों के साथ रहता है। यह कहना मुश्किल है कि कैलाश उनके साथ रहता है या रहमान और डिसूज़ा उसके साथ रहते हैं। अब्दुल रहमान पत्रकार है और फ़्रांसिस डिसूज़ा शिल्पकार। भारत के तीन छोर से यह तीनों समवयस्क युवक महत्त्वाकांक्षा-पूर्ति के लिए बम्बई आए थे और बम्बई की भीड़ में झटका खाते-खाते एक दूसरे से मिल बैठे थे। तबसे वह एक साथ बने रहे। तीनों व्यक्ति *सी व्यू* के २९ नम्बर के दो कमरेवाले ब्लॉक में इस प्रकार घुल-मिलकर रहते थे जिस प्रकार ग्लास के अंदर व्हिस्की, सोडा और बर्फ़ घुलमिल कर रहते हैं। कैलाश नागपुर से आया था, रहमान इलाहाबाद से और फ़्रांसिस गोआ से।

कैलाश ने कमरे पर पहुँचकर दरवाज़ा खटखटाया। दरवाज़ा बंद था। शायद अंदर कोई नहीं है, या शायद फ़्रांसिस काम कर रहा है, या सो रहा है। काम करते या सोते समय फ़्रांसिस कभी उठकर दरवाज़ा न खोलेगा चाहे कोई कितना चीखे-चिल्लाए या मर ही क्यों न जाए। कैलाश ने जेब से चाबी निकालकर दरवाज़े के पेटताले में लगाई। एक-एक चाबी तीनों मित्रों के पास थी। दरवाज़ा खुल गया और कैलाश ने अंदर जाकर दरवाज़ा फिर बंद कर दिया। अंदर लकड़ी के एक टूटे स्टूल पर एक एँग्लो-इंडिअन युवती बैठी हुई थी, बिलकुल नंगी थी, और पसीने से उसका समस्त शरीर इतना अधिक गीला हो रहा था कि बारीक-बारीक बूँदें उसके गालों और वक्ष पर और पेट, पुट्ठों और टाँगों पर बहने-बहने को हो रही थीं। उसके हाथ सर के पीछे मुड़े हुए थे और बग़ल से भूरे-भूरे गीले बाल झाँक रहे थे। उसने एक दृष्टि फिराकर अपनी नीली आँखों से कैलाश को देखा और फिर अविचलित सामने देखने लगी। सामने, गंदे पतलून और फटी बनियान में खड़ा हुआ फ़्रांसिस छेनी और हथौड़ी से पत्थर छीलकर उसे युवती का आकार देने में तल्लीन था।

पत्थर छीलता हुआ फ़्रांसिस जानवर की तरह लग रहा था। ऊपर के होंठ पर नीचे को ढुलकी हुई मूँछे थीं, ठोढ़ी पर छोटी-सी दाढ़ी थी और सर के पीछे चाँद बन रहा था। उम्र में कैलाश से तीन-चार साल बड़ा था, यानी तीस के लगभग होगा। नाक चपटी थी और नथने बहुत बड़े-बड़े थे। आँखें छोटी थीं और रंग काला था। अँधेरे में कोई देखे तो डर जाए। बिलकुल बनमानुस था।

फ़्रांसिस ने कैलाश को देखकर कहा : "सिगरेट पिलाओ।"

"सिगरेट नहीं है," कैलाश ने उत्तर दिया और अंदरवाले कमरे में चला गया।

तब फ़्रांसिस ने चाय की जूठी और ख़ाली प्याली के पास पड़े हुए चुरुट के टुकड़े को उठाकर जलाया और पैनी दृष्टि से एक बार पसीने से लथपथ युवती के अकड़े हुए शरीर को घूरकर फिर पत्थर तराशने में व्यस्त हो गया।

अंदर का कमरा बाथरूम था; उसे स्टोररूम और किचन भी कह सकते हैं।

कपड़े उतारे और मोरी में शॉवर के नीचे खड़ा हो गया। सर से पाँव से साबुन मलकर उसने खूब नहाया। नहाने का उसे शौक़ था। नहाने में उसे बहुत मज़ा आता था। बहुत देर बाद, बदन पर तौलिया लपेटे, गुनगुनाता हुआ जब वह निकलकर बाहरवाले कमरे में आया तो युवती बैठी ही हुई थी। फ़्रांसिस काम में जुटा हुआ था। युवती की नाक के छोर से और ठोड़ी से और दोनों कुहनियों से पसीने की बूँदें लटक रही थीं। युवती बहुत मोटी थी और फिर गर्भवती थी, जिससे उसके शरीर का आकार बिलकुल बेडौल और भद्दा हो रहा था।

"क्या बना रहे हो, फ़्रांसिस ?" कैलाश ने पूछा।

"तुम बताओ ?" फ़्रांसिस ने बिना कैलाश की ओर देखे कहा, "बस आधे घंटे में पूरी हो जाएगी। फ़िनिश बाद में करूँगा।"

"कब से बना रहे हो ?"

"एक हफ़्ता होने आया। कैसी है ?" अबकी बार फ़्रांसिस ने कैलाश की ओर ताककर पूछा और उत्तर की प्रतीक्षा करने लगा।

"क्या *मोटिफ़* है ? .... मेरा मतलब है टाइटल क्या है ?"

"तुम्हारी राय में क्या होना चाहिए ?"

"जननी।"

"बहुत सुंदर !" फ़्रांसिस ने कहा।

"तुमने क्या सोचा था ?"

"मनुष्य की माँ।"

"मैं थक गई !" युवती ने पोज़ छोड़कर कहा।

"कैसी बनी है ?" फ़्रांसिस ने फिर पूछा।

"बहुत बढ़िया !" कैलाश ने कहा और मूर्ति को निरीक्षणात्मक दृष्टि से ताकने लगा। फ़्रांसिस प्रभावकारी शिल्पकार था, कई कला-प्रदर्शनियों में पुरस्कारित हो चुका था। कैलाश को उसकी कला विशेष प्रिय थी।

'न जाने कहाँ-कहाँ से मॉडेल पकड़कर लाता है यह फ़्रांसिस,' कैलाश ने मन में कहा। 'कितनी मोटी और बेडौल है ! पर फिर भी एक विचित्र आकर्षण है उसमें ! पोज़ भी कितना विचित्र दिया है कि ध्यान जननेंद्रिय पर नहीं, नाभी पर जाता है।'

"मैं थक गई !" युवती ने फिर कहा।

"आधा घंटा और, फिर छुट्टी," फ़्रांसिस ने कहा।

युवती ने फिर सर के पीछे हाथ बाँधे और वह फिर अकड़ गई।

पलंग पर चित पड़ गया। पत्थर पर छ

कैलाश कोने में पड़े हुए अपने । उस खट-पिट के बीच कैलाश की आँखें झ
छेनी पर हथौड़ी पड़ी जा रही थी।
लगीं। उसे नींद आ गई।

कैलाश जब जागा तो कमरे में कोई न था, बिलकुल अँधेरा था। इर्दगिर्द के
मकानों का प्रकाश खिड़कियों द्वारा कमरे में प्रवेश कर रहा था। उसने घड़ी
देखी। सवा-सात बज रहे थे। सूर्यास्त के समय चार क्रियाएँ वर्जित हैं: पढ़ना,
खाना, सोना तथा मैथुन। इस नियम के उल्लंघन से स्वास्थ्य को हानि पहुँचने
की संभावना रहती है। परंतु आज सूर्यास्त पर कैलाश सोता पड़ा रहा। उसे अपने
स्वास्थ्य का बहुत ख़याल था। वह उठा और मुँह-हाथ धोने लगा। बड़ी भूक लग
रही थी। आज उसने दोपहर को खाना भी नहीं खाया था। फ़ांसिस बाहर गया
हुआ था। रहमान अभी प्रेस से लौटा न था, शायद उसकी रात-पाली हो।
कैलाश कपड़े पहनकर प्रतिमा के पास आया। मूर्ति पर ग़िलाफ़ ढँका हुआ था।
उसने ग़िलाफ़ हटाया और ताकने लगा। *मनुष्य की माँ* तयार हो चुकी थी।
कमरे की उस धुँधली रोशनी में खड़े-खड़े कैलाश उस कला-कृति को देखने लगा।
उसने लाइट नहीं जलाया, खिड़कियों से आते हुए प्रकाश और उसकी आभा में ही
मूर्ति का निरीक्षण करने लगा। कितनी सुंदर कृति थी! *मनुष्य की माँ*! समस्त
नारीत्व को फ़ांसिस ने उस पत्थर में समेटकर रख दिया था। फ़ांसिस बहुत बड़ा
कलाकार है! पत्थर में जान डाल दी। कला और भावना का उत्तम समन्वय हुआ
है। कुप्पा-सा फूला हुआ गोलमटोल पेट, उस पर दो बड़ी-बड़ी गेंदें, और चौड़े
कंधों पर छोटा-सा सर जिसपर आँखों के स्थान पर एक ही गहरा चिन्ह मात्र-सा
था। नाक न थी। मुँह न था। लटका हुआ जूड़ा था। कान न थे। मोटी जाँघें जो
पिंडलियों और टख़नों तक चली गई थीं। टाँगों में घुटने न थे। नितंबों का उभार,
नाभी की गहराई और शरीर का बाँक! ...कैलाश ने मुस्कुराकर फ़ौजी ढंग से उस
शिलाखंड को सलाम करके कहा: "*मनुष्य की माँ!*"
इसी समय खिड़की के सामनेवाले ब्लॉक में गिटार बज उठा और हँसने-बोलने
की आवाज़ें आने लगीं। कैलाश ने देखा खिड़की के सामनेवाली बालकनी में दो
व्यक्ति एक चीनी युवती को छेड़ रहे थे। एक उसके बाल खींचता और दूसरा
उसकी छोटी-छोटी छातियों को दबोचने का प्रयत्न करता। युवती, अपने लम्बे रेशमी
किमोनो में बल खाती हुई, काग़ज़ का पंखा झल रही थी, लजा रही थी, मुस्कुरा रही
थी, बचने का व भागने का प्रयत्न कर रही थी। यह एक कुशल और रूपवती चीनी
रंडी थी। इसी चाल में दूसरे मंज़िले पर एक और भी रंडी रहती थी जो अरब
थी। रात को बड़ी बहार रहती थी इन दोनों ब्लॉकों में। रहमान के कथनानुसार
तीसरी मंज़िल का यह चीनी चिकनचाउ दूसरी मंज़िल के उस अरबी मुर्ग़मुसल्लम

से कहीं ज्यादा लजीज़ था। कैलाश ने बालकनी से दृष्टि हटाई और फिर एक निगाह *मनुष्य कि माँ* पर डाल, ग़िलाफ़ चढ़ा, पंखे का स्विच बंद करके वह कमरे के बाहर हो गया।

कोलाबा कॉर्नर छोटा होटल था। कैलाश और उसके मित्र खाने के लिए यहीं आ जाया करते थे। यहाँ उनका खाता खुला हुआ था। *कोलाबा कॉर्नर* में खाकर कैलाश बाहर निकला, पान की दूकान से गोल्ड फ़्लेक सिगरेट का एक पेकेट ख़रीदा — माचिस उसके जेब में थी — और फ़ुटपाथ पर चहलक़दमी करने लगा। आज उसे कुछ खोया-खोया-सा लग रहा था और साथ ही साथ कुछ पाया-पाया-सा भी। उसकी नौकरी जाती रही थी। नौकरी गँवाकर वह मुक्त हो गया था। एक विचित्र प्रकार की स्वतंत्रता का वह अनुभव करने लगा। उसका मन करने लगा कि आज ख़ूब सैर करे, ख़ूब ज़ोर-ज़ोर से हँसे, चिल्लाए और जब थक जाए तो सड़क के ऐन बीचोबीच पलंग डालकर सो जाए। अपने को बिलकुल बंधनहीन और मुक्त पाकर कैलाश को हलका-सा लगने लगा।

रात के नौ बज रहे थे। सड़कें पूरे उत्थान पर थीं। कैलाश को भीड़ न भाती थी। कोलाबा की भीड़ और गिरगाँव की भीड़ में फ़र्क़ है, पर फिर भी भीड़ भीड़ ही रही। वह एक गली में मुड़ गया। सकरी गली आगे चलकर बहुत ही तंग और अँधेरी हो जाती थी। दिन को यहाँ से लखपतियों की मोटरें गुज़रा करती थीं क्योंकि विदेशों से आने-जानेवाले माल के आढ़तियों के कुछ गोदाम और उनके दफ़्तर इसी गली के परले छोर पर थे। पर रात को यहाँ, इस सकरी अँधेरी गली में, सन्नाटा रहता था। कैलाश इसी गली से चला जा रहा था। गली के किनारे, अँधेरे में, एक मोटर खड़ी हुई थी। आगे की सीट पर कोई न था। पीछे की सीट से सिगरेट का धुआँ उठ रहा था। जब कैलाश मोटर के पास से गुज़रा तो शराब की भनक और कपड़ों की सरसराहट उस तक इकबारगी ही पहुँचीं। आगेवाले बिजली के खंभे पर टाँग उठाकर एक कुत्ता पेशाब कर रहा था और बाज़ूवाले छपरे के अंदर कोई मिलमज़दूर या भिखमंगा या जुआरी या दलाल, शराब में टुन्न, बकझक रहा था, अपनी पत्नी से मराठी में झगड़ रहा था। गली पार करके कैलाश खुले में आया जहाँ बस्ती समाप्त होती है और समुद्र की रेत, किनारे की झाड़ियाँ और पत्थरों की चट्टानें शुरू होती हैं, जहाँ बाँध बँधी हुई है, कमर तक ऊँची बाँध।

यहाँ, समुद्र के किनारे, एकदम सन्नाटा था। इक्के-दुक्के ताड़ तेज़ हवा में डोल रहे थे। दूर, समुद्र के बीच, लंगर दिए हुए कुछ जहाज़ों के प्रकाश के प्रतिबिंब पानी में दूर तक डोल रहे थे। जलदीप का प्रकाश चारों ओर घूम रहा था। पास

में एक ठेला पड़ा हुआ था जिसपर रेत की कुछ बोरियाँ लदी हुई थीं। ऊपर से बिजली के तार चले जा रहे थे। और बड़ी दूर पर किसी जहाज़ का भोंपू बोल रहा था। नज़दीक ही मछुओं की एक डोंगी छप-छप करती चली जा रही थी।

टूटी हुई बाँध की दीवार के पास आकर कैलाश दीवार पर बैठ गया और तार के खम्भे से टिककर सिगरेट पीने लगा। दीवार के पाँच फ़ुट नीचे समुद्र का पानी थलथला रहा था। यह जगह उसे सदा अच्छी लगी थी। वह प्राय: शाम को यहाँ आकर इसी कमर बराबर ऊँची दीवार पर, इसी खम्भे से टिककर घंटों बैठा करता था। चढ़ते हुए समुद्र की लहरों का चट्टानों पर आकर टूटना, समुद्र की फुंकारें, हाई टाइड के बाद सब जल-थल हो जाने पर पानी का साँय-साँय करके डोलना, उतरते हुए समुद्र के पानी का खिंचाव और दूर हटती हुई लहरों की सरसराहट, आते-जाते जहाज़ों के भोंपू और फिर वह बेरोक हवा के उन्मत्त झोंके कैलाश के लिए आवश्यक थे। यह एक ऐसा वातावरण था जिसमें कैलाश अपनी मानसिक थकान दूर कर लिया करता था, अपना मन और अपनी तबीयत ताज़ा कर लिया करता था। कैलाश लेट गया। ऊपर काले गगन पर असंख्य तारे जगमगा रहे थे। कितनी दूर तक दृष्टि जाती है आकाश में! कितना अपार विस्तार है! कितना भला लगता है आकाश में देखना, तारों को ताकना! फिर भी बम्बई में ऐसे कितने ही लोग होंगे जिन्हें फ़ुट भर भी आकाश नसीब नहीं, महीनों गुज़र जाते हैं पर जो ऊपर सर करके आकाश को नहीं तक पाते। घर में घर की छत से और बाहर सड़क के दोनों ओर की ऊँची-ऊँची इमारतों से ही उनकी दृष्टि टकराकर रह जाती है। कितने अभागे हैं वह लोग जो आकाश के तारे भी नहीं देख पाते। सहसा कैलाश ने निर्णय किया कि संसार में अगर सबसे अधिक मूल्यवान कोई वस्तु है तो वह है आकाश के तारे।

कैलाश यही सब सोच रहा था कि उस नितांत निर्जनता में उसे किसी के चलने की आहट सुनाई दी। वह चौड़ी दीवार पर चित लेटा था, पलटकर पेट के बल हो गया, कुहनियों पर ठोड़ी रखकर उस अंधकार में चारों ओर दृष्टि घुमाकर देखने लगा। आहट बंद हो गई। बम्बई का यह वह प्रदेश था जहाँ पर इस समय किसी चोर, लफंगे या गिरहकट का आन उपस्थित होना असंभव न था। प्रतिदिन रात के लाखों की शराब, अफ़ीम, गांजा, चरस आदि जहाज़ों और नावों से निकालकर बम्बईके गुंडे और बदमाश समुद्र के ऐसे ही किनारों पर पहुँचाया करते हैं। पुलिस की मोटर-बोटें रात भर समुद्र पर गश्त लगाया करती हैं। पर बंबई एक द्वीप है — छोटे-छोटे सात टापुओं को जोड़कर बनाया हुआ एक द्वीप। इसके लम्बे-चौड़े कटे हुए किनारों पर असंख्य मछुए दिन रात डोंगियों और नावों में बैठे मछली मारते दूर-दूर तक घूमा करते हैं। पुलिस की आँखों में धूल झोंककर माल निकाल ले जाना चतुर बदमाशों के लिए असंभव नहीं। पुलिस के लिए — बम्बई की सुयोग्य और सतर्क पुलिस के लिए

भी — बम्बई द्वीप का समुद्र-किनारा एक दुष्कर समस्या रहा है।

आहट फिर आई। ज़रा पास से आई थी। कैलाश उठ बैठा। अंधकार में भटकते हुए प्रकाश के कुछ टुकड़े इधर-उधर तैर रहे थे। कैलाश ने देखा एक आकृति ठेले के पीछे से निकली और पास में पड़े हुए क्रेन के पीछे लुप्त हो गई। आकृति मनुष्य की थी। वह एकटक ताकता रहा। फिर चलने की अस्पष्ट आवाज़ हुई, बहुत धीमे-से, मानो कोई संभल-संभलकर दबे पाँव चल रहा हो। परंतु पैरों की आहट न रुक पाई। पाँवों के जूते पत्थर के फ़र्श पर मौन न रह सके। आकृति फिर दिखाई थी, छाया के रूप में, काली-सी छाया के रूप में, और फिर वह काली छाया प्रकाशके टुकड़े से निकलकर प्रकाश की आभा में आई और फिर आगे बाँध की दीवार की ओर बढ़कर अंधकार में जा मिली। अँधेरे में आँखों को दिखाई नहीं देता, परंतु कैलाश की आँखें बड़ी देर से अँधेरे में बैठे-बैठे उस अँधेरे की आदी हो चुकी थीं। कैलाश की आँखों ने कैलाश के मस्तिष्क को सूचना दी कि वह छायारूपी व्यक्ति, उससे तीस फ़ुट दूरी पर, लकड़ी के खोखे पर पाँव रखकर, दीवार पर चढ़ गया है। इसी समय किनारे के जलदीप के प्रकाश की तीव्र रेखा चारों ओर घूमती हुई वहाँ से जो गुज़री तो दीवार पर खड़ी हुई छाया को जगमगाती हुई निकल गई और उस एक क्षण में कैलाश ने सब कुछ देख लिया। वह सहम गया, फिर आहिस्ता से उठा और दबे पाँव उस दो फ़ुट चौड़ी दीवार पर चलने लगा — उस छाया की ओर, उस व्यक्ति की ओर, उस युवती की ओर जो शलवार — कुरती — ओढ़नी पहने हुए दीवार पर खड़ी हुई समुद्र की गहराई में कूदकर अपना जीवन नष्ट कर देने को आतुर हो रही थी। जलदीप का प्रकाश फिर लौट रहा था। युवती ने नीचे कूदने के इरादे से आगे क़दम बढ़ाया ही था कि कैलाश ने लपककर उसे ज़ोरों से पकड़ लिया।

युवती चौंक पड़ी। इसी समय जलदीप का प्रकाश उन दोनों पर पड़ा और निकल गया।

"छोड़ो — छोड़ो मुझे — मुझे डूबने दो .... मुझे मरने दो ...." युवती ने अपने को छुड़ाने का प्रयत्न करते हुए चीख़कर कहा।

"यह क्या कर रही हो! कौन हो तुम?" कैलाश ने पूछा।

"मुझे मर जाने दो। मुझे न बचाओ। हट जाओ — मुझे छोड़ दो — मर जाने दो मुझे!"

"क्यों? तुम—तुम—मरना क्यों चाहती हो?"

युवती बराबर झकझोर किए जा रही थी। "छोड़ दो मुझे .... आज पहली तारीख़ है! मेरी — मेरी माँ — अब मैं क्या मुँह लेकर घर जाऊँ! छोड़ो — छोड़ो मुझे — छोड़ो मेरा हाथ — दूर हट जाओ — हटो — हटो — छोड़ो —" लड़की ने कैलाश के हाथ पर काट खाया। कैलाश का हाथ छूट गया और वह युवती हाथों से फिसलकर निकली ही थी कि कैलाश ने उसे फिर पकड़ लिया।

वह झकझोर करती हुई चीखने-चिल्लाने लगी। कैलाश ने चटाक-से उसके मुँह पर कसकर तमाचा लगाया। "लड़की! होश में आओ!" उसने कहा। "जान देने के लिए नहीं होती। क्या आफ़त है तुम पर? मुझे बताओ।"

युवती यकायक चुप हो गई। झकझोर बंद हो गई। सहसा वह पागलों की तरह हँसने लगी, फिर रो पड़ी, फिर अपने को संभालकर उसने कैलाश की ओर देखा और उसे घूरने लगी। जलदीप का प्रकाश फिर उन दोनों पर पड़ा और पड़कर घूम गया। युवती बराबर कैलाश को घूर रही थी और कैलास उसे। फिर युवती को अपनी दशा का भान हो आया। अकस्मात् उसने अपने को कैलाश की पकड़ से झटका देकर छुड़ाया। तुरंत ही वह मुड़ी और तेज़ी से भागने लगी — बस्ती की ओर। अंधकार में भागती हुई युवती की नीली धारियोंवाली कुरती वहाँ पर भटकते हुए प्रकाश के टुकड़ों में रह-रहकर झलक उठती थी। युवती, देखते ही देखते, दूर, बहुत दूर चली गई, और फिर अंधकार में विलीन हो गई।

कैलाश, वहीं बाँध की दीवार पर खड़ा हुआ, उस ओर साश्चर्य ताक रहा था जिधर युवती भागकर अदृश्य हुई थी। 'कौन थी वह?.... कौन होगी?' कैलाश सोच रहा था। 'पानी में डूबकर जान देने आई थी! ..... क्यों? ... मरना क्यों चाहती होगी?' उसकी समझ में कुछ न आया। आज की सारी घटनाएँ उसके लिए पहेली बनकर रह गईं।

कैलाश दीवार से नीचे उतरा, उसने सिगरेट सुलगाई और फिर धीरे धीरे वह चलने लगा, बस्ती की ओर, अपने घर की ओर।

वह झकझोर करती हुई चीखने-चिल्लाने लगी। कैलाश ने चटाक-से उसके मुँह पर कसकर तमाचा लगाया। "लड़की! होश में आओ!" उसने कहा। "जान देने के लिए नहीं होती। क्या आफ़त है तुम पर? मुझे बताओ।"

युवती यकायक चुप हो गई। झकझोर बंद हो गई। सहसा वह पागलों की तरह हँसने लगी, फिर रो पड़ी, फिर अपने को संभालकर उसने कैलाश की ओर देखा और उसे घूरने लगी। जलदीप का प्रकाश फिर उन दोनों पर पड़ा और पड़कर घूम गया। युवती बराबर कैलाश को घूर रही थी और कैलास उसे। फिर युवती को अपनी दशा का भान हो आया। अकस्मात् उसने अपने को कैलाश की पकड़ से झटका देकर छुड़ाया। तुरंत ही वह मुड़ी और तेज़ी से भागने लगी — बस्ती की ओर। अंधकार में भागती हुई युवती की नीली धारियोंवाली कुरती वहाँ पर भटकते हुए प्रकाश के टुकड़ों में रह-रहकर झलक उठती थी। युवती, देखते ही देखते, दूर, बहुत दूर चली गई, और फिर अंधकार में विलीन हो गई।

कैलाश, वहीं बाँध की दीवार पर खड़ा हुआ, उस ओर साश्चर्य ताक रहा था जिधर युवती भागकर अदृश्य हुई थी। 'कौन थी वह?.... कौन होगी?' कैलाश सोच रहा था। 'पानी में डूबकर जान देने आई थी! ..... क्यों? ... मरना क्यों चाहती होगी?' उसकी समझ में कुछ न आया। आज की सारी घटनाएँ उसके लिए पहेली बनकर रह गईं।

कैलाश दीवार से नीचे उतरा, उसने सिगरेट सुलगाई और फिर धीरे धीरे वह चलने लगा, बस्ती की ओर, अपने घर की ओर।

२

सलमा की लाल-सफ़ेद *जैगुअर* गाड़ी सारी बम्बई की जानी-पहचानी थी। सलमा को मोटरकार का शौक़ था, ख़ुद मोटर चलाने का शौक़ था। उसके पास एक ही गाड़ी थी — यही स्पोर्टस्। गाड़ी सुंदर थी, रंग का मेल भी सुंदर था और सलमा ने गाड़ी रखी भी बड़े प्यार से थी। गाड़ी का हुड गिराकर जब वह सड़कों से तेज़ी के साथ गुज़रती तो सड़क चलते लोग वहीं ठिठककर मुँह बाये उसे देखते रह जाते। नुक्कड़ पर जब वह चर्र-से गाड़ी मोड़ती तो पुलिसमैन मन में कहता: 'जरूर मरेगी एक दिन!'

सलमा की *जैगुअर* दूर से पहचानकर फाटक पर खड़े हुए गोरखे ने फाटक खोल दिया और सलाम ठोंकता हुआ अकड़कर खड़ा हो गया। सलमा की मोटर *द बॉम्बे स्टूडिओज़ लि.* के फाटक के अंदर सर्र-से घुस गई और फाटक फिर बंद हो गया। फाटक के बाहर नवयुवकों की एक छोटी-सी भीड़ लगी हुई थी। यह नित्य की बात थी। सिने-कलाकारों के दर्शनार्थ कई निठल्ले दिन-रात स्टूडिओ के फाटक पर मँडराया करते हैं और फाटक के अंदर आती-जाती मोटरों में बैठे कलाकारों की उड़ती-उड़ती और बिलकुल ही क्षणिक झलक देख पाकर, अपना प्रयत्न सफल हुआ जान, खुश हो जाते हैं।

अंदर, स्टूडिओ के आँगन में गाड़ी रखकर सलमा सीधी बरामदे की ओर चली। आँगन में झाड़ू देती हुई काठियावाड़न मेहतरानी का पाँच साल का बच्चा गमन, कोने में बैठा एक लँगड़े काले कुत्ते से खेल रहा था। कुत्ता कंतरी, लावारिस और गंदा था। सड़कों का फ़ालतू कुत्ता था। पर दो महीने से न जाने इस गमन ने उस पर क्या जादू का हाथ फेरा हुआ है कि वह कुत्ता इस बच्चे के पीछे ही हो लिया है, चौबीसों घंटे इसके साथ लगा रहता है। पेड़ की छाँह में कुत्ता पाँव ऊपर करके चित लेटा हुआ था और गमन उसके गले और छाती पर हाथ फेर रहा था। सलमा को देखकर गमन उठ खड़ा हुआ और मुस्कुराकर उसने अपने दोनों छोटे-छोटे हाथ जोड़कर नमस्कार किया। बरामदे की सीढ़ियाँ चढ़ती हुई सलमा भी उसे देख मुस्कुराई, रुक गई, और फिर उँगली के इशारे से गमन को उसने पास बुलाया। फटी कमीज में, जो पेट और कमर के बीच खत्म होती थी, वह नंगा बालक दौड़कर आया। सलमा ने अपना पर्स

खोला और उसमें से एक चॉकलेट निकाल कर उसे दी। गमन खुश हो गया।

"तेरे लिए है," सलमा ने कहा। "कुत्ते को मत खिलाना, समझा ?"

बच्चे ने सर हिलाकर "हाँ" जताया और चॉकलेट पर लिपटा काग़ज़ छीलता हुआ वहाँ से चला गया, कुत्ते की ओर।

सलमा बरामदे में पहुँची तो दफ़्तर के छोकरे ने उसे सलाम किया।

"मेहता साहब हैं ?" सलमा ने पूछा।

"जी", छोकरे ने उत्तर दिया। "कहानी सुन रहे हैं।"

"किससे ?"

"पंडित शिवराम से। डेढ़ घंटा हो गया।"

नोटिस बोर्ड पर आज की शूटिंग के प्रोग्राम का काग़ज़ पिन करके दीक्षित मुस्कुराता हुआ सलमा के पास आया। कम्पनी के मैनेजिंग डिरेक्टर, सी. एच. मेहता का दीक्षित सेक्रेटरी था।

"देखिए, मैडम," दीक्षित ने बाहर को बच्चे की ओर इशारा करते हुए कहा, "आपने उस छोकरे को चॉकलेट दी और वह कुत्ते को खिला रहा है।"

सलमा ने बाहर देखा। गमन ने चॉकलेट के दो टुकड़े किए हुए थे। एक टुकड़ा खुद खा रहा था और दूसरे हाथ का टुकड़ा उस लँगड़े काले कुत्ते को खिला रहा था। सलमा हँस पड़ी।

"बड़ा प्यारा बच्चा है!" वह बोली। "कितना ख़ूबसूरत है!"

"इसकी माँ को कभी ग़ौर से देखा है, मैडम, आपने ?"

"मैना को ? हाँ, वह देखो झाड़ू दे रही है।"

"बच्चा अपनी माँ पर गया है।" दीक्षित ने कहा।

"हाँ, यह मैना वाक़ई कभी बड़ी ख़ूबसूरत रही होगी।"

"अब भी कम नहीं है, मैडम," दीक्षित ने मुस्कुराकर कहा।

"बच्चे का बाप भी स्टूडिओ में नौकर है क्या ?"

"जी नहीं, इसका बाप नहीं है।"

"बेचारा!"

सलमा ने देखा दीक्षित मुस्कुरा रहा था।

"क्या मर गया ?" सलमा ने कनखियों से देखते हुए पूछा।

"जी नहीं, मैडम। इसका बाप ही नहीं है। यह—यह—बिना बाप के ही पैदा हुआ था।"

सलमा इशारा समझकर मुस्कुराई। "हसीन माँ के पेट से पैदा होने के लिये हमेशा बाप की ज़रूरत नहीं हुआ करती, दीक्षित," उसने कहा और बरामदे के एक छोर पर स्थित मेहता के दफ़्तर पर दृष्टि डालती हुई अकाउंटंट के कमरे में चली गई।

सेक्रेटरी दीक्षित के कंधे को एक व्यक्ति ने छूआ।

"क्या बात है, भई," दीक्षित ने बिगड़कर पूछा।

"मेहता साहब से मिलना है।"

"अपॉइंटमेंट है?"

"जी हाँ।"

"आपको इंतज़ार करना होगा। वह अभी स्टोरी सुन रहे हैं। बैठिए।"

वह पारसी सज्जन बरामदे में पड़े हुए बेंच पर बैठ गए। वहाँ और भी चार, पाँच व्यक्ति बैठे हुए थे। सबों को मेहता साहब से मिलना था।

दीक्षित स्विंग डोर खोलकर मेहता के कमरे में गया और जाकर उसने टाइप किया हुआ कागज़ मेहता के टेबल पर रख दिया। दीक्षित को देखकर पंडित शिवराम कहानी सुनाते-सुनाते चुप हो गया था।

"क्या है?" मेहता ने कागज़ पर निगाह डालते हुए पूछा।

"कोडेक कम्पनी को लेटर लिखा है, साहब। पिछले महीने जो रॉ स्टॉक आया था उसके हिसाब के सिलसिले में।"

"ग़लती मिली?"

"जी।"

"किसका हिसाब ग़लत था? उनका या हमारा?"

"हमारा।"

मेहता ने ख़त पर हस्ताक्षर कर दिए। दीक्षित कागज़ लिए बाहर चला गया।

"हाँ पंडितजी, चलिए, जल्दी कीजिए। कहाँ पर थे आप?"

"सुनिए," पंडित शिवराम बोला और एक गंदे रूमाल से मुँह और गले का पसीना पोंछकर फिर कहानी सुनाने लगा: "आशा का दिल टूट जाता है। जब वह सुनती है कि विनोद—यानी हीरो—को उसके पिताजी ने घर से निकाल दिया है तो उसका दिल टूट जाता है। वह रोने लगती है। यहाँ पर हम एक गाना रखते हैं—सैड साँग।"

मेहता ने जमुहाई को मुँह में ही मसलकर पूछा: "कहानी और कितनी बाक़ी है?"

"बस थोड़ी-सी बाक़ी है, साहब।"

"ज़रा जल्दी कीजिए," मेहता ने कहा और पाँव टेबल पर रखकर रिवॉलविंग चेअर पर पीछे को टिककर बैठ गया और लिफ़ाफ़ा खोलने की छुरी की नोक से अपने नाख़ून का मैल निकालने लगा। नाख़ूनों में मैल न था। नाख़ून बिलकुल साफ़ थे। मेहता के नाख़ून सदा साफ़ हुआ करते थे। सफ़ाई उसकी आदत में शुमार थी। कपड़े भी वह हमेशा साफ़-सुथरे पहनता था। उसे कपड़ों का शौक़ था। उसके सफ़ेद शार्कस्किन के कोट में गुलाब टँका हुआ था और टाई में तीर के आकार की सुनहरी पिन लगी हुई थी। मुँह चिकना था और कनपटी के बाल सफ़ेद हो रहे थे। चश्मे के

पीछे आँखें छोटी थीं और होंठ मोटे थे। वह पंजाबियों की तरह गोरा और ऊँचापुर्ज़ा था, क्योंकि वह पंजाबी था। पंडित शिवराम कहानी सुनाए जा रहा था पर मेहता का ध्यान उधर न था। कमरे के बाहर सलमा खिलखिला रही थी।

पंडित शिवराम कह रहा था : "इसके बाद हीरोइन के पिता अचानक हीरोइन के कमरे में प्रवेश करते हैं और देखते हैं कि हिरोइन पलंग पर नहीं है . . . . ."

इसी समय दरवाज़ा खुला और सलमा हाथ में लटका हुआ पर्स हिलाती हुई अंदर आई। मेहता ने पाँव टेबल पर से नीचे उतारे और उसकी ओर देखकर मुस्कुराने लगा।

कहानीकार कह रहा था : "और फिर उस आँधी-तूफ़ान में माँ-बाप को छोड़कर आशा हीरो के साथ, उसकी गाड़ी में बैठकर, चल देती है। दूर जाती हुई गाड़ी से धूल उड़ रही है. . . . और यहीं पर पिक्चर समाप्त होता है।"

मेज़ के पास खड़ी हुई सलमा गुलदस्ते के फूल सँवार रही थी।

मेहता ने कहा : "पूरे दो घंटे लिए तुमने कहानी सुनाने में।"

पंडित शिवराम ने गंदे रूमाल से फिर गर्दन का पसीना पोंछा और फिर रूमाल जाकिट की जेब में ठूँसता हुआ सविनय बोला : "कैसी लगी, साहब, कहानी ?"

"आपने मेरे दो घंटे बर्बाद कर दिए !" मेहता झुंझलाकर बोला। जब वह गुस्सा दबाता तो उसके नथने हिलने लगते। पंडित शिवराम नहीं, पर सलमा जानती थी कि मेहता साहब को गुस्सा आ रहा है। "इससे अच्छी तो आपकी पिछली कहानियाँ थीं जो मैं रिजेक्ट कर चुका हूँ। अगर इस कहानी पर पिक्चर बनाया जाए तो पहले ही दिन फ़ेल हो जाए।"

"मगर, साहब —"

मेहता ने बात काट दी। "आप जाइए। कहानी लिखना आपका काम नहीं। यह भी कोई कहानी है !"

पंडित शिवराम को चोट बुरी लगी। वह उठ खड़ा हुआ। "जाता हूँ, साहब," उसने कहा, "मगर एक बात कहे जाता हूँ।"

"क्या ?" मेहता ने साश्चर्य पूछा।

"कि आप नम्बर एक के बेवक़ूफ़ हैं। आपको यह भी पता नहीं कि कहानी किस चिड़िया का नाम है।"

"क्या बकते हो?" मेहता के नथने फूल उठे और उसकी छोटी-छोटी आँखों में सुर्ख़ी फैलने लगी।

"जानते हैं, प्रोड्यूसर साहब? यह कहानी मेरी नहीं है। पिछले साल इम्पीरिअल सिनेमा में *पंछी* पिक्चर ने जुबिली की थी — पूरे पचीस हफ़्ते चला था। यह उसी पिक्चर की कहानी है। और आप कहते हैं पहले ही दिन फ़ेल हो जाएगा। हुँ ! क्या जजमेंट है आपका ! अब हैं न आप बिना दाल के बूदम !"

मेहता तमककर उठ खड़ा हुआ। सलमा ने गुलदस्ते से हाथ खींच लिए।

"गाली देता है, इडिअट !" मेहता ने चिल्लाकर कहा। "जाता है या धक्के मारकर निकलवाना पड़ेगा ?"

"कोई बात नहीं, साहब," दरवाज़े की ओर बढ़ते हुए पंडित शिवराम ने कहा। "ज़िन्दगी में बहुत धक्के खाए हैं, एक धक्का और खा लूँगा। मगर फिर सुन लो एक बार—प्रोड्यूसर की कुरसी पर तो बैठे हो पर कहानी को परखना तुम जैसे गँवारों का काम नहीं। तुम नम्बरी बेवक़ूफ़ हो—बल्कि—बल्कि बेवक़ूफ़ों के सरदार हो !"

"गेट आउट," मेहता ज़ोरों से चीख पड़ा और मेज़ पर रखी हुई घंटी उठा कर उसने पंडित शिवराम की खोपड़ी पर ताक कर दे मारी। पंडित शिवराम दरवाज़ा खोलकर चट बाहर जा चुका था। घंटी दरवाज़े के पट पर पड़ी और पट का शीशा टूटकर चकनाचूर हो गया।

बाहर खड़ा हुआ छोकरा नीचे गिरे हुए शीशे के टुकड़े बटोरने लगा और अंदर सलमा पास आकर मेहता के कंधे को थपथपाने लगी।

"डैम स्वाइन ! मुझे उल्लू बनाने आया था !" मेहता कुरसी पर धड़ाम से बैठ गया।

सलमा मेज़ से टिककर मेहता के सामने खड़ी हो गई। "छोड़िए भी उसकी बातों को! माथाफिरा मालूम होता है।" फिर उसने एक पाँव मेहता की कुरसी पर टिकाकर पूछा : "अच्छा, यह तो बताइए, कल शाम को आप मेरे यहाँ आए क्यों नहीं ?"

मेहता शांत हो रहा था। "अरे क्या बताएँ ! कुछ लोग आ गए थे। मैं बस उन्हें टाल ही नहीं सका।"

"जाइए, आप बड़े वो हैं। अम्मा ने कित्ता-कुछ खाना बनाया था आपके लिए और आप साहब आए ही नहीं !" सलमा ने रूठते हुए कहा।

"आय एम सॉरी !"

"बस आपने सॉरी कह दिया और मैं खुश हो गई न ?"

मेहता मुस्कुराया। "नहीं, सलमा," वह बोला, "तुम्हें खुश करने के लिए मेरे पास एक खुशखबरी है।"

"वह क्या मैंभी सुनूँ।"

"डिरेक्टर अलीहुसेन का पिक्चर मैं जल्दी ही शुरू कर रहा हूँ।"

"तो ?"

"तुम्हारे लिए उसमें बड़ा अच्छा रोल है।"

"हीरोइन का रोल ?"

"है तो साइड हीरोइन का रोल, मगर—"

"मगर हीरोइन के रोल से अच्छा है।"

"हाँ।"

"ना," सलमा ने कहा और तनकर खड़ी हो गई। "साइड हीरोइन और सेकंड हीरोइन के रोल करते-करते तो मैं थक गई।" फिर उसने आवाज़ में दर्द और होंठों पर मुस्कराहट बिखेरकर कहा: "अगर आप मुझे हीरोइन नहीं बनाएँगे तो और कौन बनाएगा? ... मेहता साहब, याद है आपने वादा किया था।"

आँखों से चश्मा उतारकर मेहता उसके काँच को मुँह से भाँप दे रहा था। काँच को रूमाल से पोंछता हुआ नीची निगाह से ही बोला: "वादा तो किया था, सलमा, पर वैसी स्टोरी भी तो मिलनी चाहिए। अगर कोई ऐसी स्टोरी मिले जिसमें तुम्हारे लायक़ हीरोइन का रोल —"

सलमा उत्तेजित हो खिल उठी। "सच?" उसने कहा। "सच आपको ऐसी कहानी की तलाश है?"

"हाँ, लाओ ढूँढ़कर, फिर देखो मैं तुम्हें हीरोइन बनाता हूँ या नहीं।" चश्मा आँखों पर लगाकर मेहता ने सलमा की ओर देखा और मुस्कुराने लगा।

"ठहरिए, मेरी निगाह में है एक कहानी," सलमा ने खुश होकर कहा और फिर कुछ सोचकर मेज़ पर रखी हुई टेलिफ़ोन डिरेक्टरी उठाकर उसके पन्ने उलटने लगी। "हाय क्या कहानी है!"

बॉम्बे टाइम्स के दफ़्तर में टेलिफ़ोन की घंटी बजी। टेलिफ़ोन ऑपरेटर ने टेलिफ़ोन कान से लगाया और फिर ऑफ़िस बॉय को पुकारकर कहा: "रहमान साहब से बोलो उनका फ़ोन है, कोई मेम साब बात करना माँगता। जरूरी काम है।" ऑपरेटर पारसी थी। *बॉम्बे टाइम्स* के प्रेस और दफ़्तर में बहुत-से पारसी भरे हुए थे क्योंकि कम्पनी के मालिक पारसी थे।

उपसम्पादक के साथ उसके कमरे में बैठा हुआ अब्दुल रहमान 'सिनेमा पेज' के प्रूफ़ जाँच रहा था। *बॉम्बे टाइम्स* में 'सिनेमा' और 'स्पोर्टस्' के पेज रहमान के ज़िम्मे थे। बुधवार को स्पोर्टस् का पेज और शनिवार को सिनेमा का पेज निकला करता था। रहमान इलाहाबाद युनिवर्सिटी का एम. ए. था और अंगरेज़ी अच्छा लिखता था, अच्छा आर्ट क्रिटिक समझा जाता था। पारसी कम्पनी के पारसी मालिक रहमान से खुश थे यद्यपि वह पारसी न था।

"रहमान साब, आपका फोन है," गोपाल ने अंदर आकर सूचित किया।

"कहना, नहीं हैं," रहमान ने प्रूफ़ से दृष्टि हटाए बिना ही उत्तर दिया।

"कहती हैं जरूरी बात करना है।"

"अबे देखता नहीं काम में हूँ इस — क्या कहूँ? किसका फ़ोन है?"

"कोई मेमसाब है।"

उपसम्पादक मर्चेंट ने मुस्कुराकर रहमान की ओर देखा। रहमान उठ गया। बाहर जाकर उसने पेरिन के हाथ से टेलिफ़ोन लिया।

"हलो — हलो — जी हाँ, बॉम्बे टाइम्स के आफ़िस से मैं अब्दुल रहमान बोल रहा हूँ। आपकी तारीफ़? सलमा! कौन सलमा?...ओह मिस सलमा — फ़िल्म स्टार! हाँ, फ़रमाइए मेरे लायक़ क्या — जी?...ओह, आप कैलाश सिन्हा को — जी हाँ, मै उन्हीं के साथ रहता हूँ। कुछ कहना है उन्हें?...ठीक...ठीक....ओह, ज़रूर....जरूर शाम को घर पर मुलाक़ात होगी उनसे....जी हाँ, मैं ज़रूर कह दूँगा उनसे। बड़ी खुशी हुई आपसे बात करके। आदाबअर्ज़।"

रहमान लौटकर फिर प्रूफ़ जाँचने लगा। टेबल पर रखी हुई चाय ठंडी हो गई थी। जिधर उधर काग़ज़ात बिखर रहे थे। लकड़ी का बिना वार्निश किया हुआ कैबिन था। लकड़ी की आलमारी में कुछ पुरानी किताबें, शब्दकोष, और दैनिक की पुरानी प्रतियों की गड्डियाँ रखी हुई थीं। दीवारों के कोनों में और पंखे के फलों में जाला लगा हुआ था। फ़र्श पर बिछा हुआ लिनोलिअम जगह-जगह फट रहा था। बाहर मशीनें चल रही थीं और बड़े ज़ोरों की खड़खड़ाहट हो रही थी, सर्वत्र गीले काग़ज़ व स्याही की बू फैल रही थी, और रहमान व मर्चेन्ट शांत बैठे हुए अपने अपने प्रूफ़ जाँच रहे थे।

चार बजे दफ़्तर का काम समाप्त करके रहमान ने धोबी तलाव से कोलाबा के लिए बस पकड़ी और सीधा *सी* व्यू पहुँचा। ज़ीना चढ़कर अपने कमरे पर आया। दरवाज़ा खुला हुआ था और फ्रांसिस धोबी से कपड़े ले रहा था।

"क्या बात है, फ्रांसिस, बिगड़ क्यों रहे थे? नीचे तक तुम्हारी आवाज़ सुनाई दे रही थी!"

"धोबी के बच्चे ने देखो तुम्हारे बुशकोट की बटनें तोड़ दीं," बुशकोट खोलकर फ्रांसिस दिखाने लगा।

"क्यों भई, रामदीन, यह क्या शरारत है। नायलॉन के क़ीमती बटन अगर तू हर धोब में साफ़ करता जाएगा तो, बेटा, हमारी महीने भर की कमाई तो बटनों में ही चली जाएगी।"

"नहीं साब, छोकरी से खता हो गई। इस्त्री करते-करते टूट गई उसके हाथ से।"

"अबे, तो छोकरी को क्यों देता है इस्त्री करने? तू कर न अपने हाथ से।"

"अब से मैं ही करूँगा साब। थोड़े पैसे दे दो।"

"कितने पैसे हैं?" रहमान ने पूछा।

"सात धोब के हैं, साब।"

रहमान ने जेब से पाँच रुपये का नोट निकाल कर धोबी को पकड़ाते हुए कहा: "यह ले — अभी पाँच रुपये दे जा हिसाब में।"

धोबी ने नोट ले लिया और कपड़ों की गठरी उठाकर चला गया।

"सिगरेट पिलाओ, रहमान," फ्रांसिस ने कहा।

रहमान ने जेब से गोल्ड फ्लेक का पैकेट निकालकर फ्रांसिस को पकड़ा दिया।

"कैलाश कहीं गया हुआ है क्या ?" रहमान ने पूछा।

"अंदर नहा रहा है।"

रहमान उस नई शिल्पकृति के सामने जाकर खड़ा हो गया और उसे ग़ौर से देखने लगा। फ्रांसिस ने अपने हाथों से ही लकड़ी का एक पाया बनाया हुआ था जिस पर मूर्ति को मढ़ रहा था।

"कैसी है ?" फ्रांसिस ने पूछा।

"निहायत गंदी और भद्दी है," रहमान ने उत्तर दिया। "तुम्हारी यह स्टेच्यू रात भर मेरे ख्वाब में आती रही। दफ़्तर में भी आज दिन भर इसने पीछा किया। यार तुझे क्या हो गया है ? ऐसी भद्दी-भद्दी चीज़ें क्यों बनाता है ?"

कैलाश अंदर से नहाकर गीला तौलिया लपेटे बाहर आया और रहमान की बातें सुन मुस्कुराने लगा।

"तुमने देखा, कैलाश, इस पहलवान औरत को देखा ? फ़्रांसिस का यह नया आर्टिस्टिक क्रिएशन है। इसका पेट देखना ज़रा। और दूसरी आँख कहाँ गई, साहब ? यह औरत है या जानवर ?"

फ्रांसिस मुस्कुराया और पलटकर उसने रहमान से कहा : "औरत भी जानवर ही होती है और जानवरों में भी औरतें होती हैं। पर तुम नहीं समझोगे इन बातों को।"

रहमान हँसा। "तुम ही बताओ, कैलाश, भला इस मोटी अम्मा में तुम्हें कोई आर्ट दीखता है ?"

"मैं समझता हूँ," कैलाश ने कहा, "कि फ्रांसिस की कृतियों में यह सबसे उत्तम कला-कृति है। तुम्हारा क्या ख़याल है, फ्रांसिस ?"

"कहना मुश्किल है," फ्रांसिस बोला। "क्या सच में तुम्हें यह इतनी पसन्द है ?"

"*इट्स ए ब्यूटी !*" कैलाश ने प्रशंसा की।

रहमान, जो कभी कैलाश को, कभी फ्रांसिस को और कभी मूर्ति को ताक रहा था, बोला : "मुझे कोई यह तो समझाए कि इसका पेट इतना फूला हुआ क्यों है ?"

"पेट में बच्चा है," कैलाश ने कहा।

रहमान अचंभित हो मूर्ति को घूरने लगा फिर बोला : "हो सकता है, पर यह है बड़ी भद्दी। *आर्ट मस्ट बी ए थिंग ऑफ़ ब्यूटी*।"

यह तो अपनी-अपनी समझ पर है, कैलाश ने कहा। "*सेंस ऑफ़ आर्ट, स्पेशि-अली सेंस ऑफ़ फ़ाइन आर्टस्, इज़ आलवेज़ ए कल्टिवेटेड फ़ैक्टर*।"

"यानी तुम्हारा मतलब है कि मुझमें—"

फ्रांसिस बीच में बोल पड़ा : "तुम में फ़ाइन आर्टस् को समझने या परखने की तमीज़ नहीं।"

"*मिट्टी*। वही सुनाई थी मैंने सलमा को।"

"*दैट्स ए ग्रेट स्टोरी,*" फ़ांसिस ने कहा।

"हाँ," रहमान ने समर्थन किया, "बहुत बढ़िया है वह कहानी। क्या ग़ज़ब के कैरेक्टर्स हैं। क्या वंडरफुल सिचुएशन्स हैं! और क्लाइमैक्स — क़यामत का क्लाइमैक्स है! जान निकल जाती है सुननेवाले की! और तुम सुनाते भी ग़ज़ब का हो, कैलाश!"

कैलाश मुस्कुराया। "कब का अपॉइंटमेंट है? कल दस बजे का?"

"दस बजे का।"

दूसरे दिन सवेरे नौ बजे कैलाश ने कोलावा से 'ए रूट' बस ली जो दादर जाती थी। आज लगभग पंद्रह दिनों से कैलाश बेकार था। नौकरी खोकर वह मुक्त तो हो गया था पर अब उसे अपनी बेकारी बुरी तरह खल रही थी।

"फ़िक्र न करो, यार," उस दिन फ़ांसिस ने उससे कहा था जब उसे यह पता चला कि उसकी नौकरी जाती रही। "मेरे और रहमान के होते हुए तुम किसी बात की फ़िक्र न करो।" रहमान भी ताव खाकर बोल पड़ा था : "उस सरला की बच्ची की यह हिम्मत हो गई कि तुम्हें गाली दे। अपने को समझती क्या है साली दो टके की औरत। भगवान ने सूरत क्या दी सिनेमा स्टार बन गई! सुना है परेल में एक छोटे से ब्लॉक में रहा करती थी पहले। इसका बाप टेलिफ़ोन कम्पनी में मामूली क्लर्क था। पर अब देखो — क्या नख़रे हैं हरामज़ादी के! .... पर यह तुमने बहुत अच्छा किया, कैलाश, जो इस्तीफ़ा देकर निकल आए। आख़िर तुम एक ग्रैज्युएट हो, ख़ान्दानी हो। उस उल्लू के पट्ठे शांतिभाई के यहाँ नौकरी करना ही तुम्हारी ग़लती थी। पैसा है इन सालों के पास पर दिमाग़ रत्ती भर नहीं — और — और तमीज़, मैनर्स, एटिकेट्स से तो बिलकुल ख़ाली हैं। अरे 'टूट तो सकते हैं हम लेकिन लचक सकते नहीं।'"

कैलाश सोच रहा था कितने अच्छे हैं उसके दोस्त। कितनी हिम्मत बँधाई थी उसकी उस दिन उन दोनों ने! कितना दिलासा दिलाया था। तमाम दिन वह दोनों उसकी तबीअत बहालाए रखते हैं, उसे यह महसूस नहीं होने देते कि उसकी नौकरी जाती रही, वह बेरोजगार और बेकार है। चार साल पहले की उसे एक घटना याद हो आई। तब वह बम्बई नया-नया आया हुआ था। एक दिन लोकल ट्रेन में बैठकर वह गिरगाँव से अंधेरी जा रहा था। डिब्बे में बैठे हुए एक गुजराती सज्जन क्राफ़र्ड मार्केट से एक गुड़िया खरीदकर घर ले जा रहे थे। उनके साथ उनकी सात-आठ साल की बिटिया भी थी। रास्ते भर वह बच्ची गुड़िया से खेलती रही। गुड़िया चलती भी थी, और आँखें भी खोलती-बंद करती थी, और कूँ-कूँ बोलती भी थी। गुड़िया विलायती थी। गुड़िया को देखकर कैलाश ने साश्चर्य उस सज्जन से पूछा था :

"कहाँ ख़रीदी आपने यह गुड़िया ?"

"क्राफ़र्ड मार्केट से।"

कुछ साल हुए, जब वह नागपुर में था और कॉलेज में पढ़ रहा था, ऐसी ही एक गुड़िया कैलाश के चाचा विलायत से लाए थे जिसे देखकर सारे पड़ोसी ताज्जुब करते थे। वैसी गुड़िया नागपुर की दुकानों में नहीं मिलती थी, शायद बम्बई में भी नहीं मिलती होगी। इसीलिए कैलाश पूछ बैठा:

"अच्छा ! बम्बई में मिल जाती है ऐसी गुड़िया ?"

"बम्बई में क्या नहीं मिलता, भैया," वह सज्जन बोले। "माँ, बाप और नौकर को छोड़ बम्बई में सब कुछ मिलता है।"

उस सज्जन के कथन में कितनी सच्चाई थी ! वह वाक्य कैलाश को सदा याद रहा : "माँ, बाप और नौकर को छोड़ बम्बई में सब कुछ मिलता है।" सच है, बम्बई में अच्छा नौकर नहीं मिलता। और आज, बस में अपनी सीट पर बैठा हुआ, कैलाश अपने मन में कहने लगा कि दोस्त भी बम्बई में नहीं मिलता। कितना भाग्यशाली है वह कि उसे बम्बई में दोस्त मिल गया, और वह भी एक नहीं दो — दो मिल गए। कितने अच्छे हैं उसके दोस्त — फ्रांसिस और रहमान। एक गोआनीज़ क्रिश्चिअन है और दूसरा मुसलमान, और वह स्वयं हिंदू है। दोस्ती में ज़ात-पाँत और धर्म का भेद-भाव नहीं होता, जिस प्रकार प्रेम में भी नहीं होता।

कैलाश ने कहानी की फ़ाइल खोली और देखने लगा। थोड़ी देर बाद उसे कहानी प्रोड्यूसर मेहता को सुनानी होगी। इस कहानी पर उसका भविष्य निर्भर है। आज दस बजे उसकी क़िस्मत का फ़ैसला होने वाला है। बायकला ब्रिज पर बस रुक रही थी।

"मिस्टर, ज़रा पाँव हटाइए —"

कैलाश ने, जो पाँव पर पाँव रखे बैठा फ़ाइल देख रहा था, पाँव सीधे किए और फ़ाइल से नज़र हटाकर ऊपर को देखा।

"थैंक्स्," युवती ने कहा और तभी दोनों की आँखें चार हुईं।

मालूम नहीं युवती ने कैलाश को पहचाना या नहीं परंतु कैलाश पहचान गया उस युवती को। वही युवती थी जो उस रात कोलाबा पर समुद्र में कूद कर जान देने को तत्पर थी और जिसकी जान कैलाश ने बचाई थी। युवती पास से निकलकर बस से उतर पड़ी। कैलाश ने मुड़कर देखा युवती एक गली में चली जा रही थी। इतने में घंटी बजी और बस चल पड़ी।

यानी यह लड़की कोलाबा से यहाँ तक उसी की बग़ल में बैठी रही और उसे पता भी न चला ! वह सोच रहा था। पता कैसे चलता ? जब वह कोलाबा में चढ़कर बस में बैठा था, उसने देखा था कोई युवती खिड़की के पास बैठी खिड़की के बाहर देख रही थी। कैलाश जल्दी में युवती के पासवाली ख़ाली सीट पर बैठ गया था और बैठते ही अपने विचारों में खो गया था। उस रात जलदीप के क्षणिक प्रकाश में देखी

हुई उस लड़की की सूरत उस घटना के बाद से उसे उसी प्रकार याद थी जिस प्रकार किसी अपरिचित व्यक्ति की स्वप्न में देखी हुई सूरत जाग आने पर याद रहती है। यानी कैलाश को युवती का चीख़ना-चिल्लना और उसकी भावभंगिमा याद थी परंतु सूरत बराबर याद न थी। उसने एकाध बार याद करने का प्रयत्न भी किया था परंतु उसे सूरत याद न आई थी। अगर वह यथार्थवादी चित्रकार होता तो उस युवती का चित्र, लाख स्मरण करने पर भी, न बना पाता। हाँ, प्रभाववादी चित्र अवश्य बन जाता जिसका शीर्षक होता "कोलावा की एक रात", या "जलदीप के प्रकाश में," या "टूटा हुआ दिल," या "जल-समाधि"। पर आज, दिन के उजाले में, फिर से देखकर कैलाश वह सूरत पहचान गया, उस युवती को पहचान गया, और अब वह सूरत उसे याद रहेगी। अगर कैलाश यथार्थवादी चित्रकार होता तो अब उस युवती का यथार्थ चित्र बना सकता था, यद्यपि आज दिन के उजाले में भी उसने एक झलक मात्र ही देखी थी।

'कौन होगी यह युवती?' वह सोच रहा था। 'बायकला में क्यों उतरी? क्या वह बायकला में रहती है? उस गली में रहती है जहाँ वह जा रही थी? . . . . कौन थी वह? . . . .'

कैलाश ने बाज़ू की खाली सीट पर, जहाँ अभी-अभी वह युवती बैठी हुई थी, दृष्टि डाली। सीट की गद्दी दबी हुई थी। कैलाश ने गद्दी पर हाथ रखा। गद्दी अब भी गरम थी।

•

"तुम आज फ़िल्म इंडस्ट्री के सबसे बड़े हीरो हो, हमारे देश के सबसे बड़े हीरो। जो हीरोइन कहोगे तुम्हारे साथ में इस पिक्चर में देने को तैयार हूँ, फिर अली हुसेन जैसा डिरेक्टर है। और क्या चाहिए?"

"माफ़ कीजिएगा, मेहता साहब, मगर मैं अली हुसेन को बड़ा डिरेक्टर नहीं समझता। मैं पिछले साल *जीवन नैया* में उनके साथ काम कर चुका हूँ। मुझे बड़ी तकलीफ़ हुई। वह आदमी जाहिल है . . . . इसके अलावा मेरे पास वक़्त भी तो नहीं — अभी छै-सात पिक्चर्स हैं मेरे पास। अब आप ही बताइए —"

मेहता के दफ़्तर का स्विंग डोर खुला और स्टूडिओ की पोशाक में सजी हुई सलमा ने अंदर प्रवेश किया। *बॉम्बे स्टूडिओज़* में सलमा 'परमेनेंट आर्टिस्ट' थी। वैसे बाहर काम करने की मेहता ने उसे अनुमति दे रखी थी। सलमा पर हर लिबास फबती थी। हरे रंग की जीन्स पर पीली जर्सी पहने हुए थी और पलकों के ऊपर हलके नीले रंग का शेड लगाया हुआ था, होठों पर सिंदूरी लिपस्टिक और नाख़ूनों पर सिंदूरी नेल पॉलिश था।

"हलो, रजनीकान्त! तुम यहाँ क्या कर रहे हो?" सलमा ने अन्दर आते ही पूछा।

"मेहता साहब का हुक्म था, मैं आ गया," रजनीकान्त ने उत्तर दिया। "शूटिंग चल रहा है तुम्हारा?"

"हाँ, अभी शॉट देकर आ रही हूँ। पहला ही शॉट था।"

मेहता ने सलमा से रजनीकान्त की शिकायत करते हुए मुस्कुराकर कहा: "आध घंटे से मना रहा हूँ इन्हें। जो दाम माँगेंगे देने को तैयार हूँ, मगर इन्होंने शायद तय कर लिया है कि हमारी कम्पनी में काम नहीं करेंगे। क्यों, रजनी?"

"मेहता साहब तो यूँही शर्मिंदा कर रहे हैं। मेरे पास वक़्त कहाँ है, सलमा।"

सलमा मुस्कुराने लगी।

"ख़ैर, फिर कभी सही," मेहता ने कहा।

छोकरा चाय का ट्रे लिए इसी समय अंदर आया।

"जी हाँ, ज़रूर; फिर कभी मिलेंगे। अच्छा तो मैं चलूँ।"

मेहता बोला: "भई, चाय तो पीते जाओ—तुम्हारे लिए मँगाई थी।"

रजनीकान्त बैठ गया। सलमा चाय बनाने लगी। और टेबल पर रखे हुए डिक्टाफ़ोन में सेक्रेटरी दीक्षित की आवाज़ आई: "कोई कैलाश सिन्हा आपसे—"

"हाँ, हाँ, उन्हें अंदर आने दो," सलमा ने चट डिक्टाफ़ोन की बटन दबाकर कहा और दीवार पर लगी हुई बिजली की घड़ी की ओर देखा। बराबर दस बज रहे थे।

कैलाश अपनी फ़ाइल लिए अंदर आया।

सलमा ने कैलाश का उपस्थित जनों से परिचय कराया। "आप हैं कैलाश सिन्हा। और आप हैं मेहता साहब—*बॉम्बे स्टूडिओज* के मालिक और प्रोड्यूसर। आप मिस्टर रजनीकान्त हैं—*इंडिआज़ हीरो नंबर वन*।"

"बहुत ख़ुशी हुई आपसे मिलकर," कैलाश ने कहा।

"*सो प्लीज्ड टु मीट यू*," रजनीकान्त बोला।

"बैठिए," मेहता ने कहा। "आपके पास कोई स्टोरी है मैंने सुना? मिस सलमा बड़ी तारीफ़ कर रही थीं!"

"जी हाँ, है तो एक कहानी।"

"आपकी कोई कहानी पहले फ़िल्म में आ चुकी है?"

"जी नहीं।"

"आप कब से फ़िल्म लाईन में हैं?"

"जी सात साल होने आए।"

"अब तक क्या करते थे आप?"

"असिस्टंट डिरेक्टर था मैं—डिरेक्टर पुरी साहब के साथ—*ग्रेट इंडिआ पिक्चर्स* में।"

"हूँ....सुनाइए, कहानी सुनाइए।"

सलमा ने तीनों को चाय दी और एक प्याली ख़ुद भी ली।

"यह कहानी है, मेहता साहब," कैलाश कह रहा था, "जिसमें कोई विलन नहीं है, कोई वैम्प नहीं है। कहानी का थीम है कि हम में जो अच्छे लोग हैं उनमें इतनी-कुछ बुराइयाँ होती हैं और जो बुरे लोग हैं उनमें इतनी-कुछ अच्छाइयाँ होती हैं कि हमें कोई हक़ नहीं है कि हम किसी को भी भला-बुरा कहें। कहानी का नाम है *मिट्टी*।"

सिन्हा के कथन से प्रभावित होकर रजनीकान्त ने चाय की प्याली के ऊपर से कैलाश की ओर देखा। "बहुत खूबसूरत नाम है!" उसने कहा। *मिट्टी*!"

सलमा ने रजनीकान्त की ओर से मेहता की ओर दृष्टि घुमाई।

"सुनाइए," मेहता ने कहा।

"सुनाओ, कैलाश," सलमा बोली। "सुनाओ।"

और कैलाश ने सुनाना शुरू किया : "भारत का कोई भी एक शहर है जहाँ एक वकील साहब का होना संभव हो। बाबू बैजनाथ शहर के नामी वकील हैं। हम दिखाते हैं कि रात को वकील साहब अपने दफ़्तर में बैठे एक ख़ून का केस स्टडी कर रहे हैं। इस समय दीवार पर टँगी हुई घड़ी ग्यारह बजाती है। अचानक वकील साहब देखते हैं कि उनके कमरे का दरवाज़ा खुलता है और एक अधेड़ स्त्री, जिसकी सूरत से पता चलता है कि कभी यह ज़रूर सुंदर रही होगी, कमरे में प्रवेश करती है....वकील साहब हक्केबक्के-से बैठे के बैठे रह गए, उनकी आँखें फटी की फटी रह गईं। बड़ी देर बाद उनके मुँह से निकला : 'कौन-मोहनी?....तुम — तुम — ज़िंदा हो!'

"'हाँ, मैं ज़िन्दा हूँ,' मोहनी ने उत्तर दिया।

"'तुम कहाँ थीं अब तक?'

"'यह एक लम्बी कहानी है जिसे सुनाने के लिए मेरे पास समय नहीं,' मोहनी ने वकील साहब की आँखों में देखते हुए उत्तर दिया।

"वकील साहब के माथे पर पसीना फूट आया। 'तुम — तुम — इतनी रात के — यहाँ — मेरे घर क्यों आई हो?' उन्होंने सकपकाते हुए पूछा।"

"'बदला लेने।'

"'किससे?'

"'तुमसे।'"

कैलाश सुनाए जा रहा था कहानी और तन्मय होकर मेहता और रजनी सुने जा रहे थे। दस के ग्यारह बजे और अब बारह बज रहे थे। इस बीच सलमा चुपके से खिसकी और सेट पर जाकर एक शॉट भी दे आई और आकर फिर कहानी सुनने लगी।

कैलाश कह रहा था :"....गोपाल की बेहोशी दूर होने लगती है। गोपाल को होश आता है। वह कुसुम की ओर देखता है। दोनों की आँखों में आँसू छलछला आते हैं। कुसुम का हाथ अपने हाथों में लेकर गोपाल कहता है : 'तुम देख रही हो, कुसुम?

....तुम्हारा गोपाल तुम्हारे पास लौट आया है!' कुसुम रो पड़ती है और गोपाल से लिपट जाती है। वकील साहब और मोहनी भी रो रहे हैं....सहसा गोपाल के हाथ की पकड़ ढीली होकर उसका हाथ कुसुम के हाथ पर फिसल जाता है और कुसुम की छाती पर गोपाल का सर लटककर भारी हो पड़ता है। कुसुम, जो रो रही थी, चुप हो जाती है और गोपाल का मृत शरीर अपनी छाती से लिपटाए खिड़की के बाहर —बहुत दूर को —क्षितिज के भी परे —आकाश के भी परे —कहीं —शून्य दृष्टि से देखने लगती है, फिर, हलके-हलके, एक बहुत ही बारीक-सी मुस्कान उसके चेहरे पर उदित होने लगती है....यहाँ पर फ़ेड *आउट होता* है—कहानी समाप्त होती है।"

कैलाश ने फ़ाइल बंद की। कमरे में बिलकुल सन्नाटा था।

"*ब्यूटिफुल स्टोरी*!" रजनीकान्त ने कहा।

"है न कहानी ग़ज़ब की?" सलमा बोली!

"बहुत ही बढ़िया! क्या एण्ड है! मेहता साहब, ले लीजिए यह कहानी।"

मेहता ने कहा "हूँ.... कहानी तो आपकी बुरी नहीं है, मिस्टर सिन्हा —"

"बुरी नहीं है!" सलमा बोल पड़ी।

रजनीकान्त ने कहा: "मेहता साहब, ऐसी कहानी रोज़-रोज़ नहीं सुनने मिलती। इसमें एक ख़ास रंग है, एक अदा है, एक अनोखापन है, एक —"

"मैं भी तो यही कह रहा हूँ —कहानी अच्छी है। मगर, मिस्टर सिन्हा, आप तो जानते हैं कि आपका अभी कुछ नाम नहीं है —मेरा मतलब कहानी अच्छे लेखकों की चलती है।"

"नहीं, मेहता साहब," कैलाश ने कहा, "कहानी अच्छे लेखकों की नहीं चलती, कहानी खुद अच्छी हो तो चलती है।"

"ख़ैर... नए लेखक की कहानी में रिस्क तो है। क्या लेंगे आप इस *स्टोरी* की क़ीमत? मैं ज्यादा न दे सकूँगा।"

"कहानी मैं आपको बेचूँगा नहीं, मेहता साहब, बल्कि इसे मैं आपको भेंट करूँगा।"

"मुफ़्त में?"

"जी हाँ, मुफ़्त में।"

"मगर यह कैसे —कुछ तो पैसे —"

"आपकी मरज़ी में आए उतने पैसे दे दीजिएगा, न आए न दीजिएगा, मैं कोई बहस या हुज्जत न करूँगा।"

"करना भी नहीं चाहिए। आपकी कहानी लेकर हम पिक्चर बनाएँगे, आपका नाम होगा, आपकी क़ीमत बढ़ेगी।"

रजनीकान्त ने सलमा की ओर देखा। दोनों एक दूसरे को देख मुस्कराए। वह

जानते थे प्रोड्यूसर मेहता अपनी कुरसी का और कैलाश की ख़स्ता हालत का पूरा फ़ायदा उठा रहा था। दुर्बल को बली ने सदा ही दवाया है। फ़िल्म व्यवसाय में भी यही होता है।

"मगर एक शर्त है, मेहता साहब," कैलाश बोला।

"क्या?"

"इस पिक्चर को डिरेक्ट मैं करूँगा।"

मेहता, जो अपनी रिवॉलविंग चेअर पर पीछे टिककर बैठा था, झटके से आगे को झुक आया। "मगर यह कैसे हो सकता है! आप बिलकुल नए हैं। आपके साथ कोई आर्टिस्ट काम करने को तैयार नहीं होगा।"

रजनीकान्त ने अपना सुनहरी सिगरेट-केस मेहता की ओर बढ़ाया। मेहता सिगरेट नहीं पीता था। रजनी ने हाथ कैलाश की ओर बढ़ाया और कहा: "मैं तैयार हूँ, मेहता साहब। इनकी यह कहानी ले लीजिए और इन्हें ही इस पिक्चर का डिरेक्टर बनाइए। जिस कुशलता से इन्होंने कहानी सुनाई है, मुझे पूरी आशा है, उतना ही सुंदर, उतनी ही कुशलता से यह डिरेक्ट भी करेंगे। मैं इस पिक्चर में काम करने को तैयार हूँ।"

मेहता को रजनी की बातोंसे आश्चर्य हुआ। कहीं रजनी मज़ाक़ तो नहीं कर रहा? अभी-अभी तो उसने किसी भी मूल्य पर अली हुसेन के चित्र में काम करने से साफ़ इनकार कर दिया था और अब वही रजनीकान्त सिन्हा की कहानी से इतना प्रभावित हुआ है कि कह रहा है उसे यानी सिन्हा को यानी इस नवसिखिए को डिरेक्टर बना दो, वह काम करेगा। मेहता ने सलमा के चेहरे को ताका। सलमा स्वयं विस्मित नेत्रों से कभी रजनीकान्त को और कभी कैलाश सिन्हा को घूर रही थी, उसके खुले हुए होंठ मुस्कुरा रहे थे। यानी आँखों का भाव होंठों के भाव से पृथक् था।

मेहता ने कहा: "अच्छी बात है.... मुझे मंजूर है, मिस्टर सिन्हा। आपकी यह कहानी आज से हमारी हुई और आप इस पिक्चर के डिरेक्टर तय हुए।"

सलमा उठी और लपकर उसने कैलाश के दोनों हाथ अपने हाथों में लेकर उन्हें ज़ोरों से मसलते हुए कहा: "कॉनग्रैच्युलेशन्स, कैलाश! .... कितनी अच्छी टीम है! कैलाश सिन्हा — डिरेक्टर, रजनीकान्त — हीरो, और सलमा — हीरोइन!"

मेहता और रजनीकान्त साश्चर्य एक दूसरे की सूरत देखने लगे।

कैलाश ने धीरे-से अपना हाथ छुड़ाकर सलमा का हाथ थपथपाया। "अ — सलमा — मैं तुम्हें बहुत-बहुत धन्यवाद देता हूँ," उसने कहा। "तुमने मुझे यहाँ बुलवाकर मेहता साहब को कहानी सुनवाई, मुझे डिरेक्टर बनवाया — मैं — मैं तुम्हारा आभारी हूँ — पर मुझे अफ़सोस के साथ कहना पड़ता है कि इस कहानी की हीरोइन का रोल तुम्हें नहीं जँचेगा। तुम भी आख़िर यही चाहती हो न कि पिक्चर अच्छा बने? .... मैं तुम्हें सेकंड हीरोइन का रोल दूँगा। तुम कुसुम का नहीं गीता का रोल करो।"

सलमा की आँखें छलछला उठीं। "फिर सेकंड हीरोइन का रोल ! मेरी क़िस्मत में ही शायद सेकंड हीरोइन का रोल लिखा हुआ है !.... कोई बात नहीं, कैलाश, मेरे लिए तुम अपना पिक्चर न बिगाड़ो। मैं करूँगी। सेकंड हीरोइन का रोल ही सही।"

कैलाश ने सलमा के हाथों से जान लिया कि सलमा व्यंग्य नहीं कर रही है, सच्चे और अच्छे हृदय से बोल रही है। नेत्र भेद छिपा जाते हैं, हाथ नहीं छिपा पाते। किसी से हाथ मिलाने पर हाथों के स्पर्श से कैलाश को उसके मन की भावना का सदा ही ज्ञान हो जाया करता है। सलमा का हाथ उसने हलके-से दबाया। दबाव में आश्वासन और कृतज्ञता भरकर उसने कहा : "तुम्हारा यह एहसान मुझ पर उधार रहा, सलमा।" फिर बोला :" मेहता साहब, काम कब शुरू किया जाए ?"

"अगले हफ़्ते कोई मुहूर्त निकलवा लीजिए और उसी शुभ दिन *मिट्टी* का मुहूर्त कर लीजिए। अभी आठ-नौ दिन बाक़ी हैं। तब तक सारे आर्टिस्ट तय कर लिए जाएँ। मेरे ख़याल से हीरोइन के लिए सरला देवी ठीक रहेगी। बॉक्स-ऑफ़िस स्टार है, फिर फ़्री लांसर है—"

सलमा को इस सुझाव से आग लग गई। "हुँ—सरला देवी !.....सौ जनम लेगी तो उससे कुसुम का रोल नहीं बनेगा ! ....उसी चुड़ैल ने तो ख़ामख़ा इनसे झगड़ा करके इन्हें नौकरी से निकलवाया था !"

"सरला देवी मेरे साथ नहीं चलेगी," कैलाश ने कहा।

"सरला को कुसुम का रोल जँचेगा भी नहीं," रजनीकान्त ने अपनी राय दी।

मेहता बोला : "ख़ैर, और कोई बॉक्स-ऑफ़िस वाली बड़ी ऐक्ट्रेस ढूँढ़िए। कल-परसों तक सोचकर बताइए। बहुत मिलेंगी। शालिनी से मिलिए। पुख़राज से मिलिए। मुक्ता बैनर्जी से मिलिए।"

"जी बहुत अच्छा," कैलाश ने कहा।

"और, मिस्टर सिन्हा, आपकी स्टोरी, स्क्रीन प्ले, डायलॉग और डिरेक्शन के लिए आपको पाँच सौ रुपया महीना दिया जाएगा। आपको मंज़ूर है ?"

सलमा ने मन में कहा : 'पूरा क़साई है !'

रजनीकान्त सोच रहा था : 'पाँच सौ रुपया महीना ! इतने की तो मैं सिगरेट पी जाता हूँ महीने भर में।'

और कैलाश मन में सानन्द सोच रहा था कि उसकी क़िस्मत का सितारा आज चमक उठा है—पूरे सात साल की सतत प्रतीक्षा के बाद। जिस चांस की, जिस अवसर की उसे चाह थी वह उसे आज नसीब हुआ है। आज वह डिरेक्टर बना है।

मेहता फिर पूछ रहा था : "मंज़ूर है आपको ?"

अपने मन के भाव मन ही में छिपाकर कैलाश ने उत्तर दिया : "जी—मुझे मंज़ूर है।"

३

मुक्ता बैनर्जी से मिलने कैलाश उसके घर जुहू गया हुआ था और इस समय वहीं से लौट रहा था। ऊँचे दरजे की सिने अभिनेत्रियों में मुक्ता बैनर्जी अंतिम अभिनेत्री थी जिसने *मिट्टी* में मुख्य नायिका के पात्र का अभिनय करने से इनकार कर दिया। किसी ने दाम बढ़ाचढ़ाकर माँगे तो किसी ने समयाभाव का कारण बताया तो किसी ने कुछ और बहाना कर दिया। वास्तव में उन सबको वही एतराज़ था जो मुक्ता बैनर्जी को था। औरों ने तो लपेटकर बात की पर मुक्ता ने साफ़ ही कह दिया : "मैं कहानी सुनना नहीं चाहती। कहानी अगर मान भी लूँ कि बहुत बढ़िया है तब भी मैं आपके डिरेक्शन में काम नहीं कर सकती। आप बिलकुल नए हैं। अब तक आप असिस्टेंट थे। मैं ख़ुद इतनी बड़ी स्टार नहीं हूँ कि एक पिक्चर के फ़ेल हो जाने से मुझे कोई धक्का न लगे। आप तो जानते हैं शालिनी और पुखराज के साथ मेरा कितने ज़ोरों का कॉम्पिटिशन रहा है। वह दोनों लकी हैं और मैं हमेशा अनलकी रही हूँ। उन्हें हमेशा बड़े-बड़े डिरेक्टर मिले हैं और मुझे हमेशा ऐसे-वैसे ही। इसका फल यह हुआ कि बॉक्स ऑफ़िस वैल्यू में वह दोनों मुझसे आगे बढ़ गईं। सरला देवी का तो कहना ही क्या है। नहीं, मिस्टर सिन्हा, मैं अपने करीअर के साथ कोई रिस्क लेने को तैयार नहीं। मेरा एक और पिक्चर अगर फ़ेल हो गया तो मुझे कलकत्ते भाग जाना पड़ेगा.... फिर आप मेरे पास अपनी इच्छा से नहीं आए, मजबूर होकर आए हैं, शालिनी और पुखराज ने इनकार कर दिया तब आए हैं.... मेरी बातों का आप बुरा न मानें। मेरी लाचारी है।"

कैलाश सोच रहा था कि वह मुक्ता के घर गया ही क्यों। बदतमीज़ ने एक कप चाय तक न दी। घंटा भर बिठा कर रखा और जब मिली तो दो मिनट में टका-सा जवाब देकर टरख़ा दिया। कितने मतलबी और बेमुरव्वत होते हैं यह सिनेमा स्टार! जब नए-नए सिनेमा में प्रवेश करते हैं तो भीगी बिल्ली की तरह दबे-दबे और मौक़ा तलब रहते हैं! पर एक बार उन्हें मौक़ा मिल गया कि वह शेर हो जाते हैं और अपने से छोटों के साथ वही बेमुरव्वती का सुलूक करते हैं जो उन ख़ुद के साथ पहले हुआ जा चुका है। कितना संघर्ष है आपस में! कितनी प्रतियोगिता, कितनी जलन और ईर्ष्या है! कला के पुजारी कहलानेवाले यह कलाकार लोग कितने खोखले, ओछे

और कपटी हैं। मुँह पर मेकअप पोतकर कैमरे के सामने हावभाव दिखाते हैं, गाते, मुस्कुराते और रोते हैं तो लोग उनपर मुग्ध होकर उनकी पूजा करने लगते हैं; पर हीरो और हीरोइनों और अन्य कलाकारों का यह समाज कला से — सच्ची कला से — कितना अपरिचित है! मानवता से कितनी दूर है! इन पुते हुए चेहरों के पीछे कितनी अमानुषता, कितनी पशुता, कितना उतावलापन, कितनी हिंसा, बेरहमी, छल, कपट और धोखेबाज़ी छिपी हुई है! किसी को किसी की परवाह नहीं। किसी को आँख की शर्म नहीं। सबको अपनी-अपनी पड़ी है। परोपकार, सेवा और कर्तव्य की किसी को चिंता नहीं। परंतु दीखने में कितने विनयशील, सभ्य और शिष्ट दिखाई देते हैं — यह पुते हुए चेहरे। ज़रा कुरेदकर देखो तो कितनीका लिख है अंदर! जंगली पशु हैं यह कलाकार। और यह प्रोडच्यूसर और फ़िनांसिअर तो उनसे भी गए बीते हैं। अगर कलाकार पशु हैं तो प्रोडच्यूसर और फ़िनांसिअर हिंस्र पशु हैं। मानवता और कला से दोनों को कोई वास्ता नहीं। एक चालाक है और दूसरा बेईमान।

मुक्ता ने चाय तक को नहीं पूछा क्योंकि उसका कोई मतलब न था, अगर मतलब होता तो चाय तो दूर, रात का खाना भी खिला देती और खाने के बाद अपनी गाड़ी में सैर को भी ले जाती — हैंगिंग गार्डन या वरली पॉइंट! सरला देवी को ही देखो! तीन साल पहले एक्स्ट्रा बनी स्टूडिओ-स्टूडिओ की खाक छानती फिरती थी। प्रोडच्यूसरों के दफ़्तरों के बाहर टूटी हुई बेंच पर भूखी-प्यासी घंटों बैठी रहा करती थी। प्रोडच्यूसर तो दूर उसके सेक्रेटरी और चपरासी तक की खुशामद, चापलूसी किया करती थी। और आज वही सरला 'सरला-देवी' बनी हुई है, शेरनी बनी हुई है, जिसे उसे खाने को दौड़ रही है!....

विचित्र है यह फ़िल्म व्यवसाय भी! सब एक दूसरे के ख़ून के प्यासे हैं!..... मगर नहीं, ऐसा नहीं कह सकते। अगर यहाँ सरला देवी और मुक्ता बैनर्जी हैं तो रजनीकान्त भी तो है, सलमा भी तो है। सब व्यक्ति एक समान नहीं होते। रजनी भी एक कलाकार है, पर उसके मस्तिष्क में कला और कलाकृति को परखने की शक्ति है तथा हृदय में धड़कता हुआ दिल है और दिल की धड़कन में भावना है....पर सिनेमा की ही क्यों मेख निकाली जाए? दूसरे व्यवसायों का भी तो यही हाल है। समाज और राजकारण में भी तो यही होता है जो सिनेमा में होता है। वहाँ भी तो सदा एक दूसरे का गला दबाकर खुदकी अंटी भर लेने की ताक में लोग रहते हैं। राजकारण में तो कदाचित् हद दरजे की अमानुषता और अनीति पाई जाती है। धन के लालची से नाम और कीर्ति के लालची अधिक ख़तरनाक होते हैं। नेताओं की व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षाएँ उन्हे अन्धा और पशुसम बना देती हैं और तभी तो समाज में, देश में और समस्त संसार में सदा एक विचित्र कोलाहल, एक विचित्र असंतोष फैला रहता है। मनुष्य सहज ही में गाय, बैल, बकरी और कुत्तों से प्यार करने लगता है। परंतु 'प्राणियों में मनुष्य श्रेष्ठ है', 'मनुष्यता की रक्षा करो', 'अपने पड़ोसियों को प्यार

करो' यह सिखाने के लिए कृष्ण और बुद्ध और ईसा को जन्म लेना पड़ा है।

तो क्या कैलाश को अपने पिक्चर के लिए कोई हीरोइन न मिलेगी? मिलेगी, उसके दिल ने कहा, पर संभव है अच्छी हीरोइन, बड़ी हीरोइन, बॉक्स ऑफ़िस नामवाली स्टार शायद न भी मिल पाए। इस विचार ने कैलाश को निराश कर दिया। उसे लगने लगा कि उसका बना बनाया महल, ताश के घर की नाईं, टूटकर बिखरा जा रहा है....

बोरीबंदर पर जब बस रुकी तो कैलाश उतर पड़ा। आज वह सचमुच थक गया था। नैराश्य उसकी थकान को और भी तीव्र कर रहा था। *न्यू एम्पायर रेस्तोराँ* में कैलाश ने गरम-गरम कॉफ़ी पी तो उसकी थकान दूर हो गई। *ईवनिंग न्यूज़* की संध्या की प्रति पढ़ता हुआ वह पैदल ही फ़ुटपाथ पर चलने लगा। पाँव चलने की उसे आदत भी थी और शौक़ भी था। जब वह तारापूरवाला की दूकान के सामने से गुज़र रहा था तो अंदर की आलमारियों में सजी हुई रंगबिरंगी आवरणवाली पुस्तकें उसका मन लुभाने-ललचाने लगीं, उसे ज़ोर-ज़ोर से पुकारने-बुलाने लगीं। कैलाश दूकान के अंदर चला गया। पुस्तकों से कैलाश को प्रेम था। उसकी पहली प्रेमिका भी एक पुस्तक ही थी — उसके पिता की आलमारी में रखी हुई मोरोक्को-लेदर की जिल्दवाली पुस्तक, जिसपर अंगरेज़ी के सुनहरी अक्षरों में लिखा हुआ था: *दी अरेबिअन नाइट्स*। जब वह बहुत छोटा था — जब पिताजी उस पुस्तक को खोलकर उसमें से कभी-कभी उसे *अलाउद्दीन चिराग़* या *अलीबाबा और चालीस चोर* की कहानियाँ सुनाया करते थे — तभी से वह उस मोरोक्को जिल्दवाली पुस्तक पर आशिक़ हो गया था, हारूनउलरशीद की हसीन बेगम पर वह बाद में आशिक़ हुआ। और तब से असंख्य पुस्तकें उसकी प्रेमिकाएँ बनीं, तबसे उन असंख्य पुस्तकों की असंख्य नायिकाओं से और इतिहास की असंख्य वीरांगनाओं और रूपवतियों, गुणवतियों से उसने प्रेम किया है। हारूनउलरशीद की तरह ही कैलाश के हरम में भी हज़ारों बेगमें रही हैं — हर समाज की, हर देश और संस्कृति की बेगमें रही हैं उसके हरम में।

तेंदूलकर द्वारा संपादित *महात्मा गांधी* के आठ भागों का सेट सामने रखा हुआ था। कैलाश उस सेट को ललचाई दृष्टि से ताकने लगा। क़ीमती था। अभी वह उतने पैसे कहाँ से लाए? वह आगे बढ़ गया। एक आलमारी से उसने *पेटन प्लेस* निकाली, ग्रेस मेटेलिअस नामक अमरीकन महिला का सनसनीख़ेज़ उपन्यास था। हॉलिउड ने इस उपन्यास पर फ़िल्म भी बनाई हुई थी। कैलाश ने उपन्यास ख़रीद लिया और वापस जो मुड़ा तो किताबों के एक रैक के पीछे उसे दो गोरे-गोरे पाँव दिखाई दिए। महीन खद्दर की सफ़ेद साड़ी के नीचे चप्पलों में दो पाँव थे। घुटनों से नीचे का भाग ही दिखाई दे रहा था। युवती विदेशी थी क्योंकि पाँव बहुत गोरे थे। पीठ किए खड़ी थी। शायद आलमारी की पुस्तकों का निरीक्षण कर रही थी।

कौतूहलवश कैलाश आलमारी का घेरा काटकर सामने बढ़ा तो उससे आँखें चार हो गईं।

"हलो, कैलाश!"

"हलो, रेजि! तुम—तुम यहाँ कैसे! ....कब आए?" कैलाश ने अंगरेज़ी में पूछा।

"परसों," रेजि ने अंगरेज़ी में उत्तर दिया।

कैलाश हँसने लगा। ज़ोर-ज़ोर से हँसने लगा।

"क्यों? हँस क्यों रहे हो?"

"जानते हो, रेजि, आलमारी के पीछे से तुम्हारी पाँव देखकर मैं समझा कोई औरत है—पर तुम निकले! यह मद्रासी लुंगी पहनना कबसे शुरू कर दिया तुमने?"

"मद्रास में ही शुरू किया," रेजिनाल्ड विलसन ने उत्तर दिया। "अक्लमंदों का कथन है कि अगर रोम में रहो तो वही करो जो रोमन करते हैं।"

"पोशाक है अच्छी! तुम्हें ख़ूब जूँचती है! वाह! लुंगी, कुरता और मद्रासी दुपट्टा भी! .....कै दिन रहे दक्षिण में?"

"पूरे दो महीने।"

"यानी तुम जबसे बम्बई से गए हो मद्रास ही रहे?"

"नहीं, सारे दक्षिण भारत की सैर करता रहा हूँ।"

"कैसा रहा तुम्हारा भ्रमण?"

"बहुत अच्छा। इतना कुछ देखा है मैंने इस भ्रमण में कि अगर आज मर जाऊँ तो जीवन की कोई अभिलाषा बाक़ी नहीं समझूँगा। चलो, कहीं चलकर कॉफ़ी पीएँ।"

"बीअर क्यों नहीं?"

"क्योंकि तुम्हारी बम्बई में प्रॉहिबिशन है। अभी कॉफ़ी पीएँगे, शाम को बीअर।"

"बीअर मैं होटल में नहीं पी सकता—मेरे पास परमिट नहीं," कैलाश बोला।

"होटल में नहीं, किसी के घर चलेंगे।"

"किसके?"

"चलो, पहले कॉफ़ी पीने चलें, फिर बताऊँगा।"

"चलो।"

कैलाश और विलसन दूकान के बाहर निकल गए।

"कहाँ चलेंगे?" कैलाश ने पूछा। "*बॉल्गा* या *कॉफ़ी हाऊस*?"

"*कॉफ़ी हाऊस* चलें। वहीं बैठकर बातें करेंगे।"

कैलाश और विलसन पैदल ही चल पड़े थे। फुटपाथ पर एक अंगरेज़, खद्दर की भारतीय पोशाक पहने, एक भारतीय के हाथ में हाथ डाले, पैदल चला जा रहा था और किसी ने आँख उठाकर उनकी ओर देखा तक नहीं। आज—नेहरू के इस स्वतंत्र भारत में—कितने ही अंगरेज़, फ्रेंच, जर्मन, रूसी और अमरीकन तरह-तरह

के लिबास पहने सड़कों पर स्वतंत्र विचरा करते हैं। बरमी, इंडोनेशिअन और चीनी भी घूमते फिरते हैं। राह चलते लोग विदेशिओं को इस तरह देखने के आदी हो गए हैं। सब भाई हैं — भाई-भाई हैं — सब एक हैं। नेहरू.... न्यूट्रल पॉलिसी.... शांति.... पंचशील.... पंचवर्षीय योजना ....शांति ....नेहरू....भारत .....महात्मा गांधी.....नेहरू....नेहरू....जनसाधारण के विचार इसी परिधि में घूमते थे। तभी तो एक खद्दरधारी अंगरेज़ और एक भारतीय — भाई-भाई की तरह — बम्बई के फ़ुटपाथ पर सहजभाव से चले जा रहे थे। वरना १६४७ से पहले के पराधीन भारत में यही अंगरेज़ बहादुर खद्दर पहनने के जुर्म में, गांधी टोपी पहनने के जुर्म में देशभक्त भारतवासियों को जेल में ठूँस दिया करते थे, गोली का निशाना बना दिया करते थे! साँप और नेवले की दुश्मनी हो गई थी अंगरेज़ों और भारतवासियों में। पर आज — इतनी जल्दी — अंगरेज़ भारतीय का मित्र बन बैठा है। गांधी की अहिंसा! माउंटबैटन की राजनीति! नेहरू का आदर्शवाद!

रेजिनाल्ड विलसन समाचार पत्र-प्रतिनिधि था। छोटा-मोटा उपन्यासकार भी था। तीन महीने पहले विलायत से भारत आया हुआ था — भारत का भ्रमण करने। वास्तव में वह एक पुस्तक लिख रहा था — *नेहरू इज़ इंडिआ* — और उसी के लिए सामग्री जुटा रहा था। कैलाश को इस पुस्तक के कुछ अध्याय, टाइप लिपि में, वह दिखा चुका था। कैलाश को उसका लेखन निष्पक्ष और अच्छा लगा था। रेजिनाल्ड लेखक चतुर था। लगभग दो महीने पहले *कोलाबा कॉर्नर* में अचानक उससे कैलाश की भेंट हो गई थी और फिर मित्रता हो गई। उसके बाद वह मद्रास चला गया। तब उसके दाढ़ी और मूँछें थीं — फ्रेंच कट। अब जो लौटा है तो चेहरा साफ़ है। तब वह सूट-बूट में था, अब लुंगी-कुरता-दुपट्टा में है। आर्टिस्ट आदमी है। लेखक भी तो आर्टिस्ट ही होता है। बिना दाढ़ी के उसकी आयु और भी कम मालूम होती है। वैसे वह लगभग पैंतीस के होगा, होना चाहिए। मस्त मौला है। हो सकता है यह उसका पोज़ हो, मेकअप हो.... इन राजनैतिक व्यक्तियों का, इन समाचार पत्रों के प्रतिनिधियों का कोई भरोसा नहीं। कितने पानी में होते हैं कहना मुश्किल है। और फिर अंगरेज़ों के बारे में तो कुछ भी अनुमान लगाना असंभव

जहाँगीर के दरबार में घुटने टेककर लम्बा सलाम ठोंकते हुए जब अंगरेज़ ने तिजारत के लिए दरख़ास्त की थी तो किसने सोचा था कि एक दिन वह सारे भारत का स्वामी बनकर दिल्ली के तख़्त पर चढ़ बैठेगा?

कॉफ़ी पीते हुए कैलाश ने कहा: "और सुनाओ, रेजि। कहाँ-कहाँ हो आए?"

"यहाँ से मैं मद्रास गया। एस. के. पाटिल ने कुछ परिचय-पत्र दिए हुए थे कुछ लोगों पर। वहाँ राजगोपालाचारी से मिला। वहाँ से पाँडेचेरी चला गया एक हफ़्ते के लिए, पर दो दिन ही रहकर लौट आया। फिर केप कामोरिन गया, वहाँ से त्रावणकोर, कोचीन होता हुआ बंगलोर आया। वहाँ मैसूर महाराजा से मिला,

सी. वी. रमन से मिला, फिर —"

"क्या ख़याल है तुम्हारा ?"

"काहे के बारे में ?"

"हम भारतवासियों के बारे में। क्या तुम भी समझते हो कि हमें स्वतंत्रता समय से पहले मिल गई ? क्या हम स्वतंत्रता के लिए तैयार नहीं हैं ?"

रेजिनाल्ड मुस्कुराया। चम्मच से चीनी मिलाने लगा। फिर बोला : "तुम आदमी होशियार हो। यही सवाल मैंने अपने आपसे कई बार किए हैं। नहीं, तुम्हें स्वतंत्रता समय से पहले नहीं मिली। समय आने पर ही तुमने गांधी को पैदा किया। अगर समय न आया होता तो गांधी भी पैदा न हुआ होता। तुम्हारा दूसरा सवाल ज़रा टेढ़ा है। शायद यह बात किसी अंश तक मैं सच समझता हूँ कि स्वतंत्रता के लिए तुम लोग तैयार नहीं हो — या कहना चाहिए — थे; पर इसका फ़ैसला करने का हक़ सिर्फ़ तुम्हें है, दूसरों को नहीं। यह देश तुम्हारा है। आदमी कितना भी नालायक़ क्यों न हो अपने घर का मालिक वही होता है, और होना चाहिए।"

"क्या हम नालायक़ हैं ?"

"मैं ऐसा समझता था, पहले, जब मैं भारत नया-नया आया था।"

"और अब ?"

"अब नहीं — यद्यपि मैं अभी सारा भारत नहीं घूम पाया हूँ, केवल उत्तर और दक्षिण भारत ही देख पाया हूँ। जो कुछ भी मैंने देखा है — मैं समझता हूँ — काफ़ी कुछ देखा है — उसी के आधार पर में कह सकता हूँ कि तुम लोग नालायक़ नहीं। पर सदियों की ग़ुलामी के कारण तुम लोग शिथिल पड़ गए थे, अपना हौसला और अपना आत्माभिमान खो बैठे थे। फिर तुम्हारा देश हमारे देश की तरह छोटामोटा देश नहीं; यह भारत एक महाद्वीप है जो शैतान की आँत की तरह फैला हुआ है। उत्तर प्रदेश और बम्बई के निवासियों में जो फ़र्क है, मध्यप्रदेश और दक्षिण भारत के लोगों में, उनकी भाषाओं में, उनके रीत-रिवाजों में जितना फ़र्क़ है उतना फ़र्क़ शायद इंग्लैंड और फ़्रांस में भी न होगा। पर फिर भी तुम सब एक हो और तुम्हारा एक देश है — यह बहुत बड़ी बात है। कितनी भाषाएँ हैं तुम्हारे यहाँ, कितने धर्म हैं, कितनी पोशाकें हैं, कितने भिन्न-भिन्न प्रकार के खाने हैं, कितने भिन्न-भिन्न प्रकार की संस्कृतियाँ हैं.... पर फिर भी तुम्हारी संस्कृति एक ही है, फिर भी तुम एकही लोग हो, एक ही राष्ट्र हो। तुम सात अंधों की कहानी सुन चुके हो न ? जो हाथी के शरीर के भिन्न-भिन्न भाग को हाथ से छूकर भिन्न-भिन्न प्रकार के नाम दिए जाते थे ? पर नहीं, वह सातों अंधे थे। न कहीं साँप था, न सूप था, न खम्भा था न दीवार थी। अरे वह तो सामने समूचा हाथी खड़ा था। तुम्हारा देश समूचा हाथी है। इसे परखने के लिए हम किसी एक व्यक्ति विशेष का व्यक्तिगत विश्लेषण नहीं कर सकते। सड़क पर भीख माँगते हुए भिखारी की या रिक्शा चलानेवाले की तसवीर लाकर [illegible]

नहीं कह सकते कि यह भारत है। बस्तर के अर्धनग्न भील भी भारत के प्रतीक नहीं और न *ताज महल* होटल में नाचते हुए बम्बई के सभ्य लोग ही प्रतीक हैं.... और यह भी नहीं कह सकते कि नहीं हैं। बम्बई की मिलों में काम करते हुए मज़दूरों से लेकर अलमोरा के खेतों में हल चलाते हुए किसानों तक, बस्तर के नग्न भीलों से लेकर तंजोर के भारतनाटयम नृत्यकारों तक, बिरला, टाटा, दालमिया से लेकर विनोबा भावे तक, सरला देवी, रजनीकान्त और तुमसे लेकर नेहरू, राजाजी, और अशोक मेहता तक — सब भारत है, आज का भारत। जो कहता है कि नेहरू भारत है और भारत नेहरू वह ग़लत कहता है। केवल अकेला नेहरू ही भारत नहीं....और ऐसा जो यह तुम्हारा भारत है वह भारत नालायक़ नहीं। फिर तुम्हारी उम्र ही क्या है। मेरा मतलब–तुम्हें स्वतंत्र हुए ग्यारह साल भी नहीं हुए। ग्यारह साल के बच्चे के हिसाब से तो तुम बड़े होनहार मालूम पड़ते हो। जब अभी से तुम्हारा यह दबदबा है तो न जाने आगे चलकर क्या कुछ न करोगे।"

विलसन के वक्तव्य से कैलाश प्रभावित हुआ। "तुम्हारा कथन ठीक है," उसने कहा। "तुमने यहाँ का, यहाँ के लोगों का, यहाँ की परिस्थितियों का सुंदर और बड़ा सूक्ष्म विश्लेषण किया है। तुम जैसे विदेशी से मुझे यह आशा न थी। मैं तुम्हें बधाई देता हूँ।"

"धन्यवाद," विलसन ने मुस्कुराकर सर झुकाया।

"पर तुम्हारी पुस्तक का शीर्षक तो शायद था: *नेहरू इज़ इंडिआ*?"

"हाँ, पहले वही टाइटल था। अब मैंने बदल दिया है।"

"अब क्या नाम रखा है?"

"*इन नेहरूज़ इंडिआ*।"

"नाम बहुत बढ़िया है," कैलाश ने कहा। "तुम्हारी कॉफ़ी ठंडी हो गई।"

"कोई बात नहीं, दूसरी मँगाओ।"

कैलाश ने बॉय को पुकारा और दूसरी गरम केतली लाने को कहा। "अच्छा, यह तो बताओ, रेजि, तुम्हें दक्षिण के लोग कैसे लगे?"

"सादे लोग हैं, सरल स्वभाव के। मेरे साथ एक बड़ी विचित्र घटना हुई। एक बार मुझे दो दिनों तक जंगल में आदिवासियों की झोंपड़ियों में रहना पड़ा, ऐसे आदिवासी जिन्हें तुम्हारा *इंडिअन पिनल कोड* 'क्रिमिनल ट्राइब' कहता है। सच मानो, कैलाश, जब मैंने उनसे बिदा ली तो उनकी आँखों में आँसू थे। मेरे साथ उन्होंने चलते समय चावल और नारियल की पोटली बाँध दी। उनका अतिथि सत्कार मुझे जन्म भर याद रहेगा।"

बॉय कॉफ़ी की गरम केतली ले आया। कैलाश ने कॉफ़ी बनाकर प्याली रेजिनाल्ड को दी और अपनी प्याली बनाता हुआ बोला: "और सुनाओ — याद रखनेवाली और कोई बात? और क्या देखा?"

"और कोचीन में यहूदियों का पुराना ऐतिहासिक सिनेगॉग देखा, परिहार लेक और सैंक्चुअरी देखी, वृंदावन गार्डन देखा, नीलगिरी के नीले पहाड़ और टोडा लोग देखे, मलबार का सुंदर प्रदेश देखा, और — और — " रेजिनाल्ड मुस्कुराया — "और कूर्ग की जोंकें देखीं।"

"जोंकें ?" कैलाश ने साश्चर्य पूछा।

"हाँ — कूर्ग की स्त्रियाँ। इतनी सुंदर स्त्रियाँ मैंने भारत में तो क्या दूसरे देशों में भी कम ही देखी हैं।"

"अच्छा !"

"क्या क़द ! क्या रंग ! विशुद्ध सोने की तरह चमकती हैं !"

"सुना है कूर्ग और आसपास के प्रदेश के निवासियों में अरब और यूनान का ख़ून मिला हुआ है।"

"ज़रूर, मिला हुआ होगा। विभिन्न ख़ून के मिश्रण से परंपरा सदा ही बलवान और सुंदर होती है। कभी गए हो कूर्ग ?"

"नहीं।"

"तो एक बार ज़रूर जाओ। वहाँ की स्त्रियों के साथ एक बार सो लोगे तो उसके बाद दूसरी किसी जगह की स्त्रियाँ नहीं जँचेंगी।"

"क्यों ?" कैलाश ने उत्सुकतापूर्वक पूछा। "उनमें ऐसी क्या बात है ?"

"वही तो बता रहा हूँ। जब वह चिमटती हैं तो — सच कहता हूँ — जोंक की तरह ख़ून चूस लेती हैं। यह कमाल की सिफ़त है उनमें !"

कैलाश हँसने लगा। "कितने दिन रहे कूर्ग ?" उसने पूछा।

"दो हफ़्ते।"

"फिर तो तुमने काफ़ी जोंकें चिमटाई होंगी उन दो हफ़्तों में ?"

"अरे, कुछ मत पूछो। मज़ा आ गया ज़िंदगी का। सच मानो, कैलाश, दबाकर न जाने क्या कुछ करती हैं कि सब खिंच आता है और खिंचता ही जाता है।"

"तभी तुम दुबले होकर आ रहे हो। और यह दाढ़ी-मूछें कहाँ मुँड़वाई ? कूर्ग में ?"

"हाँ," रेजिनाल्ड ने हँसकर कहा, "कूर्ग में।" और पाइप में तम्बाकू भरता हुआ वह सोचने लगा। कैलाश को लगा उसे कूर्ग की जोंकें याद आ रही हैं। पाइप सुलगाकर सहसा विलसन ने पूछा : "कैसे हैं तुम्हारे दोस्त — वह आर्टिस्ट और जर्नलिस्ट, क्या नाम उनका — डिसूज़ा और — "

"रहमान," कैलाश ने कहा। "चलो न, मेरे साथ मेरे घर चलो। डिसूज़ा ने एक बढ़िया शिल्पकृति बनाकर तैयार की है जो मैं तुम्हें दिखाना चाहता हूँ।"

"फिर कभी, कैलाश। शायद कल। अगर कल के प्लेन का रिज़रवेशन न मिला तो कल ज़रूर आऊँगा।"

"कल तुम जा रहे हो क्या ?"

कैलाश की समझ में कभी नहीं आई।

"माफ़ करना, आप लोगों को बिठाए रखा मैंने," कहता हुआ रेजिनाल्ड विलसन अंदर कहीं से ड्रॉइंगरूम में आया। वह अब सफ़ेद लिनन के सूट में था।

मिस्टर और मिसेज़ वॉल्टर स्मिथ ने उठकर रेजिनाल्ड से हाथ मिलाया। कैलाश का हाथ अपने हाथ में लेकर रेजिनाल्ड बोला: "कैलाश सिन्हा से मिले हैं आप दोनों? मिस्टर और मिसेज़ वाल्टर स्मिथ।"

"हाँ, हम लोगों ने अपना परिचय स्वयं अपने आप करा लिया है," कैलाश ने उत्तर दिया।

"ठीक किया। बैठिए, मिसेज़ स्मिथ, आराम से बैठिए, बिलकुल बेतकल्लुफ़ होकर, अपना घर समझिए।"

"यह घर है किसका?" मिसेज़ स्मिथ ने पूछा।

"आपने रमनलाल पारिख का नाम सुना होगा," रेजिनाल्ड ने कहा। "लखपति हैं। बम्बई में उनकी मिलें हैं। शायद रेशम की मिलें हैं। उन्हीं का है यह मकान।"

"तो कल तुम्हारा जाना पक्का है, रेजि?" कैलाश ने पूछा।

"हाँ। रिज़रवेशन भी आ गया है।"

"कौनसे प्लेन से जा रहे हो?"

"एअर इंडिआ इंटरनेशनल से।"

"मैं चलूँगा तुम्हें छोड़ने।"

"हम सभी चलेंगे," स्मिथ ने कहा।

इसी समय दरवाज़े पर पड़ा हुआ लाल परदा सरसराया, हटा, और अंदर से रेशमी साड़ी में एक युवती आती दिखाई दी। वह लगभग बाईस के रही होगी। बाल कटे हुए थे, सीधे और मुलायम थे, और जोन ऑफ़ आर्क के बालों की तरह कंधे पर लटक रहे थे। पन्ने के लम्बे-लम्बे झुमके कानों में झूल रहे थे। गला नंगा था पर होंठों पर मुस्कुराहट थी और लम्बे नाख़ूनों पर हरे रंग का क्यूटेक्स लगा हुआ था। कमरे में युवती का प्रवेश प्रभावपूर्ण हुआ और ऐसे लगा मानो मंच पर नाटक की नायिका प्रवेश कर रही थी।

रेजिनाल्ड ने उठकर परिचयात्मक ढंग से कहा: "मेरी मित्र और यजमान रति पारिख। आप मिस्टर और मिसेज़ स्मिथ, और आप कैलाश सिन्हा।"

लोगों ने परस्पर अभिवादन किया।

"कहाँ है? कान्ति कहाँ है?" रेजिनाल्ड ने रति से पूछा।

रति ने मुस्कुराकार कहा: "दवाई लाने बाहर गया है।"

"दवाई! कोई बीमार है क्या?" मिसेज़ स्मिथ बोली।

"ओह!" रेजिनाल्ड हँस पड़ा। "रति का मतलब है व्हिस्की लाने गया है।"

"मैं बीअर तो लेकर आया हूँ अपने साथ," स्मिथ ने कहा।

"आप क्यों लाए ?" रति ने पूछा।

"विलसन ने कहा था।"

"क्यों, रेजि, यह क्या बदतमीज़ी है ! मेरे घर आएँगे यह लोग और बीअर अपनी पीएँगे ?"

"भई बिगड़ो नहीं," रेजिनाल्ड बोला। "मुझे मालूम था तुम्हारे घर ड्रिंक्स नहीं हैं। मैंने कैलाश को बीअर पिलाने का वादा किया था। एकाध बोतल व्हिस्की कान्ति को कहीं से मिल भी सकती है पर आधा दर्जन बीअर की बोतलें तो उसको कोई दोस्त न देगा। इसीलिए मैंने स्मिथ को फ़ोन कर दिया था—हलो, कान्ति, मिली ?"

दरवाज़े पर कान्ति खड़ा मुस्कुरा रहा था। सफ़ेद सिल्क का बुशकोट और मक्खनज़ीन का पैंट और ज़री-काम की हुई सफ़ेद सलीमशाही जूतियाँ पहने हुए था। नंगे सर था। उसके काले बाल पीछे को कढ़े हुए थे जैसे कैलाश काढ़ता था, पर कान्ति के बालों के बीच पतली-सी माँग झलक रही थी।

"मिली," कान्ति ने कहा; "पर एक ही मिली।"

"कहाँ है ?" रति ने पूछा।

"उमा ला रही है," कान्ति ने कहा और अंदर चला आया।

"कहाँ मिली ?"

"उमा के घर। अपने पिताजी के कबर्ड से निकालकर लाई है उमा।"

"उमा भी आई है क्या तुम्हारे साथ ?"

"हाँ।"

"अच्छा हुआ। लड़कियाँ कम पड़ती थीं..... मेरा भाई—" रति ने उपस्थित जनों से मदन का परिचय कराया।

"आपके छोटे भाई या बड़े ?" कैलाश ने पूछा।

"आपका क्या खयाल है ?" रति ने शरारतन मुस्कुराकर पूछा।

मिसेज़ स्मिथ ने मन में कहा : "जरूर छोटा भाई है।" पर वह चुप रही क्योंकि रति ने सवाल कैलाश से किया था।

"मेरा ख़याल है आप दोनों जुड़ुआ भाई-बहन हैं," कैलाश ने कहा।

रति की मुस्कुराहट ग़ायब हो गई और वह तिरछी निगाह से कैलाश को ताकने लगी।

रेजिनाल्ड ने ताली पीटकर कहा : "तुम्हारा अनुमान बिलकुल ठीक निकला।"

रति ने कहा : "आपने तो कमाल कर दिया, मिस्टर सिन्हा ! बताइए तो, कैसे बता दिया ?"

"आप दोनों के चेहरों पर लिखा हुआ जो है," कैलाश ने उत्तर दिया। "सूरत देखकर इतना बता देना मुश्किल नहीं है।"

"मैं तो कभी नहीं बता सकती। मिस्टर और मिसेज़ स्मिथ को देखकर मैं तो समझे हुए थी कि यह दोनों भाई-बहन हैं।"

मिस्टर और मिसेज़ स्मिथ खिलखिलाकर हँस पड़े। कान्ति और कैलाश भी हँसने लगे। रेजि का तो हँसी से बुरा हाल था।

उमा ड्राइवर के हाथ क़ाग़ज़ में लिपटी हुई व्हिस्की की बोतल अंदर लिवा लाई तो स्मिथ ने रेजिनाल्ड की ओर देखा और रेजिनाल्ड ने रति की ओर।

रति ने सबों के साथ उमा का परिचय कराया। उमा जोशी बम्बई के प्रख्यात सॉलिसिटर गोविंदराव जोशी की बेटी थी। वकालत पढ़ रही थी। उसकी दो बड़ी बहनें भी वकालत पढ़ चुकी थीं। पर उसके बाद उन्होंने प्रैक्टिस न की, शादी करके घर बसा लिया। उमा भी शायद कुछ ऐसा ही करने जा रही थी। कान्ति और उमा का परस्पर प्रेम ज़ोरों से भड़का जा रहा था। उमा के भाई न था। सो, गोविंदराव जोशी की यह तीसरी बिटिया भी उड़ी जा रही थी।

तब रति ने कहा : "सुनो, ड्राइवर, स्मिथ साहब की गाड़ी में बीअर की कुछ बोतलें रखी हैं। जाकर ले आओ।"

"बैग रखा है, पीछे की सीट में," स्मिथ ने कहा।

"जाओ, बैग उठा लाओ," कान्ति ने कहा।

ड्राइवर बैग ले आया। उसमें से अलसॉप बीअर की छै बोतलें निकलीं।

इतनी सारी बोतलें देखकर कान्ति ने कहा : "आज क्या इरादा है?"

"कुछ नहीं। बैठकर पीएँगे," रेजिनाल्ड बोला।

कान्ति ने छत के लाइट बुझाकर कोने में रखी हुई पीतल की शमई, जिसमें कपास की बटी हुई पाँच बत्तियां मीठे तेल में डूब रही थीं, जला दी। सफ़ेद वरदीवाला नौकर बर्फ़ और सोडा ले आया, और रेजिनाल्ड ने तीन ग्लासों में व्हिस्की उंड़ेली और तीन में बीअर। मिस्टर और मिसेज़ स्मिथ ने और कान्ति ने व्हिस्की ली; रति ने, कैलाश ने और रेजिनाल्ड ने बीअर। उमा के लिए नारियल-पानी का ग्लास आ गया।

कान्ति ने अपना ग्लास ऊपर उठाकर कहा : "*टु द हेल्थ ऑफ़ मोरारजी देसाई!*"

"यह क्या बदतमीज़ी है!" रति ने भाई को झिड़का।

"बदतमीज़ी की क्या बात है?" कान्ति ने तमककर कहा। "किसी के व्यक्तिगत स्वातंत्र्य को छीनने का अधिकार किसी को नहीं है। प्रॉहिबिशन का क़ानून बनाकर मोरारजी ने सिर्फ़ अपनी ऐंठ पूरी की है। यह क़ानून ग़लत है, अन्यायपूर्ण है।"

रति ने कहा : "प्रॉहिबिशन का क़ानून जनता की भलाई के लिए बनाया है बम्बई सरकार ने। जब समझाने से लोग नहीं समझते तभी क़ानून बनाना पड़ता है।"

"और क़ानून बनाने पर लोगों ने पीना छोड़ दिया, क्यों? आज मोहल्ले-मोहल्ले में चोरी से शराब बनाई जा रही है। समाज की बुराइयाँ दूर करना सरकार का नहीं, समाज-सुधारकों का काम है।"

"अगर कोई क़ानून तोड़े तो इसमें मोरारजी का क्या दोष ?"

उमा ने अपना नारियल-पानी का ग्लास ऊपर उठाया और बहस को रोकते हुए मुस्कुराकर कहा: "टु *अवर* हेल्थ !"

"टु *अवर* हेल्थ," सबने एक साथ परस्पर ग्लास चटकाकर कहा और फिर वह पीने लगे।

शरीर के अंदर गर्मी पहले ही खौल रही थी अब शराब भी खौलने लगी।

कान्ति ने कहा : "भई, कोट निकाल लीजिए आप लोग। आराम से बैठिए।"

स्मिथ ने और रेजिनाल्ड ने और कैलाश ने अपने-अपने कोट निकालकर सफ़ेद वरदीवाले नौकर को दे दिए जो कोट लेकर अंदर चला गया।

स्मिथ ने पूछा : "मिस्टर पारिख से क्या आपकी पुरानी मुलाक़ात है, विलसन ?"

रेजिनाल्ड ने कहा : "नहीं। पिछले महीने ऊटी के बोटेनिकल गार्डन में अचानक हमारी मुलाक़ात हो गई थी। ऊटी से मैसूर तक का सौ मील का सफ़र मैंने इन्हीं के साथ, इन्हीं की मोटर में, तय किया। कान्ति और रति से मैंने वादा किया था कि जब बम्बई आऊँगा तो इन्हीं के घर ठहरूँगा।"

"ऊटी आप भी गईं थीं, मिस पारिख ?" मिसेज़ स्मिथ ने पूछा।

"जी हाँ," रति बोली। "वह तो अच्छा हुआ हम लोग पूना जाते-जाते एक दिन ज़्यादा ठहर गए वरना इधर रेजि पहुँचते और उधर हम दोनों जा चुके होते।"

"आप यहाँ नहीं रहतीं ?"

"हम लोग सब पूना में रहते हैं। यहाँ कभी-कभी आते हैं।"

सहसा कैलाश को याद आया उसकी कमीज़ कंधे पर फटी है। सोचने लगा, कहीं लोगों ने देख तो नहीं लिया। मन में क्या कहेंगे ? अँह, कहने दो, आख़िर ज़्यादा थोड़ी ही फटी है। इतने पीए हुए हैं सारे कि उनका ध्यान भी नहीं जाएगा उसकी कमीज़ की ओर। कम्बख़्त यह धोबीलोग बड़े उल्लू के पट्ठे होते हैं, नई कमीज़ फाड़कर रख दी। उसने देखा रति उठकर उसी की ओर आ रही थी। आकर वह उसके पास बैठ गई।

मुस्कुराकर रति ने कैलाश से कहा : "शायद जबतक कोई आपसे बात न करे आप बात नहीं करते।"

कैलाश भी मुस्कुराया। "नहीं, यह बात नहीं है। मेरे दोस्तों का ख़याल है कि मैं काफ़ी बातूनी हूँ पर — पर — भेद की बात कुछ और है।"

"क्या है ?" रति ने कौतूहलवश पूछा।

"अगर आप वचन दें कि किसीसे न कहेंगी तो बताता हूँ।"

"मैं वचन देती हूँ।"

"मुझे बात करनी नहीं आती।"

रति ठहाका मारकर हँस पड़ी। सिवाय उमा के और किसीने इधर नहीं देखा।

उमा ने देखा और देखकर वह फिर बहस मे लग गई। राजनीति पर ज़ोरों से बहस छिड़ी हुई थी। कैलाश ने देखा कान्ति बहुत अच्छी अंगरेज़ी बोल रहा था। विलायती लहजे से अंगरेज़ी बोल रहा था। रति का ऐक्सेंट भी विलायती था।

"आप दोनों बहुत अच्छी स्टाइल से अंगरेज़ी बोलते हैं," कैलाश ने कहा।

"कान्ति और मैं इंग्लैंड में पढ़ते थे। वहीं से बी. ए. की डिग्री लेकर हम दोनों पिछले साल भारत वापस आए हैं।"

"आप हिन्दी भी ख़ासी बोल लेती हैं।"

"यूँही बोल लेती हूँ। हम लोग घर में गुजराती बोलते हैं। रेजि कह रहे थे आप सिनेमा में काम करते हैं, फ़िल्म डिरेक्टर हैं।"

"हूँ नहीं, होनेवाला हूँ।"

"क्या मतलब?"

"अब तक मैं असिस्टंट डिरेक्टर था पर अब मुझे डिरेक्टर का चान्स मिला है।"

"आपका पिक्चर शुरू हो गया?"

"नहीं, अभी नहीं। होनेवाला है। इसी हफ़्ते मुहूर्त है।"

"क्या नाम है पिक्चर का?"

"*मिट्टी*।"

रति ने बीअर का ठंडा ग्लास अपने गोरे मुलायम गालों पर लगाकर कहा: "अच्छा नाम है। कोई उद्देश्यपूर्ण कहानी मालूम होती है। आपने लिखी है यह कहानी?"

"जी हाँ।"

"रेजि कह रहे थे आप बहुत अच्छा लिखते हैं। शायद आपने सुनाई होगी उन्हें यह कहानी।"

"मैंने उन्हें अपनी कुछ लघु-कथाएँ सुनाई थीं। उनमें से दो-एक उन्हें पसंद आई थीं।"

"आप लघु-कथा भी लिखते हैं?"

"यूँही — मन बहलाने के लिए।"

"आप अपनी कहानियाँ छपवाते क्यों नहीं पुस्तक के रूप में?"

"छपवाई हैं। पिछले साल ही संग्रह निकला है।"

"क्या नाम है पुस्तक का?"

"*मिट्टी के खिलौने*।"

"आप को 'मिट्टी' शब्द से बहुत लगावट जान पड़ती है।"

कैलाश ने बीअर का बड़ा घूँट मुँह में लिया और धीरे-धीरे निगलकर कहा: "जब मैं छोटा था तो बहुत मिट्टी खाया करता था।"

रति ज़ोर से हँस पड़ी। "आप बड़े दिलचस्प आदमी मालूम होते हैं! .... ओह, क्या बकझक लगा रखी इन लोगों ने! हद कर दी! ड्रिंक्स के साथ पॉलिटिक्स

मिक्स कर रहे हैं। कान्ति—ओ कान्ति—यह उमा भी कम नहीं! जब देखो पॉलिटिक्स!"

रति उठी और जाकर उसने रेडिओग्राम पर रेकार्ड चला दिए। बिथोवन की *फिफ्थ सिम्फनी* के संगीत का मधुर सोता रेकार्ड से फूट निकला। रति जब लौटकर कैलाश के पास आई तो उसके कपड़ों की भीनी सुगंध का झोंका उसके साथ आया। सुगंध बहुत ही महीन थी। सलमा भी सेंट लगाती थी, सरला देवी भी लगाती थी, और बड़े बढ़िया क़िस्म के सेंट लगाती थीं यह दोनों, पर उनके सेंट तेज़ थे, नुमायाँ थे। शायद उन्हें सेंट लगाना नहीं आता। सेंट लगाना तो रति को आता है, कि लगाया भी है और नहीं भी।

"आपको पाश्चात्य संगीत का शौक़ मालूम होता है," कैलाश ने कहा।

"पार्टियों में समाँ बाँधने के लिए बैकग्राउंड म्युज़िक के तौर पर वेस्टर्न म्युज़िक अच्छा लगता है।"

"हमारे यहाँ इंस्ट्रुमेंटल म्युज़िक और इंडिअन ऑरकेस्ट्रा के रेकार्डों का तो चलन ही नहीं है, और न काफ़ी रेकार्ड ही बनते हैं। तभी तो शादियों और ख़ुशी की पार्टियों में बजता है 'घर-घर में दीवाली है मेरे घर में अँधेरा!' या 'आँधियाँ ग़म की यों चली बाग़ उजड़के रह गया!"

रति मुस्कुराई। "मैंने कभी पिक्चर की शूटिंग नहीं देखी।"

"मैं दिखाऊँगा। मेरा पिक्चर शुरू हो जाने दीजिए, मिस पारिख, फिर मैं आपको ले चलूँगा शूटिंग दिखाने।"

"धन्यवाद।"

"आपको सिनेमा देखने का तो शौक़ होगा?"

"काफ़ी है मगर मैं अक्सर अंगेरेज़ी पिक्चर ही देखती हूँ, हिन्दी नहीं।"

"क्यों? आप स्वदेशी पिक्चर्स के विरुद्ध क्यों हैं?"

"स्वदेशी पिक्चर्स से विदेशी पिक्चर्स ज़्यादा अच्छे होते हैं।"

"हमारी खद्दर के मुक़ाबले में विदेशी कपड़ा भी तो ज़्यादा अच्छा होता है।"

"कपड़े की बात और है। तन ढँकने के लिए मोटा बोरा भी चलेगा। पर मन और मस्तिष्क के मनोरंजन के लिए बोरा काम न देगा, उसके लिए ऊँची आयडियाज़ चाहियें, बारीक विचार, बारीक ह्यूमर, फ़ाइन ड्रामा, डेलिकेट प्लॉट और—"

"यह सब किसके लिए चाहियें?"

"पब्लिक के लिए, ऑडिएँस के लिए, मेरे लिए।"

"आप ऑडिएँस नहीं हैं। आप पढ़ी लिखी इंटेलेक्चुअल हैं। हमारे हिंदी चित्र देखनेवालों में से नब्बे प्रति शत लोग अनपढ़, या अधपढ़े-लिखे होते हैं। उन्हें मनोरंजन के लिए बोरा भी नहीं बल्कि टाट चाहिये। पाँच आने के टिकट में नौ गाने चाहिये।

हीरो चाहे डॉक्टर हो या जज या वकील या चित्रकार उसे गाना पड़ता है और वह भी सोलो नहीं डुएट, हीरोइन के साथ में बैठकर या मोटर में या ड्राँइंगरूम में पिआनो बजाकर गाना पड़ता है, तब कहीं जाकर उनकी तसल्ली होती है। आप जैसे इंटेलेक्चुवल्स की फ़िल्म निर्माताओं को परवाह नहीं। आप लोगों का होना न होना एकसा है। क्योंकि आप लोग अव्वल तो हमारी फ़िल्में देखने नहीं आते, अंगरेज़ी फ़िल्में देखने जाते हैं, और अगर भूले-भटके आ भी गए तो आप लोगों की संख्या नहीं के बराबर है। हमारे माई-बाप तो ग़रीब जनता है। उन्हींसे हमारी असली आमदनी होती है।"

"मैं पूछती हूँ कि आपकी यह 'ग़रीब जनता' आख़िर हर पिक्चर में गाने क्यों माँगती है और वह भी इतने सारे गाने?"

"क्योंकि उनके मनोरंजन का हमारे देश में और कोई साधन नहीं। दिन भर मिलों में या दफ़्तरों में या खेतों में काम करने के बाद दिल की थकान दूर करने के लिए कोई मनोरंजन तो चाहिए ही। बड़े लोग, सभ्य लोग होटलों में जाते हैं, क्लबों में जाते हैं, नाचते हैं, नचवाते हैं खाते-पीते हैं, सैर-सपाटे करते हैं, रेस खेलते हैं, वग़ैरा, वग़ैरा। बड़ों की दिलजोई के लिए शहरों में सिनेमा के सिवा भी काफ़ी सामान है, पर गरीबों के लिए सिर्फ़ एक सिनेमा ही है। गरीबों के पास इतना पैसा नहीं कि वह घर में रेडिओ रख सकें या कोठे पर जाकर मुजरा देख सकें। मगर एक ग़रीब पाँच आने पैसे फेंककर सिनेमा देख सकता है और पाँच आने में वह ग़रीब प्रेक्षक सरलादेवी, पुखराज, मुक्ता बैनर्जी और शालिनी की संगत में अपनी तबीअत बहला सकता है, उनका गाना सुन सकता है, उनका नाच देख सकता है, मनमुताबिक़ उनके साथ अपने विचारों की दुनिया में फ़्लर्ट कर सकता है।"

"यह बुरी बात है।"

"मगर फ़्लर्ट तो अमीर भी करते हैं। ग़रीब बेचारों का तो सिर्फ़ खयाली फ़्लर्टेशन करके समाधान हो जाता है मगर अमीर तो रीअल फ़्लर्टेशन किया करते हैं।"

रति मुस्कुराई। "आप क्या हैं, मिस्टर सिन्हा? सोशिअलिस्ट या कम्युनिस्ट?" उसने पूछा।

"मालूम नहीं। शायद कुछ भी नहीं। पिछले चुनाव में मैंने वोट काँग्रेस को दिया था," कैलाश ने कहा।

"इसका यह मतलब नहीं कि आप काँग्रेसमैन ही हों।"

"मानता हूँ, यह ज़रूरी नहीं। वोट तो मैंने नेहरू को देखकर दिया था, मिस पारिख।"

"आप मुझे रति कह सकते हैं, मैं भी आपको कैलाश बोलूँगी।"

"यह ठीक है। आप तो पी नहीं रही हैं बराबर।"

"काफ़ी ली है, बस। पी तो आप नहीं रहे हैं।"

"यह दूसरा ग्लास है।"

रति ने कान्ति को पुकारकर कहा कि लोगों के ग्लास भरे। काम कान्ति को बताया था पर रेजिनाल्ड ने पूरा कर दिया।

"खाने का क्या होगा?" कान्ति ने पूछा।

"यहाँ बना तो है काफ़ी, पर शाकाहारी भोजन मिलेगा," रति ने उत्तर दिया।

"चलिए हमारे घर चलें या किसी होटल चलें," मिसेज़ स्मिथ बोली।

"ऐसा करें—गाड़ी भेजकर *ऐस्टोरिआ* से रोस्ट चिकन और नान मँगा लेते हैं, बाक़ी खाना तो यहाँ मिल ही जाएगा," कान्ति ने सुझाया।

प्रस्ताव सबको पसंद आया। कान्ति ने खाना लाने के लिए गाड़ी *ऐस्टोरिया* भेज दी और रेजिनाल्ड ने रेडिओग्रॅम पर बिथोवन हटाकर स्ट्राउस का *विएनावुड* लगाया। लोग झूम उठे—कुछ संगीत से और कुछ शराब से।

रेजिनाल्ड ने पास आकर कैलाश से कहा : "बहुत देर से तुम रति पर कब्ज़ा जमाए बैठे हो! ले जाऊँ थोड़ी देर को?"

कैलाश और रति मुस्कुराए।

"शौक़ से," कैलाश ने कहा।

रेजिनाल्ड ने घुटने के बल बैठकर नाटकीय ढंग से हाथ बढ़ाकर रति से कहा : "*स्वीट लेडी, कैन आय हैव ए डान्स विथ यू?*"

"*विथ प्लेजर,*" रति मुस्कुराकर बोली और रेजिनाल्ड का हाथ पकड़कर उठ गई।

रति और रेजिनाल्ड नाचने लगे। कान्ति और मिसेज़ स्मिथ भी नाच रहे थे। कान्ति को चढ़ी हुई थी। पर मिसेज़ स्मिथ को कान्ति से भी अधिक चढ़ी हुई थी। नाचते—नाचते जब वह चकरियाँ भरती तो उसका नायलॉन का गुलाबी फ्ऱॉक कमर-कमर तक उठ जाता और अंदर से उसका लेसदार रेशमी जाँघिया तथा मोटी-मोटी सफ़ेद रानें झलक पड़तीं।

कैलाश अपना ग्लास लिए खिड़की पर गया जहाँ उमा और वाल्टर स्मिथ खड़े हुए बाहर को ताक रहे थे।

कैलाश को पास देखकर स्मिथ ने कहा : "*इट्स ए ब्यूटिफुल ईवानिंग!*"

"येस," कैलाश ने कहा, "*ऐण्ड इट थ्रेटन्स टु बिकम मोर ब्यूटिफुल!*"

उमा मुस्कुराई। स्मिथ भी मुस्कुराया।

खिड़की के बाहर लगे हुए गुलमोहर के पेड़ की फूलों से लदी हुई डालियाँ हलके-हलके बहती हुई हवा के झोंकों में झूम रही थीं। बगीचे के मरक्युरी लाइट में गुल-मोहर की लाल और सिंदूरी छतरियाँ और भी निखर आई थीं और ऐसा लगता था कि स्ट्राउस की *विएना वुड* की चलित और मदमाती धुन में समूचे पेड़ उन्मत्त हो उठे हैं और उनके भी नायलॉन के लाल-लाल और सिंदूरी फ्ऱॉक कमर-कमर तक उठे जा रहे हैं।

कैलाश ने उमा से पूछा : "नाचिएगा, मिस जोशी ?"

उमा सविनय मुस्कुराई और कैलाश के बढ़े हुए हाथ में उसने अपना हाथ दे दिया। दोनों नाचने लगे।

नाचते-नाचते उमा ने पूछा : "आप रति को कब से जानते हैं, मिस्टर सिन्हा ?"

"शाम से।"

"आज शाम से ?"

"हाँ।"

उमा मुस्कुराई। उसके चेहरे पर वह मुस्कुराहट सुंदर लगी। बिना मुस्कुराहट के भी उसका गोल चेहरा सुंदर था, बहुत सुंदर था। कैलाश ने मन में सोचा : 'गोल चेहरेवाली सुंदर स्त्रियाँ अक्सर ही बेवकूफ़ होती हैं। ज़रूर बेवकूफ़ होनी चाहिए यह भी, यह उमा।' उमा के पाँव कैलाश के पाँव पर रह-रहकर पड़े जा रहे थे। उमा को नाच बराबर न आता था।

"आप तो बहुत अच्छा नाचती हैं!" कैलाश ने कहा।

"मुझे नाचने का शौक़ है," उमा बोली। "सारी रात नाच सकती हूँ बिना थके।"

"बालरूम डांसिंग के सिवा और भी कोई डांस करती हैं आप ?"

"भारत नाटचम करती हूँ। *भारतीय विद्याभवन* में मैंने एक बैले शो भी दिया था पिछले साल। कान्ति से मेरी तभी मुलाक़ात हुई थी।"

"कहाँ, थिएटर में ?"

"हाँ, *भारतीय विद्याभवन* के थिएटर में।"

"और तभी मिस्टर पारिख अपना दिल खो बैठे ?"

उमा हँसने लगी।

"अच्छा नाचती होंगी आप।"

"पता नहीं। कान्ति कहते हैं कि मेरा फ़ीगर डांसर का फ़ीगर है। उन्हें मेरा भारत-नाटचम डांस बहुत पसंद है।"

कैलाश ने मन में कहा : 'लड़की अवश्य कुछ बुद्धू है।' उसका गोल चेहरा सहसा और भी अधिक गोल दिखाई देने लगा। पर इसी समय रेकार्ड समाप्त हो गया और लोग अपने-अपने ग्लासों के पास वापस आने लगे। कान्ति ने स्ट्राउस का ब्लू डेन्यूब लगाया और फिर उमा को लेकर नाचने लगा।

कैलाश ने रति के पास जाकर कहा : "यह डान्स मेरे साथ।"

रति चट-से ग्लास रखकर उठ खड़ी हुई और कैलाश के साथ नाचने लगी। रति को मोटी नहीं कह सकते। उसका शरीर ज़रा भारी अवश्य था पर फिर भी आकर्षक था, काफ़ी आकर्षक था। वह नाचती बहुत हलका थी, अच्छा नाचती थी।

स्मिथ और मिसेज़ स्मिथ के साथ पंखे के सामने बैठकर रेजिनाल्ड पी रहा था और ग़प्पें हाँक रहा था। कैलाश को रति के साथ नाचते देखकर अचानक उसने

कैलाश को आँख मारी। कैलाश मुस्कुरा दिया।

"क्यों, आप मुस्कुराए क्यों?" रति ने पूछा।

कैलाश ने भेद की बात छिपाते हुए चट से कहा : "एक चुटकुला याद आ गया।"

"कौन-सा चुटकुला?"

"मैं कह नहीं सकता।"

"क्यों?"

"ज़रा असभ्य-सा है।"

"कोई बात नहीं। बताइए।"

"गंदा है। काफ़ी गंदा है।"

"जब आपके दिमाग़ में आ ही गया है तो मुँह से कह भी दीजिए।"

"लेडीज़ से ऐसे चुटकुले नहीं कहे जाते, नहीं कहे जाने चाहिएँ।"

रति ने कैलाश के कंधे पर, जहाँ उसकी कमीज़ फटी थी, ज़ोरों से नाखून गड़ाकर कहा : "तमाम लिंगात्मक भेदों को भूलकर आप मुझसे बात कर सकते हैं — मानो — मानो — मैं भी — मुझे भी लड़का समझकर बात कर सकते हैं। बताइए न?"

"सच में बता दूँ?"

"पैरिस में मैं नाइट रिव्यूज़ और फ़्लोर शोज़ देख चुकी हूँ, फिर आपका चुटकुला क्यों नहीं सुन सकती?"

"अच्छा, तो सुनिए मिस —"

"मेरा नाम रति है।"

"ओह! हाँ रति — सुनिए — सुनो : एक हेल्थ मिनिस्टर अपनी पत्नी को लेकर एक बार डेअरी फ़ार्म पर निरीक्षण के लिए गए।"

"कहाँ की बात है? किस देश की?"

"कहीं की भी हो सकती है। समझ लीजिए हमारे ही देश की बात है।"

"अच्छा तो? फिर क्या हुआ?"

"हाँ, तो उस हेल्थ मिनिस्टर ने देखा तबेले में सैकड़ों गाएँ दुही जा रही हैं। बाल्टियाँ भर-भरकर उनके थनों से दूध निकाला जा रहा है। सारी व्यवस्था देखकर वह हेल्थ मिनिस्टर बहुत खुश हुए मगर एक बात उनकी पत्नी की समझ में न आई। वह सोचने लगी गायों के मुँह लम्बे क्यों हुआ करते हैं। आख़िर उसने एक ग्वाले से, जो दूध दुह रहा था, पूछ ही तो लिया। 'यह तो बताओ, ग्वाले,' उसने कहा, 'तुम्हारी गाय का मुँह इतना लम्बा क्यों है?' ग्वाले ने हेल्थ मिनिस्टर की पत्नी की ओर ताककर तुरंत ही उत्तर दिया : 'देवीजी, आप ही बताइए, क्या आपका मुँह भी इसी तरह लम्बा न निकल आएगा अगर आपको साँड़ के साथ साल भर में सिर्फ़ एक ही दिन के लिए रखा जाए मगर दूध आपसे रोज़-रोज़ निचोड़ा जाए?'"

"अच्छा चुटकुला है," रति ने मुस्कुराकर कहा। कैलाश ने सोचा था चुटकुला सुनकर रति हँस पड़ेगी। मगर वह हँसी नहीं, ज़रा-सा मुस्कुराकर रह गई। "चुटकुला गंदा तो नहीं है," उसने कहा। "मगर यह बताइए कि आपको गाय का लम्बा मुँह इस वक्त कैसे याद आ गया?"

"मिस उमा जोशी का गोल मुँह देखकर," कैलाश ने उत्तर दिया।

रति हँस पड़ी। बहुत ज़ोरों से हँसने लगी। कैलाश का हाथ छोड़कर वह सोफ़े पर बैठ गई और पेट पकड़कर हँसने लगी। उसकी हँसी देखकर सब लोग हँसने लगे। रति की हँसी लगनेवाली हँसी थी।

"क्या मज़ाक़ है?" रेजिनाल्ड ने पूछा।

"हाँ, भई, हमें भी तो बताओ क्या बात है," उमा ने कौतूहलपूर्वक कहा।

रति और ज़ोरों से खिलखिला पड़ी। कैलाश भी हँस रहा था। सारे लोग हँस रहे थे।

सफ़ेद वरदीवाले नौकर ने अंदर आकर कहा: "खाना लग गया, साब।"

कैलाश मन में सोच रहा था: 'विचित्र है यह लड़की—यह रति! इतना अच्छा चुटकुला सुनाया पर उसे हँसी न आई और उमा के गोल मुँह की बात सुनकर इस तरह हँस रही है कि अभी दम तोड़ देगी हँसते-हँसते।'

"चलिए, अंदर चलें, खाना तैयार है," कान्ति कह रहा था। "आइए, मिस्टर सिन्हा।"

"चलिए," कैलाश ने कहा।

४

बॉम्बे टाइम्स के दफ़्तर से काम समाप्त करके जब रहमान शाम को *सी व्यू* वापस लौटा तो बाहर कुछ छोकरे बेमौसम पतंग उड़ा रहे थे। बड़ा शोर था। रहमान ने नज़र ऊपर उठाई तो दुसरी मंज़िल की बालकनी में खड़ी हुई उस अरब रंडी से आँखें चार हो गईं। रहमान मुस्कुराया। मुलताना भी मुस्कुराई और फिर उसने नज़र फिरा ली, ऊपर की ओर, आकाश की ओर। रहमान ने देखा पेंच पड़ा हुआ था और दोनों ओर से ढील पर ढील दी जा रही थी। रहमान सीढ़ियाँ चढ़ने लगा और उधर माँझे पर माँझा रगड़ खा रहा था। रहमान को बचपन याद हो आया। इलाहाबाद में पतंग लूटने वह मीलों दौड़ा करता था। सहसा सफ़ेद पतंग पार हो गई और गलियों और बीच की बालू पर लौंडे दौड़ने लगे। रहमान ठिठका, फिर मुड़ा, फिर रुका और फिर आकाश की ओर देखने लगा। हरीवाली पतंग नाग की नाईं फन फैलाए अकड़ी हुई थी और सफ़ेद पतंग यह जा और वह जा होती हुई बालू पर गिरी जा रही थी। लौंडे झपट रहे थे और फिर एक ने डोरा पकड़ ही तो लिया, दूसरा भी लपका और फिर बहुतेरे झपट पड़े और फिर पतंग की धज्जियाँ उड़ी जा रही थीं। रहमान मुस्कुराया : 'लौंडे सदा लौंडे ही रहेंगे,' उसने सोचा। दरवाज़ा भिड़ा था। वह अंदर चला गया। अंदर मोढ़े पर कैलाश बैठा खिड़की के सामनेवाली ईंट की दीवार को घूर रहा था।

"अमाँ अब तुम कौन-सी उलझन में पड़े हुए हो? क्या सोच रहे हो?" रहमान ने पूछा।

कैलाश मानो सोते से जाग पड़ा, गर्दन घुमा कर उसने रहमान की ओर देखा, बोला : "परसों मेरे पिक्चर का मुहूर्त है। अगर कल शाम तक मुझे हीरोइन न मिली तो इतनी मुश्किल से डिरेक्शन का जो चान्स मिला है मुझे वह भी जाता रहेगा।"

रहमान ने देखा कैलाश की समस्या वास्तव में बिकट थी और उसकी हालत दयनीय। "इतनी तो ऐक्ट्रेसेज हैं, यार, तुम्हारी फ़िल्म इंडस्ट्री में," उसने कहा। "किसी एक को ले लो। मगर तुम्हारा भी टेस्ट अजीब है। सुषमा को तुमने ना कर दी। सरला देवी से तुम्हारी लड़ाई है। चंचल कुमारी तुम्हारी नज़रों में कोई ऐक्ट्रेस ही नहीं। शालिनी और पुखराज और मुक्ता बैनर्जी ने तुम्हें टका-सा जवाब दे दिया। अब बताओ,

उदासीनता और खिजलाहट ने उसकी आँखों में नमी ला ही दी, नमी नहीं बल्कि नमीसी, या उसे एक प्रकार की अँधियारी कह सकते हैं।

कैलाश ने आँखों की उस नमी को, उस अँधियारी को दूर करने के लिए सर ऊपर करके नज़र उठाई तो.... नीली धारियोंवाली कुरती! ....युवती! ....आँखों की नमी आँखों में ही सूख गई, अँधियारी दूर हो गई, पर फिर भी उसे नीली धारियों-वाली कुरती आँखों के ठीक सामने दिखाई दे रही थी। उसके आगे-आगे सीढ़ियों पर युवती नीली धारियोंवाली कुरती पहने चली जा रही थी। कैलाश एक क्षण को ठिठका, उसने आँखें मिचमिचाई और घूर-घूर कर देखा। नीली धारियोंवाली कुरती पहने लड़की चली जा रही थी! वही कुरती थी, एकदम वही, बिलकुल वही। शलवार न थी। शलवार की जगह घाघरा था। दुपट्टा भी न था। पर कुरती वही थी। कैलाश पहचान गया उस कुरती को और उस कुरतीवाली को भी।

लड़की दूसरी मंज़िल की बालकनी में पहुँचकर एक ओर मुड़ चली।

ऊपर से फ्रांसिस आ रहा था। कैलाश का हुलिया देखकर वह अवाक् खड़ा रह गया।

कैलाश लड़की के पीछे लपका चला जा रहा था। बालकनी में आते-जाते सभी लोगों ने देखा कैलाश लड़की का पीछा कर रहा था।

"गंगा — गंगा — " कैलाश पुकार रहा था।

गंगा ने मुड़कर देखा तो कैलाश लपक रहा था। वह घबरा गई और भागने लगी; मगर कैलाश ने लपककर गंगा की बाँह पकड़ ही ली।

"क्या करते हो, बाबू!" गंगा ने सहमकर झिड़का। "दूर रहो। बाबा!...ऽ बाबा! ...."

"क्या है री? ....क्या हो गया?" कहता हुआ बालकनी के बिलकुल सिरे पर की छोटी-सी खोली से रामदीन बाहर आया। कैलाश गंगा की बाँह पकड़े हुए था। रामदीन यह देखकर चकराया, बोला: "क्या बात है, बाबू? क्या किया छोकरी ने?"

कैलाश ने गंगा की बाँह छोड़ दी। "यह—यह कुरती—किसकी है यह कुरती, रामदीन?"

"माफ करना, बाबू? गलती हो गई। तनिक देर को पहन ली होगी छोकरी ने। अभी निकाल देगी।"

"मैं पूछता हूँ किसकी है यह? तुम्हारी तो नहीं है यह?"

"ऐसी रेशमी कुरती हम धोबी लोग भला क्या पहनेंगे, बाबू! किसी गिराहक की होगी।"

"किस ग्राहक की?"

"अभी देख के बताता हूँ।" रामदीन ने कॉलर उलटाकर देखा और फिर बोला: "कोलाबा में मूलजी भाई की वो चाल है न, बाबू? उसी के तीसरे माड़े पर चौबीस

नम्बर की खोली का कपड़ा है यह।"

फ़्रांसिस वहाँ आन पहुँचा। और लोग भी जमा हो गए।

कैलाश पूछ रहा था: "एक लड़की रहती है चौबीस नम्बर में?"

"जी," धोबी ने कहा।

"जवान है लड़की?"

"जी।"

"उन्नीस-बीस की होगी?"

"जी।"

"अपनी माँ के साथ रहती है वह लड़की?"

"जी।"

"माँ बीमार है? या थी? बीमार है माँ उसकी?"

"अ — जी — जी — जी हाँ।"

खुशी से कैलाश की आँखें चमकने लगीं। फ़्रांसिस का हाथ ज़ोरों से दबाते हुए उसने कहा: "मिल गया पता! फ़्रांसिस, मिल गया पता!"

"किसका?" फ़्रांसिस ने साश्चर्य पूछा।

"उस लड़की का। मूलजी भाई की चाल, तीसरा माड़ा, चौबीस नम्बर का ब्लॉक।"

फ़्रांसिस की समझ में कुछ नहीं आया। उसने पूछना चाहा: "यह सब क्या मामला है, कैलाश? किसका पता? कौन लड़की?" पर फ़्रांसिस ने पूछा नहीं क्योंकि कैलाश उसी तेज़ी के साथ हाथ छुड़ा कर वहाँ से जा चुका था, सीढ़ियों पर पहुँच चुका था, तड़-तड़ सीढ़ियाँ उतरा चला जा रहा था।

•

कोलाबा कॉर्नर होटल के बग़लवाली सड़क से अगर समुद्र की ओर जाया जाए तो थोड़ी दूर पर एक गली दाईं ओर कटती है। इसी गली के सिरे पर मोटर सुधारने का कारखाना है। कारख़ाने के बाज़ू में थोड़ी खुली जगह है जहाँ पर लकड़ी का टाल है और कूड़ा-करकट का ढेर लगा हुआ है। और फिर उस कूड़े से सटी हुई एक बड़ी पुरानी दीवारोंवाली — ऐसी दीवारोंवाली जिनपर या तो काई जमी हुई है या जगह-जगह उनका पलस्तर उखड़ा हुआ है — तीन मंज़िला चाल है, और इसीको लोग *मूलजी भाई चाल* कहते हैं।

ऊबड़खाबड़ आँगन में पुरानी, टूटी हुई मोटर का खोखा पड़ा हुआ था और उसपर बच्चे गेंद खेल रहे थे। बरामदे के सामने से लकड़ी का ज़ीना ऊपर को जाता था। ज़ीना जहाँ शुरू होता था वहीं पर जली हुई लकड़ी के कोयले और कंडों का टाल था जहाँ एक खद्दरधारी महाशय खड़े हुए तराज़ू पर कोयला तुलवा रहे थे। लोहे का

इतना बड़ा तराज़ू कैलाश ने पहले कभी न देखा था। आदमी से भी ऊँचा था। काले-काले कोयलों के बीच उन गोरे चिट्टे साफ़ चेहरेवाले महाशय की सफ़ेद पोशाक कैलाश को विचित्र लगी, उतनी ही विचित्र जितनी की उन महाशय के साफ़ चेहरे पर उनकी मोटी नाक या उनके सुडौल शरीर पर सहसा फूला हुआ उनका तूम्बे-सा पेट। कैलाश को, न जाने क्यों, वह सिंधी महाशय विचित्र ही लगे।

लकड़ी का ज़ीना चढकर कैलाश तीसरी मंज़िल पर चौबीस नम्बर के ब्लॉक के सामने पहुँचा। किवाड़ बंद थे। उसने दरवाज़ा खटखटाया। अंदर चुप्पी थी। उसने फिर खटखटाया। अबकी बार अन्दर कुछ आहट हुई। कोई आ रहा था, फिर चिटकनी खोलने की आहट हुई और फिर धीरे-धीरे किवाड़ खुलने लगे और कुछ ही खुलकर रह गए और फिर उनके बीच एक अधेड़ स्त्री ने, जिसके रूखे बाल माथे पर बिखर रहे थे और जिसकी नाक पर मोटे काँच का चश्मा पड़ा हुआ था, सर बाहर निकालकर झाँका।

"कहिए?"

"माफ़ कीजिएगा, आप बीमार हैं?"

"जी हाँ, हूँ तो।"

"कब से बीमार हैं आप?"

"हुँ.... महीनों हो गए! मैं ही क्या सारे शरणार्थी बीमार हैं, भैया!.... क्यों पूछते हो?"

"आपके एक लड़की है न?"

"हाँ, है, तारा—" महिला ने कहा और फिर किवाड़ों को उसने झटक कर खोल दिया और कैलाश को घूरते हुए उसने सशंकित वाणी में कहा: "क्या हुआ तारा को? क्या हुआ मेरी बेटी को?"

"कुछ नहीं हुआ। मैं तारा देवी से मिलने के लिए आया हूँ।"

महिला ने संतोष की साँस लेते हुए किवाड़ का सहारा लिया और फिर कहा: "ओह!....आओ, अंदर आओ। तुमने तो डरा दिया मुझे।"

महिला के पीछे-पीछे कैलाश अन्दर चला गया। छोटा-सा कमरा था। एक दीवार से लगा हुआ, खिड़की के पास, एक पलंग पड़ा हुआ था। शायद तारा का पलंग था। दूसरी दीवार से लगा छोटा-सा टेबल था, जिसपर कुछ किताबें थीं, पेंसिल थी, राइटिंग पैड था, और फ़ोटो फ़्रेम में एक फ़ोटो थी, एक युवक की फ़ोटो। टेबल के सामने टूटी हुई एक कुरसी थी। एक कोने में बेंत का एक मोढ़ा था। तीसरी दीवार के सहारे लकड़ी की एक आलमारी थी और चौथी दीवार में दरवाज़ा था जिसपर शीशे की सलाइयोंवाला परदा पड़ा हुआ था। शायद अंदरवाला कमरा रसोईघर था जहाँ खाना भी पकता था और जहाँ माँजी सोती भी थीं। परदे के बीच से एक चारपाई झलक रही थी। महिला कैलाश को घूर रही थी।

कैलाश ने पूछा : "माफ़ कीजिएगा, आप यहाँ अकेले रहती हैं ?"

"मैं और तारा बस दो ही जने हैं।"

"कब से रहती हैं आप यहाँ ?"

"जब से लाहौर छोड़ा है। कुछ साल दिल्ली रहे। उसके बाद तारा के पिता हमें यहाँ बम्बई ले आए। दो साल हुए वह भी चल बसे। घर में जवान लड़की है और इधर मैं हूँ कि सदा बीमार रहती हूँ। चौबीसों घण्टे मुझे तो उसीका खटका लगा रहता है, भैया।"

"तारा देवी घर पर नहीं हैं क्या ?"

"काम पर गई है। इसी हफ़्ते उसकी नौकरी लगी है। आपको कुछ काम था उससे ?"

"जी हाँ।"

"उसकी छुट्टी शाम को छै बजे होगी। घर आते सात बजेंगे।"

कैलाश ने अपनी घड़ी देखी। चार बजकर बाईस मिनट हो रहे थे। उसने कहा : "कोई बात नहीं। मैं तबतक इंतज़ार करूँगा।"

माँजी ने मोढ़ा सरकाकर बैठने का इशारा किया और सलाइयोंवाले परदे के अंदर चली गई। जाकर अपनी चारपाई पर बैठ गई, लेट गई। माँजी गोरी थीं और कभी सुंदर रही होंगी। अड़तीस के लगभग रही होंगी, पर पैंतालीस की लगती थीं, और तिसपर बीमार थीं। दुख और संकट के पहाड़ों तले दबकर मनुष्य का कचूमर बन जाता है। अगर इस पर विपदा न पड़ी होती तो आज यही माँजी अपने घर में हंगामा बरपा किए होतीं। इसके पति अगर जीवित होते, इनका घरद्वार इनसे न छूटा होता तो आज इसी महिला की आँखों पर चश्मा न पड़ा होता, काजल लगा होता उन आँखों में, बालों से नागिन की तरह चोटियाँ लहरातीं और कन्धे पर धानी दुपट्टा पड़ा होता। पर आज बेचारी इस कम उम्र में विधवा बन बैठी है और चारपाई पर पड़ी हुई हाँफ रही है, खाँस रही है.... कैलाश यही सब सोच रहा था कि सलाइयोंवाले परदे के पीछे से माँजी की आवाज़ आई।

"आप तारा को जानते हैं ?" वह पूछ रही थीं।

"जी हाँ —" कैलाश ने कहा, "जी नहीं—जी हाँ — अ — मेरा मतलब —"

इसी समय बालकनी से पैरों की आहट हुई, उस तरह की आहट मानो कोई मचला हुआ बच्चा पाँव पटकता हुआ चला रहा हो। कैलाश ने दरवाज़े की ओर देखा। खुले हुए पटों के बीच से, तीर की तरह, एक युवती, काँधे से अपना बैग लटकाए, अंदर चली आई। युवती तारा थी। तारा ने दरवाज़े की ओट में मोढ़े पर बैठे हुए, कैलाश को नहीं देखा।

"कौन ? तारा ? .... बेटा, इतनी जल्दी कैसे छुट्टी हो गई तेरी ?" माँजी ने अंदर से पूछा।

"हमेशा के लिए छुट्टी हो गई, माँ।"

"क्या हुआ ?"

तारा ने काँधे से बैग उतार कर टेबल पर पटकते हुए कहा : "कम्बख्त आदमियों की ज़ात ही बुरी होती है। निगोड़ा सारे वक़्त मेरी तरफ़ देख-देख आँखें मटकाया करता था — और — और आज मुझे दफ़्तर में अकेली पाकर छेड़ने लगा। मैंने भी वह चाँटा रसीद किया कि पाँचों उंगलियाँ उमट आई उसके गाल पर।"

"कौन ? कौन, बेटा ? किसने छेड़ा तुझे ?"

"जिस दफ़्तर में मैं काम करती हूँ न, माँ, वहाँ का मैनेजर — मिस्टर जोशी। बड़ा बदमाश है। मैं त्यागपत्र देकर चली आई। मैंने साफ़ कह दिया मुझे काम नहीं करना। कोई अच्छी-सी लड़की देखी कि न जाने इन आदमियों का सर क्यों चकराने लगता है। जिस ऑफ़िस में जाओ, नौकरी फ़ौरन मिल जाती है, पर बाद में वही बात.... यह चौथी, पाँचवी बार है! बायकला ब्रिजवाले दफ़्तर में भी यही हाल हुआ। उफ़! मैं तो तंग आ गई इन आदमियों के मारे!" कहती हुई तारा जो पलटी तो दरवाज़े की ओट, कोने में मोढ़े पर बैठे हुए, कैलाश पर उसकी नज़र पड़ी। वह चौंक पड़ी। "आप — आप — कौन हैं ?" उसने साश्चर्य पूछा।

"मैं भी एक आदमी हूँ," कैलाश ने उत्तर दिया।

"कहिए ?"

कैलाश मोढ़ा छोड़कर उठा। "मुझे शायद आपने पहचाना नहीं। कुछ रोज़ पहले — एक रात — समुद्र के किनारे मुलाक़ात हुई थी...."

तारा आँखें फाड़े कैलाश को घूर रही थी। उसकी बड़ी-बड़ी सुंदर आँखें अपलक ताक रही थीं और फिर सहसा उसके पपोटे झपकने लगे और उसने कहा : "ओह! आप हैं वह!"

अंदर से माँजी ने कहा : "अभी-अभी आए हैं यह। कहते हैं तुझसे काम है।"

"क्या काम है मुझसे ?"

"पहले यह बताइए आप कहाँ और क्या काम करती थीं ?"

"*मनोहरलाल ऐण्ड कम्पनी* नाम की इम्पोर्ट-एक्सपोर्ट की एक फ़र्म है प्रिंसेज़ स्ट्रीट पर। रंग के व्यापारी हैं वह लोग। वहीं पर मैं टाइपिस्ट का काम करती हूँ, थी।"

"कम्पनी का मालिक कौन है ?"

"हैं एक मिस्टर मनोहरलाल। मैनेजिंग पार्टनर हैं।"

"आपने मैनेजर की शिकायत मनोहरलाल से क्यों न कर दी?"

"हुँ! मनोहरलाल भी आँखें मटकाने में अपने मैनेजर से कम नहीं। मैं कहती जो हूँ — यह आदमियों की ज़ात ही अजीब है। मेरा बस चले तो तमाम आदमियों को पकड़ कर समुद्र में डुबो दूँ।"

कैलाश उसे ताक रहा था, उसका निरीक्षण कर रहा था—उसके रूप का निरीक्षण

उसके हाव-भाव का निरीक्षण, उसकी भावभंगिमा का निरीक्षण, उसकी वाणी का, उसके लहजे का निरीक्षण कर रहा था। 'उसकी आवाज़ में लोच था, माधुर्य था, आकर्षण था और बल था। माइक्रोफ़ोन पर यह आवाज़ अवश्य ही ठीक उतरेगी। उसके हर उद्‌गार के साथ तदनुसार चेहरे पर भाव बदल रहे थे और सूरत अच्छी थी। वह ग़ुस्सा हो रही थी, उबल रही थी पर फिर भी उसका ख़ूबसूरत चेहरा बदनुमा नहीं लग रहा था जैसा कि सरला देवी का लगा करता था। कई सुंदर स्त्रियों के चेहरे ग़ुस्सा होने पर बुरी तरह बिगड़ जाया करते हैं और वह भद्दी डाइनें लगा करती हैं, पर यह, यह लड़की, यह तारा ––

"आपने बताया नहीं, आपको मुझसे क्या काम है ?" तारा पूछ रही थी।

कैलाश पीछे हटा, हटकर दूर से उसने तारा को देखा, फिर घूमकर उसके पास आया। वह सोच रहा था : 'लड़की सुन्दर भी है और स्वस्थ भी। अच्छे स्वास्थ्य का आकर्षण शायद सुंदरता से भी अधिक होता है। यौवन और स्वास्थ्य से फटी पड़ रही है, यह तारा।' प्रकट उसने कहा : "आप देखने में बहुत सुंदर हैं ! *वेरी फ़ोटोजेनिक फ़ेस !*"

तारा को छेड़ा कइयों ने था पर इतनी देर तक और इतने पास से और इस तरह उसे आज तक किसी ने नहीं घूरा था। कैलाश की यह हरकत उसकी समझ में न आई। "जी ?" उसने कहा।

मगर कैलाश को कुछ न सुनाई दिया। वह कह रहा था, मानो अपने आपसे कह रहा हो: "गुड फ़िगर ! गुड हाइट ! .... ज़रा इधर देखिए––" हाथ से तारा की ठुड्डी ठेलकर उसने उसका मुँह घुमा दिया। "गुड प्रोफ़ील ! .... कुसुम के कैरेक्टर का मेरा जो कंसेप्शन था वह बिलकुल तुम्हीं –– "

तारा ने कैलाश का हाथ अपनी ठोड़ी पर से झटकते हुए कहा : "छोड़ो मुझे ! यह क्या बदतमीज़ी है। घूर-घूरकर क्या देख रहे हो ?"

कैलाश अविचलित खड़ा उसे ताक रहा था जैसे मरीज़ की जाँच करने के बाद डॉक्टर उसे ताकता है। "बहुत अच्छी आवाज़ है तुम्हारी। गाती भी हो ?"

माँजी बाहर निकल आई थी और परदे की लड़ियों को मुट्ठी में कसकर पकड़े खड़ी देख रही थी। "यह सब क्या मामला है ?" उसने आशंकित हो कैलाश से पूछा।

मगर कैलाश को कुछ न सुनाई दिया। उसने तारा से कहा : "तुम सिनेमा देखती हो कभी ?"

"हाँ, क्यों ?"

"तुम्हारी कोई फ़ेवरिट सिनेमा स्टार है ?"

"हाँ, है ––" तारा ने कहा और सामने की दीवार पर लटके हुए कैलेण्डर में मुस्कुराती हुई तसवीर की ओर इशारा करके बोली : "सरला देवी।"

न्यू जैक प्रिंटिंग प्रेस का प्रकाशित यह कैलेण्डर, जिसमें सरला देवी का तिरंगा

फ़ोटो छपा हुआ था, बड़ा प्रचलित हुआ था, और यह कैलेण्डर कैलाश को बहुत ही बुरा लगता था। छपाई बुरी नहीं थी, सरला का पोज़ बुरा था, कृतरिम और नाटकीय पोज़ था, एकदम बनावटी। कैलाश को ग़ुस्सा आ गया।

"सरला देवी!" उसने कहा। "यह तुम्हारी मनपसंद ऐक्ट्रेस है! जिसे बोलने और खड़े रहने की तमीज़ नहीं! जिसे यह तक नहीं पता ऐक्टिंग किस चिड़िया का नाम है! .... यह—यह तुम्हारी फ़ेवरिट स्टार है?"

हर सिनेमा फ़ैन को अपने मन-पसंद कलाकर पर नाज़ होता है। हर व्यक्ति वास्तव में मूर्तिपूजक ही होता है। 'हीरो वर्शिप' भी मानव हृदय का स्वाभाविक लक्षण है।

तारा ने सगर्व कहा: "यह बहुत बड़ी स्टार है।"

कैलाश तारा के कंधों को दोनों हाथों से पकड़कर बोला: "अगर तुम चाहो तो तुम इससे भी बड़ी स्टार बन सकती हो।"

"मैं?" तारा ठहाका मारकर हँसी और अपने को छुड़ाकर उसने कहा: "आप तो यूँ कह रहे हैं जैसे आप किसी सिनेमा कम्पनी के डिरेक्टर हों।"

"हूँ तो नहीं मगर होने ही वाला हूँ। सुनो, तारा—" कैलाश बहुत पास आकर खड़ा हो गया और तारा की आँखों में सीधा देखने लगा। आँखों में सीधा देखने की उसकी आदत थी। "सुनो, तारा .... बहुत कोशिशों के बाद मुझे आज ज़िन्दगी में पहली बार फ़िल्म डिरेक्टर बनने का चान्स मिला है। मगर मेरी हीरोइन का रोल किसी ऐक्ट्रेस को सूट नहीं करता। मुझे जिस तरह की लड़की चाहिए वह सिर्फ़ तुम हो।"

तारा देख रही थी कैलाश को। कैलाश का चेहरा इतने पास था उसके कि आज तक कोई चेहरा इतने पास नहीं आया था। हाँ, एक बार एक चेहरा और आया था इतने पास—उस रात—जब वह समुद्र में कूदने चली थी तो बाँध की दीवार पर झकझोर हुई थी किसीसे और उसका चेहरा भी तो इतने ही पास आया था—उस रात .... ऐसे ही आँखों में आँखें डालकर, आँखों में सीधा देखकर उसने उससे क्या कुछ कहा था, उसे होश में लाया था, उसे मरने से बचाया था .... यही तो था वह चेहरा। यही शकल थी .... और आँखें .... यही आँखें थीं, सीधी देखती हुई आँखें ....

"तुमने सुना?" कैलाश पूछ रहा था।

"मैं? .... मगर मुझे ऐक्टिंग-वैक्टिंग कुछ नहीं—"

"मैं सिखाऊँगा। मैं तुम्हें ऐक्टिंग सिखाऊँगा। चलना, फिरना, उठना, बैठना, बोलना, हँसना, रोना—सब मैं सिखाऊँगा। मैं तुम्हें आर्टिस्ट बनाऊँगा, सिनेमा स्टार।"

"ना—ना—" माँजी चीख़ उठीं। "मेरी बेटी सिनेमा में काम नहीं करेगी।"

"ना। मैं फ़िल्म में काम नहीं करूँगी," तारा ने कहा।

कैलाश ने फिर तारा के कंधे पकड़ लिए और फिर उसकी आँखों में सीधा देखने लगा। "तुम करोगी," उसने कहा। "हर सुन्दर लड़की फ़िल्म में काम करना चाहती है मगर या तो उसकी हिम्मत नहीं होती या उसे चान्स नहीं मिलता। यह तुम्हारी ज़िन्दगी का चान्स है। आज चान्स तुम्हारे घर चलकर आया है। तुम उसे नहीं ठुकरा सकतीं। मैं तुम्हें नहीं ठुकराने दूँगा।"

कैलाश क्या कुछ कह रहा था सो तारा की समझ में बराबर नहीं आया जैसे कि उस रात समुद्र के किनारे नहीं आया था। उसकी आँखों में देखती हुई वह केवल इतना ही समझ पाई कि वह जो कुछ भी कह रहा था उचित ही कह रहा होगा। आँखों से सीधा देखकर अनुचित बात मुँह से नहीं निकाली जाती। जो कुछ वह कह रहा था तारा के हित की बात ही होगी। तारा के मन का रोष, आत्मा का विद्रोह दूर होने लगा, और अब उसकी प्रतिपादन शक्ति भी यों पिघलने लगी जैसे बिल्लोरी काँच से प्रवेश करती हुई सूर्य की सीधी पैनी किरणों के सामने मोम पिघलता है। मगर इसी समय शीशे की लड़ियाँ खनखनाईं और लपककर माँजी सामने आई, कैलाश को हटाकर उसके और तारा के बीचोबीच खड़ी हो गई।

"नहीं, तारा सिनेमा में काम कभी नहीं करेगी। मेरी लड़की को मत बहकाओ तुम। जाओ, निकल जाओ।"

कैलाश एक क्षण को स्तब्ध रह गया। एक माँ उससे उसका सुंदर और आशापूर्ण भविष्य छीन रही थी, उसके सुखद स्वप्नों को नष्ट करने पर तुली हुई थी। वह जानता था तारा के मन में इस समय झंझावात मचा हुआ था। एक ओर एक अपरिचित प्रगतिवादी का उसे सिनेमा स्टार बनाने का आवाहन था, और दूसरी ओर अंध-विश्वासी, रुढ़ीवादी माँ की विनय-याचना थी। कैलाश जानता था उसकी दलीलें माँ के ममत्व के आगे न टिक पाएँगी, पर फिर भी बीच धारा से लौट पड़ना उसकी तबीअत में न था। हार मानना इस समय आत्महत्या करने के समान था। अगर तारा न मिली तो कैलाश डिरेक्टर कभी न बनेगा। अगर वह डिरेक्टर न बना तो उसका जीवन नष्ट के सामान है। महत्त्वाकांक्षा और स्वार्थ मानव हृदय की हर क्रिया के मूल में होते हैं और आज, इस क्षण स्वार्थ और महत्त्वाकांक्षा ने कैलाश को, उसके समस्त व्यक्तित्व को ज़ोरों से जकड़ लिया। उसने दूर ही से मगर फिर तारा की आँखों में देखकर कहा :

"तारा! तुम मुझे ना नहीं कर सकतीं। मैंने तुम्हारी जान बचाई है। तुम यह समझ लो कि तुम मर चुकीं; उस रात समुद्र में कूद कर तुमने जान दे दी है। अब जो तुम हो उस पर मेरा हक़ है, मेरा अधिकार है। तुम मेरी एहसानमंद हो, और तुम मेरा एहसान अब सिर्फ़ मेरे पिक्चर में काम करके चुका सकती हो। तुम से मैं सिर्फ इतना ही चाहता हूँ कि तुम मेरे फ़िल्म की हीरोइन बनना क़ुबूल कर लो।"

तारा सकते की हालत में कैलाश को ताक रही थी। माँजी अचंभे में भौंचक्की

खड़ी थी। समुद्र में डूबकर जान देने गई थी तारा! तारा की जान इस युवक ने कभी बचाई थी! तारा इसकी एहसानमंद है!.... यह सब क्या मामला है उसकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था।

और उधर कैलाश कह रहा था: "तारा, तुम ना नहीं कर सकतीं। तुम्हें अपना और अपनी माँ का पेट पालना है। समाज ने तुम पर जो जुल्म किए हैं तुम खूब जानती हो। आज तुम मुझे एक मौक़ा दो। मैं तुम्हें सिनेमा स्टार बनाकर छोड़ूँगा। मैं तुम्हें भारत की सबसे बड़ी कलाकार बनाऊँगा। बदले में तुम जो माँगोगी दूँगा। अगर तुमने आकाश के तारे भी माँगे तो मैं तुम्हें वह भी लाकर दूँगा। बस, तुम हाँ भर कर दो।"

तारा अवाक् होकर मोढ़े पर धम्म-से बैठ गई और बोली: "मुझे क्या करना होगा?"

कैलाश के पाँव तले से खिसकती हुई धरती थम गई। आशा की किरणें उसके मन में चमक उठीं। वह एकदम पास आया। "मेरे साथ इसीदम स्टूडिओ चलना होगा, वहाँ पर तुम्हारा *स्क्रीन* टेस्ट होगा यानी कैमरे से तुम्हारी फ़ोटो निकाली जाएगी, तुम्हारी आवाज़ की माइक्रोफ़ोन पर जाँच होगी। मुझे परा इतमीनान है कि टेस्ट में तुम ठीक उतरोगी। कल मेरे पिक्चर का मुहूर्त है। आओ मेरे साथ।" कैलाश ने तारा का हाथ पकड़ लिया।

"नहीं, तारा!" माँजी ने चीखकर कहा। "कहाँ ले जा रहे हो इसे?"

कैलाश ने बड़ी सावधानी से माँजी को सादर अलग किया और आश्वासन देते हुए कहा: "आप फिक्र न करें, माँजी; आपकी बेटी शाम तक सही सलामत घर लौट आएगी।"

माँजी चुप खड़ी देखती रह गई और कैलाश हाथ पकड़कर तारा को लिए जा रहा था।

कैलाश के साथ तारा इस तरह चली जा रही थी मानो नींद में चल रही हो।

•

तारा को साथ लिए कैलाश जल्दी-जल्दी चलकर बड़ी सड़क पर आया। तारा हाँफने लगी और उसके माथे और गर्दन पर पसीना निकल आया।

शांघाए रेस्तोराँ के पास एक टैक्सी खड़ी थी और स्टीअरिंग व्हील पर माथा टेके टैक्सीवाला बूढ़ा सरदार ऊँघ रहा था।

कैलाश ने पीछे का दरवाज़ा खोलकर तारा को अंदर बिठाया और स्वयं भी उसके बाज़ू में बैठ गया।

सरदार ने चौंककर पीछे देखा और उसकी लाल-लाल आँखें पूछने लगीं: "कहाँ को?"

"दादर चलो," कैलाश ने कहा, "*बॉम्बे स्टूडिओज़*।"

सरदार ने मुँह फेरकर शीशे में देखा और अपनी पगड़ी ठीक की फिर मीटर चालू करके गाड़ी स्टार्ट की।

"ज़रा जल्दी चलना, सरदारजी," कैलाश ने घड़ी देखते हुए कहा। सवा-पाँच हो रहे थे।

"जी, साहब," सरदार ने कहा और टैक्सी चल पड़ी।

जैसे ही टैक्सी चली तो बिसांधी बू का भपका पीछे को आया। सरदार की पगड़ी से आया था यह भपका। 'उसे भी इसी वक़्त पगड़ी ठीक करनी थी,' तारा ने सोचा। वह भी तो सिख थी, सरदार के घर पैदा हुई थी। उसके पिता के भी तो केश थे। पर उनके बालों से कभी इस तरह की दुर्गंध नहीं आई। कितने साफ़ रखा करते थे अपने बाल उसके पिताजी। कितना ख़याल रखते थे सफ़ाई का। और एक यह सरदार है, टैक्सीवाला। कितनी सड़ांध हो रही है उसकी पगड़ी के अंदर! .... आज वह कितने दिनों बाद टैक्सी में बैठ रही है, कितने सालों बाद! .... पिताजी ले जाया करते थे टैक्सी में कभी-कभी, उसे और माँ को ले जाया करते थे अपने साथ टैक्सी में बिठाकर, सिनेमा देखने या बाज़ार कराने या गुरुद्वारे .... दो साल हो गए टैक्सी में चढ़े। पर अब तो बस या ट्रैम से ही सफ़र करती है .... और कहाँ जा रही है वह? कहाँ लिए जा रहा है यह आदमी उसे? कहता है वह फ़िल्म डिरेक्टर है या होनेवाला है और उसे सिनेमा स्टार बनाएगा .... कौन जाने कौन है यह! डिरेक्टर है तो उस रात उस अँधेरे घुप में समुद्र के किनारे कोलाबा के बाँध पर क्या कर रहा था? .... कपड़े भी मामूली ही हैं, स्लेटी रंग के पुराने गरम पतलून पर सफ़ेद बुशकोट पहन रखा है। कोई ख़ास अच्छा पोशाक तो नहीं। कोलाबा में इसी तरह की पोशाक पहने शाम को कई चोर, लफ़ंगे, गिरहकट और लोफ़र चहलक़दमी किया करते हैं। और इस आदमी के साथ टैक्सी में बैठकर वह चली जा रही है, इसके साथ जो उसके बराबर बैठा हुआ है, जिसका नाम तक वह नहीं जानती। उसने मुड़कर देखा वह उसे ही ताक रहा था।

"आपका नाम क्या है?" तारा ने पूछा।

कैलाश मुस्कुराया। "कैलाश सिन्हा," उसने कहा।

तारा ने मुँह फेर लिया और आगे को देखने लगी। वायकला ब्रिज से टैक्सी गुज़र रही थी।

"कभी पिक्चर का शूटिंग देखा है तुमने?"

तारा ने नकारात्मक सर हिला दिया।

"कोई स्टूडिओ देखा है आज तक?"

"बाहर से। मैं कहती हूँ मुझसे सिनेमा में काम नहीं होगा। मुझे डर लगता है।"

कैलाश ने तारा के हाथ को, जो वह सीट पर रखे हुए थी, हिम्मत बँधाने के हेतु

थपथपाया। हाथ बर्फ़ हो रहा था। तारा ने हाथ हटा लिया। लाल प्लास्टिक की चिकनी सीट पर तारा की पसीने से तर हथेली का निशान चमकने लगा। कैलाश चुप हो गया और कभी सामने और कभी बाहर को देखने लगा। तारा की ओर देखने की उसकी हिम्मत न हुई। न जाने कब रो पड़े। बग़ल में बैठी हुई तारा सहमी जा रही थी और हवा के तेज़ झोंके उसकी लटों को उसके मुँह पर बिखेरे जा रहे थे और तारा ने पीछे सर टिकाकर आँखें मींच ली थीं।

थोड़ी देर बाद, गाड़ी के आहिस्ता होने पर, जब तारा ने आँखे खोलीं तो सामने बड़ा भारी साइनबोर्ड था, लोहे की कमानी पर लकड़ी के बड़े-बड़े सुनहरी अक्षरों में लिखा हुआ था *द बॉबे स्टूडिओज़ लि.* और तब तारा को लगा कि उसका दिल बंद हो जाएगा। दरबान ने कैलाश को पहचानकर सलाम किया और टैक्सी फाटक के अंदर चली गई।

इसके बाद क्या हुआ तारा को बराबर याद नहीं। वह पूरी तरह होश में न थी। कम्पाउंड में बहुतेरी मोटरें और स्टेशनवैगन खड़ी थीं। चहल-पहल थी। फिर शायद उसे बरामदे में बेंच पर बिठाकर कैलाश कहीं चला गया था, कम्पनी के मालिक को सूचना देने, या खोजने .... सामने की दीवार पर घड़ी का लटकन हिलता रहा और घड़ी टिक-टिक करती रही .... फिर बहुत सारे लोग—दुबले, मोटे, ऊँचे, नाटे—आए, आकर उसे घूरते हुए पास से गुज़र गए, इधर-उधर .... और फिर कैलाश ने आकर कहा : "मेहता साहब प्रोजेक्शन रूम में कल के रशेज़ देख रहे हैं। अभी आते हैं, पाँच मिनट में। और फिर कैलाश भी कहीं चला गया .... फिर अंदरवाले कमरे से कैलाश बाहर निकला और उसे अपने साथ अंदर लिवा ले गया। बहुत सारे लोग थे अंदर। और एक बड़ा भारीभरकम टेबल था जिसपर काला शीशा मढ़ा हुआ था और टेबल के पीछे रिवाल्विंग चेअर पर एक गोरा चिट्टा व्यक्ति बैठा हुआ था जिसकी परछाईं सामने टेबल के काले चमकीले काँच पर पड़ रही थी और वह व्यक्ति हाथी दाँत की कागज काटने की छुरी से ब्लॉटिंग पेपर पर कुछ कुरेदता हुआ उसे घूर रहा था। कितने मोटे थे उसके होंठ! और मुँडी हुई मूँछों का निशान उसके होंठों पर कितना गहरा काला था! पचास के लगभग रहा होगा, पर पैंतालीस का लगता था। सर के बाल काले थे। केवल कनपटी छिटक चली थी....

कैलाश परिचय करा रहा था : "आप हैं मि. मेहता, कम्पनी के मालिक। और आप हैं मिस—मिस—आपका पूरा नाम क्या है?"

तारा ने कहा : "नैनतारा—नैनतारा चौधरी।"

कैलाश ने अन्य उपस्थित जनों से भी उसका परिचय कराया: "आप मि. भंडारकर, मि. अली हुसेन, मि. पोपटलाल शाह, मि. बिपिन बोस।"

"कहाँ तक पढ़ी हो?" मेहता पूछ रहा था।

तारा खड़ी काँप रही थी। "इंटर पास हूँ," उसने लडखड़ाती जबान से कहा।

"पहले कभी फ़िल्म में या ड्रामा में काम किया है तुमने?"

तारा ने सर हिलाकर ना जताया।

इसी समय सेक्रेटरी दीक्षित अंदर आया। "मेकअप रूम तैयार है," उसने मेहता को सूचना दी।

सिन्हा ने कहा : "मैं जाकर इनका मेकअप कराकर फ़िल्म टेस्ट लेता हूँ।"

मेहता ने तारा की ओर से कैलाश की ओर देखा और फिर तारा की ओर, फिर बाज़ू में बैठे हुए भंडारकर, अली हुसेन आदि डिरेक्टरों की ओर। उन लोगों ने अपना मुँह इधर-उधर कर लिया।

"आओ मेरे साथ," कैलाश ने कहा और तारा को लेकर कमरे से बाहर निकल गया।

तब मेहता ने उपस्थित व्यक्तियों से कहा : "आप लोग तो बड़े डिरेक्टर हैं। आप लोगों का इस लड़की के बारे में क्या ख़याल है ?"

"मुझे नहीं जँचती," भंडारकर ने कहा।

"इसे तो बात करनी नहीं आती, यह ऐक्टिंग क्या ख़ाक करेगी," अली हुसेन ने कहा।

"होपलेस !" बोस बोला।

मेहता ने कहा : "आप लोग ठीक कहते हैं। यह सिन्हा थोड़ा पागल मालूम होता है। न जाने कहाँ से पकड़ लाया इस छोकरी को। मेकअप कराके टेस्ट लेगा। दो-तीन सौ रुपये का नुकसान कर डालेगा मेरा।"

उधर तारा को लिए कैलाश मेकअप रूम में पहुँचा। रूम में बड़ा-सा ड्रेसिंग टेबल था और उस पर तीन-तीन शीशे लगे हुए थे जिनपर ढकनेवाली फ़्लोरोसेंट ट्यूब लगी हुई थीं और बल्ब भी थे। टेबल पर तरह-तरह की शीशियाँ और ट्यूब और डिब्बियाँ रखी हुई थीं। दीवारों पर बेशुमार तसवीरें थीं — कुछ फ़्रेम में मढ़ीं और कुछ बिना फ़्रेम के, जिन्हें पेपरपिन द्वारा पलस्तर पर खोंस दिया गया था। ऊपर पंखा ज़ोरों से घूम रहा था।

"शंकर, इनका मेकअप करना है," मेकअप मैन से दीक्षित ने कहा।

"जी बहुत अच्छा," मेकअप मैन बोला। फिर तारा से उसने कहा : "आइए, यहाँ बैठिए।"

तारा ड्रेसिंग टेबल के सामनेवाली ऊँची कुरसी पर बैठ गई। दीक्षित चला गया मेकअप मैन ने कैलाश से पूछा : "क्या कैरेक्टर है ?"

"हीरोइन," कैलाश ने उत्तर दिया।

"हीरोइन। ठीक है।"

शंकर ने स्विच दबाया। सारे लाइट ऑन हो गए। तारा ने अपनी शकल शीशे म देखी। बाल बिखर रहे थे, पसीने से चेहरा चमक रहा था और बिलकुल भूतनी लग रही थी। उसने दोनों हाथों से मुँह ढंक लिया। शंकर ने कैलाश की ओर देखा।

कैलाश ने कड़े स्वर में कहा : "हाथ हटाओ मुँह पर से, इन्हें मेकअप करने दो।"

तारा ने हाथ हटा दिये और शंकर ने मेकअप करना शुरू कर दिया।

टूथपेस्ट टयूब के आकारवाली ग्रीज़ पेंट की टयूब से उसने तारा का मुँह कोई बीस जगह दाग़ दिया और फिर वह ग्लीसरीन पेंट उँगलियों से उसके चेहर पर मलने लगा। तरह-तरह की डिबियाओं से निकालकर कहीं नीला, कहीं सफ़ेद, कहीं लाल, कहीं सीपिआ रंग लगाया, ब्रश से बाक़ायदा पेंट करने लगा उसका चेहरा....शीशे में तारा अपनी बदलती हुई शकल देख रही थी। दखते-देखते उसकी दृष्टि शीशे में ही दीवारों पर पड़ी।

"यह सब सिनेमा स्टारों की तसवीरें हैं," कैलाश ने कहा। "यह सब एक वक़्त तुम्हारी ही तरह अनजान और नरवस थे। इनमें से कुछ अब न रहे और कुछ ढल गए। यह बड़ी तसवीर देख रही हो, सोने की फ़्रेम में जो मढ़ी हुई है? फ़्रेम को दीमक चट कर गई है और फ़ोटो भी पीला पड़ रहा है। यह तसवीर दमयंती की है, मिस दमयंती की। एक ज़माने में जब मैं छोटा था, यानी पन्द्रह बरस पहले की बात है—तब मैं ग्यारह साल का रहा हूँगा—तो यही दमयंती हमारी सबसे बड़ी स्टार मानी जाती थी, '*द ब्यूटी क्वीन ऑफ़ इंडिआ*' कहलाती थी। इसकी फ़िल्में देखने के लिए थियेटर पर लोग टिड्डियों की तरह टूटा करते थे। इसकी *नई दुलहन* और *पुनम की रात* फ़िल्में लोगों को आज भी याद हैं। मेरी फ़ेवरिट स्टार हुआ करती थी। और आज बेचारी को लोगों ने भुला दिया है। अब बेचारी छोटे-छोटे रोल में काम करती है, एक्स्ट्रा की तरह काम करती है, बस में आती है। कभी इसकी मोटर के नीचे आकर मरने के लिए प्रोडयूसर तत्पर रहा करते थे। अपना-अपना वक़्त होता है। सिनेमा लाईन अजीब लाईन है। अपना-अपना कमाल दिखाकर सब चले जाते हैं, सब को जाना पड़ता है। आज सरला देवी, पुखराज और मुक्ता बैनर्जी का ज़माना है, रजनीकान्त, मोहन और सुशील कुमार का ज़माना है....और कल से शायद तुम्हारा ज़माना शुरू होनेवाला है।"

तारा सुन रही थी। "कल से शायद तुम्हारा ज़माना शुरू होने वाला है," कैलाश ने कहा था। क्या यह सम्भव है? क्या वह भी एक दिन सरला देवी की तरह बड़ी स्टार बन जाएगी? मेकअप समाप्त हो गया। तारा का चेहरा सुंदर होकर निखर आया। आँखों के पपोटों पर काली पेंसिल का शेडिंग और होंठों पर लिपस्टिक की सुर्खी। तारा सुंदर लगने लगी। इसी समय मिस् थेलमा टेलर नामक एक ऐंग्लो इंडिअन युवती ने आकर तारा के बालों पर चिमटे लगाने शुरू कर दिए और कंघा करके,

लोशन लगाकर बालों में इलेक्ट्रिक हीटर से लहरें पैदा करने लगी, तब तारा ने सुना कैलाश उससे कह रहा था : "एक दिन यहाँ तुम्हारी भी तसवीर लगेगी।"

"आओ, रजनीकान्त," मेहता ने कहा, "कल मुहूर्त है अपने पिक्चर का।"

"जी हाँ, मैं यही पूछने आया हूँ कि *मिट्टी* की हीरोइन के लिए कोई आर्टिस्ट मिली?"

"सिन्हा एक नई छोकरी को उठा लाया है कहीं से और कहता है उसे हीरोइन बनाएगा। फ़िल्म टेस्ट लेना चाहता था। मैंने रोक दिया। मैंने कहा माइक्रोफ़ोन पर आवाज़ सुन लो और स्टिल कैमरे से फ़ोटो ले लो, फ़िज़ूल में नई लड़की पर फ़िल्म बर्बाद करने से क्या फ़ायदा?"

"नई लड़की! मैं नई लड़की के साथ काम नहीं कर सकता, मेहता साहब। मेरे नाम को धक्का लगेगा। कुसुम के रोल के लिए पर्सनालिटी वाली आर्टिस्ट चाहिए। नई छोकरी क्या दीखेगी, क्या करेगी। पिक्चर डब्बा हो जाएगा। यह तो कोई बात नहीं हुई—"

दरवाज़े पर दस्तक हुई।

"कम इन," मेहता ने कहा और घड़ी को देखा तो सात बज रहे थे।

कैलाश अन्दर आया। "मेहता साहब मैंने स्टिल्स ले लिए, आवाज़ का टेस्ट भी ले लिया।"

"कैसा है टेस्ट?"

"आवाज़ अच्छी है। स्टिल्स आते ही होंगे। प्रिंट हो रहे हैं डार्करूम में। वह बाहर खड़ी हैं। मेकअप में। अंदर बुलाऊँ उन्हें।"

रजनी ने कहा: "सिन्हा साहब, यह मैं क्या सुन रहा हूँ?"

कैलाश ने स्विंग डोर का पट खोलते हुए पूछा: "क्या सुन रहे हैं?"

रजनी से उत्तर न देते बना। उसका मुँह खुला का खुला रह गया। दरवाज़े से तारा, मेकअप किए पोशाक पहने, गहने आदि में सजी-धजी अंदर आ रही थी। रजनीकान्त की आँखें फटने लगीं और मेहता की आँखें भी।

"अँय!" रजनी के मुँह से निकला। "गुड गॉड! यही है वह? वा—वा—वा—! *वंडरफ़ुल! व्हाट ए ब्यूटी! व्हाट ए पर्सनालिटी!.... यू हॅव डन इट, सिन्हा! यू हैव डन इट! कॉनग्रैच्युलेशन्स! कॉनग्रैच्युलेशन्स ऑन युअर डिस्कवरी*। यह आबदार मोती, यह अनमोल हीरा कहाँ से उठा लाए?"

सिन्हा मुस्कुराया। "चोर बाज़ार से," उसने कहा।

"चोर बाज़ार का ज़िक्र कैसे हो रहा है?" कहती हुई सलमा अंदर आई, आकर उसने जो कुछ देखा तो ठिठक गई।

तारा लजा रही थी।

कैलाश ने रजनीकान्त और सलमा से तारा का परिचय कराया। सलमा तो तारा को अपनी निगाह से चाट ही गई।

"कैलाश," सलमा बोली, "इस लड़की से मुझे जलन हो रही है, पर सच बात जो है सो कहनी ही पड़ेगी: *मिट्टी* की कुसुम यही है, मैं नहीं, और कोई नहीं, यही, सिर्फ़ यही।"

"बिलकुल सच कहा तुमने," रजनीकान्त ने कहा। "खरी-खरी सुनाने में और खरी बात कहने में सारी इंडस्ट्री के अंदर तुम्हारा जवाब नहीं, सलमा।"

सलमा ने झुककर लखनवी अंदाज़ से कहा: "शुक्रिया।"

मेहता का सेक्रेटरी, दीक्षित, ब्राउन पेपर का एक बड़ा लिफ़ाफ़ा लिए अंदर आया। "यह स्टिल्स हैं, साहब," उसने कहा और लिफ़ाफ़ा टेबल पर, मेहता के सामने, रख दिया।

मेहता ने लिफ़ाफ़ा खोला और पाँच फ़ोटो बाहर निकाले। फ़ोटो सभी ने देखे। घूर-घूर कर देखे। तारा ने दूर ही से उनपर नज़र दौड़ाई। रजनीकान्त ने सीटी बजाई, उस प्रकार की सीटी जैसी अंगरेज़ सोलजर लड़कियों को देखकर बजाया करते हैं।

"*शी इज़ वेरी फ़ोटोजिनिक,*" कैलाश ने अपनी राय दी।

मेहता ने कहा: "ठीक है तो फिर। तुम्हारे पिक्चर में इन्हें हीरोइन के रोल के लिए रख लेते हैं। तुम्हें कोई एतराज़ तो नहीं, रजनीकान्त?"

"अजी मुझे क्या एतराज़ होगा। जरूर रखिए। *शी इज़ वेरी गुड। शी विल सूट द कैरेक्टर वंडरफ़ुली!*"

मेहता ने तारा से कहा: "तो ठीक है। आप तबतक कपड़े बदलिए। मैं ऐग्रीमेंट टाइप कराता हूँ।"

"जी," तारा ने कहा।

"तुम्हारा स्क्रीन नेम हम ननतारा रखेंगे," मेहता बोला।

कैलाश मन में बोल रहा था 'नैनतारा—नैनतारा—नैनतारा चौधरी—तारा चौधरी—' प्रकट उसने कहा: "नहीं, मेहता साहब। नैनतारा से तारा चौधरी नाम बेहतर रहेगा। तारा चौधरी। क्यों?"

रजनीकान्त ने अपनी राय दी: "जी हाँ, तारा चौधरी बेहतर है।"

सलमा ने भी पसन्द करते हुए सर हिलाया।

तारा देख रही थी। उसका नाम रखा जा रहा था। उसके नामकरण संस्कार में उसे भाग लेने का कोई अधिकार न था।

"अच्छी बात है, तो तारा चौधरी सही," मेहता ने कहा और टेबल की दराज़ खोलकर उसने कुछ छपे हुए कागज़ निकाले। "यह हमारे ऐग्रीमेंट का छपा हुआ

और फिर वह हँस पड़ा। सलमा का मज़ाक़ उसकी समझ में आ गया था।

टेलीफ़ोन रखते हुए मेहता ने कहा: "हूँ.... भई सिन्हा, मामला कुछ टेढ़ा है।"

"क्यों, क्या हुआ, मेहता साहब?" कैलाश ने आशंकित हो पूछा।

"हमारे डिस्ट्रीब्यूटर का कहना है कि नया डिरेक्टर और नई हीरोइन नहीं चलेंगे।"

तारा ने कैलाश की ओर देखा, और कैलाश, सलमा और रजनीकान्त ने मेहता की ओर।

"क्यों?" कैलाश ने पूछा।

"तुम तो जानते हो — मैं स्टूडिओ का मालिक ज़रूर हूँ, प्रोड्यूसर हूँ, पर पैसा तो हम लोगों को फिनांसिअर और डिस्ट्रीब्यूटर से ही लेना पड़ता है। हम प्रोड्यूसरों के माई-बाप तो असल में हमारे फिनांसिअर्स और डिस्ट्रीब्यूटर्स हैं।"

"आप कहना क्या चाहते हैं?"

"यही कि नई स्टार और नया डिरेक्टर लेकर पिक्चर बनाना रिस्की है। यह पिक्चर बिकेगा नहीं। बिना देखे इसे कोई हाथ न लगाएगा।"

"ज़रूर बिकेगा," रजनीकान्त ने कहा। "मेरे नाम पर बिकेगा।"

"मैं बेचूँगा इस पिक्चर को," कैलाश ने उत्तेजित हो कहा।

"ना, मैं नहीं बना सकता इस पिक्चर को। इतनी बड़ी रिस्क लेने से फ़ायदा? हाँ, अगर तुम दोनों तीन साल के लिए मेरे पास कॉन्ट्रैक्ट में बँधने को तैयार हो तो मैं हिम्मत भी करूँ। एक पिक्चर की कसर दूसरे में निकाल लूँगा।"

"नहीं, मेहता साहब। तीन साल के लिए अपने को बाँधना हमें मंज़ूर नहीं।"

कैलाश ने तारा की ओर देखा। वह क़लम पर उसका ढक्कन लगा रही थी। रजनीकान्त ने सिगरेट सुलगाई और सलमा बोल पड़ी: "हाय! अब क्या होगा?"

तब मेहता ने कैलाश से कहा: "अगर आप लोगों में हिम्मत है तो आप लोग क्यों नहीं बनाते यह पिक्चर?"

"मेहता साहब, अगर मेरे पास पैसे होते तो मैं ज़रूर बनाता यह पिक्चर। मगर मेरी जेब खाली है।"

"अपने दोस्तों से थोड़ा पैसा माँग लो। सस्ती हीरोइन है। तुम भी सस्ते हो। स्टूडिओ मैं दूँगा। रजनीकान्त और सलमा से तुम्हें सिर्फ़ बात करनी है। इन दोनों को तुम्हारी कहानी तो पसन्द ही है। उन्हें चाहिए कि तुम्हारी मदद करें।"

"बनाओ, कैलाश," सलमा ने ताव खाकर कहा, "मैं तुम्हारे इस पिक्चर में काम मुफ़्त करूँगी।"

"मुफ़्त क्यों?" कैलाश बोला।

रजनीकान्त को भी जोश आ गया। कैलाश के कंधे पर हाथ मारकर उसने कहा: "ठीक है, सिन्हा। बनने दो पिक्चर। मैं भी काम करूँगा। अगर तुम्हें फ़ायदा हो तो जो जी में आए दे देना। तुम भी याद करोगे, यार, कि कोई मिला था।"

कैलाश ने कृतज्ञ दृष्टि से दोनों को देखकर कहा? "धन्यवाद, बहुत बहुत धन्यवाद।" फिर मेहता से बोला: "और आप — आपका कॉन्ट्रिब्यूशन क्या रहेगा?"

"मैं स्टूडिओ दूँगा — किराये पर।"

"किराये पर?"

"किराया अभी कौन माँगता है। बाद में देना, जब पिक्चर खतम हो जाए तब देना।"

"सुनिये मेहता साहब! आप मुझे स्टूडिओ, लेबॉरेटरी, रॉ फ़िल्म, प्रॉपर्टी, कॉस्टचूम्स वग़ैरे ऐसी तमाम चीज़ें दीजिए जो आपके पास हों, जो आपके स्टूडिओ के अंदर हों। मैं कोई नई चीज़ नहीं बनाऊँगा बल्कि आपके स्टॉक से ही सारे पिलर्स और आरचेज़ वगैरे इस्तेमाल करूँगा। बाक़ी के सारे आर्टिस्ट मैं नए लूँगा या सस्ते लूँगा जो उधार काम करने को तैयार हो जाएँ। असिस्टंट लोगों से मैं सारा काम लूँगा। हम लोग जानतोड़ मेहनत करेंगे। तीन महीने के अंदर पिक्चर बनाऊँगा मैं।"

"मुझे मंज़ूर है। मगर आप लोगों को डे शिफ़्ट नहीं मिलेगी। सारा काम रात को करना होगा। दिन को स्टूडिओ बहुत बिज़ी है।"

"ज़रा सोचिए, मेहता साहब, रजनीकान्त जैसा बड़ा आर्टिस्ट रात को काम कैसे करेगा।"

"मैं करूँगा। रात को काम करूँगा। तुम 'हाँ' करो, यार। बनने दो पिक्चर। मेहता साहब की शर्तों पर ही सही।"

"आप अपने कॉन्ट्रिब्यूशन के बदले क्या लेंगे, साहब?" कैलाश ने मेहता से पूछा।

"*फ़िफ़्टी परसेंट ऑफ़ द प्रॉफ़िट*। सिर्फ़ आधा हिस्सा।"

"आधा हिस्सा! मुनाफ़े का आधा हिस्सा! और कहीं नुक़सान हुआ तो?"

"वह तुम्हारा। पिक्चर के मालिक तुम हो।"

सलमा और रजनीकान्त ने देखा कैलाश क्षण भर को सोच में पड़ गया। फिर कैलाश ने तारा की ओर देखा। तारा मौन खड़ी थी। उसका हर अंग मौन था। आँखें भी मौन थीं। कदाचित् उसकी चेतना और कल्पना भी मौन थी।

कैलाश ने अन्त में कहा: "अच्छी बात है, मेहता साहब। मुझे मंज़ूर है। बनाइए ऐग्रीमेंट। इस पार या उस पार। मरता क्या न करता। *इट्स ओ. के. फ़ॉम माय साइड*।"

कैलाश के बढ़े हुए हाथ में हाथ देते हुए मेहता ने कहा: "*ओ. के. फ़ॉम मी टू*।"

रजनीकान्त ने कहा: "आप दोनों को मैं बधाई देता हूँ।"

सलमा बोली कैलाश से: "कॉनग्रैच्युलेशन्स, बॉस।"

कैलाश मुस्कुराया फिर बोला: "मगर प्रॉडक्शन के खर्च के लिए कुछ पैसों की तो जरूरत होगी ही।"

मेहता ने चट कहा: "दो हज़ार लगा दूँगा — ट्वेल्व परसेंट इंटरेस्ट पर।"

"पाँच हज़ार मैं दूँगी — बिना ब्याज के," सलमा बोली।

"दस हज़ार मुझसे ले लेना," रजनीकान्त ने कहा।

और तारा ने कुछ भी नहीं कहा। लेन-देन उसे नहीं आता था। फिर, देने को उसके पास कुछ था भी तो नहीं।

"ठीक है," कैलाश ने खुश होकर कहा, "सतरह हज़ार हो गए! मेहता साहब, यह पिक्चर बनकर रहेगा।"

सलमा ने अपनी गाड़ी में तारा को *मूलजी भाई चाल* तक छोड़ दिया। कैलाश भी साथ था।

"कल सुबह ठीक सवा-दस बजे स्टूडिओ में मुहूर्त होगा," कैलाश ने तारा से कहा। "मेकअप वग़ैरा में वक़्त लग ही जाएगा। मैं सुबह आठ बजे तुम्हें लेने के लिए आऊँगा। तुम तैयार रहना।"

"जी अच्छा," तारा ने कहा और लकड़ी का ज़ीना चढ़ती हुई ऊपर जाने लगी। नीचे कोयले की टालवाला खद्दरपोश सिंधी बाहर न था, अंदर कमरे में कुछ कर रहा था, कमरे में अँधेरा-सा था। तारा ने सोचा न जाने रात को इतनी देर तक यह मनसुखानी कमरे में बन्द होकर अकेला क्या किया करता है।

ऊपर कमरे का दरवाज़ा खुला था और सामने मोढ़े पर बैठी व्याकुल माँ प्रतीक्षा कर रही थी। तारा के पाँव की आहट सुनकर माँ उठ खड़ी हुई। कमरे में प्रवेश करते ही तारा माँ से लिपट गई।

"माँ — माँ — माँ — मेरा स्क्रीन-टेस्ट सफल रहा। मुझे नौकरी मिल गई। मैं— मैं सिनेमा स्टार बन गई, माँ!"

माँ को मानो किसी ने सौ नश्तर चुभो दिए। "क्या कह रही है तू! तू सिनेमा में काम करेगी? तू अपने ख़ानदान —"

"सिनेमा में काम करना क्या गुनाह है, माँ? सिनेमा के बाहर समाज में क्या होता है तुमने नहीं देखा? अच्छी-अच्छी कम्पनियों में तो मैंने नौकरी करके देख लिया। ऊपर से सभ्य और जन्टलमैन दीखते हैं और अंदर से काले हैं, सब के सब, क्या गुजराती, क्या पंजाबी, क्या महाराष्ट्रियन — सब गंदे हैं, सब छिपे रुस्तम हैं, सिनेमावालों को गाली देने का उन्हें कोई हक़ नहीं। सिनेमा में भी अच्छे लोग हो सकते हैं और होते हैं। अच्छे बुरे कहाँ नहीं होते? वह तो अपने आप पर निर्भर है, माँ।"

"मगर बेटा —"

"अब कुछ न कहो, माँ। मैं सब तय कर आई हूँ। मैं सिनेमा में काम करूँगी। सिनेमा में काम करने की मेरी हमेशा से इच्छा थी। मगर कभी हिम्मत न हुई मेरी। मैं ख़ूब मेहनत करूँगी। मैं — मैं —" उसकी दृष्टि कैलेण्डर पर गई जिसमें सरला देवी

अकड़ी हुई मुस्कुरा रही थी। "मैं इससे भी बड़ी स्टार बनूँगी। मैं भारत की सबसे बड़ी कलाकार बनूँगी। कल मेरे पिक्चर का मुहूर्त है! .... मुझे आशीर्वाद दो, माँ, कि मैं सफल होऊँ।"

तारा माँ को ताक रही थी, उससे आशीर्वाद माँग रही थी। तारा खुश थी। जो तारा महीनों से उदास रहा करती थी आज खुश थी, हँस रही थी।

बेटी को खुश देख माँ की आँखें सुख से डबडबा उठीं और उसने तारा को कसकर गले लगा लिया और बोली: "तुझे मेरा आशीर्वाद है, बेटा।"

सलमा ही की मोटर में कैलाश अपने घर लौटा। बड़ी अच्छी थी यह सलमा, बेचारी दोनों को उनके घर छोड़ती गई।

रहमान और डिसूज़ा ने जब कैलाश से तारा के बारे में और स्टूडिओ की घटनाएँ सुनीं तो खुशी से उछल पड़े।

"अहाहा! वंडरफुल! मोस्ट वंडरफुलेस्ट! कहता न था मैं:

रात-दिन गर्दिश में हैं सात आस्माँ,
हो रहेगा कुछ न कुछ घबराएँ क्या।

खुदा जो करता है अच्छे के लिए करता है। सुना, कैलाश? अगर पिछले महीने, सरला देवी की मेहरबानी से तुम्हारा पाटिया गुल न हुआ होता तो *ग्रेट इंडिआ पिक्चर्स* में तुम आज वही सवा-दौ-सौ रुपये महीने पर असिस्टंट बने सड़ते रहते। अहा! यार, देनेवाले ने भी तुम्हें चान्स क्या छप्पर फाड़के दिया है!"

"असिस्टंट से एकदम प्रोड्यूसर!" फ़्रांसिस ने कहा।

"डिरेक्टर-प्रोड्यूसर!" रहमान ने उसे ठीक किया। "अ—अपनी कम्पनी का कोई नाम सोचा है तुमने, कैलाश?"

कैलाश ने कहा: "*जनता चित्र*।"

"वेरी गुड," फ़्रांसिस ने राय दी।

"वेरी गुड नहीं, यार, बल्कि वेरी वेरी गुड! कम्पनी का नाम *जनता चित्र* पिक्चर का नाम *मिट्टी*; स्टारिंग: रजनीकान्त, तारा चौधरी, सलमा वग़ैरा वग़ैरा वग़ैरा; रिटन, प्रोड्यूस्ड ऐण्ड डिरेक्टेड बाय कैलाश सिन्हा; फ़्रांसिस डिसूज़ा — आर्ट डिरेक्टर; अब्दुल रहमान एम्. ए. — जनरल मैनेजर। ओ. के. बॉस?"

कैलाश हँस रहा था। "ओ. के.," उसने कहा। "ओ. के."

फ़्रांसिस ने तब कहा: "चलो *कोलाबा कॉर्नर* से खाना खा आएँ। नौ बज रहे हैं। भूख लग गई।"

रहमान ने प्रस्ताव का समर्थन किया और जैसे ही वह लोग जाने के लिए उठे तो दरवाज़े का खुला हुआ पट किसी ने खटखटाया। कैलाश ने देखा मिस पारिख का

ड्राइवर दरवाज़े पर खड़ा हुआ था।

"क्यों, बाबूराव ?" कैलाश ने पूछा।

"बाई आई हैं।"

"कहाँ हैं ?"

"नीचे मोटर में बैठी हैं। आप को बुलाया है।"

कैलाश ने मन में सोचा कि जब उसके घर तक आई ही है तो ऊपर क्यों नहीं आई ? क्या चाल में आते उसका अनादर होता है ? प्रकट उसने कहा : "देखो, मिस पारिख को ऊपर भेज दो।"

"जी बहुत अच्छा," कहकर बाबूराव चला गया।

रहमान और फ़्रांसिस साश्चर्य कैलाश को घूर रहे थे।

"मिस पारिख कौन चिड़िया है भई ?" रहमान पूछ रहा था।

"रमनलाल पारिख का नाम सुना होगा तुमने, बहुत सारी मिलें हैं उनकी, लखपती हैं। उनकी लड़की है।"

"तो मिस पारिख को तुमसे मतलब ?"

"मेरी दोस्त है।"

"ओह ! तो कैपिटलिस्ट की बिटिया सोशिअलिस्टों के घर तशरीफ़ ला रही है। गुजराती है ! पढ़ी-लिखी भी है ?"

"युरोप घूम आई है। अभी देखोगे उसे तुम।"

रति आई और कैलाश ने अपने साथियों का उससे परिचय कराया।

"तो यहाँ रहते हो तुम ?" रति ने कमरे का निरीक्षण करते हुए अंगरेजी में कहा।

"यह घर है या अजायबघर ? या पुस्तकालय ? यह सारी पुस्तकें क्या आपकी हैं मि. रहमान ?"

"जी नहीं," रहमान बोला। "मैं जर्नलिस्ट हूँ — सिर्फ़ आर्ट क्रिटिक। मुझे सिर्फ़ लिखने का शौक़ है, पढ़ने का नहीं, सिर्फ़ लेख लिखने का, बक़ौल फ़्रांसिस डिसूज़ा सस्ते और बाज़ारू लेख लिखने का।"

सब लोग हँस पड़े।

रहमान ने फिर कहा : "यह सारी किताबें जो आलमारियों में भरी हैं और फ़र्श पर हर जगह बिखरी पड़ी हैं, कैलाश की मिल्कियत हैं। और यह सारे अजूबे फ़्रांसिस के बनाए हुए हैं। यह अपने आपको आर्टिस्ट कहता है। वह स्टूलपर आप स्टेच्यू देख रही हैं न ? वह मोटी अम्मा ? वह इसी की करतूत है।"

रति हँसने लगी, रहमान की बातों पर। वह चलकर उस प्रतिमा के पास गई। प्रतिमा के पाये पर पीतल की एक पट्टी पर खुदा था: *जननी*। रति संलग्न होकर प्रतिमा को देखने लगी। बड़ी देर तक देखने के बाद उसने कहा : "ब्यूउउउटिफुल ! . . .

अकड़ी। रोज़ एअरोड्रोम पर रेजि से क्या तुम इसी स्कल्प्चर का ज़िक्र कर रहे थे, कैलाश ? "

कैलाश ने कहा : "हाँ, इसी का। है न कमाल की ? "

"बहुत बढ़िया ! इस विषय पर मैंने बहुतेरे पेंटिंग्ज़ और स्कल्प्चर्स देखे हैं, पर इसका जवाब नहीं। मि. डिसूज़ा, आप इसे किसी प्रदर्शिनी में क्यों नहीं भेजते ? "

फ़्रांसिस हँसने लगा। रहमान आँखें फाड़े कभी प्रतिमा को और कभी रति को घूर रहा था।

"फ़्रांसिस बड़ा आलसी आदमी है," कैलाश बोला।

"आप इसे बेचेंगे मि. डिसूजा ? "

"हाँ ज़रूर। मगर इसे कौन लेगा ? "

"फ़्रांसिस को युरोप में जन्म लेना था, जहाँ कला पारखी होते हैं, जहाँ आर्ट की क़द्र होती है," कैलाश ने कहा।

"क्या क़ीमत है इसकी ? " रति पूछ रही थी।

"कलाकृति अनमोल होती है, मिस पारिख, उसका मूल्य नहीं आँका जा सकता। इसीलिए लेनेवाले को देखकर क़ीमत बताई जानी चाहिए।"

"मुझसे क्या लेंगे आप ? "

फ़्रांसिस ने रति के चेहरे को ताका, फिर बोला : "आपको सच में बहुत पसंद है यह? "

"बहुत।"

"कैलाश के कहने से तो आप प्रभावित नहीं हुईं ? "

"जी नहीं," रति ने तमककर कहा। "कलाकृति परखने का मुझे शऊर है।"

फ़्रांसिस मुस्कुराया। "तो आप ले जाइए इसे। मेरी ओर से आपको यह भेंट रही।"

"मुझे भेंट नहीं चाहिए। मैं ख़रीदूँगी। दाम बताइए। आप कलाकार हैं। अपनी कला को जीवित रखने के लिए आपको अपने आपको भी जीवित रखना होगा।"

"तो जो जी में आए दे दीजिए।"

"आप बतलाइए।"

"आपसे दो हज़ार ले लूँगा।"

रति प्रसन्न हो गई। "मुझे मंजूर है," उसने कहा। "कल सुबह मैं चेक भेज दूँगी। कल ही यह — यह — *जननी* आप मुझे भिजवा दीजिएगा।"

"जी धन्यवाद," फ़्रांसिस ने कहा।

तब रहमान बोला : "इसका मतलब हुआ, मिस पारिख, कि मेरे सर में आर्ट को परखने के लायक़ भेजा नहीं है।"

"तुम्हें इसमें अब भी शक है, मिस्टर आर्ट क्रिटिक ? " कैलाश ने कहा।

रति खिलखिलाकर हँस पड़ी, फिर बोली : "चलो, कैलाश।"

"कहाँ ?" कैलाश ने पूछा।

"मेरे साथ पिक्चर देखने। *रीगल* के दो टिकट हैं मेरे पास। *द टेन कमांडमेंट्स* देखेंगे। चलो जल्दी करो। सवा-नौ बज रहे हैं। शायद पिक्चर जल्दी शुरू होता है।"

कैलाश ने अपने साथियों की ओर देखा।

"जाओ, हो आओ," रहमान ने कहा।

"हाँ, हाँ, जाओ," फ़्रांसिस बोला।

"चलो," कैलाश ने कहा, और रति के साथ वह चला गया।

रति की ब्यूक जब चली तो वह परिचित-सी महीन सुगंध रति से उठने लगी। कैलाश को यह सुगंध सदा अच्छी लगी है। उसकी हलके जामुनी रंग की महीन साड़ी से वह महीन सुगंध उठ रही थी और कैलाश सोच रहा था आज का दिन कितना अच्छा बीत रहा है। आज ही उसे तारा मिली, आज ही वह प्रोडयूसर बना, आज ही फ़्रांसिस की *जननी* बिक गई, और आज ही वह रति के साथ सैर कर रहा है....

"क्या सोच रहे हो ?" रति ने पूछा।

"आज मैं बहुत खुश हूँ, रति। आज मुझे सफलता पर सफलता मिली है। मेरे पिक्चर का कास्टिंग आज तय हो गया और मैं आज ही प्रोडयूसर भी बन गया हूँ और कल मेरे पिक्चर का मुहूर्त है।"

"ओह! तब तो तुम्हें बधाई है।"

"तुम भी आना कल सुबह मुहूर्त पर। सुबह दस बजे, *बॉम्बे स्टूडिओज़* में।"

"सुबह मैं पूना जा रही हूँ, कैलाश। कल नहीं आ सकूँगी। फिर कभी आऊँगी, तुम्हारा शूटिंग ज़रूर देखूँगी। मेरी शुभ कामनाएँ तुम्हारे साथ हैं।"

सामने रीगल आ रहा था। *द टेन कमांडमेंट्स* का लंबा-चौड़ा पोस्टर बिजली के प्रकाश में निखर रहा था।

"तुमने खाना खा लिया ?" रति ने पूछा।

"नहीं। और तुमने ?"

"मैंने भी नहीं खाया है। मैंने कहा, कैलाश, क्या *द टेन कमांडमेंट्स* आज ही देखना है ?"

"तुम्हीं चाहती थीं देखना।"

रति ने कैलाश को ताका, फिर बोली : "नहीं, आज ही देखना कोई ज़रूरी नहीं। पूना में भी देख सकती हूँ। चलो आज तुम्हारी सफलता को सेलिब्रेट करेंगे। चलो, मेरे घर चलो।"

कैलाश ने कहा : "चलो।"

मगर बाबूराव ने रीगल के सामने गाड़ी रोक ली थी। रति ने दोनों टिकट ड्राइवर

को पकड़ाते हुए कहा : "हम लोग घर जा रहे हैं, बाबूराव। लो यह टिकट। तुम देख आओ आज सिनेमा।"

मामला बाबूराव की समझ में नहीं आया, पर वह टिकट लेकर गाड़ी से उतर पड़ा। रति और कलाश आगे की सीट पर आ बैठे और रति ने गाड़ी चला दी।

एक टिकट अधिक दामों में बेचकर बाबूराव ने तुरंत ही नफ़ा कर लिया और मस्त डोलता हुआ, थिएटर में घुस गया, *द टेन कमांडमेंट्स* देखने। पिक्चर शुरू हो चुका था।

शांति निवास में पहुँचकर रति ने कहा : "तुम गाड़ी में ही रहो, कैलाश। मैं अभी आती हूँ।" और लपककर वह अंदर चली गई।

कलाश की समझ में बात नहीं आई। बात तो घर चलकर आज का दिन मनाने की थी और यह रति अकेली अंदर चली गई!...

थोड़ी देर बाद एक बैग लिए रति आई और आकर उसने फिर से स्टीअरिंग व्हील संभाल लिया और इंजन स्टार्ट करने लगी। नौकर ने आकर एक पिटारी पीछे रख दी।

"कहाँ जा रहे हैं हम लोग?" कैलाश ने पूछा।

"जुहू," रति ने कहा।

रति गाड़ी अच्छी चलाती थी; न बहुत तेज़, न बहुत धीरे। जब "केम्प्स कॉर्नर" से गाड़ी पेडर रोड पर मुड़ी तो सवा-दस हो रहे थे और गाड़ी माहिम पहुँची तो साढ़े-दस।

"कान्ति घर पर नहीं थे क्या?" कैलाश ने पूछा।

"नहीं, आज ही सुबह पूना गया है वह।"

"रेस खेलने?"

"हाँ।"

"और तुम कल सुबह जा रही हो?"

"हाँ।"

"रेस का तुम्हें बहुत शौक़ है?"

"मैं रेस कभी नहीं खेलती। रेस कोर्स ज़रूर चली जाती हूँ मगर खेलती नहीं।"

"फिर पूना क्यों जाती हो?"

"वहाँ घर जो है।"

"कौन-कौन हैं वहाँ?"

"पिताजी और माँ। पिताजी की तबीअत ठीक नहीं रहती। बम्बई की हवा उन्हें नहीं भाती, इसीलिए डॉक्टर के कहने से उन्होंने पूना में ही मकान ले लिया है, और पिछले चार-पाँच साल से वहीं रहते हैं। यहाँ कभी-कभी आते हैं, महीने में एक आध बार।"

"और तुम?"

मैं भी उन्हीं के साथ पूना ही रहती हूँ। बम्बई दो-दो महीने नहीं आती। कान्ति

अक्सर बम्बई ही में रहता है।

"कै भाई बहन हो तुम लोग?"

"दो। मैं और कान्ति — बस दो हैं। और कुछ पूछना है?"

कैलाश मुस्कुराया। "हाँ," उसने कहा।

"क्या?"

"तुम यह सेंट कौन-सा लगाती हो?"

रति मुस्कुराई। "रेडिओ ऑन करो," उसने कहा।

कैलाश ने गाड़ी के डैशबोर्ड में लगा हुआ रेडिओ ऑन कर दिया और सीलोन स्टेशन ट्यून किया। लता चहक रही थी।

रति ने पूछा: "भूख बहुत लगी है?"

"लगी तो है। तुम्हें नहीं लगी है?"

"मुझे भी लग रही है। सैंडविच वग़ैरा कुछ खाने की चीज़ें मैं साथ लाई हूँ। तुम चाहो तो जुहू होटल चलकर खाएँ।"

"मेरे पास पैसे नहीं हैं।"

"मेरे पास हैं," रति ने कहा फिर बाज़ू में रखे हुए बैग की ओर इशारा करके बोली: "इसे खोलो।"

कैलाश ने बैग उठाया तो अंदर शीशियाँ खनखन बोलने लगीं। ज़िप खोला तो अन्दर दो शीशियाँ बीअर की थीं और चौथाई बोतल व्हिस्की की।

कैलाश के चकित और प्रसन्न चेहरे को ताककर रति ने कहा: "उस रात की बची हुई रखी थी। मैं उठा लाई। अच्छा किया न?"

"मज़ा आ गया," कैलाश ने कहा। "आज मैं इतना खुश हूँ और इतना थका हुआ हूँ कि बीअर पीने को जी कर रहा था।"

"तो खोल लो एक बीअर। पीछे पिटारी में थर्मस होगा, उसमें से बर्फ़ निकाल लो। ग्लास भी वहीं होगा। एक ही ग्लास निकालना।"

"क्यों, तुम नहीं पीओगी?"

"तुम्हारे ही ग्लास से लूँगी।"

कलाश ने पिटारी से ग्लास निकालकर उसमें बीअर उँडेली और बर्फ़ छोड़ा, फिर ग्लास रति को थमा दिया।

रति ने ग्लास ऊपर उठाकर कैलाश के लिए कुशल-पान करते हुए कहा: "तुम्हारी और तुम्हारे पिक्चर *मिट्टी* की सफलता को।" रति ने दो घूँट लेकर ग्लास कैलाश को वापस कर दिया।

कैलाश ने कहा: "*मिट्टी* को," और फिर ग्लास मुँह को लगा लिया।

गरमी के मौसम में ठंडी बीअर सदा अच्छी लगती है। रति गाड़ी चलाती जा रही थी और बीच-बीच में कैलाश से ग्लास लेती जाती थी। रेडिओ से संगीत बिखर र

था। डैशबोर्ड के मंद प्रकाश की आभा में रति और कैलाश की आँखें चमचमाने लगीं। गाड़ी जुहू में प्रवेश कर रही थी। लोग सो गए थे या सोने जा रहे थे। हर तरफ़ सुन-सान हो रहा था और ऊपर ऊँचे-ऊँचे ताड़ व नारियल मस्त झूम रहे थे। इतवार को या छुट्टी के दिन इसी बीच पर आधी रात तक चहल-पहल रहती है, पर और दिन कितना निर्जन और नीरव हो जाता है यह जुहू।

"कहाँ रोकूँ गाड़ी?" रति ने पूछा।

"आगे चलो — जहाँ बस्ती समाप्त होती है।"

रति गाड़ी बढ़ाए जा रही थी। सड़क के किनारे छोटे-छोटे होटल बने हुए थे। किसी-किसी कमरे में प्रकाश था जो दरवाज़े, खिड़की की दरारों से फूट रहा था। रति और कैलाश जानते थे कि अन्दर, इन कमरों के अंदर, बाज़ार गरम है, यौवन को वासना की आँच दी जा रही है।

सहसा रति बोल पड़ी: "तुम कभी यहाँ आए हो?"

कैलाश की समझ में बात न आई। "कहाँ?" उसने पूछा।

"इन होटलों में?"

"तुम्हारा मतलब किसी लड़की को लेकर?"

"हाँ।"

"नहीं," कैलाश ने कहा। "किराये की सवारी मुझे नहीं पसंद।"

रति हँस पड़ी और जुहू होटल के आगे, *जानकी कुटीर* के भी आगेवाली खुली जगह में, उसने गाड़ी सड़क से मोड़कर ताड़ों के झुरमुट में पार्क कर दी। रेडिओ बंद हो गया था। कैलाश ने स्विच ऑफ़ करके दरवाज़ा खोल दिया। रति ने भी अपनी ओर का दरवाज़ा खोला। समुद्री हवा बल खाती हुई गाड़ी के आरपार होने लगी, और सामने बीच पर लहरें मचल रही थीं, और गाड़ी को घेरे हुए नारियल के लम्बे-लम्बे, ऊँचे-ऊँचे तने यों डोल रहे थे मानो पी कैलाश और रति ने थी मगर चढ़ उन्हें रही थी, और तनों के ऊपर पत्ते मरमरा रहे थे, चर्रा रहे थे, और उनके भी ज़रा ऊपर की रात के महीन — रति की साड़ी की तरह महीन — काले आवरण पर टँके हुए असंख्य तारे झिलमिला रहे थे। रति एक टक कैलाश को ताक रही थी और कैलाश बीअर की एक दूसरी बोतल उँड़ेल रहा था। गाड़ी के अन्दर गरमी थी। कैलाश की गर्दन तर हो रही थी और तरबतर शरीर पर हवा के झोंके अच्छे लग रहे थे। कैलाश ने सोचा रति भी पसीने से तर हो रही होगी। कल्पना ने आँखों के सामने एक चित्र खड़ा कर दिया, जिसमें साड़ी के अन्दर, पेटीकोट के अंदर, रति की टाँगों पर पसीने की बूँदें ढुलकती हुई कैलाश को दिखाई देने लगीं और रति की ओर बढ़ता हुआ कैलाश का हाथ उत्तेजनावश काँप उठा।

"नहीं, तुम पीओ। मुझे काफ़ी चढ़ गई है।" रति ने कहा।

"कहीं मुझे भी चढ़ गई तो?"

"नहीं चढ़ेगी। यह दूसरी ही बोतल तो है। पाव शीशी अभी पहली बार साथ में।"

"तो तुम व्हिस्की लो। मैं बीअर पीऊँगा।"

रति मान गई और व्हिस्की की बोतल मुँह में लगा कर चुसकियाँ लेने लगी। कैलाश ने घटघट बीअर का ग्लास ख़ाली कर दिया और बोतल की बची हुई बीअर ग्लास में फिर उँड़ेल ली और पीने लगा।

"इतनी जल्दी-जल्दी क्यों पी रहे हो?" रति ने पूछा।

"जल्दी पी जाने से ज़ोरों से चढ़ती है।"

"तुम चाहते हो कि तुम्हें चढ़ जाए?"

"हाँ।"

"क्यों?"

और तब कैलाश ने रति को खींचकर उसे कसकर चूम लिया। रति के शरीर में भरभरी उठने लगी और कैलाश उसे चूमे जा रहा था। कैलाश का हाथ रति के ब्लाउज़ की बटनें टटोलने लगा।

"नहीं," रति ने कहा और उसका हाथ थाम लिया।

"छोड़ो, वरना मैं ब्लाउज़ फाड़ दूँगा," कैलाश ने रति के कान में उन्मत्त की नाई कहा।

"नहीं, कैलाश," रति बोली पर कैलाश के हाथ को रोका हुआ उसका हाथ ढीला पड़ रहा था। कैलाश का हाथ मनमानी कर गया और रति लिपट पड़ी कैलाश से। गाड़ी में अँधेरा था पर तिरछी चाँदनी कहीं-कहीं से अंदर आ रही थी। रति ने देखा कैलाश उतावला हो रहा था और उसकी आँखें तारों की तरह चमचमा रही थीं और सामने डैशबोर्ड की बटनें सतत ताक रही थीं, स्विच में लगी हुई चाबी डोल रही थी, और उन दोनों के सर के ऊपर, सफ़ेद इंद्रधनुष की तरह, ब्यूक का सफ़ेद स्टीअरिंग व्हील तना हुआ था। रति के हाथ से व्हिस्की की बोतल छूट पड़ी और उसमें से सुनहरी धारा मोटर के फ़र्श पर बह निकली। तब रति ने कहा: "नहीं, कैलाश!" और उसे झटककर उठ बैठी। "बड़ी गरमी है! .... आओ, उतरो, बाहर घूमेंगे।"

ब्लाउज़ की बटनें लगाती हुई वह नीचे उतर पड़ी, फिर उसने व्हिस्की की बोतल उठा कर देखा। थोड़ी-सी थी उसमें। "लो, पी लो," उसने कहा और कैलाश को बोतल थमा दी।

कैलाश बोतल लिए उतर पड़ा, बोला: "देखो, फिर पिला रही हो!"

रति खिलखिला पड़ी और चलने लगी, बीच की ओर।

कैलाश ने बोतल की पीली और रति के पीछे चल पड़ा।

जुहू का वह सुंदर बीच बिलकुल सुनसान पड़ा था। दोनों ओर मीलों तक, उस चाँदनी में जहाँ तक दृष्टि जाती थी, नीरव सन्नाटा था। किनारे पर लगे हुए असंख्य

था। डैशबो...धुंध झूम रहे थे और खौला हुआ समुद्र फुंकार रहा था। और हवा गाड़ी-... में बीअर व व्हिस्की चढ़ी जा रही थी।

हाई टाइड शुरू हो गई थी इसलिए समुद्र बढ़ रहा था मगर फिर भी काफ़ी पीछे था। किनारे से लहरों तक फैली हुई गीली बालू थी और उसमें कहीं-कहीं छोटी नालियाँ बनी हुई थीं जिनमें बहता हुआ उथला पानी पारे की तरह चमक रहा था। रति ने जूते निकालकर एक हाथ में ले लिए और दूसरे हाथ से साड़ी घुटनों तक ऊपर उठाकर एक नाली के पानी में उतर पड़ी। कैलाश जब उसके पास पहुँचा तो वह बोली : "यह तुम्हें क्या हो गया था गाड़ी में ?" उसके कटे हुए बाल मुँह पर बिखर रहे थे। कैलाश मुस्कुराया और उसके बालों में उँगलियाँ चलाने लगा। रति ने उसका हाथ झटक दिया।

"अगर मुझे यह मालूम होता कि तुम ऐसी हरकत करोगे तो मैं जुहू कभी न आती"

"सच ?" कैलाश ने कहा। "सच कह रही हो ?"

"और नहीं तो क्या। क्या हम लोग दो भले मानस की तरह गाड़ी में बैठकर खा-पी नहीं सकते, गप्पें नहीं लगा सकते ?"

कैलाश हँसने लगा।

"क्यों हँस रहे हो ?"

"तुम स्त्रियों की यह अदा निराली है। स्त्री अपनी जाति से ही कपटी होती है। पुरुष के मन की बात सदा उसके चेहरे पर झलक पड़ती है पर तुम स्त्रियों के मन में कब क्या आता है, भगवान भी नहीं ताड़ पाता।"

रति हँसने लगी। थोड़ी देर बाद उसने पूछा : "अब क्या सोच रहे हो ?"

"सोच रहा हूँ कि थोड़ी देर पानी में नहाया जाए। तुम्हें तैरना आता है ?"

"आता तो है मगर मैं स्विमिंग सूट नहीं लाई।"

"मैं भी नहीं लाया।"

"तो फिर ?"

"रात में इस समय यहाँ कौन देखेगा ?"

"तुम जो हो ?"

कैलाश ने बाल पकड़ कर रति को खींच लिया और बाँहों में ज़ोरों से भींचकर बोला : "चलो नहायेंगे।"

"अच्छा," रति ने कहा, "तुम चलो, मैं आती हूँ।"

कैलाश ने कपड़े उतारे और जाँघिया पहने पानी में घुस पड़ा। रति ने फिर साड़ी और ब्लाउज़ उतारकर जूतों के साथ कैलाश के कपड़ों के पास रखे और पेटिकोट व ब्रेज़िअर में चल पड़ी।

पानी ठंढा था। कैलाश तैर रहा था। रति भी तैरने लगी। कैलाश उसके पास

आया और कमर भर पानी में उसे पकड़कर चूमने लगा। वह छिटककर दूहली बार दोनों पानी में अठखेलियाँ करने लगे, छेड़ने लगे, पानी उछालने लगे, और कंधा लहरें भर-भरकर आने लगीं। रति जो डुबकी लगाती तो दूर जाकर निकलती. फिर लगाती तो लुप्त हो जाती। कैलाश उसे खोजने लगता तो पानी के अंदर उसकी टाँगें पकड़कर उसे उलटा देती। कैलाश भी मदमस्त खेल रहा था। कभी लहरों को अपने ऊपर ले लेता और कभी उछलकर उन पर सवार हो जाता। बड़ी-बड़ी चट्टान-सी लहरों पर जब वह सवार होता तो रति को लगता कि कलाश ने समुद्र को वश में कर लिया है। ऊपर आकाश के तारे उनपर चाँदी का मेंह बरसा रहे थे। दोनों ने खूब नहाया, खूब किलोलें कीं। थोड़ी देर बाद रति थक गई। "मैं तो जाती हूँ," उसने कहा और पानी से बाहर जाने लगी। कैलाश तैर रहा था। आज शाम को वह नहीं नहा पाया था। शाम की कसर अब निकाल रहा था।

जब कैलाश पानी में से निकला तो उसने देखा किनारे की गीली बालू पर रति आँखें बंद किये चित पड़ी हुई थी। सफ़ेद सैटिन का गीला पेटिकोट और जालीदार ब्राज़िअर उसके गीले शरीर से लिपटकर एकजान हुए जा रहे थे, और ऐसा प्रतीत हो रहा था कि रेत पर सफ़ेद मोम की एक पुतली नंगी पड़ी हुई है।

रति ने आँखें खोल दीं, देखा काले आकाश पर, तारों के बीचोबीच, एक मनुष्याकृति आन जमी है जो समस्त आकाश पर छा गई है। उसने तुरन्त आँखें बंद कीं, फिर मिचमिचाई, फिर बंद कीं, और खोल दीं — तो समझ गई। ऊपर, ठीक उसके ऊपर कैलाश खड़ा मुस्कुरा रहा था। रति भी मुस्कुराई और उसे ताकने लगी। कैलाश बैठ गया, रति के पास। रति अचल पड़ी रही, कैलाश को ताकती। कैलाश लेट गया, गीली बालू पर, रति के पास, रति से लगकर, और फिर धीरे-धीरे मुँह पास ले जाकर उसने अपने होंठ रति के होंठ से मिला दिए। चुम्बन खारा लगा — दोनों को। फिर उनकी जीभें आपस में मिलने लगीं। कैलाश ने ब्राज़िअर निकाल दिया और छोटे-छोटे दो गुम्बद चाँदनी में संगमरमर की तरह दमक उठे। रति ने एक हाथ से अपनी आँखें ढक लीं और उँगलियों के बीच से उसे झाँकने लगी। दोनों के गीले शरीर लिपटे जा रहे थे, साँसों का वेग बढ़ रहा था, और उन्हें लग रहा था कि वह दोनों गीली रेत पर नहीं बल्कि तपे हुए तवे पर पड़े थे और ऊपर से चाँदनी नहीं बल्कि आग बरस रही थी। कैलाश का हाथ रति के वक्ष से फिसलकर उसके पेट पर आया और फिर नीचे को खिसकने लगा।

"इसे खोल दूँ ?" उसने पूछा।

"पूछते क्यों हो !" रति ने कहा। "जो जी में आए करो।"

सुबह की चाँदनी में, गीली रेत पर, परस्पर लिपटे हुए कैलाश और रति बेखबर

था। डैशबोर्ड ... त का सर कैलाश के कंधे पर था और कैलाश का हाथ रति की कमर गाड़ी ज... सा बड़े ज़ोर की आवाज़ होने लगी और कैलाश की नींद खुल गई। उसने स... वा ऊपर से हवाई जहाज़ गुज़र रहा था। रति का सर हिला और उसने भी आँखें खोल दीं। आँखों के सामने ही किसी का मुँह था, नाक थी, आँखें थीं —— कैलाश की आँखें थीं —— यानी वह कैलाश से लिपटी हुई जुहू बीच पर पड़ी थी।

"काहे की आवाज़ थी?" उसने पूछा।

"हवाई जहाज़ की," कैलाश बोला, और उसकी आँखों में देखने लगा।

रति मुस्कुराई।

कैलाश ने उसे चूमकर पूछा : "पहले भी कभी आई हो जुहू?"

रति ने मुस्कुराकर अलसाई आवाज़ में कहा : "एक-आध बार। पर इस तरह नहीं। तुम्हारा ढंग निराला है . . . . तुम कलाकार हो।"

"कौन था वह?"

"था कोई। शादी शुदा था। कलकत्ते चला गया।"

"और उससे पहले?"

"उससे पहलें क्या?"

"आज तक तुमने —— तुम —— तुम कितनों के साथ सो चुकी हो?"

"तुम्हारा मतलब कितनों से प्यार किया है मैंने?"

"नहीं। कितनों के साथ सो चुकी हो?"

रति ने आँखें मिचमिचाईं और कैलाश के गले में बाँह डाल दी। बाँहों ने साँप की तरह गले को जकड़ लिया। "लंदन में —— जिसके यहाँ हम लोग ठहरे थे —— उस लैंडलेडी के लड़के के साथ —— दो-तीन बार। तब मैं कुछ नहीं जानती थी इस बारे में।"

"और उससे पहले?"

"कभी नहीं।"

तब कैलाश ने पूछा : "और कभी प्रेम किया है किसी से?"

रति ने सर हिला दिया।

"क्यों नहीं किया?"

"कोई उसे योग्य मिला नहीं।"

कैलाश चुप हो गया; फिर बोला : "तुम्हें बुरा तो नहीं लग रहा? पछता रही हो?"

"क्यों?"

"मैंने तुम्हारे साथ जबर्दस्ती तो नहीं की?"

रति मुस्कुराई और कैलाश की छाती के घुँघराले बालों में मुँह लगाने लगी, बालों को होंठों में दबाने लगी। छाती से मुँह बग़ल की ओर बढ़ने लगा और उसने कैलाश

की बग़ल में नाक गड़ा दी और बोली, "उस रात — जब तुमसे पहली बार मेरी मुलाकात हुई थी — मेरे घर—जब मैंने तुम्हारी फटी हुई कमीज़ से कंधा झलकते देखा था— "

"तुमने नाखून चुभो दिये थे मेरे कंधे पर।"

"हाँ, तभी — तभी — "

"तभी क्या? क्यों चुभोये थे नाखून ?"

"क्योंकि मैं काट नहीं सकती थी। उस वक्त जी कर रहा था कि तुम्हारी खाल में दाँत गड़ा दूँ।"

"दाँत बहुत मारती हो !" कैलाश ने मीठी शिकायत की। "आज कितने घाव किये हैं जानती हो ?"

रति ज़ोरों से साँस लेने लगी। गाड़ी के अन्दर पसीने से तर शरीर की महक ने उस समय रति को पागल कर दिया था। नहाने के बाद महक जाती रही थी, मगर अब भी बग़ल में जान थी। रति के मन में फिर से इच्छा के शोले भड़कने लगे। रति मोम की तरह पिघलने लगी। "कैलाश — " उसके मुँह से निकला, "कलाश !" उसके शरीर की पुकार सुन कैलाश के शरीर में भी उत्तेजना जागृत होने लगी और उसका अंग-अंग, रोम-रोम झनझनाने लगा। रेत में कुहनी गाड़कर वह उठा और रति के फड़कते हुए शरीर में प्रवेश कर गया। उमंगें मचलने लगीं और उनकी उलझती हुई मादक साँसों में पेंच पड़ गया। और फिर ढलती हुई रात के मौन सन्नाटे में आनन्द और तृप्ति के सोते फूट पड़े। इसी समय बढ़ते हुए समुद्र की एक ऊँची लहर जो आई तो आती ही गई और उन दोनों पर से होती हुई किनारे पर बड़ी दूर तक फैल गई। लहर जब लौटी तो वह दोनों अलग हो रहे थे।

"चलो चलें," कैलाश ने कहा। "सुबह हो गई। पाँच बज रहे होंगे। आज मुहूर्त है मेरे पिक्चर का। मुझे जल्दी जाना है।"

"चलो," रति ने कहा और वह उठ गई। उठकर साड़ी लपेटने लगी। "अँधरे-अँधरे मुझे घर पहुँच जाना चाहिए," वह बोली, "वरना मुझे बिना पेटिकोट के देख लोग क्या समझेंगे।"

कैलाश, जो पतलून का बटन लगा रहा था, हँस पड़ा। "चलो," उसने कहा। और दोनों अपने-अपने गीले कपड़े हाथों में लिये चल पड़े, गाड़ी की ओर।

५

रात का समय है और ड्राइंगरूम में बिलकुल अँधेरा है। बाहर सड़क से कुछ प्रकाश खिड़कियों पर पड़ रहा है। कमरा ख़ाली है। अचानक दरवाज़ा खुलता है और कैलाश के साथ तारा अंदर प्रवेश करती है। कैलाश दरवाज़े के बाज़ू का स्विच ऑफ़ कर देता है। फिर से अँधेरा हो जाता है। तब तारा लपककर सोफ़े के पास रखा हुआ लैम्प स्टैंड जलाती है। लैम्प स्टैंड पर लाल शेड पड़ा हुआ है। हलका-सा प्रकाश, गुलाबी-सा, कमरे में फैल जाता है। तब कैलाश दरवाज़ा अंदर से बंद करके चिटकनी लगा देता है और आगे बढ़ता है, तारा की ओर। कैलाश के पाँव सीधे नहीं पड़ रहे कुछ लड़खड़ाते हैं, और वह झूम रहा है, जिससे पता चलता है कि वह पीया हुआ है। तारा, सहमी हुई, उसे घूर रही है।

"यह क्या कर रहे हो ?" तारा ने आशंकित हो पूछा। "दरवाज़ा क्यों बंद कर दिया ?"

कैलाश मुस्कुराया, जैसे शराबी मुस्कुराते हैं जब उनकी नीयत ख़राब होती है। "इसलिए कि दरवाज़े से आते हुए ठंडी हवा के झोंकों में तुम्हें कहीं सर्दी न लग जाए," उसने कहा, उस तरह जिस तरह शराबी बोलते हैं जब उन्हें ख़ूब चढ़ी हुई होती है। "आओ......मेरे पास आओ।"

कैलाश बढ़कर तारा का हाथ पकड़ लेता है। तारा हाथ छुड़ाकर पीछे हट जाती है। वह बढ़ा जाता है। वह बची जाती है।

"तुम पीये हुए हो ! तुमने शराब पी है।" तारा ने सहमकर कहा।

"हाँ, पी तो है।" कैलाश जेब से शीशी निकालता है। "तुम भी पीओगी ?"

तारा ने नफ़रत से कहा: "तुम्हारे साथ यहाँ आने से पहले काश मुझे पता होता कि तुमने पी है। तुम झूठे हो। धोखेबाज़ हो। शराबी हो। तुम बहकाकर मुझे यहाँ ले आए ! ....और मैं तुम्हें अच्छा आदमी समझती थी।" तारा की आँखों में आँसू उमड़ आए, घृणा और बेबसी के आँसू।

कैलाश कह रहा था : "मैं कौन-सा बुरा आदमी हूँ ! क्या बुरा काम किया मैंने ? तुम पर तबीअत आ गई है — बस यही मेरा क़ुसूर है। क्या बताएँ — जब से तुम्हें [illegible] है, दिल हमारा तभी से जाता रहा । हय !"

आँखों आँखों में वह ले गए दिल,
और कानोंकान हमें ख़बर न हुई।

आओ, मेरे पास आओ —"

कैलाश ने बढ़कर तारा को पकड़ लिया, बाँहों में समेट लिया। तारा तिलमिला उठी।

"छोड़ो! फिर वही बदतमीज़ी!" अपने आपको छुड़ाने का प्रयास करती है। "छोड़ — जाहिल, गँवार — छोड़ — छोड़ मुझे, चाण्डाल! छोड़ —" दोनों में झकझोर होती है....

ड्रॉइंगरूम के उस हिस्से में जहाँ चौथी दीवार होनी चाहिए कोई दीवार न थी, वहाँ पर कैमरा रखा हुआ था और उसे घेरे लगभग पचास लोग खड़े हुए कैलाश और तारा का अभिनय बड़ी दिलचस्पी के साथ देख रहे थे। कैलाश विलन की ऐक्टिंग करकर दिखा रहा था। स्टूडिओ के अंदर बना हुआ यह ड्रॉइंगरूम का सेट था।

"गुड!" कैलाश ने तारा की पीठ को गर्व से थपथपाते हुए उसे शाबाशी दी। तारा मुस्कुराने लगी। फिर वह मुड़ा और बाज़ू में, अँधेरे में, खड़े हुए व्यक्ति को सम्बोधितकर बोला: "तुमने देखा, राम?"

राम अरोरा विलन का रोल कर रहा था। तारा सोचा रही थी: "नाम है राम और स्वभाव का कितना अच्छा और नेक है यह आदमी, पर रोल विलन का मिला है उसे। अभिनेता के निजी स्वभाव या जीवन से अभिनय-कला का क्या कोई सम्बन्ध नहीं होता?"

राम अरोरा कह रहा था: "जी, समझ गया।"

कैलाश ने तारा के साथ बड़ी मेहनत की थी। पिछले महीने जिस दिन *मिट्टी* चित्र का मुहूर्त हुआ उसी दिन से दिन-दिन भर वह तारा के साथ बना रहा। उसे चलना, खड़े रहना और बैठना सिखाया। आवाज़ का चढ़ाव, उतार सिखाया। पहले पहल तारा शर्माती बहुत थी। रिहर्सल करते समय अगर कमरे में कोई आ गया तो उसे पसीना छूट जाता था— मारे शर्म व घबराहट के। उसकी यह शर्म, यह झिझक, यह *स्टेज फ़्राइट* कैलाश ने दूर की। आठ-आठ, दस-दस घंटे उसे रिहर्स कराया। वह भूलती तो उसकी भूल सुधारता, फिर बुलवाता और पचासों बार बुलवाता। तारा पसीना-पसीना हो जाती, पर कैलाश उसे न छोड़ता, कोई रिआयत न बरतता उसके साथ, और न अपने साथ ही। बहुत समझाकर बताता, प्यार के साथ सिखाता। कभी-कभी निराश और उतावला भी हो जाता। कभी-कभी खीझकर उसपर बिगड़ बैठता तो वह रोने लगती। कैलाश थककर हताश बैठ जाता तो वह चट आँसू पोंछकर उसके पास आती और फिर कभी न रोने का वादा करती पर लाचार थी, जब तंग आकर कैलाश उसे झिड़कता तो तारा की आँखों में आँसू उमड़ ही आते।

फ़्रांसिस और रहमान और माँ और अन्य व्यक्तियों ने भी देखा कि कैलाश कितनी

मेहनत कर रहा है, तारा को अभिनेत्री बनाने के लिए, उसे अभिनय-कला सिखाने के लिये। तारा की लगन, एकनिष्ठा और उसका कठिन वृत्त भी देखा उन लोगों ने और तारा के प्रति कैलाश का कठोर बर्ताव भी देखा — वैसा वर्ताव जैसा सर्कस का रिंगमास्टर पिंजड़े के अंदर चाबुक द्वारा अपने जानवरों के साथ किया करता है। तारा के साथ कैलाश ने लगभग वही बर्ताव किया। उसके पास समय बहुत थोड़ा था। *मिट्टी* चित्र की शूटिंग मुहुर्त के पंद्रह दिनों बाद ही शुरू होने वाली थी। इसलिये पंद्रह दिन के अंदर ही तारा को सब कुछ सिखाना था, सो कैलाश ने इन पंद्रह दिनों में ज़मीन-आस्मान एक कर दिया — तारा को ऐक्टिंग सिखाई, उसके दिल में हौसला पैदा किया और उसे आर्टिस्ट बनाया। कैलाश और तारा के बीच तथा उनके इस विचित्र सम्बन्ध तथा परस्पर बर्ताव के बीच किसी को कुछ बोलने की हिम्मत न हुई। कभी-कभी तारा के घर भी रिहर्सल होता। तारा की गत देखकर माँ की आँखों में आँसू आ जाते, पर वह चुप रहती, क्योंकि उसकी बेटी का जीवन बनने जा रहा था — उसके इस शिक्षक, इस निर्देशक, इस रक्षक के हाथों, इस कैलाश सिन्हा के हाथों।

तारा ने भी अपनी ओर से कोई कमी न रख छोड़ी। जो कुछ कैलाश ने कहा उसने किया, करने का प्रयत्न किया। उसने *स्टार* बनने की ठान ली थी, अच्छी *स्टार*, सबसे बड़ी *स्टार*। कैलाश पर उसे विश्वास था और वह हार मानने को तैयार न थी।

संकल्प और प्रयोग का जब संयोग होता तो बात सदा बनकर ही रहती है। और वही हुआ भी। पन्द्रह दिन के सतत रिहर्सल के बाद कैलाश ने अपनी नई खोज — तारा चौधरी — को स्टूडिओ के फ़्लोर पर शूटिंग के लिए छोड़ दिया, उस प्रकार छोड़ दिया जिस प्रकार पहलवान को अखाड़े में या घोड़े को रेस कोर्स में या शेरनी को सर्कस के घेरे में छोड़ा जाता है।

देखनेवालों ने दाद दी, कैलाश को भी और तारा को भी।

और आज महीने भर से रात-रात को शूटिंग बराबर चलती आ रही है। कैलाश हर सीन, हर शॉट खूब रिहर्स करके लिया करता है। जितना ध्यान वह तारा को — जो चित्र की मुख्य नायिका है — देता है, उतना ही ध्यान वह दूसरे पात्रों को भी देता है। उसका कथन है कि अपनी-अपनी जगह हर पात्र और हर खिलाड़ी ने कमाल बताना चाहिये। इसीलिए कैलाश, एक कुशल निर्देशक की तरह, राम अरोरा को निर्देशन दे रहा था, शराबी का पार्ट खुद करके उसे दिखा रहा था, ताकि आवाज़ का परिवर्तन और हाव-भाव का बदलना राम देख सके और फिर उसीके आधार पर अभिनय दिखाए। राम अरोरा बड़ा ऐक्टर न था, वहुत छोटा और सस्ता ऐक्टर था और उसका कोई नाम न था। मगर बड़े ऐक्टरों को लेना कैलाश के सामर्थ्य से बाहर था। इसीलिये छोटे-छोटे ऐक्टरों और एक्स्ट्राओं को लेकर उन्हें बता-सिखाकर, उन पर मेहनत करके कैलाश चित्र बना रहा था।

कैलाश ने फिर पूछा : "तुम समझे कहाँ क्या करना है ?"

"जी, समझ गया," राम अरोरा ने कहा।

फिर कैलाश ने शराब की शीशी (जिसमें राज़बेरी का शर्बत भरा था) राम को पकड़ाते हुए कहा : "लो यह शीशी। देखो, आवाज़ में बात पैदा करो। चेहरे और आवाज़ दोनों से नशा झलकना चाहिये।"

"जी।"

कैलाश फिर तारा की ओर मुड़ा। "तारा, तुम ठीक थीं। सिर्फ़ आख़िरी डायलॉग कमज़ोर था। बोलना तो वह आख़िरी लाइन।"

तारा ने चट से गर्दन को झटका दिया और चेहरे का भाव बदलकर कहा : "छोड़ो! फिर वही बदतमीज़ी। छोड़ — जाहिल, गँवार — छोड़ — छोड़ मुझे, चाण्डाल छोड़ —"

"नहीं," कैलाश ने कहा, "ढीला है। ज़रा तेज़ी पैदा करो।" कैलाश बोलकर बताता है। तारा उसे दुहराती है। "ठीक, ठीक," कैलाश बोला, "पर तुम तोते की तरह नक़ल न करो, अपने ढंग से बोलो, अपनी अदा और अपनी ख़ासियत को न छोड़ो।" फिर राम को सम्बोधन करके : "बोलना तो एक लाइन।"

राम ने अभिनय करते हुए शुरू किया : "जब से तुम्हें देखा है, दिल हमारा तभी से जाता रहा।"

"आवाज़ — आवाज़ !" कैलाश चिल्ला पड़ा। "आवाज़ संभालो। नशा पैदा करो आवाज़ में। ज़रा झूमकर — मगर ज़्यादा नहीं। देखो, इस तरह — जब से तुहें देखा है, दिल हमारा तभी से जाता रहा —"

राम ने लाइन दुहराई।

"ठीक है। आगे शेर आता है, संभालना।"

"जी।"

कैलाश ने चारों ओर देखा। "लाइट्स रेडी ?" उसने पूछा।

"येस, रेडी," कैमरामैन बैनर्जी ने उत्तर दिया। यह वही बैनर्जी था जो कैलाश के साथ शांतिभाई के *ग्रेट इंडिआ पिक्चर्स* में हुआ करता था, डिरेक्टर पुरी के सेट पर कैमरामैन कामटे का असिस्टंट था उस समय। वहाँ नौकरी छोड़कर कैलाश के साथ हो गया है अब। वहाँ असिस्टंट था पर कैलाश ने उसे कैमारामैन बनने का अवसर दिया है। बैनर्जी भी ख़ुश है और कैलाश भी।

"टेकिंग," कैलाश ने घोषित किया। "लाइट्स।"

"लाइट्स," बैनर्ज़ी ने चिल्लाया।

और सब लाइट, जो चाहिये थे, ऑन हो गए और उस निर्जीव सेट में जान आ गई। बिलकुल ऐसा प्रतीत होने लगा कि यद्यपि ड्रॉइंगरूम में अँधेरा है तथापि वहाँ की चीज़ें दिखाई दे रही हैं — धुँधली-धुँधली।

नियमानुसार एक ने दौड़कर टेप से अंतर नापा, मेकअपमैन ने तारा और राम के चेहरों पर से पसीना पोंछा, क्लैपर-बॉय दौड़कर कैमरे के सामने खड़ा हो गया, तारा व राम दरवाज़े के बाहर जाकर छिप गए, और कैलाश ने आज्ञा दी :

"साउंड स्टार्ट।"

स्टूडियो के बाहर, बग़ल में मैगज़ीनों का बंडल दबाए और हाथ में चमड़े का ब्रीफ़केस लिए, रहमान आ रहा था। बरामदे में पहुँचते ही उसकी निगाह दरवाज़े के ऊपर लाल बल्ब पर पड़ी। लाल बत्ती देखकर वह रुक गया।

"शॉट चल रहा है?" उसने दरवाजे के बाजू में खड़े छोकरे से पूछा।

"जी", उसने कहा।

"कौन-कौन हैं सेट पर?"

"तारा चौधरी और राम अरोरा।"

"और—"

"मिस सलमा मेकअप रूम में हैं। वह आ रही हैं।"

रहमान ने पलटकर देखा तो सच में सलमा इठलाती हुई आ रही थी, मेकअप किए और सीन की पोशाक पहने। छोकरा मुस्कुराने लगा। वह जानता था अब चिनगारियाँ छूटेंगी। रहमान और सलमा जब कभी, जहाँ कहीं मिलते, बड़ी चिन-गारियाँ निकलतीं और उपस्थित जनों को बड़ा मज़ा आता उनकी छेड़छाड़ देखकर, उनकी बातों को सुनकर।

"हलो, अब्दुल रहमान एम. ए.।" सलमा ने आते ही चोट की।

"श ऽऽऽ" रहमान ने अपने मुँह के सामने उँगली रखकर कहा और दरवाज़े से ज़रा दूर हटकर खड़ा हो गया। "आहिस्ता बोलो, शॉट चल रहा है।"

"ओह!" सलमा बोली, और दोनों हाथों से अपने गाल पीटने लगी। "कुसूर हो गया, माफ़ कीजिएगा, मैनेजर साहब।"

रहमान अकड़ गया। "ग्यारह बजने आए और अभीतक तुम सेट पर नहीं गई?"

"हुज़ूर," उसने व्यंग्य कसा, "अभी तारा और राम का शॉट चल रहा है। मैं तो अपने रूम में घंटे भर से तैयार बैठी हूँ।" फिर शरारतन बोली : "तुम रात को यहाँ क्यों चक्कर काट रहे हो? घर जाकर सो जाओ न?"

दरवाज़े पर खड़ा छोकरा दिलचस्पी लेता हुआ मुस्कुरा रहा था।

"अरे घर तो चला जाऊँ मगर नींद नहीं आयेगी," रहमान ने उत्तर दिया।

"क्यों?"

"क्या बताएँ!"

सलमा मुस्कुराई। "फिर भी। तबीअत तो ठीक है?"

रहमान बोला : "अपनी हालत का खुद एहसास नहीं मुझको, मैंने औरों से सुना है के परीशाँ हूँ मैं।"

सलमा ने बनावटी सहानुभूति दर्शाते हुए कहा : "च — च — च — तब तो हालत नाजुक मालूम होती है। देखूँ, नब्ज़ देखूँ —" रहमान का हाथ लेकर सलमा ने उँगलियाँ उसकी रिस्टवॉच पर रख दीं।

रहमान ने दबी ज़बान में गुनगुनाना शुरू किया :

"देखी जो नब्ज़ मेरी हँसकर तबीब बोला,
"यह तो मरीज़े इश्क़ है, यह मर्ज़ ला दवा है।"

सलमा मुस्कुराई। "ओऽऽऽ!" उसने आँखें फाड़कर कहा : "अब समझ में आया मेरी।"

"आ गया? बड़ी जल्दी आ गया आपकी समझ में। क्या समझीं, सुनूँ?"

"कि आपको किसी से इश्क़ हो गया है।"

"अजी इश्क़ क्या, इश्क़ का बाप हो गया है, बल्कि बाप के भी बाप का बाप — यानी ग्रेट ग्रैंड फ़ादर ऑफ़ इश्क़। देखा घंटी बज रही है — यानी मैं सच कह रहा हूँ।"

सलमा खिलखिलाकर हँस पड़ी। डोर-कीपर इनकी बातें कान देनेपर भी बराबर न सुन पाया था पर फिर भी मुस्कुराए जा रहा था। घंटी बजते ही वह ज़ोरोंसे हँस पड़ा। "भला कोई पूछे इससे —" रहमान ने बनावटी गुस्सा दिखाते हुए कहा, "क्यों हँस रहा है बे?"

"चलो, अंदर चलें, दरवाज़ा खुल गया," सलमा बोली।

अंदर सेट पर लोग खुश थे। शॉट अच्छा रहा था।

"बहुत बढ़िया रहा," कैलाश कह रहा था।

तारा को संतोष न हुआ। वह कैलाश के पास आई और बोली : "मैंने वह डायलॉग बराबर नहीं कहा, सिन्हा साहब।"

"कौन-सा डायलॉग?"

"वह — 'फिर वही बदतमीज़ी, छोड़ चाण्डाल' वाला डायलॉग।"

कैलाश ने तारा की बाँह पकड़कर दबाई। "बिलकुल ठीक था। कहने का ढंग तुम्हारा अपना था, मगर अच्छा था। तारा तुम बन गईं स्टार।"

कैलाश के मुँह से सहसा ऐसे प्रशंसात्मक उद्‌गार सुनने के लिए तारा तैयार न थी। सुनकर शायद वह गिर ही तो जाती, पर नहीं, कैलाश ने पहले ही से उसकी बाँह थाम ली थी और उसे थपथपा रहा था, उसका हौसला बढ़ाते हुए। कैलाश की आदत थी कि जब वह अपने किसी आर्टिस्ट से बातें करता, उसे कुछ समझाता या बताता, तो अक्सर उसके किसी न किसी अंग को छूकर बात करता। उसके इस स्पर्श से कलाकार को बड़ी सहायता मिलती और, न जाने कैसे, उसमें एक विचित्र आत्मबल पैदा होता

और साथ ही साथ आत्मीयता भी। बिजली का करंट था उसके स्पर्श में। "अब तुम स्टार बन गईं," वह कह रहा था।

सलमा के साथ सामने से रहमान आ रहा था।

"यह लो," रहमान बोला, "तो आपको अभी भी शक है इनके स्टार बनने में। यह देखो—" बग़ल से मैगज़ीनों का पुलिंदा निकालकर उसने ताश की गड्डी की तरह सोफ़े पर बिखेर दिया। दस, बारह पत्रिकाएँ थीं—कई सिनेमा की थीं और कुछ साहित्यिक, मासिक या साप्ताहिक थीं।

हर मैगज़ीन के मुखपृष्ठ पर तारा की तसवीर छपी थी। *फ़िल्मफ़ेअर* और *स्क्रीन* के मुखपृष्ठ पर भी तारा ही थी। सब लोग सोफ़े को घेरकर खड़े हो गए और देखने लगे।

तारा भी देखने लगी और देखकर उसकी खुशी का पारावार न रहा। फिर अपनी कृतज्ञ दृष्टि उसने कैलाश की ओर फिराई। कैलाश की निगाह उन तसवीरों पर जमी हुई थी, तारा की तसवीरों पर, उसकी नई खोज की तसवीरों पर; और उसके मुख पर संतोष की मुस्कान उदित हो रही थी....

"अरे, दाद दो, कैलाश, दाद तो दो," सलमा बोल पड़ी। "अपने जनरल मैनेजर और पब्लिसिटी ऑफ़िसर, अब्दुल रहमान, को उसकी पब्लिसिटी पर दाद न दोगे? देखा—भारत की तमाम मैगज़ीनों के कवर पर आज *मिट्टी* की हीरोइन—कैलाश सिन्हा की *सेन्सेशनल न्यू फ़ाइंड*—तारा चौधरी का ही फ़ोटो दमक रहा है।"

और तब सेट पर उपस्थित लोगों ने—कैमरामैन से लेकर कुली तक न—एक साथ ताली बजाई। कैलाश की सफलता उन सब की सफलता थी। वह सब कैलाश के सहकारी थ, उसके साथी थे, उसके मित्र थे, उसके हितचिंतक थे।

दूसरे दिन *ग्रेट इंडिआ पिक्चर्स* के स्टूडिओ में सरला देवी की शूटिंग चल रही थी। शॉट ख़त्म हो चुका था। चाय मंगाई गई थी। चाय आई और चाय के साथ-साथ सेठ शांतिभाई देसाई भी सेट पर आए। सेठ के हाथ में *फ़िल्मफ़ेअर* की नई प्रति थी।

"नया *फ़िल्मफ़ेअर* आ गया क्या, सेठ?" सरला देवी ने पूछा।

"हाँ, अभी आया है," शांतिभाई ने उत्तर दिया।

"देखूँ?"

शांतिभाई ने *फ़िल्मफ़ेअर* सरला देवी को पकड़ा दिया और बाजू की कुरसी पर बैठ गया।

मुखपृष्ठ पर की तसवीर देखकर सरला देवी को आग लग गई। ईर्ष्या और डाह हर धंधे में होते हैं और हर व्यक्ति में होते हैं परन्तु जितनी अधिक मात्रा में सिनेमा व्यवसाय में यह पाए जाते हैं कदाचित् दूसरी जगह नहीं पाए जाते। "अच्छा, तो

यह है तारा चौधरी ! " सरला देवी ने नाक सिकोड़कर कहा ।

डिरेक्टर पुरी ने झुककर *फ़िल्मफ़ेअर* के मुखपृष्ठ को देखा फिर बोला : "हाँ। कैलाश सिन्हा के पिक्चर *मिट्टी* की हीरोइन । नई लड़की है ।"

सरला देवी कह रही थी : "हुँ ! आँखें तो धँसी हुई हैं । और नाक देखो — जैसे टमाटर । और नाम तो देखो — *मिट्टी*! भला *मिट्टी* भी कभी किसी पिक्चर का नाम हुआ है ! आपने देखा, सेठ ? "

"देखा," शांतिभाई ने कहा । "बस जैसा नाम है वैसा ही पिक्चर भी बनेगा । वह कल का छोकरा, कैलास सिन्हा, भला क्या पिक्चर बनाएगा । कहाँ हमारा *रेशमी रूमाल* और कहाँ *मिट्टी* ।"

सरला देवी ने बिना खोले ही फ़िल्मफ़ेअर की वह प्रति दो उँगलिओं से पकड़कर शांतिभाई को इस तरह लौटा दी मानो उसके पन्नों में प्लेग के कीड़े लिपटे हुए हों । सिने क्षेत्र में डाह केवल स्त्रियों को ही होता हो सो बात नहीं, शांतिभाई ने मैगज़ीन उठाकर ज़ोरों से दूर फेंक दी । यह कहना यद्यपि अवश्य मुश्किल है कि मैगज़ीन फेंकने के मूल में शांतिभाई के दिल में डाह था या अपनी हीरोइन सरला देवी को ख़ुश करने का ख़याल । जो कुछ भी हो, मैगज़ीन ज़मीन पर जा गिरी और सामने कैमरा-ट्राली ठेलकर हटाते हुए कुलियों के पाँव तारा को रौंदते हुए निकल गए ।

अपने दफ़्तर में बैठा हुआ मनोहरलाल टेलीफ़ोन पर किसी से बात कर रहा था जब उसका मैनेजर, जोशी, अंदर आया । जोशी के हाथ में फ़िल्मफ़ेअर की प्रति थी । जोशी ने मैगजीन मनोहरलाल के सामने मेज़ पर रख दी । मनोहरलाल बात करता जा रहा था पर मुखपृष्ठ पर की रंगीन तसवीर को बराबर घूर रहा था । जब उसने टेलीफ़ोन रख दिया तो जोशी ने पूछा :

"पहचानते हैं आप इसे ? "

"कौन है ? " मनोहरलाल बोला ।

"तारा चौधरी ।"

"कोई नई फ़िल्म स्टार है शायद ।"

जोशी के चेहरे पर एक रहस्यमयी मुस्कान उदित हुई ।

"क्या बात है, जोशी ? " कौन है यह ? इसे शायद मैंने कहीं देखा है ।"

"अपने दफ़्तर में काम करती थी यह लड़की ।"

"क्या कह रहे हो ! "

"सच कह रहा हूँ, मि. मनोहरलाल । यह लड़की हमारे दफ़्तर में टाइपिस्ट थी दो महीने पहले ।"

"ओह, हाँ, याद आ गया . . . . वही न जिसके पीछे तुम —"

"आप ही के लिए मैं उसे पटा रहा था, पर कमबख्त बड़ी तेज़ मिज़ाज निकली। रिज़ाइन करके चल दी।"

"और अब यह खूबसूरत बला सिनेमा स्टार बनी हुई है!" मनोहरलाल ने कहा और तारा के उस तिरंगे चित्र को घूरने लगा। उसके मुँह से लार टपकने लगी—ऐसी लार जो दिखाई नहीं देती। फिर उसने आँखें सकरी कीं और जोशी को कनखियों से ताककर बोला: "इसका पता मालूम है? कहाँ रहती है?"

"अपॉइंटमेंट लेटर देखकर बता सकता हूँ। पता उसीमें लिखा होगा। क्या करेंगे?"

मनोहरलाल मुस्कुराया। "भई, शराफ़त का तक़ाज़ा है—मुबारकबाद देने उसके घर तक तो जाना ही चाहिए।"

मनोहरलाल की बात जोशी की समझ में आ गई। जोशी ऐसा मैनेजर था जो अपने मालिक की बात फ़ौरन समझ जाता था। बड़ा लायक़ था और बड़े काम का भी। तभी तो रंग के व्यापारी, *मनोहरलाल एण्ड कंपनी* के कर्ता-धर्ता ने उसे अपना मैनेजर बनाकर रखा हुआ था। आयात-निर्यात के काम में बड़ा दक्ष था यानी आने-जाने वाले माल की बड़ी परख थी उसे, जोशी को। जोशी परखता था, सौदा करता था और मनोहरलाल दाम चुकाता था।

६

माँजी की तबीअत आजकल कुछ ठीक थी। मगर रोगी की दशा का उसकी शकल से कुछ पता नहीं चलता। एक बार स्वास्थ्य जो बिगड़ जाता है तो उसे सुधारना मुश्किल हो जाता है। फिर भी तारा को सदा अपने काम में व्यस्त और प्रफुल्लित देख माँजी की मानसिक पीड़ा आजकल उसके मुँह पर नहीं झलकती थी और वह घर के काम में तारा का हाथ पहले से अधिक बँटाने लगी।

महीने में लगभग बीस दिन तारा का शूटिंग होता। शूटिंग सदा रात को ही होता। कभी दस-दस रात लगातार शूटिंग होता फिर चार-पाँच दिन की छुट्टी मिल जाती। इस बीच सेट उखाड़कर दूसरा सेट लगाया जाता। कभी पंद्रह रातें लगातार करनी पड़तीं। तारा थक जाती। सभी थक जाते। रात को शूटिंग करके तारा सुबह पाँच या छै बजे घर पहुँचती, पहुँचाई जाती। स्टूडिओ की सबसे पुरानी और खचड़ा स्टेशन वैगन *जनता चित्र* को किराये पर दी गई थी और इसीमें बैठकर कैलाश स्वयं तमाम कलाकारों को उनके घर छोड़ा करता था। उतने सवेरे स्टूडिओ से घर पहुँचाने का इसके सिवा और कोई साधन न था। घर आकर मुँह-हाथ धोकर तारा सो जाती, बारह बजे के लगभग उठती, थोड़ा-बहुत घर का काम करती, और फिर, माँ जो कुछ बनाकर रखती, खाती और फिर सो जाती। उसके बाद वह तीन-चार बजे दो पहर को उठती, बाज़ार जाकर साग-भाजी लाती, खाना पकाती, कपड़े धोती, नहाती, और आठ बजे तक माँ के साथ बैठकर खाना खा लेती और फिर कैलाश के आने की प्रतीक्षा करने लगती।

यह कैलाश भी एक विचित्र प्राणी था। अपने हुनर में बहुत निपुण था। जितना अच्छा लेखक था उतना ही कुशल वह निर्देशक भी था। कितना समझाकर बताया करता था। तारा ने इसी स्टूडिओ में दूसरे निर्देशकों को भी निर्देशन करते देखा था, अली हुसेन और बिपिन बोस जैसे पुराने और नामी डिरेक्टरों को डिरेक्ट करते देखा था। पर कैलाश की तरह न उन्हें शब्दों के चमत्कार का कुछ पता था न आवाज़ के उतार-चढ़ाव का न हाव-भाव के बारे में ही कुछ ज्ञान था। कैमरा इधर से उधर रखवा कर केवल 'स्टार्ट' और 'कट' कहना जानते थे वह लोग। कैलाश की बात बिलकुल

निराली थी। उसके सब मित्र उसे कैलाश कहते थे। तारा भी न जाने कब और किस तरह 'सिन्हा साहब' से 'कैलाश' पर उतर आई थी। विचित्र जीव था यह कैलाश! इतनी कम उम्र थी उसकी—लगभग २६ या २७ के रहा होगा—मगर कभी कभी कितना गम्भीर हो जाता था! जब वह गम्भीर होता तो ५० का लगने लगता और जब मूड में होता और हँसता तो अबोध बच्चे की तरह मालूम होता। काम की उसे धुन थी। वह सदा काम में खोया रहता। न उसे खाने की फ़िक्र थी न नहाने की न कपड़ों की। चौबीसों घंटे *मिट्टी* की चिंता थी उसे, *मिट्टी के डायलॉग*, स्क्रीन प्ले, शूटिंग की फ़िक्र थी, एडिटिंग, पब्लिसिटी और दूसरी बातों की फ़िक्र थी उसे। *मिट्टी* में वह संपूर्णतः खो गया था। कैलाश के जीवन में यह पहला 'चान्स' मिला था उसे, सबसे बड़ा 'चान्स'। और सफलता प्राप्त करने पर उसने कमर कसी हुई थी। सफलता प्राप्ति के लिए वह हर कष्ट सहने, हर आपत्ति उठाने और हर आहुति देने के लिए तत्पर था। चित्र का निर्माण उसके लिए इस समय एक साधना थी और उस साधना में रुकावट या विघ्न डालनेवाला हर व्यक्ति कैलाश का दुश्मन था, जिस तरह कैलाश की इस साधना में प्रोत्साहन, प्रेरणा तथा सहयोग देनेवाला हर व्यक्ति उसका मित्र था।

खाना खाते-खाते तारा यही सब सोच रही थी, अपने बारे में, अपने चित्र, अपने काम और अपने निर्देशक के बारे में। जल्दी-जल्दी खाना खाकर तारा ने मुँह धोया और बाहर के कमरे में आकर कपड़े बदलने लगी। आठ बजने में पाँच मिनट बाक़ी थे। गरमी काफी थी। जुलाई का महीना था। आज जुलाई की २१ तारीख़ थी। मेंह बरसकर हफ़्ते भर से थमा हुआ था। शाम को बादल अवश्य घुमड़कर आ जाया करते थे और वह आज भी घुमड़ रहे थे। तारा ने पंखा ज़ोरों से चला दिया।

माँ ने बाहर आकर साड़ी के पल्ले से हाथ पोंछते हुए कहा: "ऐसी भी क्या जल्दी है, तारा, स्टूडिओ जाने की! तूने बराबर खाया भी नहीं।"

"खाया तो, माँ। इतना सारा तो खाया।"

"तेरे लिए आज मैंने गुच्छियाँ बनाई और तूने एक नहीं खाई।"

तारा हँसने लगी। "माँ!" उसने कहा। "इतनी सारी तो खाई।"

तब माँ ने बात बदलते हुए कहा: "बेटा, रात को इस तरह तेरा काम पे जाना मुझे नहीं पसंद।"

"पर, माँ, हमारी शूटिंग तो रात ही को होती है। दिन को शूट करने के लिए स्टूडिओ का किराया ज़्यादा है।"

"तो ज़्यादा किराया दें।"

तारा हँस पड़ी, बोली: "कहाँ से दें, माँ? मेरा जो डिरेक्टर है न, माँ, वही प्रोड्यूसर भी है—और उसकी जेब बस एकदम ख़ाली है।"

इसी समय उसकी दृष्टि मेज़ पर पड़ी हुई चिट्ठी पर पड़ी।

"तेरे नाम चिट्ठी आई थी शाम को, जब तू खाना पका रही थी। तुझे देना भूल गई। कहाँ से आई है?"

तारा ने लिफ़ाफ़ा उठाकर देखा। "दिल्ली से," उसने कहा।

"जीवन की होगी। क्या लिखा है, बेटा?"

बाहर गाड़ी के रुकने और ब्रेक लगने की आवाज़ आई। तारा ने लिफ़ाफ़ा बिना खोले ही मेज़ पर वापस फेंकते हुए कहा :

"फिर पढ़ूँगी माँ। शायद गाड़ी आ गई।"

माँ मेज़ के पास गई। लिफ़ाफ़े के पास ही फ़ोटो फ़्रेम रखी हुई थी जिसमें जीवन का फ़ोटो था। माँ ने फ़्रेम हाथ में उठा ली और उस तीन साल पुरानी फ़ोटो को देखने लगी। एक कोने में अंगरेज़ी में लिखा हुआ था : *टू डिअरेस्ट तारा, विथ लव फ़्रॉम जीवन। दिल्ली, १९५५।* "लड़का बड़ा अच्छा है बेटा," माँ ने कहना शुरू किया। "अब तो साहब बन गया है। तेरे पिताजी ने—"

किसी ने दरवाज़ा खटखटाया।

"गाड़ी आ गई," तारा ने कहा और लपककर दरवाज़ा खोल दिया।

दरवाज़े पर मनोहरलाल खड़ा था।

"माफ़ कीजिएगा, मेरा नाम मनोहरलाल है। सुना है इस चाल में कुछ कमरे ख़ाली हैं?"

"जी हमें नहीं पता," तारा ने कहा।" चौकीदार से पूछिए। वह नीचे रहता है। वैसे इधर का सारा हिस्सा ख़ाली पड़ा है।"

"आपको शायद कहीं देखा है मैंने।"

"मैं आप ही की कम्पनी में काम करती थी। शायद तब कभी देखा होगा।"

"सच? आप मेरी कम्पनी में काम करती थीं? अजीब बात है। अब क्या करती हैं आप?"

"अब मैं फ़िल्म में काम करती हूँ।"

"ओह, *हाउ नाइस मीटिंग यू*! अ—बात यह है कि रंग का जहाज़ आया है। बैरल्स रखने के लिए मेरे गोडाउन में जगह नहीं है। सो, अगर यहाँ कुछ कमरे मिल जाते तो सारा माल यहाँ भर देता। किधर हैं वह कमरे जो ख़ाली हैं? दिखाइएगा?"

तारा ने गैलरी के दाहिने ओर इशारा करते हुए कहा : "इधर का सारा हिस्सा ख़ाली है।" और फिर मनोहरलाल के साथ वह गैलरी के छोर तक गई। आगे अँधेरा था और उसे मनोहरलाल के मुँह से शराब की बू आ रही थी। वह रुक गई। "यह रहे वह कमरे," उसने कहा।

मनोहरलाल मुस्कुराया। "ओह! हाँ तो, तारा चौधरी, तुमने बताया नहीं कि हमारे यहाँ से तुम रिज़ाइन करके क्यों चल दीं।"

"वह कम्बख़्त आपका मैनेजर बड़ा बदमाश है।"

"क्यों, क्या किया उसने, तारा चौधरी ?"

तारा ने मनोहरलाल की ओर सशंकित नेत्रों से देखा। "आप तो मुझे पहचानते भी न थे! आपको मेरा नाम कैसे मालूम हुआ ?"

वह हँसने लगा, बोला: "क्या कह रही हो! अरे इस खूबसूरत बला को कौन नहीं पहचानता! जिधर देखो, जहाँ जाओ, आज वहाँ तुम्हारा ही ज़िक्र है। हमने भी सोचा रात हो गई है, चलो तारा चौधरी से चलकर जोशी की गुस्ताखी के लिए माफ़ी भी माँग लेंगे और सिनेमा स्टार बन जाने के लिए उसे कॉनग्रैच्युलेट भी कर देंगे।" तारा की बाँह पकड़कर वह उसकी आँखों में देखने लगा। "सो, चलिए अंदर, तशरीफ़ ले चलिए, आपको कॉनग्रैच्युलेशन्स तो दे दूँ।"

तारा अपने को छुड़ाने का निष्फल प्रयत्न करने लगी। वह उसे पकड़ कर अंदर खींचने लगा। तारा ने चीखना-चिल्लना चाहा पर उसके मुँह पर मनोहरलाल ने अपना हाथ रख दिया और उसे ज़बरदस्ती सामनेवाले खाली कमरे में ठेलकर दरवाज़ा बंद कर दिया।

अंदर बिलकुल अँधेरा था। कमरे से पीछे की छत पर जाने के लिए दरवाज़ा था जिसमें से उज्ज्वल आकाश झलक रहा था। तारा और मनोहरलाल की उस अँधेरे कमरे में झकझोर हुई और मनोहरलाल का मुँह रह-रहकर कभी तारा के माथे को और कभी गाल को छूने लगा। उसके मुँह से शराब की दुर्गन्ध आ रही थी और तारा को पकड़े हुए वह झूम रहा था।

"दूर हट, कुत्ते —" तारा ने उसकी नाक पर तमाचा मारकर उसे ठेलते हुए कहा और तुरंत ही उसके शिकंजे से निकलकर पीछे के खुले द्वार की ओर भाग निकली।

वह उसके पीछे भाग रहा था।

तारा कमरे से निकलकर छत पर आई। पंद्रह फ़ुट के बाद छत टूटी हुई थी और उसके बाद नीचेवाली मंज़िल की काली, नंगी दीवारें खड़ी हुई थीं। तारा को याद आ गया चाल में कभी आग लगी थी और उसका यह हिस्सा जल गया था। तारा भागते-भागते छत के सिरे पर आई। मनोहरलाल पीछे लपक रहा था। मरता क्या न करता। तारा ने हिम्मत बाँधी और उन डेढ़ फ़ुट चौड़ी दीवारों पर दौड़ने लगी। वैसे दौड़ने लगी जैसे सरकस में लड़की छाता लिए तार पर दौड़ती है। मनोहरलाल सहमा और छत के किनारे आकर ठिठक गया। परंतु वासना मनुष्य को अंधा ही नहीं निर्भीक भी बना देती है। वह भी दीवारों पर चलने लगा।

तारा ने चिल्लाकर कहा: "रुक जाओ वहीं। मैं कहती हूँ ठहरो — आगे मत बढ़ो —"

मनोहरलाल की आँखें सकरी होकर तारा को ताक रही थीं जैसे अपने पथ्य पर झपटते हुए गिद्ध की आँखें ताकती हैं। "तुम मुझसे दूर कहीं नहीं जा सकतीं," उसने कहा। "तुम भाग नहीं सकतीं।"

नशे में तूल वह बढ़ रहा था। तारा हट रही थी। दीवार थोड़ी दूर जाकर समाप्त होती थी। वहीं से दूसरी दीवार आकर कोण बनाती थी। तारा कुछ ठिठकी और फिर बाजूवाली दीवार पर मुड़ गई। मगर मनोहरलाल ने इसी समय तारा की ओढ़नी पकड़ ली। तारा जान पर खेल गई और उसे झकझोरने लगी, अपने को छुड़ाने लगी। शराब की बेहोशी में भी मनोहरलाल को आत्मरक्षा का ज्ञान था। उसका झोंक बिगड़ रहा था। उसने तारा को छोड़ दिया। तारा भागने लगी, छत की ओर। वह भी दूसरी दीवार पर लपक पड़ा, छत की ओर।

और उधर, स्टूडिओ की पुरानी स्टेशन वैगन में, कैलाश आन पहुँचा। ज़ीना चढ़कर वह तारा के कमरे पर आया। द्वार खुला था और माँ टेबल के सामने खड़ी जीवन के फ़ोटो को निहार रही थी।

"नमस्ते, माँजी, तारा तैयार है?" कैलाश ने आते ही पूछा।

"उसका पुराना मालिक आया था। उसको बाजू के कमरे दिखाने इधर को गई है।"

कैलाश को वातावरण में व्हिस्की की बू आई। वह आशंकित होकर बोला: "कौन मालिक?"

"पहले तारा जिस दफ़्तर में काम करती थी न? वह ।"

"वह! वह बदमाश पीया हुआ है! उसके साथ क्यूँ गई?" कहता हुआ कैलाश बाहर को निकल पड़ा।

गैलरी थोड़ी दूर के बाद मुड़कर एक दरवाज़े पर पहुँचकर समाप्त हो गई थी। दरवाजा अंदर से बंद था और अंदर से तारा की चीखें सुनाई दे रही थीं। कैलाश ने दो-तीन लातें जड़ीं तो दरवाज़ा टूट पड़ा। तीर की तरह वह अंदर घुसा और अंधेरे कमरे को पारकर छत पर आया। चाँदनी में उसने देखा टूटी नंगी दीवार पर तारा बढ़ी चली आ रही है और मनोहरलाल उसके पीछे पड़ा हुआ है। तारा की ओढ़नी मनोहरलाल के हाथ में है। रह-रहकर वह चीख़ रही है।

"बदमाश! छोड़ मेरी ओढ़नी। क्यों मेरे पीछे पड़ा हुआ है। मैं पुलीस को रिपोर्ट कर दूँगी।"

"तो फिर रुक जा। आजा मेरे पास। तुझे अपनी गाड़ी में बिठाकर पुलिस थाने ले चलता हूँ।"

"मैं नीचे कूदकर जान दे दूँगी, पर तेरे हाथ न लगूँगी!"

पर मनोहरलाल ने झपटकर तारा को पकड़ लिया। दोनों में फिर झकझोर होने लगी। वह लोग दीवार पार करके छत पर पहुँच गए थे। तारा को ज़ोरों से अपने अंक में कसकर मनोहरलाल दबोच रहा था और तारा चीख़ रही थी कि उनके कानों में ज़ोर की आवाज़ आई: "छोड दे बदमाश!" और मनोहरलाल को उसके कोट का कॉलर पकड़कर कोई खींच रहा था। मनोहरलाल

ने मुड़कर देखा तो एक घूँसा उसकी गर्दन पर पड़ा। तारा पहचान गई कैलाश को।

"कैलाश!" तारा ख़ुशी से चिल्ला पड़ी।

"घबराओ नहीं, तारा," कैलाश ने कहा और बढ़ते हुए मनोहरलाल पर टूट पड़ा।

दोनों में घूँसेबाज़ी होने लगी। पीये हुए मनोहरलाल का दम फूलने लगा और पिटते-पिटते वह उन जली दीवारों पर पीछे हटने लगा। कैलाश उसका पीछा कर रहा था। दीवार जहाँ समाप्त होती थी मनोहरलाल ने वहाँ पाँव रखा तो नीचे को ढुलक पड़ा।

दौड़कर कैलाश पास आया और नीचे को झाँककर देखने लगा। तीन मंज़िले से मनोहरलाल गिर गया तो उसका कचूमर ही निकल गया होगा। कैलाश अवश्य ही ख़ूनी ठहराया जाएगा। कैलाश के माथे पर पसीने की बूँदें फूट निकलीं। उसने देखा दीवार के नीचे कूड़ा-करकट और जली हुई राख का बड़ा भारी ढेर है जिसमें से सही सलामत निकलकर मनोहरलाल, भूत बना हुआ, भाग रहा है—अपनी मोटरकार की ओर। कैलाश ने संतोष की साँस ली और वह हँसने लगा। तारा की ओर वह चल पड़ा। "बच गया! अभी मर जाता कम्बख़्त!" उसने कहा।

तारा सहमी हुई, दुबकी हुई खड़ी हाँफ रही थी। कैलाश ने जब पास पहुँचकर उसकी बाँह पकड़ी तो वह रो पड़ी।

"अगर तुम्हें यहाँ पहुँचने में ज़रा भी देर होती तो मैं—मैं—नीचे कूदकर मर जाती।"

तारा का सर थपथपाकर कैलाश ने कहा: "अब फ़िक्र न करो। वह कुछ नहीं बिगाड़ सका। आओ, आओ मेरे साथ।"

जब माँ ने सारा काण्ड सुना तो सिहर उठी। "यह तो बड़ा अच्छा हुआ, भैया, जो तुम वक़्त पर आ गए नहीं तो आज ख़ैर नहीं थी।"

तारा ने ओढ़नी के आँचल से आँसू पोंछते हुए कहा: "कमीना! कहने लगा माल रखने के लिए कमरे चाहिए। तुमने देखा, माँ? यह हैं सोसायटीवाले! क्या बुरा किया मैंने जो सिनेमा में काम कर लिया? इन सोसायटीवालों से तो सिनेमावाले लाख दरजे अच्छे हैं।"

"अब इस चाल में रहना हमारे लिए ठीक नहीं, भैया," माँजी ने कैलाश से कहा। "निरे लोफ़र लोग भरे पड़े हैं यहाँ। लड़की को देखा कि बस सीटी फूँकने लगते हैं। जीना मुश्किल हो गया था। भगवान की दया हुई जो तुम मिल गए। तुमने लड़की की बहुत मदद की, भैया। इसे सिखा-पढ़ाकर फ़िल्म में काम दिलाया। तुम न मिलते तो न जाने क्या होता! यह भी तुम्हें बहुत मानती है, बहुत इज़्ज़त करती है तुम्हारी। ठीक भी तो है—गुरु का आदर करना ही चाहिए। अब हमें तुम्हारा ही सहारा है, भैया। तारा तुम्हारी बहन की तरह है। तुम सदा इसकी देखभाल करना और

इसे कभी बिगड़ने मत देना।"

"आप कोई चिन्ता न करें, माँजी," कैलाश ने सांत्वना दी।

"कोई दूसरा घर मिल जाता तो यह जगह छोड़ देते।"

"मैं घर की तलाश में हूँ, माँजी," कैलाश ने कहा और फिर तारा से बोला : "चलो, तारा, देर हो रही है।"

कैलाश की खटारा स्टेशन वैगन, जो उसे *बॉम्बे स्टूडिओज़* से किराये पर मिली थी, जब बोरी बंदर पहुँची तो कैलाश ने उसे मेट्रो की ओर मोड़ दिया। यद्यपि रात थी, सड़कों पर आज लोगों की भीड़ अधिक थी। कैलाश ने बाहर के रास्ते से, वरली होते हुए, दादर जाने का तय किया हुआ था।

गाड़ी पेडर रोड पहुँची और फिर महालक्ष्मी।

कैलाश गाड़ी चला रहा था और सोच रहा था — आज के सीन के बारे में, जो उसे स्टूडिओ पहुँचकर शूट करना था। सीन मुश्किल था और बहुत महत्त्वपूर्ण था। छोटे-बड़े प्रत्येक सीन को सफलतापूर्वक शूट करने से ही चित्र पूर्णतया सफल हो सकता है, यह कैलाश जानता था। और इसीलिए वह चौबीसों घंटे अपने चित्र के निर्माण में खोया रहता, निर्माण की व्यवस्था में व्यस्त रहता, निर्माण-विधि को प्रभावयुक्त बनाने का सतत प्रयत्न करता रहता। चौबीसों घंटे उसके मस्तिष्क की प्रयोगशाला में असंख्य विचार और भावनाएँ उत्पन्न होतीं, जिन्हें वह खूब थपेड़ता, मथता, घोटता, पीसता, छानता, फिर विभिन्न टेकनिक की आँच देकर उनका अर्क़ निकालता। और फिर यही अर्क़ वह अपने चित्र *मिट्टी* में उँड़ेला करता। *मिट्टी* की सफलता पर उसका भविष्य निर्भर था। उसने सुना हुआ था कि अवसर मनुष्य को एक बार ही मिला करता है, बार-बार नहीं। सो, इस अवसर से वह पूरा-पूरा लाभ उठा लेना चाहता था। बम्बई आए उसे सात साल हो चुके थे। सात वर्ष से वह इस अवसर की प्रतीक्षा में था। अब जाकर उसे अवसर मिला है!... उसे रजनीकान्त मिल गया, वह निर्देशक और निर्माता बन गया, उसे तारा चौधरी मिल गई!... चित्र अच्छा बन गया तो वह बहुत बड़ा डिरेक्टर माना जाएगा, उसे बहुत रुपया मिलेगा, उसका खूब नाम होगा, उसकी सारी महत्त्वाकांक्षाएँ पूरी हो जाएँगी। काम की उसे लगन थी और चाहिए था उसे नाम। ख्याति और धन के तराज़ू पर ही तो मानव की योग्यता और उसकी कला सदासे तुलती आई हैं। इस तौल में भारी उतरने का उसने संकल्प किया हुआ था और इसी लक्ष्य से उसका समस्त अस्तित्व प्रयत्नशील था। उसे इस समय चित्र-निर्माण की लगन लगी हुई थी। इस समय चित्र-निर्माण उसकी साधना बना हुआ था, उसकी अखंड साधना। और सीट के दूसरे छोर पर दुबकी हुई, सहमी हुई तारा बैठी थी। 'बेचारी!' कैलाश ने मन में सोचा। 'आज इस पर बुरी गुज़री। पर है बहादुर। पूरा मुक़ाबला किया उस बदमाश का। शेरनी की तरह गुर्रा रही थी तब उस छत पर, उस जली हुई टूटी छत पर, और अब कैसे बकरी की तरह चुप

बैठी है! कितनी सहमी हुई है! बेचारी! पर है यह आर्टिस्ट। आर्टिस्टों की तबीअत भी पाई है और उनका तेवर भी। एक दिन चलकर बहुत बड़ी स्टार बनेगी यह, यह तारा, यह तारा चौधरी। सरला देवी के पास केवल रूप है और है पब्लिसिटी। मुक्ता बैनर्जी अभिनय-कला में प्रवीण अवश्य है परंतु ढल चुकी है। पुखराज के पास न तो रूप है न यौवन, न कला; केवल पब्लिसिटी के बूते पर बनाई हुई वह एक झूठी और कृतरिन *पर्सनालिटी* है, गधी है; पर दिमाग, मुक्ता की तरह ही, सरला की तरह ही, सातवें आसमान पर है। इन सब को मारेगी एक दिन यह तारा, बहुत जल्द ही, *मिट्टी* रिलीज़ होने भर की देर है। तारा इन सब से कम उम्र है। मुश्किल से उन्नीस की होगी। यौवन पूरे उभार पर है। फिर कितनी स्वस्थ और स्वच्छ है। पहाड़ी सोते की तरह निर्मल और स्वच्छ है। कलाकार है। जो बताओ सीख जाती है। कितनी जल्दी कितना कुछ सीख लिया इसने। पर है मासूम। बेचारी! ज़रा झिड़को, ज़रा डाँटो तो रो देती है। आँखों में आँसू तो जैसे धरे ही रहते हैं। हृदय बंगालन का है और प्रकृति जाटनियों की। स्वास्थ्य, यौवन, रूप और कला का अद्‌भुत मिश्रण है यह, यह तारा चौधरी....'

"तुम्हें गाड़ी चलाना आता है?" सहसा कैलाश ने पूछा।

तारा की विचार-श्रृंखला टूटी। अवश्य ही वह मनोहरलाल और छतवाली घटना के विषय में सोच रही थी। उसने आँखें कैलाश की ओर घुमाईं। "क्या?" उसने कहा।

"ड्राइविंग जानती हो?"

"ना।"

"पिक्चर के अन्दर कुछ सीन ऐसे हैं जिनमें तुम्हें गाड़ी चलानी होगी। अच्छा है तुम सीख जाओ। आओ, पास आओ। तुम्हें सिखाऊँ।"

तारा पास खिसक आई। कैलाश ने उसे स्टीअरिंग व्हील पकड़ा दिया। गाड़ी वरली की चौड़ी खुली सड़क पर थी। दो-चार बार व्हील ज़ोरों से इधर-उधर हुआ फिर तारा के हाथों में दक्षता आ गई और वह कैलाश की छाती के सहारे टिकी हुई, सड़क की सफ़ेद रेखा पर नज़र गाड़े, मोटर लिए जा रही थी। साइकल चलानेवाले के लिए शायद मोटर चलाना मुश्किल नहीं। एक यंत्र में हैंडल होता है, दूसरे में व्हील। काम दोनों का एक है, और एक ही प्रकार से होता भी है। कभी-कभी सामने से आती हुई मोटर की तेज़ रफ्तार देखकर या सड़क पार करते हुए लोगों को देखकर तारा चिंतित हो उठती, पर तुरंत ही उसके पीछे सतर्क बठे हुए कैलाश के हाथ व्हील थाम लेते। तारा सोच रही थी कि कितना सतर्क और हर बात में प्रवीण है कैलाश। भला आदमी है। कलाकार है। कला-सिद्ध है। एक दिन बहुत बड़ा डिरेक्टर बनेगा। कितना कुछ जानता है यह। क्या अद्‌भुत जानकारी है इसकी। और बताता कितनी अच्छी प्रकार है; मगर आँखों में सीधा देखके सिखाता है—जैसे सर्कस के रिंगमास्टर

तारा की हथेलियों में फिर नमी आने लगी और उँगलियों के बीच से फिर व्हील फिसलने लगा।

कैलाश ने कहा: "लाओ, व्हील मुझे दो, भीड़ ज्यादा है सड़क पर। जल्दी पहुँचना है स्टूडिओ और देर हो गई। लोग इंतज़ार कर रहे होंगे।"

तारा ने व्हील से हाथ हटा लिए और सरककर बैठ गई।

गाड़ी तिलक ब्रिज पर पहुँच रही थी और पुल के नीचे दनदनाती हुई दो लोकल रेलगाड़ियों का क्रॉस हो रहा था।

रहमान बड़ी देर से शीशे में घूर रहा था। शीशे में सुंदर मुखड़ा था। मुखड़े के होंठों पर लिपस्टिक लगाई जा रही थी, लगाई नहीं जा रही थी बल्कि लगी हुई लिपस्टिक को सँवारा जा रहा था। रह-रहकर शीशे में आँखें चार हो जाती थीं और नव होंठों पर मुस्कुराहट बिखर पडती थी, जैसी कि सलमा के होंठों पर बिखरा करती थी जब वह मुस्कुराती थी। अब जो आँखें चार हुईं तो रहमान बोल पड़ा:

"जवाब नहीं! भई, सलमा, तुम्हारा जवाब नहीं। यह सुराहीदार गर्दन तुम्हारी! सिंगापूरी नारियल की तरह गोलमगोल छोटा-सा सर! सर पर नागिन की तरह लहराती हुई यह काली-काली लटें! ....बस तुम्हारे गुलाबी गालों पर अगर नन्हा-सा एक तिल हो जाता, तो सच कहता हूँ, जहाँ से गुजरतीं तुम लोगों की वहाँ लाशें बिछ जातीं!"

सलमा खिलखिलाकर हँस पड़ी। अपनी तारीफ़ सबको अच्छी लगती है, चाहे वह मज़ाक़ में ही क्यों न की गई हो।

"अच्छा, अच्छा, मेरी बहुत तारीफ़ हो ली। अब अगर जनता चित्र के जनरल मैनेजर साहब घड़ी भर के लिए बाहर तशरीफ़ ले जाएँ तो मैं कपड़े पहन लूँ," वह बोली।

रहमान ने सलमा को ऊपर से नीचे तक ताककर कहा: "कपड़े पहन लूँ? यानी —मतलब — अभी आपने क्या —"

"ओह! मेरा मतलब — कपड़े बदल लूँ। पहला शॉट मेरा ही है।" कलाई पर नज़र गई तो मेहता साहब की भेंट की हुई जुवेल-जड़ित रोलेक्स के नन्हें-से डायल पर साढ़े-नौ बज रहे थे। "ओह! साढ़े-नौ बजने को आ गए!" उसने कहा।

रहमान ने गुनगुनाकर कहा: "क्यों घड़ी-घड़ी मेरी जान देखते हो घड़ी, क्या घड़ी भर को भी मेरा पास गवारा नहीं तुमको?"

"अभी सिन्हा साहब आ जाएँगे तो मार ही डालेंगे तुमको। कहेंगे: 'साढ़े-नौ बज गए। तैयार क्यों नहीं किया सलमा को?'"

सलमा की ऐक्टिंग देखकर रहमान मुस्कुराया। सलमा नक़ल अच्छी उतारा करती थी।

"यह कैलाश भी अजीब आदमी है।" वह बोला।

"अच्छा है!"

"मैंने बुरा थोड़े ही कहा। मेरा तो बचपन का दोस्त है। मगर ज़रा सनकी है। काम के आगे और कुछ नहीं दीखता उसे। तुम भी अगर बिना कपड़ों के सामने से इठलाती गुज़र जाओ तो उसे न दिखाई दो!"

"आर्टिस्ट है! हमेशा काम की झोंक में रहता है। काम में खोया रहता है!" इसी समय मेकअप रूम के बाहर, स्टूडिओ के हाते में, गाड़ी आने की खटरपटर सुनाई दी और सलमा ने कहा: "यह लो! जनता चित्र की खटारा एक्सप्रेस आ गई। अब जाओगे या पिटवाऊँ तुम्हें?"

रहमान फ़ौरन उठा और "यह चला। फिर मिलेंगे," कहता हुआ कमरे के बाहर चला गया।

सलमा ने दरवाज़ा बंद किया और ड्रेसिंग टेबल के क़दे-आदम शीशे के सामने खड़ी होकर वह कपड़े निकालने लगी। अपनी साड़ी और चोली आदि उसने निकाल कर सोफ़े पर डाल दिए और आज के सीन की पोशाक का हैंगर, जो खूंटी से लटका हुआ था, उठाया। हैंगर से उसने कटोरीदार चोली निकाली और काठियावाड़ी घाघरा खींच ही रही थी कि अपनी नग्न आकृति को शीशे में एक नज़र देखे बिना वह न रह सकी। हैंगर और चोली छोड़, पंजों के बल, मॉडेल के पोज़ में, वह शीशे के सामने खड़ी अपने को, अपने समस्त शरीर को निहारने लगी, उस चिपकती हुई निगाह से निहारने लगी जिससे कभी उसके ख़रीदार या उसके शैदाई उसे निहारा करते थे—जब वह सिनेमा स्टार नहीं बनी थी और जब उसकी अम्मा कोठा चलाती थी—और अब भी जिस निगाह से उसे उसके फ़्लैट के बेडरूम में कभी-कभी मेहता साहब निहारा करते थे। अपने गोरे और चुस्त शरीर की गठन से वह ख़ुश थी। अट्ठाईस वर्षीया युवती के लिए उसका शरीर काफ़ी सुडौल और सुंदर था। कूल्हों पर कुछ गोश्त अधिक था, पर मेहता को यही कूल्हे तो पसंद थे। इन्हीं पुट्ठों की हलचल उनकी साड़ी में पीछे को तनाव पैदा किया करती और इन्हीं कूल्हों को देखकर तो शायद उसकी मित्रमंडली उसे पटाखा कहा करती थी। सामने पेट पर कुछ चरबी जमने लगी थी जो एक हलकी-सी मोड़ पैदा कर रही थी, जो कभी-कभी, जब वह बैठती या झुकती या बदन को मोड़ती तो, साइकल की ट्यूब की शक्ल में, पेट के उस स्थान में जहाँ नाभी है, उमड़ पड़ती थी। सुना है कम खाने और व्यायाम करने से पेट नहीं निकलता। पर यह दोनों बातें सलमा के लिए दुष्कर थीं। वह ख़ूब खाती, ख़ूब काम करती, ख़ूब सोती, ख़ूब हँसती। हर बात वह अधिक मात्रा में करती और मस्त रहती। अब भी मस्त थी। शीशे में अपना नग्न शरीर देख रही थी और मस्त थी। अकेले में, सूने में आदमी शीशे के सामने क्या-क्या भावभंगिमा करता है, कैसे-कैसे मुँह बनाता है! सलमा तरह-तरह के पोज़ लेने लगी, वह तमाम पोज़ जो उसने

उन विदेशी पत्रिकाओं में देखे थे जो फ़ोर्ट और कोलावा की कुछ दूकानों पर लटकी रहा करती हैं — वह आर्ट और फ़ोटोग्राफ़ी की पत्रिकाएँ जिनमें नग्न तथा अर्धनग्न विदेशी सुंदरियाँ अपने शरीरों की सुंदरता का प्रदर्शन किया करती हैं या प्रदर्शन न करने का यत्न किया करती हैं। सलमा ने देखा, उसी शीशे में, कि उसका शरीर भी उतना ही मादक था जितना उसका चेहरा। सलमा ने ख़ुश-ख़ुश अपने आपसे कहा : 'पंजाब की मिट्टी है! घुन लगते देर लगेगी।' पेट पर से इसी समय भटककर उसके हाथ ऊपर को आने लगे और फिर उन्होंने उसके दोनों स्तनों को घेरकर मुट्ठी में बाँध लिया। कश्मीरी सेब की तरह सख़्त थे उसके वक्ष और उनकी नोकों पर कश्मीरी सेब की ही लाली थी। सलमा ने मुस्कुराकर मुट्ठियाँ ढीली कीं और फिर उनपर हलकी-सी चपत लगाकर सगर्व कहा: 'यही तो हैं हिमालय की वह चोटियाँ जहाँ पर आनकर मर्द दम तोड़ते हैं! यही तो है वह मैदाने करबला!'

७

रजनीकान्त की लम्बी-चौड़ी ख़ूबसूरत ब्यूक गाड़ी समुद्र के किनारे पर आकर नारियल के झुरमुट के पास एक जाती है। रजनीकान्त ब्रेक लगाता है और उसकी बग़ल में बैठी हुई तारा दरवाज़ा खोलकर बाहर निकलती है। पास ही ताड़ का एक पेड़ बालू पर गिरा पड़ा है। तारा जाकर उसी पर बैठ जाती है और दूसरे नारियल के तने से पीठ टिका देती है। सामने समुद्र हिलोरें ले रहा है और मदमाती बयार तारा के बालों में लहरें पैदा कर रही है। तारा के मुँह पर झिलमिलाते हुए पत्तों की छाया थिरक रही है और तारा समुद्र के विस्तार को देख रही है।

रजनीकान्त ने मुँह की सिगरेट फेंकी और तारा के पास आया, देखा वह खोई हुई सामने ताक रही थी। वह भी उसके पास उसी गिरे हुए ताड़ के तने पर बैठ गया और तारा को ताकने लगा। थोड़ी देर बाद वह बोला: "क्या सोच रही हो?"

तारा जहाँ देख रही थी वहीं देखती रही और वहीं देखते हुए उसने कहा: "उस दिन की बात.... जब हम-तुम पहली बार मिले थे।"

रजनीकान्त ने तारा के हाथ पर अपना हाथ रख दिया फिर आहिस्ता-आहिस्ता उसकी कुहनी से कलाई तक अपना हाथ फिसलाने लगा। "मैं भी यही सोच रहा था। तुम्हें याद है हम कहाँ मिले थे?"

तारा ने मुड़कर रजनीकान्त को देखा, उसके चेहरे को देखा, प्यार से देखा, और फिर उसकी आँखों में देखकर मुस्कुराई, फिर धीमे से कहा: "हाँ, याद है।"

"अजीब बात है! विश्वास नहीं होता। तब किसे मालूम था कि महीने भर के अंदर-अंदर हम दोनों आपस में इस तरह घुलमिल जाएँगे।" रजनीकान्त आगे सरका और तारा को अपनी ओर खींचकर कहने लगा: "ऐसा लगता है मानो —"

"कट," कैलाश की आवाज़ आई।

रजनीकान्त और तारा ने तुरंत ही पलटकर देखा। उनसे दस फ़ुट पर, कैमरे के बराबर में, कैनवस की कुरसी पर बैठा हुआ कैलाश कह रहा था: "रजनी, तुम्हारा साया पड़ रहा है तारा के मुँह पर। ज़रा पीछे हटकर बोलो डायलॉग।"

रजनीकान्त ने देखा, जब वह आगे सरकता है तो वास्तव में उसके सर के पीछेवाले लाइट का साया तारा के मुँह पर पड़ने लगता है जिससे तारा की एक आँख अँधेरे

में छिप जाती है। रजनी पीछे सरक गया। फिर से झुककर उसने तारा को खींचा। "अब भी पड़ता है शैडो ?" उसने पूछा।

साया फिर पड़ रहा था।

"ठहरो, कैलाश," कैमरामैन बैनर्जी ने कैमरे के पीछे से उठते हुए कहा। "मैं लाइट हटाता हूँ।" बैनर्जी ने इधर-उधर देखा, कुछ सोचने लगा, फिर तय करके ऊपर को देखकर बोला: "देखो, इस लाइट को ज़रा बाज़ू हटाओ। नहीं, वह वाला। कौन है ऊपर ?"

स्टूडिओ के छत की कैंचिओं से रस्सी द्वारा लटकाकर, फ़र्श से कोई १५ या २० फ़ुट की ऊँचाई पर, लकड़ी की तख्तियाँ बंधी होती हैं जिनपर भारीभरकम लाइट रखे जाते हैं; और एक-दो लाइटमैन ऊपर इन्हीं तख्तियों पर, जिन्हें स्टूडिओवाले तरापे कहते हैं, तैनात रहते हैं। इस तरह के तरापों का ऊपर, अधर, एक जाल-सा फैला रहता है, और ऊपरवाले लाइटमैन इन दो फ़ुट चौड़े तरापों पर बंदर की तरह चुस्ती से चला-फिरा करते हैं, कैमरामैन के आदेशानुसार लाइट ऑन और ऑफ़ किया करते हैं, लाइट को एक क्लैम्प से निकालकर दूसरे क्लैम्प में लगाते हैं। नीचे फ़र्श पर काम करनेवाला हर कोई लाइटमैन ऊपर तरापे पर बेधड़क काम नहीं कर सकता। ऊपर चक्कर आने लगता है। इसीलिए तरापे पर चलनेवाले की चाल देखकर यह बता देना मुश्किल नहीं कि लाइटमैन को तरापे का अभ्यास है या नहीं।

बैनर्जी ने फिर पूछा: "अरे बोलता क्यों नहीं ? कौन है ऊपर ?"

तरापे पर रस्सी से टिककर बैठा हुआ व्यक्ति अँधेरे में उठा। "जी, मैं हूँ—गनपत," उसने उत्तर दिया।

बैनर्जी बोला: "हाँ, गनपत, सुन—वह २७ नम्बर ऑन कर।"

"जी बहुत अच्छा," गनपत ने कहा और तरापे पर तुरतुर चलता हुआ २७ नम्बर के लाइट की ओर जाने लगा।

"अरे, यह गनपत रात-पाली पर कैसे आया हुआ है !" कैलाश ने आश्चर्य प्रकट किया। "इसे तो मैंने आज दिन को भी डिरेक्टर अली हुसेन के सेट पर काम करते देखा था।"

बैनर्जी मुस्कुराया और पास आकर कैलाश के मुँह में लगी हुई बुझी सिगरेट को माचिस की लौ दिखाता हुआ बोला: "यह तो पिछले चार दिनों से दिन और रात बराबर काम किए जा रहा है। पैसे-कमाई की बड़ी फ़िक्र है बच्चू को।"

कैलाश ने ऊपर देखकर पूछा: "क्यों भई, इतने पैसे कमाकर क्या करेगा ?"

गनपत ऊपर तरापे पर २७ नम्बर के लाइट के पास पहुँच रहा था, वह मुस्कुराकर चुप-चुप लाइट ठीक करने लगा।

तब इलेक्ट्रीशिअन ने हँसकर कहा: "अरे, बतादे, गनपत। शर्माता क्यों है ?"

रजनी ने तश्तरी को झोंक दिया तो तश्तरी और प्याली की सारी चाय उसकी कमीज़ पर गिर पड़ी और कॉलर से लेकर जेब तक फैल गई। "ओह! हत्तेरे की!" उसने झुंझलाकर कहा, फिर कैलाश की ओर देखकर: "अब क्या होगा?"

"जब तक तुम्हारी कमीज़ धोकर सुखा न लें शूटिंग बंद करनी पड़ेगी। एक ही कमीज़ थी।"

"इसमें तो घंटा भर लग जाएगा," तारा ने पीठ सीधी करते हुए कहा। नारियल के तने से टिके-टिके उसकी पीठ अकड़ गई थी। "मैं जरा उठूँ?" उसने अपने डिरेक्टर कैलाश सिन्हा से अनुमति माँगी।

परंतु रजनीकान्त बोल पड़ा: "नहीं, घंटा नहीं लगेगा। मैं मेकअपरूम में जाकर ख़ुद अपने हाथों से चाय का दाग़ धोकर, पंखे में कमीज़ सुखाकर, दस मिनट के अंदर आता हूँ। जबकत, कैलाश, तुम डान्स का रिहर्सल करोगे मैं वापस आ जाऊँगा।"

"रिहर्सल कैसे करूँगा डान्स का?" कैलाश ने परेशानी के साथ कहा। "तुम्हें जो मौजूद रहना है सीने के अंदर। ख़ैर, तुम जाओ। मैं खड़ा हो जाता हूँ तारा के साथ—तुम्हारी जगह। जाओ, रजनी, जल्दी हो आओ।" रजनी लपकता हुआ चला गया, सेट से बाहर, अपने मेकअपरूम की ओर। "रजनी के लौटने तक उसका पार्ट मैं करता हूँ। तुम सारे डायलॉग बोलना और उसके बाद नाच शुरू कर देना। समझीं, तारा? आओ, रेडी?"

"हाँ", तारा ने कहा और फिर नारियल के तने से टिककर बैठ गई। आध घंटे के रिहर्सल में अकड़ी हुई पीठ अब सुन्न हो चली।

"प्ले-बैक साउंड रेडी?" कैलाश ने चिल्लाकर पूछा।

उत्तर आया: "यस, रेडी।"

"ऐक्शन," कैलाश ने कहा।

और सहसा तारा उस वातावरण में खो गई और समुद्र के विस्तार को निहारने लगी। रजनीकान्त के बदले हीरो की भूमिका करता हुआ कैलाश पास आया। पिछले रिहर्सल की तरह ही सीन दुहराया जाने लगा। सेट पर सारे लोग अपने-अपने काम में व्यस्त हो गए। बैनर्जी और लाइटमैन लाइटों को इधर-उधर हटाने लगे। मास्टरजी इस फ़िक्र में थे कि डायलॉग कब समाप्त होते हैं और कब प्ले-बैक मशीन पर गाना बजने लगता है।

कैलाश कह रहा था: "तब किसे मालूम था कि महीने भर के अंदर-अंदर हम दोनों इस तरह घुल-मिल जाएँगे।" फिर वह आगे सरका, कुछ झुका और तारा को सहसा अपनी ओर खींचकर बोला: "ऐसा लगता है मानो हम दोनों एक दूसरे को बरसों से जानते हैं।"

कैलाश केवल रजनी की अनुपस्थिति को दूर करने के हेतु उसके बदले खड़ा हो गया था ताकि तारा अपना पार्ट बराबर कर सके। वह एक कुशल निर्देशक की आँख

से तारा को और उसके काम को ग़ौर से देख रहा था। तारा अच्छा अभिनय कर रही थी। उसने जब उसे अपनी ओर खींचा था तो तारा के मुख पर उसकी मनो-भावना का कितना सुंदर प्रदर्शन हुआ था !

"बरसों से नहीं, सदा से," तारा कह रही थी। कैलाश के हाथों में पड़े हुए तारा के हाथ कुछ काँपे और फिर स्थिर हो गए, और उसकी आँखें कैलाश को ताकती न रह सकीं जैसी कि वह रजनी को ताकने लगी थीं, लपलपीं उठीं और फिर नीचे को झुक गई, और उसके दिल की धड़कन उलटी-सीधी हो गई।

कैलाश ने मन में कहा: "सरला जब यह ऐक्टिंग देखेगी तो उसका हार्ट फ़ेल हुए बिना न रहेगा।"

और तारा सोचने लगी: 'कैलाश के साथ मैं सारी ऐक्टिंग क्यों भूल जाती हूँ ? क्या समझता होगा यह? ज़रूर समझेगा कि मैं निरी मूर्ख हूँ, इतना सिखाया पर कुछ न आया।'

"ऐसा क्यों लगता है?" कैलाश ने पूछा।

तारा ने नीची निगाह किए हुए कहा: "शायद हमें एक दूसरे से प्रेम हो गया है।"

"प्रेम ! वह क्या चीज़ होती है?" कैलाश ने शरारतन पूछा।

"मैं क्या जानूँ," तारा ने कहा और फिर उसे ताककर शरारतन बोली: "सुना है दो दिल मिलकर जब एक हो जाते हैं तो प्रेम हो जाता है....."

कैलाश उसे पकड़कर और भी पास खींचना चाहता है पर तारा छिटककर अलग हो जाती है, उठ जाती है, और इसी समय प्ले-बैक मशीन से लाउडस्पीकर द्वारा गाना आने लगता है। मास्टरजी ने एक, दो, तीन कहा और सम पर तारा ने गाना शुरू कर दिया.....

कैमरामैन बैनर्जी के लाइट तैयार हो चुके थे। सारे लोग सेट पर खड़े तारा का रिहर्सल देख रहे थे। ऊपर तरापे पर गनपत भी बैठा-बैठा देखने लगा। गाने के ताल के साथ तारा हावभाव दिखा रही थी, थिरक रही थी। पर गनपत को इस समय तारा के नाच से विशेष दिलचस्पी न थी। उसे तो प्यारी थी नींद। चार दिनों से उसकी नींद हराम हो रही थी। वह तरापे पर ही लेट गया और देखने लगा, नीचे। तारा नाच रही थी। उसकी आँखें झपकने लगीं।

नाच-गाने के अंतरगत तारा मनोभावनाओं का यथायोग्य प्रदर्शन करती। कैलाश, जो कुछ हीरो को करना था, करता जा रहा था और यथायोग्य प्रतिक्रिया दिखाए जा रहा था। परंतु तारा यह न जान पाई कि दोनों के बीच कहाँ पर अभिनय था और कहाँ पर वास्तविकता। नाचते-नाचते तारा ने अनुभव किया कि उसके सीने के बीच जो दिल जैसी कोई वस्तु है वह मोम की तरह पिघल रही है, क्यों पिघल रही है यह वह नहीं जानती, बराबर नहीं जानती, जानने का दुस्साहस वह नहीं करना चाहती। थिरकती हुई वह बढ़ी जा रही थी, कैलाश की ओर। और कैलाश

-भी उसके बोलों पर उपयुक्त भाव दर्शाता हुआ बढ़ रहा था, तारा की ओर। अंत में दोनों का एक दूसरे से लिपट जाना निश्चित था। सो, दोनों एक दूसरे की ओर बढ़ रहे थे, और ऊपर, बहुत ऊपर, तरापा था जिसपर गनपत पड़ा सो रहा था। तारा बढ़ रही थी। कैलाश बढ़ रहा था। कैमरा उन दोनों को बराबर लिए हुए था। बैनर्जी अपनी लाइटिंग से खुश था और फ़ासिस अपने सेटिंग से। ऐसा वास्तविक सेट बना था कि जुहू बीच का भ्रम हो रहा था। न जाने क्यों, कैलाश को लगा सामने से तारा नहीं मेनका आरही है और उस मेनका पर वह आसक्त हुआ जा रहा है। नहीं, यह मेनका नहीं, तारा है, उसकी नई खोज, उसकी बनाई हुई, बिलकुल उसीकी निर्मित कृति तारा, तारा चौधरी। 'मन और मस्तिष्क के बीच क्या सदा द्वंद्व चलता रहता है?' वह सोचने लगा। 'कितना छल और कपट भरा है मनुष्य के अंदर, उसके मन के अंदर, उसके मस्तिष्क के अंदर, कि क्या सच है, क्या झूठ है, क्या वास्तव है, और क्या भ्रम है, इसका ज्ञान किसी को भी नहीं हो पाता, न मनुष्य को, न उसके मन को और न उसके मस्तिष्क को..... और सामने से गाती, इठलाती मेनका, मेनका नहीं, तारा आ रही थी। कैलाश ने बाँहें फैला दीं और ऊपर गनपत ने नींद में करवट ली। इलेक्ट्रीशिअन ज़ोरों से चिल्लाया। और भी कुछ लोग चिल्ला पड़े। हवा में क़लाबाज़ियाँ खाता हुआ गनपत का शरीर वेगपूर्वक नीचे आ रहा था। तारा लपककर कैलाश से चिमट पड़ी। कैलाश ने तारा पर अपनी बाँहे कस लीं। और उनके पाँवों के पास ही धड़ाम-से गनपत का शरीर आ गिरा। गिरते ही 'फट' की आवाज़ हुई और उसके फटे हुए सर से ख़ून के छींटे जो उड़े तो रंग दिया उन्होंने तारा को। तारा ने अपने गाल को हाथ लगाया तो लाल-लाल खून। कपड़े पर भी छींटे थे खून के। मुड़कर देखा तो उसके पीछे ही गनपत का लहूलुहान शरीर फ़र्श पर पड़ा हुआ था और उसकी आँखें तन रही थीं। लोग उसकी ओर झपट रहे थे। और फिर उसे कुछ याद नहीं। शायद वह बहुत ज़ोरसे चीख पड़ी थी....

कैलाश ने चट-से सहारा देकर बाँहों में भारी होती हुई तारा को ताड़ के गिरे हुए तने पर बिठा दिया और दौड़ पड़ा। सारे लोग गनपत को घेरे खड़े थे।

कैलाश ने रहमान से कहा कि जल्दि से जाकर पड़ोस से किसी डॉक्टर को बुलाकर ले आए। रहमान भाग निकला और कैलाश ने गनपत की नब्ज़ देखी। नब्ज़ बंद थी। उसकी खुली तनी हुई आँखों को अपनी उँगलियों से मूँदकर वह लाश पर से उठ खड़ा हुआ। "बेचारा!" उसने कहा। उसकी आँखें भर आईं थीं।

सभी को बुरा लग रहा था। जहाँ अभी-अभी ताल और धुन की गति पर तारा थिरक रही थी, जहाँ अभी-अभी राग-रंग छिड़ा हुआ था, अब सोग छा गया। शादी के मंडप में मौत आ धमकी थी।

"बच्चे का मुँह भी नहीं देख पाया बेचारा!" फ़्रांसिस कह रहा था।

"मैं तैयार हूँ," कहता हुआ रजनीकान्त ज्योंही सेट पर आया तो भीड़ देखकर

चकित रह गया। भीड़ के पीछे, एक कोने में, नारियल के सहारे टिकी हुई तारा रो रही थी और अपने रूमाल से बार-बार अपनी लाल-लाल आँखें पोंछ रही थी। रजनीकान्त की दृष्टि भीड़ के बीच पड़े हुए गनपत के मृत शरीर पर पड़ी तो वह भौंचक्का-सा खड़ा का खड़ा ही रह गया।

कैलाश कह रहा था: "आज शूटिंग नहीं होगी। *पैक अप प्लीज़*।"

८

फ्रांसिस के साथ कैलाश *बॉम्बे स्टूडिओज़* के प्रॉपर्टी-रूम में घूम रहा था। अगले सेट के लिए विशेष प्रकार की सामग्री चाहियें थी। अगला सेट वकील साहब के घर का पूजाघर था। इसके लिए एक मूर्ति चाहियें थी, कृष्ण की मूर्ति, जो फ़िल्मी न हो। जगन्नाथपुरी में जैसी मूर्ति है, कुछ-कुछ उस प्रकार की चाहियें थी। लकड़ी के खम्भें और कमानें चाहियें थीं। शमई और घंटियाँ चाहियें थीं। स्टूडिओ का प्रॉपर्टीरूम एक विचित्र प्रकार का भानमती का पिटारा होता है जिसमें पचास बरस पुरानें फ़ोनोग्राफ़ से लेकर आधुनिक टेंलीफ़ोन तक संग्रहीत रहते हैं। फ्रांसिस वस्तुओं का निरीक्षण करनें लगा और कैलाश सिगरेट पीनें बाहर निकल आया।

बाहर, प्रॉपर्टी-रूम के पीछें, उखाड़ें हुए पुरानें सेट की सामग्रियों का ढ़ेर पड़ा हुआ था, जैसा कि हर स्टूडिओ के हाते में पीछें को पड़ा हुआ रहता है। कैलाश सोचनें लगा: 'कितनें ही चित्र बनें और बनकर निकल गए इस स्टूडिओ से। उन्हीं चित्रों की अस्थियाँ हैं — यह ढेंर। कई चित्र सफल हुए। कई असफल रहे। तीन प्रोडयूसरों का जनाज़ा निकल चुका है इस स्टूडिओ से। दो का दिवाला निकला और एक आफ़्रिक़ा भाग गया। मेहता चौथा प्रोडयूसर था। देखें इसका सितारा कब तक चमकता है। कैलाश धुएँ के छल्ले मुँह से छोड़ता हुआ घूर रहा था, उस ढेंर को, पुरानें चित्रों की उन अस्थियों को, लकड़ी, कपड़ा, कीले और रंग द्वारा बनाकर तोड़ी हुई उन इमारतों को, जो अब एक ढेंर मात्र रह गई हैं। पर काठ की यही कृतरिम और झूठी इमारतें कभी कितनें सजीव स्थल रह चुकी हैं, जिनमें विभिन्न कलाकारों नें विभिन्न पात्रों का अभिनय कर लोगों को हँसाया या रुलाया है, उनका मनोरंजन किया है। आज वह स्थल नष्ट हो चुके। उनमें से कई कलाकार भी न रहे; या तो वह मर गए या बूढ़ें हो गए, या उनकी लोकप्रियता जाती रही। कैसी दुखभरी, हृदयस्पर्शी गाथा है — यह ढेंर। कैसा विचित्र भ्रम है यह सब, सारा फ़िल्म व्यवसांय। सेटिंग ही झूठें नहीं वरन् पोशाक, फ़रनीचर, कलाकारों के सुंदर चेहरे, उनका अभिनय, उनके पात्र, पात्रों का संघर्ष — सारा भ्रम ही भ्रम है; और इसी भ्रम में दो घंटें के लिए खोकर अपनें दुख-दर्द भुलानें के लिए प्रेक्षक आकुल रहते हैं। परंतु अगर यह सब भ्रम है,

कला भ्रम है, चित्रकला भ्रम है, तो क्या जीवन स्वयं भी भ्रम नहीं? ज्ञानियों नें जीवन को माया तो कहा ही है। माया और भ्रम में क्या अंतर हुआ? कुछ नहीं।'

सामनें मेहतरानी झाड़ू दे रही थी और पीछे-पीछे उसका बच्चा गमन चॉकलेट खाता चला आ रहा था। कैलाश समझ गया उसे चॉकलेट सलमा नें दी है क्योंकि आज सलमा डिरेक्टर भंडारकर के सेट पर काम कर रही है। गमन को देख कैलाश मुस्कुरा दिया। गमन हँसनें लगा और उसके नन्हें-से सुंदर मुँह से लार बहनें लगी। आगें बढ़कर उसनें माँ की ओढ़नी से अपनी लार पोंछी और फिर चॉकलेट खानें लगा। मैना झाड़ू देनें में तल्लीन थी। उसके रूखें बालों पर कसी हुई चाँदी की छोटी-सी बिंदिया झाड़ू के हर झटके के साथ उसके माथें पर हिल उठती थी, और उसका सुंदर मुखड़ा एकदम शांत और भावरहित था। वह झाड़ू देनें में तल्लीन थी। कैलाश नें सहज ही सोचा: 'क्या सोच रही होगी इस समय यह, यह मैना? क्या इसके अतीत की स्मृतियाँ इसे कभी सताती होंगीं? आज यही स्त्री गमन की माँ भी है और बाप भी। गमन—उसके यौवन के ज्वार की उपज। क्या उसका यौवन भी भ्रम था और क्या यह गमन भी भ्रम है?' गमन ने चॉकलेट का एक टुकड़ा अपनी माँ के मुँह में ठूँस दिया। उसनें लाड़ से बच्चे को अपनी छाती से चिमटा लिया और उसके गालों को अपनें गंदे हाथों से साफ़ करके फिर कूड़ा बुहारनें लगी, और सारा कूड़ा उस बड़ें ढेर में मिलानें लगी। कैलाश के लिए वह बड़ा ढेर पुरानें कला-चित्रों की अस्थियाँ था; पर मैना की दृष्टि में वह कूड़ें का एक ढेर मात्र था। कूड़ें से कूड़ा जा मिला।

रहमान की आवाज़ सुनाई दी तो कैलाश नें सिगरेट फेंकी और प्रॉपर्टी-रूम के अंदर चला गया। अंदर रहमान और फ्रांसिस बातें कर रहे थें।

"तुम्हें मेहता साहब जल्दी बुला रहे हैं," रहमान नें कैलाश को देखते ही कहा। कैलाश नें कारण पूछा तो वह न बता सका पर कहा कि जल्दी बुलाया है, चपरासी नें उससे यही कहा था।

कैलाश और रहमान को अंदर आते देख मेहता नें उन्हें बैठनें का इशारा किय और सामनें रखी हुई चेंकबुक में हस्ताक्षर करनें लगा। पाँच-छै चेक पर उसनें हस्ताक्षर किए और चेकबुक दीक्षित को पकड़ाकर उसनें अपनी रिवॉल्विंग चेअर कैलाश की ओर घुमाई। दीक्षित चला गया।

"आज कौन तारीख़ है मि. सिन्हा?" मेहता नें सहसा पूछा, मानो तारीख़ पूछनें लिए ही उसे बुला भेजा था उसनें।

"आज २७ अगस्त, १९५८ है," कैलाश नें उत्तर दिया।

मेहता नें कहा: "अगले महीनें की १२ तारीख़ को *इम्पीरिअल* थिएटर मिल सकता है। *इम्पीरिअल* थिएटर से मैनेंजर का अभी फ़ोन आया था। अगर अपना

पिक्चर *मिट्टी* तब तक तैयार हो जाय तो इम्पीरिअल थिएटर में लग सकता है।"

कैलाश सोच में पड़ गया, फिर बोला :" "१२ सितम्बर को तो कुल पंद्रह दिन ही बाक़ी हैं। पिक्चर ख़त्म होनें के लिए कम अज़ कम एक महीना तो और लगेगा ही।"

"अभी तो क्लाइमेक्स का सीन और दो गानें भी बाक़ी हैं, मेहता साहब," रहमान नें कहा। "१२ तारीख़ के बाद की कोई तारीख लीजिए। फिर १२ तारीख़ को *ग्रेट इंडिआ पिक्चर्स* का *रेशमी रूमाल* भी तो आ रहा है *लिबर्टी* में।"

"देखिए, सोच लीजिए आप लोग। *इम्पीरिअल* सिर्फ़ १२ तारीख को मिल सकता है। फिर छै महीनें तक कोइ थिएटर ख़ाली नहीं है।"

"छै महीनें तक कोई थिएटर नहीं मिलेगा?" रहमान नें साश्चर्य पूछा।

"सब बुक्ड हैं।"

"अच्छी बात है, मेहता साहब," कैलाश बोला, "आप १२ सितम्बर को *इम्पीरिअल* बुक कर डालिए। मैं पिक्चर तैयार दूँगा।"

रहमान नें कहा : "मगर दो हफ़्ते में कैसे तैयार होगा? शूटिंग बाक़ी है, एडिटिंग बाक़ी है।"

"हम दिन-रात एक कर देंगें; मगर १२ तारीख़ हाथ से न जानें देंगें।"

"पागल हुए हो। शांति भाई देसाई का *रेशमी रूमाल* लग रहा है १२ तारीख़ को *लिबर्टी* में। *रेशमी रूमाल* से मुक़ाबला होगा। ख़तरा है। कहाँ वह बड़ी कम्पनी का बड़ा पिक्चर और कहाँ —"

कैलाश नें तय कर लिया था। अवसर को हाथ से जानें देना केवल मूर्खता होगी। "हो जाए मुक़ाबला *रेशमी रूमाल* के साथ," वह बोला। "मेहता साहब, मुझे मंजूर है १२ सितम्बर। आपको पिक्चर तैयार मिलेगा। आप इम्पीरिअल थिएटर बुक कर लें।"

मेहता ख़ुश हो गया। टेलीफ़ोन उठाकर उसनें उसमें कहा: "*ऑपरेटर, गिव मी मैनेजर इम्पीरिअल थिएटर।*"

उस दिन के बाद *जनता चित्र* से संबंध रखनेंवाले किसी व्यक्ति को दम लेनें की फ़ुरसत न मिली। रात-रात भर शूटिंग होती और सुबह आठ-नौ बजें तक होती। कुछ आउट डोर शूटिंग भी थी। रात को स्टूडिओ में काम होता और दिन को बाहर आउट डोर शूटिंग की जाती। किसी नें शिकायत न की। सब को काम की लगन थी। तीन-तीन दिनों तक कैलाश दाढ़ी भी न बना पाता। दाढ़ी बनाना आवश्यक भी न था। आवश्यक था *मिट्टी* ख़त्म करना, १२ सितम्बर से पहले। जब सबका काम ख़त्म हो जाता और वह दम भर को साँस लेते तो कैलाश एडिटिंग-रूम में बैठा पिक्चर एडिट करता। सेल्युलॉएड के इन फ़ीतों पर उसका भविष्य निर्भर था।

स्टूडिओ, लेबॉरेटरी और एडिटिंग -रूम के बीच उसनें अपना समस्त अस्तित्व लगा दिया। आँखों से नींद उड़ गई और खाना हराम हो गया। लगन, चाहे किसी बात की हो, बड़ी चीज़ है; और लगन में बड़ी ताक़त होती है। लगन का ही दूसरा नाम साधना है। और साधना स्वयं स्फूर्ति है, बलवर्धक व प्राणमयी है — इसका ज्ञान कैलाश को उन्हीं दिनों अनायास हुआ।

उन्हीं दिनों रति पारिख एक दिन के लिए पूना से बम्बई आई। कैलाश को बुला भेजा उसनें, पर वह न मिल सका। वह बम्बई पूरे तीन दिन ठहरे रही और उसनें रोज़ ही कैलाश से मिलना चाहा पर कैलाश को तो मरनें की फ़ुरसत न थी, नहीं मिल सका। तब वह एक रोज़ शाम को ख़ुद स्टूडिओ आई। कैलाश एडिटिंग में व्यस्त था। रहमान के हाथ से उसनें रति को कहला दिया कि वह वहाँ नहीं है। रति चली गई, रहमान की बात को सच मानकर चली गई। परंतु बाद में कैलाश नें सोचा कि कितनें सहज ही में उसनें झूठ बोलकर उसे टरखा दिया। इतनी आसानी से झूठ बोली जा सकती है यह भी कैलाश को उन्हीं दिनों ज्ञात हुआ और साथ ही साथ यह भी कि अपनी साधना और महत्त्वाकांक्षा को सिद्ध करनें के लिए वह झूठ तो क्या बहुतकुछ और भी कर सकता था, अपनों को और अपनें आपको बलि चढ़ा सकता था। उसे अपना जीवन सफल बनाना था। फ़िल्म-जगत में सफलता और कीर्ति के मूल में सदा घोर संघर्ष रहा है, रहता है, रहता आएगा। परंतु फ़िल्म-जगत में ही क्यों? संसार मे हर जगह हर एक व्यक्ति की सफलता और कीर्ति के मूल में भी तो संघर्ष ही है। उत्पादन संघर्ष है, जीवन संघर्ष है। बिना दाएँ-बाएँ झाँके, अविचलित भाव और एकाग्र चित्त से उसे अविराम परिश्रम करना होगा; तभी इस संघर्ष में उसे सफलता प्राप्त हो सकेगी, तभी वह सफल और प्रतिभाशाली निर्देशक कहला सकेगा। जिसे प्रतिभा कहते हैं वह अखंड और अपार श्रम कर सकनें की क्षमता ही तो है।

६

सितम्बर की आज ६ तारीख़ थी और ज़ोरों की वर्षा हो रही थी। बादलों से आकाश काला हो रहा था और *जनता चित्र* की खटारा एक्सप्रेस *बॉम्बे स्टूडिओज़* के फाटक में प्रवेश कर रही थी।

चार बजे की चाय पीकर मेहता अपनें दफ़्तर में खिड़की के पास खड़ा अँगड़ाई ले रहा था जब उसकी निगाह अंदर आती हुई स्टेशन वैगन पर पड़ी। कैलाश गाड़ी से नीचे उतरा। वह प्रसन्न दीख रहा था। उसके साथ उसके सहकारी और मित्र अब्दुल रहमान तथा फ्रांसिस डिसूज़ा भी थें। वह भी प्रसन्न चित्त थें।

"क्या ख़बर है, सिन्हा?" मेहता नें उत्सुकतापूर्वक पूछा जब वह तीनों उसके दफ़्तर में प्रविष्ट हुए।

"हमारा पिक्चर पास हो गया, मेहता साहब," कैलाश नें उत्तेजित स्वर में कहा। "सेंसर से काफ़ी झगड़ना पड़ा। सिर्फ़ दो, तीन कट्स हैं, बाक़ी सब पास हो गया। कल मिल जाएगा सेंसर सर्टिफ़िकेट।"

मेहता ख़ुश हो गया। "*गुड*।" उसनें कहा। "*कॉनग्रॅच्युलेशन्स*।"

कैलाश बैठ गया। "पिक्चर तैयार है।" वह बोला। "*प्रॉडक्शन* का काम मेरा था सो मैं कर चुका। अब *एक्स्प्लाएटेशन* का काम आपकी ज़िम्मेदारी है।"

"हाँ, मेहता साहब," रहमान नें समर्थन किया। "*प्रॉडक्शन* में तो मि. सिन्हा नें कमाल कर दिया। साढ़े-तीन महीनें के अंदर-अंदर पिक्चर तैयार करके दिखा दिया, पर आपका एक्स्प्लाएटेशन बड़ा लंगड़ा है।"

"सड़कों पर तो बिलकुल पब्लिसिटी नहीं है। न अख़बारों में इश्तहार हैं और न सड़कों पर कहीं बैनर्स या पोस्टर्स ही लगवाए हैं आपनें!" फ्रांसिस नें भी शिकायत की।

रहमान फिर बोला: "आज ६ तारीख़ है। रिलीज़ को सिर्फ़ छै रोज़ बाक़ी हैं और पब्लिसिटी का नाम तक नहीं।"

"मैं भी यही कहना चाहता था, मेहता साहब," कैलाश नें गम्भीर होकर कहा, "आपने पब्लिसिटी तो बिलकुल नहीं की है। ऐसे से तो हमारा पिक्चर बुरी तरह पिट जाएगा। उधर शांति भाई की पब्लिसिटी देखिए — शहर में हर तरफ़ उनके *रेशमी रूमाल* की धूम मची हुई है।"

मेहता ने कागज़ काटनें की छुरी उठाई और सामनें रखें हुए ब्लॉटिंग पेपर पर उससे कुरेदनें लगा। "ठीक कहते हैं आप लोग। मगर, सिन्हा, तुम तो जानते हो पब्लिसिटी के लिए पैसे की ज़रूरत होती है।"

"उसका ज़िम्मा आपनें लिया था।"

"और कितना पैसा लगाऊँ? अब तक पचास हज़ार तो दे चुका हूँ।"

रहमान नें कहा: "छत्तीस हज़ार, मेहता साहब। पचास हज़ार नहीं, छत्तीस हज़ार।"

"ब्याज पकड़कर पचास ही हुए।"

"मगर आपनें कहा था ब्याज नहीं लूँगा," कैलाश नें तुरन्त ही कहा।

"मैंनें ऐसा नहीं कहा था।"

"यानी आप आधा हिस्सा भी लेंगें और ब्याज भी?"

रहमान नें हिसाब करते हुए कहा: "वल्लाह! तीन महीनें में छतीस हज़ार पर चौदह हज़ार व्याज़!"

"यह तो सेंट परसेंट इन्टरेस्ट हो गया!" फ्रांसिस बोला।

रहमान नें फ्रांसिस की भूल सुधारते हुए कहा: "अरे, एक सो पचास परसेंट से भी ज़्यादा हो गया!"

तब मेहता नें ज़रा कड़ी आवाज़ में कहा: "पैसा भी दिया है। फ़िल्म दी है। स्टूडिओ दिया है। हर तरह की मदद की है। बदले में मुझे मिलता ही क्या है?"

कैलाश की भृकुटी तन गई। "*फ़िफ्टी परसेंट प्रॉफ़िट* मिलेगा, मेहता साहब। नुक़सान हुआ तो मेरा। आप अपनी दी हुई पाई-पाई मुझसे रखा लेंगें। मगर फ़ायदा हुआ तो आप चट-से आधें हिस्से के हक़दार बन बैठेंगें। आपनें जो कुछ दिया है—स्टूडिओ, फ़िल्म, लेबॉरेटरी वग़ैरह—मुफ्त में नहीं दिया है, पूरी-पूरी क़ीमत लगाई है, हमसे पिक्चर गिरवी रखाया है आपनें अपनें पास। बैठें-बैठें आधें के हिस्सेदार बन बैठें हैं आप। सिर्फ़ इसीलिए न कि हमें रुपयों की ज़रूरत थी और आपकी तिजोरी में रुपया था?"

"जो कुछ समझिए। मैं बिज़नेंस करनें बैठा हूँ, चैरिटी करनें नहीं।"

"बिज़नेंस नहीं, आप लोगों का गला काटनें बैठें हैं।"

मेहता को बात लग गई। सच बात सहज ही में लग जाया करती है। बिगड़कर उसनें ऊँचे स्वर में कहा: "सिन्हा! इस तरह तैश मत खाओ!"

मगर कैलाश तिलमिला उठा था। उसका स्वर भी ऊँचा उठा: "कैसे न खाओ! मर-मर के हमनें पिक्चर तैयार किया और अब आप बिना पब्लिसिटी के उसे मार देने पर तुले हुए हैं!"

"मैंनें पब्लिसिटी के लिए रुपया देनें से इन्कार तो नहीं किया।"

"तो दीजिए न। कब देंगें? पाँच रोज़ बाक़ी रह गए रिलीज़ में।"

"कितना रुपया लगेगा?"

कैलाश नें फ़ासिस की ओर देखा।

"पंद्रह हज़ार," फ़ांसिस बोला।

"हाँ, पंद्रह हज़ार में हम लोग सारी पब्लिसिटी कर लेंगे," कैलाश ने कहा।

"ख़ैर, मुझे मंजूर है। इस रुपये पर मुझे व्याज नहीं चाहिए। मेरा जो आठ आने का हिस्सा है उसे बारह आने कर दो।"

"जी?" कैलाश नें साश्चर्य पूछा।

"क्या कहा आपनें?" रहमान बोला।

"*यू वॉन्ट सेवन्टी-फ़ाइव पर सेंट!*" फ़ांसिस नें कहा।

"*फ़्रॉम द प्रॉफ़िट्स,*" मेहता नें सर हिलाकर स्वीकार किया। "बारह आनें मेरे और चार आनें तुम्हारे," मेहता नें बड़े ठंढे दिल से कहा।

कैलाश को ग़ुस्सा आ गया। जब से निर्माता की ज़िम्मेदारियाँ उस पर आई तब से उसनें अपनें स्वभाव में काफ़ी संयम बरता था। पर मेहता के इस क़साइयाना बरतावे को देख उससे न रहा गया। उसकी आत्मा बिद्रोह कर उठी और इतनें दिनों से बंद मटकी में जो ईंधन उबल-उबलकर घुट रहा था वह यकायक ढकना तोड़कर फूट निकला। कैलाश का मुँह लाल हो उठा और उसकी आँखों में ख़ून उतर आया। वह उचका और मेहता का कॉलर पकड़कर उसे झकझोरता हुआ चीख़ पड़ा: "बारह आनें तेरे और चार आनें मेरे! बेईमान! धोखेबाज़! हमारी मजबूरी का फ़ायदा उठाना चाहता है! रुपया खनखनाकर मुझसे आधा हिस्सा ले लिया और अब पौना माँगता है! मुझे उल्लू समझ रखा है?"

रहमान और फ़ांसिस छुड़ानें और बीच-बचाव करनें का प्रयत्न कर रहे थे पर कैलाश की पकड़ मज़बूत थी।

"सिन्हा!" मेहता चिल्ला रहा था। "छोड़ो — छोड़ो — मेरा गला — छोड़ो — वरना मैं पुलिस में दे दूँगा तुम्हें।"

"जानें भी दो, कैलाश," रहमान बोला! "मक्खी को मारकर हाथ गंदे न करो। क्या करोगे, मेहता साहब, इतना रुपया जमा करके?"

कैलाश को फ़ांसिस नें खींचकर अलग कर दिया। "ऊपर साथ ले जाएँगे गठरी बाँधकर," फ़ांसिस नें कहा।

कैलाश अलग तो हो गया पर ग़ुस्से से लाल था, बोला: "यह सारा ब्लैक का पैसा—तुम्हारी यह सारी पाप की कमाई — यहीं धरी रह जाएगी जब बुलावा आनें पहुँचेगा। मगर अब उतनी भी देर नहीं है, सि. मेहता; अब वह दिन दूर नहीं है जब तुम जैसों को चौरास्ते पर खड़ा करके जनता कोड़े लगाएगी। बहुत जल्दी तुम लोग पेड़ों पर उलटे लटकते दिखाई दोगे। लाओ, निकालो पंद्रह हज़ार। मुझे मंजूर है तुम्हारे बारह आने। लाओ, निकालो।"

मेहता अपने कपड़े झटक रहा था। "हाँ, हाँ, अभी देता हूँ," उसने कहा। उसकी इज़्ज़त गई थी पर बात रह गई थी। वह ख़ुश था।

फ़्रांसिस ने साश्चर्य कैलाश को घूरकर कहा: "क्या कह रहे हो, कैलाश! *डोन्ट बी रेश*।"

"ठीक है," कैलाश बोला।

"पंद्रह हज़ार लेकर चार आने का हिस्सा और दे रहे हो?" रहमान ने चकित हो पूछा।

"पब्लिसिटी तो करनी ही होगी," कैलाश ने हताश होकर कहा। "हम पिक्चर को मार नहीं सकते। समझ लेंगे हमारी क़िस्मत में बस चार ही आने लिखे थे।"

"नहीं, कैलाश," फ़्रांसिस ने विरोध किया। "तुम्हें मैं इनकी शर्त पर पैसे नहीं लेने दूँगा। मैं तुम्हें जान बूझकर कुएँ में नहीं कूदने दूँगा। हमें नहीं चाहिए रुपया। समझे, मेहता साहब, हमें रुपया नहीं चाहिए।"

"फिर रुपये के बिना पब्लिसिटी कैसे होगी?" कैलाश ने पूछा।

"बराबर होगी," फ़्रांसिस बोला। "मैं करूँगा पब्लिसिटी। बग़ैर रुपये के पब्लिसिटी करूँगा। कैलाश, अगर तुम बिना पैसों के पिक्चर बना सकते हो तो यह फ़्रांसिस डिसूज़ा भी बिना पैसों के पब्लिसिटी कर सकता है। *मिट्टी* की पब्लिसिटी में करना ही क्या है?....बालटी भर पानी में *मिट्टी* घोलकर *मिट्टी* का रंग बनाऊँगा। ब्रश न सही, बोरे के फटे चीथड़ों से शहर के गली-कूचे और चप्पे-चप्पे पर *मिट्टी* लिखूँगा मिट्टी से *मिट्टी* लिखूँगा मैं। होने दो मुक़ाबाला आज—ग़रीबों की *मिट्टी* का मुक़ाबला आज अमीरों के *रेशमी रूमाल* के साथ हो जाने दो।"

"शाबाश पठ्ठे, जीते रहो," रहमान ने दाद दी।

"ठीक है, फ़्रांसिस," कैलाश बोला। "मेहता साहब, नहीं चाहिए आपका रुपया। रखे रहिए अपने पास—कफ़न के काम आएगा। आओ, फ़्रांसिस। चलो, रहमान।"

जब वह लोग चले गए तो मेहता कुरसी पर निराश होकर बैठ गया। जेब से कंघा निकालकर बाल सँवारने लगा। सोचने लगा कि अपमान भी हुआ और बात भी न बनी। अच्छा हुआ उस समय कमरे में कोई न था जब कैलाश ने उसका गला पकड़ा था। बहुत अच्छा हुआ जो सलमा ख़ासकर न थी। अगर वह देख लेती तो क्या सोचती? रात का खाना सलमा के घर था, मरीन ड्राइव पर उसके फ़्लैट में। *मिट्टी* पिक्चर बन अच्छा रहा है। स्टूडिओ के अंदर इसकी काफ़ी शुहरत है। अगर यह चल पड़ा तो तारा चौधरी भी चल पड़ेगी, बड़ी स्टार बन जाएगी। तारा चौधरी इस सिन्हा के कहने में है। अगर तारा चौधरी को अगले पिक्चरों में लेना पड़ा तो सिन्हा को ख़ुश रखना पड़ेगा। वह ख़ुद बड़ा डिरेक्टर बन चुका होगा। और सिन्हा को ख़ुश रखने के लिए सलमा को पटाए रखना ज़रूरी है, क्योंकि सलमा का सिन्हा दोस्त है। शायद उन दोनों के आपस में ताल्लुक़ात भी हों। सलमा ने ही तो सिफ़ारिश करके

पहलेपहल सिन्हा को यहाँ लाया था — स्टोरी सुनाने ... सलमा और सिन्हा के बीच ज़रूर कोई बात है, ज़रूर ही सिन्हा के साथ सलमा सोया करती है, उसे चाहती है। तभी तो सदा उसकी तारीफ़ों के पुल बाँधे रहा करती है। सलमा चाहती है सिन्हा को और मेहता के साथ चाहत का सिर्फ़ नाटक खेलती है। पर सलमा की चाहत का भी क्या? वह किसी को नहीं चाहती-वाहती। आख़िर रंडी की बेटी ठहरी। वह सिर्फ़ अपने आपको चाहती है। वह तो सिन्हा से मीठी-मीठी बातें करके उसे सधाए रखना चाहती है ताकि वह उसे अगले पिक्चर में हीरोइन बना दे। अपना उल्लू सीधा कर रही है। यह सलमा बड़ी चालाक है। मगर है पटाख़ा। बिस्तर में जो कमाल दिखाती है अगर उसका आधा भी पिक्चर में दिखाती तो शर्तिया भारत की आज वह सबसे बड़ी सिनेमा स्टार होती। पर नहीं, आर्ट नहीं है उसके पास। उसके पास सिर्फ़ जिस्म है, जवान जिस्म है। और दिल? शायद वह भी उसके पास नहीं। न हुआ करे। दिल से उसे मतलब? आख़िर दिल जैसी कोई चीज़ भी हुआ करती है? दिल! उसे क्या पड़ी है जो दिल ढूँढता फिरे। उसे नहीं चाहिए दिल-विल। उसे तो चाहिए रुपया, शान-शौकत और सलमा का ख़ूबसूरत जिस्म, जवान-जवान फड़कता हुआ गोरा जिस्म।

वरली के चौरास्ते पर, पेट्रोल पम्प के बाज़ू *रेशमी रूमाल* का १०'×२०' का भव्य रंगीन बैनर लग रहा था और लोगों की एक भीड़ लग गई थी। ठीक उसी के सामने मंदिर के बराबरवाली दीवार पर बालटी में बनाए हुए मिट्टी के रंग से फ्रांसिस लिख रहा था: '*जनता चित्र* की अनोखी कला-कृति *मिट्टी*; भूमिका — रजनीकान्त, तारा चौधरी, सलमा, राम अरोरा आदि; निर्माता-निर्देशक — कैलाश सिन्हा।' फ्रांसिस के साथ कैलाश, रहमान और एक छोकरा भी थे जो उसकी सहायता किए जा रहे थे। किसी ने बालटी पकड़ी थी, किसी ने सीढ़ी थामी थी और कोई लाल, पीली व सफ़ेद मिट्टी के थैले उठाए हुए था।

दो रोज़ के अंदर, सतत परिश्रम के बाद फ्रांसिस ने जो कहा था कर दिखाया। शहर में *रेशमी रूमाल* के ४० बैनर और १६० पोस्टर लगे हुए थे तो मिट्टी की यही सरल व सस्ती लिखाई कोई २०० स्थलों पर विज्ञापित थी। इतना अवश्य था कि *रेशमी रूमाल* के रंगीन विज्ञापनों की प्रभावपूर्ण भव्यता के सामने *मिट्टी* के विज्ञापन ऐसे लगने लगे मानो किसी दाद या खुजली के मलहम के विज्ञापन हों। परंतु फ्रांसिस का जो अभिप्राय था वह पूरा हो गया। शहरवालों को भलीभाँति विदित हो गया कि *मिट्टी* नाम का एक नया चित्र, जिसमें उनका प्रिय कलाकार रजनीकान्त काम कर रहा है, १२ सितम्बर १९५८ को *इम्पीरिअल थिएटर* में आ रहा है। इतना ही काफ़ी था। और इस तरह वह आखिरी रात भी आ पहुँची जिसके दूसरे दिन

मिट्टी और *रेशमी रूमाल* पिक्चर रिलीज़ हो रहे थे — वह ११ तारीख़ की रात, जिस रात थिएटर को सजाया जाता है।

लिबर्टी थिएटर को ज़ोरों से सजाया जा रहा था। खिड़कियों में भाँति-भाँति के शो-कार्ड, स्टिल्स और कटआउट शोभायमान थे; और ऊपर, ठीक प्रवेशद्वार के ऊपर, रंगीन, विस्तृत बैनर पर चित्रित सरला देवी मुस्कुरा रही थी। सरला के ब्लाउज़ का गला बहुत नीचे तक खुला था और उसके वक्ष का वह स्थान जहाँ से उभार शुरू होता है झलक पड़ रहा था; उसकी मुस्कुराहट में एक प्रकार की घातकता थी, एक प्रकार का निमंत्रण था; और उसके गालों पर तिल था, उस प्रकार का तिल जैसा किसी स्त्री के गाल पर नहीं होता।

"यार, पिक्चर आलीसान मालूम पड़ता है," नीचे खड़ी हुई भीड़ में से एक ने उत्तेजित हो कहा। रात के सवा बारह बज रहे थे। होटल बंद हो चुके थे। पर होटलों के छोकरे, टैक्सी ड्राइवर, बोझा ढोनेवाले, और शहर के मवालियों तथा आवारा-गर्दों को इस आधी रात के समय बड़ी फ़ुरसत थी।

दूसरा व्यक्ति अपने हाफ़पैंट की जेब में हाथ डाले अंदर-अंदर जाँघ की मोड़ में ज़ोरों से खुजाता हुआ बोला: "भई, अपुन तो आसिक है सरला देवी का। अपुन तो सुबे से टिकिट के लिए क्यू में खड़ा होनेवाला है।"

"अरे, तू सुबे की कह रहा है," तीसरा व्यक्ति बोला, "बन्दा तो ले, अभी से जगे अड़ाता है।"

और उसने दस आने वाले बुकिंग ऑफ़िस की खिड़की के सामने अपना गंदा रूमाल बिछा दिया और फिर उस पर बैठ गया, लेट गया। कुछ लोग और दौड़ पड़े, और वह भी बैठ गए या लेट गए। और इस प्रकार क्यू की रचना शुरू हो गई।

उधर *इम्पीरिअल थिएटर* के सामने भी भीड़ थी, उसी तरह के आवारागर्दों की भीड़। लोग खड़े देख रहे थे उस सजावट को, उस विचित्र सजावट को जो थिएटर पर की जा रही थी। थिएटर के ऊपर फ़ांसिस चढ़ा हुआ अपने हाथों से काम कर रहा था। एक बढ़ई और दो छोकरे उसकी मदद किए जा रहे थे। पास में ही कैलाश और रहमान बैठे फ़ांसिस के काम पर उसे दाद दे रहे थे, उसका हौसला बढ़ा रहे थे और बीच-बीच में उसकी सहायता करते जाते थे।

बिना पैसों के फ़ांसिस ने शहर के गली-कूचे में मिट्टी से लिखाई करके *मिट्टी* का विज्ञापन तो कर दिया था परंतु थिएटर के ऊपर, जहाँ सदा तीन-चार हज़ार रुपये की लागत से सजावट की जाती है, वहाँ बिना पैसों के फ़ांसिस क्या कर सकेगा, इसका अनुमान न तो कैलाश लगा सका था और न रहमान। फ़ांसिस ने, लगभग बिना पैसों के ही, याने तीस-चालीस रुपयों की सामग्री से, थिएटर की सजावट का काम शुरू कर दिया था, और अब, कोइ २ बजे रात को, उसकी सजावट का काम लगभग आधा हो चुका था। सुबह होने तक सजावट पूरी की जाएगी। परंतु देखने से अब भी पता

चलता था कि सजावट कितनी अद्भुत है। कपड़े के टुकड़े, टाट के टुकड़े, चटाइयाँ, बाँस की कमचियाँ, झाड़ू और पुराने समाचार पत्रों के पन्ने एकत्र करके फ़ांसिस ने उनके द्वारा एक बहुत ही सुंदर और प्रभावपूर्ण दृश्य तैयार किया हुआ था, जिसमें रंगीन पृष्ठभूमि के सामने इन्हीं कागज़, चटाई, झाड़ू और बाँस द्वारा बनाए हुए पुतले जमाए गए थे। यह पुतले वास्तव में रजनीकान्त और तारा चौधरी की प्रतिमाएँ थे। अभी उनपर रंग होना बाक़ी था। फ़ांसिस रंग बना रहा था और कैलाश सोच रहा था कि कितना बड़ा जीनिअस है यह — यह फ़ांसिस।

फ़ांसिस ने कैलाश से सिगरेट माँगी। कैलाश के पास केवल वही सिगरेट थी जो वह पी रहा था। रहमान के पास भी न थी। कैलाश ने आख़िरी कश लेकर सिगरेट फ़ांसिस को थमा दी। फ़ांसिस वह आधी सिगरेट घुनकता हुआ फिर काम में जुट गया। भूत बना हुआ था वह। एक तो सूरत-शकल कुछ पहले से ही भूत की तरह थी, उस पर रंग और धूल जम जाने से तो वह भूतों का भी भूत प्रतीत होने लगा। कपड़ों का हाल शकल से भी गया बीता था। इतने बेडौल और कुरूप व्यक्ति के अंदर इतनी सुंदर कला संचारित रह सकती है, और इतनी सुंदरता का रचयिता इतना भद्दा और कुरूप हो सकता है, इसका अनुमान लगाना किसी के लिए भी असंभव है। यह केवल देखने की ही बात थी। पर देखने पर — सुंदर कला-कृति की रचना में व्यस्त उस कुरूप कलाकार को लीन देखने पर — उसकी कुरूपता दिखाई नहीं देती। कैलाश को भी फ़ांसिस शायद कभी कुरूप नहीं दिखाई दिया। उसकी आँखों में वह सदा एक सुंदर कलाकार ही प्रतीत हुआ। रहमान की नज़र भी उसकी बदसूरती पर न पड़ी, क्योंकि शायद मित्रता जब बढ़ जाती है तो मित्र का शरीर अदृश्य हो जाता है, जैसा बहुधा पति-पत्नी का सुखी जोड़ा एक दूसरे की सूरत नहीं देख पाता, केवल एक दुसरे का प्रणययुक्त व्यक्तित्व ही देख और ग्रहण कर पाता है। शारीरिक रचना और व्यक्तित्व में बड़ा अंतर है, और यह अंतर जन-साधारण को सदा चकित करता रहता है।

सहसा नीचे शोर हुआ और सड़क पर खड़े लोग "रजनीकान्त — रजनीकान्त —" चिल्लाने लगे। दूसरे ही क्षण सफ़ेद *क्राइसलर* थिएटर के सामने आ खड़ी हुई और उसमें से बेंत की एक पिटारी लिए रजनीकान्त बाहर निकला। तड़-तड़ सीढ़ी चढ़ता हुआ वह ऊपर जा पहुँचा। भीड़ लपकी तो रहमान ने वह बाँस की सीढ़ी ऊपर खींच ली।

"हलो, कैलाश।"

"हलो, रजनी। यह क्या?"

"तुम लोगों के लिए खाने का कुछ सामान है — सैंडविचेज़ और ऑमलेट बनवाकर लाया हूँ। मुझे मालूम था भूत की तरह काम पर भिड़े होगे तुम लोग। खाने-वाने की फ़िक्र थोड़े ही होगी तुम्हें। खाना खाया?"

१०

१२ सितम्बर, १९५८ की रात भी आ पहुंची। *लिबर्टी* सिनेमा के सामने भीड़ डटी हुई थी। पहले दो शो छूट चुके थे और तीसरा यानी ९ बजे का शो शुरू होने जा रहा था। गेट के सामने आर्क लैम्प लगे हुए थे और ग्रेट इंडिआ *पिक्चर्स* के कैमरे बड़ी-बड़ी गाड़ियों से उतरकर अंदर जाते हुए बड़े-बड़े कलाकारों तथा अन्य विभूतियों की तसवीरें ले रहे थे। समाचार पत्रों के प्रतिनिधि फ्लैश कैमरे से अलग फ़ोटो खींच रहे थे। एक-एक करके फ़िल्म जगत की सभी महान हस्तियाँ आईं और अंदर चली गई। सरला देवी भी आई और उसकी गुलाबी दमकती साड़ी ने सबको चकाचौंध कर दिया। शांतिभाई देसाई और पुरी ने उसका स्वागत किया और उसे अंदर ले गए। भीड़ में हंगामा था।

थिएटर के लाउंज में और भी मेहमान थे। सरला सबसे मिली, मुस्कुरा-मुस्कुराकर, इतरा-इतराकर मिली। बहुत-से फ़्लैश फ़ोटो लिए गए। और फिर थिएटर में अँधेरा हो गया। न्यूज़ रील चलने लगी। सब व्यक्ति अपनी-अपनी सीट पर जा बैठे। शांतिभाई देसाई और पुरी के बीच सरला देवी बैठ गई। और फिर पिक्चर शुरू हो गया।

सरला ने हंसनी की तरह गर्दन उठाकर चारों ओर घुमाई। थिएटर खचाखच भरा पड़ा था।

उधर *इम्पीरअल* थिएटर में परिस्थिति विचित्र थी। थिएटर के बाहर खड़े हुए लोग थिएटर की वह अद्भुत सजावट घूर-घूरकर देखे जा रहे थे। टिकट इक्के-दुक्के ही खरीद रहे थे। पहला शो यूँही गया था। थिएटर बस आधा भरकर रह गया। दूसरा शो अभी चल ही रहा था। यह भी आधा ही भरा था। ९-३० का तीसरा शो शुरू होने वाला था। पाँच मिनट में दूसरा खेल समाप्त हो जाएगा। अंतिम दृश्य चल रहा था.... थिएटर की छत पर एक ओर खड़ा हुआ कैलाश चिंतित और निराश हो उठा। उसके हाथ ठंढे हो रहे थे और माथे पर पसीना चमकने लगा था।

"तारा चौधरी आ गई," बाजू में गुमसुम खड़े हुए रहमान ने सहसा कहा।

कैलाश ने देखा नीचे सड़क पर सलमा की *जैगुअर* से तारा उतर रही है। इसी

समय एक और गाड़ी आई। यह रजनीकान्त की थी। रजनी उतरा और तारा और सलमा के साथ चलने लगा। बाहर खड़ी भीड़ चिल्ला उठी : "रजनीकान्त —रजनीकान्त —" सलमा का नाम भी पुकारा गया।

रहमान ने एक फ्लैश कैमरे वाले का प्रबंध किया हुआ था जिसने रजनीकान्त आदि की, जब वह लोग जीना चढ़ रहे थे, फटाफट दो-चार तसवीरें लीं।

"क्या ख़बर है, कैलाश ?" रजनीकान्त ने ऊपर छत पर पहुँचकर पूछा। "कैसा है हाउस ?"

"अच्छा नहीं है। आधा ख़ाली है," कैलाश ने गम्भीरता पूर्ण कहा।

मामला ठंढा है यह तो रजनीकान्त थिएटर के बाहर पहुँचकर ही ताड़ गया था। सलमा और तारा सहमी हुई थीं।

"लोगों को कैसा लगा पिक्चर ?" रजनी ने पूछा।

"हाँ, पहले शो के लोगों ने बाहर निकलकर कुछ तो कहा होगा ?" सलमा बोली।

कैलाश ने कहा : "कुछ नहीं कहा। चुपचाप सर लटकाए चले गए।"

"शो के दरमियान तालियाँ, हँसी वग़ैरह ?"

"कुछ नहीं। चुप बैठे देखते हैं। कुछ बोलें तो पता चले। चुप बैठे हैं सब के सब जैसे साँप सूँघ गया हो उन्हें। देखो क्लाइमेक्स सीन चल रहा है पर थिएटर के अंदर से कोई आवाज़ सुनाई दे रही है ?" रहमान ने कहा।

"यानी," रजनी बोला, "इसका मतलब है कि पिक्चर लोगों को पसंद नहीं आया।"

"इसका मतलब है," कैलाश बोला, "कि अगला शो एक-चौथाई भी नहीं भर पाएगा।"

तारा ने कैलाश की ओर देखा तो उसे वह ऐसा लगा मानो महीनों से बीमार है। बड़ी लगन से, बड़ी मेहनत से बनाया था उसने यह चित्र —*भिट्टी*। और यह चित्र असफल रहा। यानी वह स्टार नहीं बन पाई, नहीं बन पाएगी। कैलाश को भी कहीं ठिकाना न मिलेगा। अब तारा को ऐक्टिंग-वैक्टिंग छोड़कर कोई और काम करना पड़ेगा या माँ की इच्छानुसार जीवन से शादी करके गृहस्थी जमानी पड़ेगी। एक क्षण में तारा ने क्या-क्या नहीं सोचा।

अंदर दूसरा खेल समाप्त हो रहा था। तारा का दिल धड़कने लगा। वह लोग छत के अँधेरे में हटकर खड़े हो गए और अंदर से लोगों के बाहर निकलने की प्रतीक्षा करने लगे।

"कुछ समझ में नहीं आता !" रजनी बोला। "जब मैंने प्रोजेक्शन हॉल में पिक्चर देखा था तो मुझे तो बड़ा अच्छा लगा था। कोई कुछ भी कहे, कैलाश, सच मानो कमाल का पिक्चर बनाया है तुमने।"

सलमा ने कहा : "अच्छे पिक्चर नहीं चलते — यही तो रोना है।"

"छोड़ो भी इन बातों को," कैलाश ने झुंझलाकर कहा। क्या ख़ाक अच्छा पिक्चर है। ऑडिअंस को तो पसंद नहीं आया। देखो, कैसे मुँह लटकाए जा रहे हैं मानो बीच बाज़ार लुट गए हों। टिकट के पैसों का ग़म है सब को।"

सहसा रहमान बोल पड़ा: "एक आइडिआ आया है, कैलाश। सुनो — यह लोग बाहर निकल रहे हैं न? मैं अभी नीचे जाता हूँ। ऐसे तो अपना पिक्चर फ़ेल हो ही गया है। दोनों शो में आधा हाउस खाली रहा। तीसरे शो में कुल एक-चौथाई हाउस ही भर पाएगा। अब मैं नीचे जाकर ऐसा कुछ करता हूँ कि या तो वह जो चौथाई हाउस भरने वाला है वह भी नहीं भरेगा या हाउस फ़ुल कर दूँगा।" रहमान भागा और सीढ़ियाँ उतरकर ओझल हो गया।

सीढ़ियों के पास निश्चित खड़ा हुआ फ़ांसिस चुरुट पी रहा था और उसकी आँखें चुरुट के सिरे पर जमी हुई राख की लम्बी तह पर थीं। कैलाश जानता था फ़ांसिस क्या सोच रहा है। 'कलाकृति का मूल्य नहीं आँका जा सकता। कला-कृति के निर्माण में कलाकार को जो आनंद और तृप्ति मिलती है यही उसका पारितोपिक है। सच्ची कला बेची नहीं जाती और न ख़रीदी जाती है।' यही तो फ़ांसिस का कथन था। और कैलाश अपनी कला को बेचने का प्रयत्न कर रहा था। जब लोगों ने उसे ख़रीदने से इनकार किया तो उसे निराशा हो रही थी। कैलाश की कला बाज़ारु कला है। सिनेमा कर्मशिअल आर्ट है, जिसका बेचा जाना और ख़रीदा जाना आवश्यक होता है। यह वह कला है, वह सस्ती कला जिसका मूल्याँकन लोग यानी प्रेक्षक करते हैं। और आज लोगों ने कैलाश को किसी महत्त्व का कलाकार मानने से इनकार कर दिया। तभी तो आधा थिएटर ख़ाली रहा, और अब शायद पूरा ख़ाली रहेगा.....

नीचे जाकर रहमान फाटक पर खड़ा हो गया। अंदर से लोग निकल रहे थे। लोगों को रोककर रहमान ने पूछा: "क्यों भई, पिक्चर में कुछ दम भी है? नई-नई, मेरा मतलब है टिकट ले लूँ या पैसा फुकट जाएगा? ....क्यों मिस्टर," रहमान ने एक व्यक्ति की बाँह पकड़कर पूछा, "कैसा है पिक्चर?"

"अरे, क्या पिक्चर है," व्यक्ति ने उत्तर दिया।

रहमान ने तब कहा: "याने देखने लायक़ नहीं है। पैसा फुकट जाएगा?"

वह व्यक्ति सहसा उत्तेजित हो बोला: "अरे, देखो भाई; ज़रूर देखो।"

"सच?" रहमान ने आँखें फाड़कर पूछा।

"आज तक हमने ऐसा बढ़िया पिक्चर नहीं देखा," एक दूसरे व्यक्ति ने अपनी राय दी।

रहमान की आँखें फटी की फटी रह गईं। "सच्ची?" उसके मुँह से निकला। "तो बोलो न, यार; मुँह से तो बोलो। चुपचाप क्यों जा रहे हो? सबसे कहो कि बढ़िया पिक्चर है।"

तीसरे ने उत्तर दिया: "क्या कहें! पिक्चर ने तो जान निकाल दी!"

"एं? क्या कहते हो!" रहमान ने कहा। उसे एक चाल सूझी हुई थी। पाँसा फेंकने का यही मौक़ा था। फ़ौरन उसने अपने सर के बाल बिखेरकर, आँखें चढ़ाकर, शराबियों की-सी मुद्रा बना ली और झूमता हुआ ज़ोरों से बोला: "अरे जा! क्या बंडल पिक्चर बनाया है! एकदम थर्ड क्लास पिक्चर है। एकदम बंडल पिक्चर है भाई। सारे पैसे फुकट में गए। इत्ता वाहियात पिक्चर है कि—"

"ए—ए—क्या बकता है?" एक व्यक्ति ने बिगड़कर रहमान से पूछा।

थिएटर के अंदर से जो लोग निकल रहे थे सहसा उन्हें रहमान के उद्‌गारों से चोट लगी और वह सारे के सारे सचेत होकर लाल-पीली आँखों से रहमान को घूरने लगे। कुछ लोगों ने उसे घेर लिया।

रहमान ने कहा: "सच कहता हूँ। बंडल है पिक्चर—एकदम बंडल!"

"बेवकूफ़। अच्छे पिक्चर को बुरा बोलता है। कितना बढ़िया पिक्चर है।"

एक मवाली आगे बढ़ा और रहमान की गर्दन पकड़ ली उसने। "तेरे बाप ने कभी पिक्चर देखा है," गर्दन झखझोरते हुए उसने कहा।

रहमान को भी ताव आ गया। "ए, ख़बरदार जो बाप निकाला।" रहमान ने एक चाँटा रसीद किया। मवाली ने दो लगाए। और फिर हाथापाई शुरू हो गई। सारे लोग रहमान पर टूट पड़े। रहमान ज़ोरों से चिल्लाने, शोर मचाने लगा और थिएटर के फाटक के पास हज़ारों की भीड़ लग गई। "अबे, मारते क्यों हो!" रहमान चीख रहा था। "पुलिस—पुलिस—पुलिस—"

"ख़बरदार जो पिक्चर को बुरा कहा। कचूमर निकाल देंगे तेरा," एक ने कहा।

दूसरा बोला: "इतना बढ़िया पिक्चर हमने अपनी जिंदगी में नहीं देखा और यह साला पिक्चर को बुरा कहता है।" एक चाँटा रसीद किया।

रहमान ने और ज़ोरों से चिल्लाना शुरू किया। "अरे तो पिक्चर को कौन बुरा कह रहा है। पिक्चर तो, यार, वंडरफ़ुल है। तुमने ही क्या हमने भी आज तक इतना बढ़िया पिक्चर नहीं देखा।"

भीड़ ने यह सारी बातें सुनीं और सुनकर लपकने लगी—बुकिंग ऑफ़िस की ओर।

लोगों के साथ रहमान की हाथापाई जारी ही थी और वह चिल्ला रहा था: "पुलिस—पुलिस—"

भीड़ बराबर बढ़ रही थी; एक हलचल थी; एक कुहराम मचा हुआ था कि लाठी लिए पुलिस आ गई और भीड़ को हटाने लगी। रहमान ने चट-से अपने फ़्लैश कैमरा-मैन को इशारा किया। कैमरामैन फटाफट भीड़ के फ़ोटो लेने लगा—भीड़ और पुलिस की लाठियों के संघर्ष के फ़ोटो।

पुलिस ने अंत में रहमान को छुड़ाया। रहमान के बुरे हाल हो रहे थे। कनपटी सूज गई थी। कपड़े अस्तव्यस्त हो गए थे। पर वह ख़ुश था, बहुत ख़ुश था, क्योंकि

बुकिंग ऑफ़िस पर पब्लिक टूटी पड़ रही थी — टिकट ख़रीदने के लिए, पिक्चर देखने के लिए।

रहमान ने फ़्लैश कैमरामैन के पास जाकर पूछा : "लिए कुछ फ़ोटोज़ ?"

"बहुतसारे," उसने उत्तर दिया।

"गुड !" रहमान ने ख़ुश होकर कहा। "इन्हें पेपर में दूंगा। कल अख़बारों में निकलेगा : *'लाठी चार्ज ऐट इम्पीरिअल !'*, *'अन् प्रिसिडेंटेड क्राउड ऐट इम्पीरिअल थिएटर !'*"

ऊपर जाकर रहमान ने कैलाश से कहा : "यार, पिक्चर पास हो गया अपना ! देखो, भीड़ देखो !"

कैलाश ख़ुश था। रजनीकान्त ख़ुश था। तारा और सलमा ख़ुश थीं। ऊपर से खड़े-खड़े उन्होंने सबकुछ देखा था। भीड़ की भीड़ थिएटर में घुसी चली आ रही थी। देखते ही देखतें थिएटर भर गया। बराबर साढ़े-नौ बजे तीसरा खेल शुरू हो गया और फाटक पर 'हाउस फ़ुल' की तख्ती लगा दी गई। तारा और सलमा को बॉक्स में बिठाकर कैलाश भी उन्हीं के साथ बैठ गया। पब्लिक के साथ बैठकर आज वह पहली बार अपना चित्र देख रहा था। यह एक विचित्र अनुभव था।

लिबर्टी में मामला टेढ़ा हो रहा था। प्रेक्षकों को चित्र पसंद न था इसलिए रह-रहकर लोग शोर मचा रहे थे। कोई छींक पड़ता, कोई खाँसता, और सरला देवी जब डायलॉग बोलती तो लोग बिल्ली की बोली बोलते। शांतिभाई और पुरी के बीच बैठी हुई सरला के बुरे हाल थे।

"यह लोग चिल्ला क्यों रहे हैं, सेठ ?" सरला ने पूछा।

शांतिभाई जानता था लोग क्यों चिल्ला रहे हैं। पिछले दोनों खेलों की ख़बर उसके कर्मचारियों ने उसे दे रखी थी। प्रॉडक्शन मैनेजर दवे ने साफ़-साफ़ कह दिया था कि पब्लिक को *रेशमी रूमाल* की कहानी पसंद नहीं आई, और सरला देवी ने बहुत *ओवर ऐक्टिंग* की है। सरला के उच्चारण भी ठीक नहीं, उच्चारण में पंजाबियत बहुत है, जिससे लोग हँस पड़ते हैं, आदि। परंतु शांतिभाई ने हिम्मत न हारी। तीसरे खेल में उसने अपने काफ़ी आदमी भर रखे थे। एक्स्ट्रा सप्लायर से कहकर उसने नीचे के वर्ग में लगभग तीन सौ आदमी भेजे हुए थे, जिनका काम था जगह-जगह ताली बजाना, मज़ाक़ पर हँसना और थिएटर में जान डाल देना। पर सब उलटा हो रहा था। जब शांतिभाई के भेजे हुए आदमी ताली बजाते तो बाक़ी के लोग उन्हें गाली देकर चुप कराते और इसी तरह की बेहूदा हरकतें चल रही थीं। शांतिभाई ने सरला से झूठमूठ कहा : "अपना पिक्चर फेल कराने के लिए किसी ने लोगो कू भेजा हुआ है। वोच लोग सारी बदमासी कर रहे हैं।"

"किसने भेजा होगा?" सरला ने पूछा।

"मेरा ख्याल है कैलास सिन्हा की सरारत है यह।"

"मेरा भी यहीं ख़याल है," सरला बोली।

"मैं ऐसा नहीं समझता," डिरेक्टर पुरी ने कहा।

शान्तिभाई चुप हो गया। वह मन ही मन बौखला रहा था — डिरेक्टर पुरी पर और सरला देवी पर, जिन्होंने मिलकर उसकी लुटिया डुबो दी। इतना बड़ा पिक्चर फ़ेल कर दिया। पूरा एक साल और सात महीने तथा बारह लाख रुपये लगे थे इस पिक्चर में। और यह पिक्चर फ़ेल गया! शांतिभाई का दम फूलने लगा। मन ही मन गुजराती में वह गाली देने लगा — अपने डिरेक्टर और अपनी हीरोइन को, जो उसके दोनों बग़ल बैठे हुए थे।

इम्पीरिअल थिएटर में बैठे हुए लोग खेल देखने में तल्लीन थे। ऐसा प्रतीत होता था मानो थिएटर में कोई नहीं। परदे पर रजनीकान्त और तारा चौधरी का हृदय-स्पर्शी दृश्य चल रहा था जिसमें तारा को सदा के लिए छोड़कर रजनी कहीं दूर चला जाना चाहता है। तारा की बातें, बात करने का ढंग नश्तर की तरह छाती में लग रहे थे।

रजनी ने झुककर कैलाश से कहा: "इस सीन पर मेरी तो जान निकलती है। इतनी बार देखा है, मैंने ही काम किया है, पर सीन देखकर मुझ पर भी गहरा असर होता है। कमाल का लिखा है, यार, तुमने यह सीन।"

"तुमने ऐक्ट भी कमाल का किया है," कैलाश ने कहा।

"तारा ने छीन लिया मुझसे यह सीन," रजनी ने बीच में बैठी हुई तारा की ओर देखकर कहा। "जानती हो? मैं धोखा खा गया तुमसे। मैं समझा था भोलीभाली ख़ूबसूरत लड़की हो, हीरोइन का रोल तुम्हें ख़ूब जँचेगा। मुझे यह नहीं पता था कि तुम्हें इतनी कुछ ऐक्टिंग आ जाएगी और तुम मुझसे भी बाज़ी मार ले जाओगी। *वेल — कॉनग्रेच्युलेशन्स फ़ॉर बीटिंग मी हॉलो।*"

अपनी तारीफ़ सुन तारा शर्मा गई। कृतज्ञ दृष्टि से उसने बाजू में बैठे हुए कैलाश की ओर देखा। वह मुस्कुराता हुआ उसी को देख रहा था। तारा फिर शर्माई। कैलाश ने अपना हाथ तारा के हाथ पर रख दिया और उसके हाथ को थपथपाने लगा। उस थपथपाने का अर्थ तारा समझती थी। कैलाश की हर गति, हर क्रिया, उसके हर संकेत को वह समझती थी। कैलाश का अर्थ था: "शाबाश, तारा, शाबाश! तुमने कमाल कर दिया। मुझे तुम पर गर्व है।" और तारा मन ही मन पुलकित हो उठी। उसके हाथ पर पड़ा हुआ कैलाश का हाथ अलग हो रहा था और कैलाश के कपड़ों से हलकी-हलकी सुगंध उठ रही थी — कोई अनोखा ओडीकलोन था। ओडी-

कॅलोन और सिगरेट की गंध परस्पर मिलकर इतनी मादक हो सकती है यह तारा को आज ही विदित हुआ, थिएटर के बॉक्स में कैलाश के पास बैठे हुए उस अँधियारे में विदित हुआ। यह सुगंध कैलाश की थी — वह कैलाश जिसने उस अल्हड़ छोकरी को सिखा-सँवारकर सफल अभिनेत्री बनाया था — उसका गुरु कैलाश, उसका मित्र कैलाश। कैलाश की वह सदा आभारी रहेगी। उसका ऋण वह कभी नहीं चुका सकेगी। कैलाश के लिए कुछ करने को, कैलाश को किसी प्रकार भी सुख और आनंद पहुँचाने के लिए उसका मन उतावला हो उठा। उसका जी किया कि कैलाश के पाँवों में बैठकर, उसकी टाँगों को अपनी छातियों से लगाकर, उसके घुटनों पर सर रखकर ख़ूब रोए। क्यों रोए यह उसकी समझ में न आया; परंतु तारा का जी आज सहसा जी भरके रोने को हुआ। पर वह ऐसा कर नहीं सकती थी। पास में रजनीकान्त और सलमा भी तो बैठे थे। वह क्या कहते ?

कैलाश ने तारा के हाथ पर से अपना हाथ हटा लिया था — वह हाथ जो उसने सरल भाव से उसे बधाइ देने के हेतु रखा हुआ था। तारा को कैलाश ने पिछले तीन-चार महीनों में — जब से उससे उसकी पहली भेंट हुई थी — कई बार छुआ था। उनकी पहली भेंट में ही, समुद्र के किनारे उस रात, उनके शरीरों का परस्पर सम्पर्क हुआ था। उसके बाद भी अभिनय सिखाने के अंतर्गत, रिहर्सल के अंतर्गत और शूटिंग के अंतर्गत न जाने कितनी ही बार तारा के शरीर को कैलाश के शरीर ने अनायास ही, सहज ही, जगह-जगह छुआ था — उसी प्रकार जिस प्रकार *जननी* प्रतिभा के निर्माण-काल में फ़ांसिस ने उस मिट्टी को छुआ था। मिट्टी के उस लोथड़े को हाथों से कूटकर, मलकर, थपेड़कर, सँवारकर धीरे-धीरे कई दिनों में फ़ांसिस ने उसे एक आकार दिया था, एक रूप दिया था, एक सुंदर रूप। और इस प्रकार मिट्टी के उस ऊबड़खाबड़ निर्जीव लोंदे का रूपांतर एक सुंदर प्रतिमा में हुआ था — फ़ांसिस के दक्ष हाथों। तारा भी ठीक उसी निर्जीव मिट्टी की तरह थी, उसी तरह ऊबड़खाबड़ थी, और ठीक उसी तरह कैलाश के दक्ष हाथों ने उसे सँवार-सँवारकर उसका रूपांतर एक सुंदर प्रतिमा में किया था जिसका नाम था तारा चौधरी। यह नाम भी कैलाश का ही दिया हुआ था। कैलाश ने सदा तारा के अस्तित्व को एक बेजान, बेरूप और बेकार मिट्टी की भाँति ही लिया था। वास्तव में उसके अस्तित्व पर उसने कभी ध्यान ही नहीं दिया था। वह एक कलाकार था और उसके पास समय बहुत थोड़ा था। तारा की मिट्टी को थपेड़कर, सँवारकर उसे आकार और रूप देने में कैलाश एकदम इतना व्यस्त हो गया था कि उसे कभी यह सूझ ही नहीं पाया कि तारा का निजी भी कोई व्यक्तित्व हो सकता है। वह सदा तारा को फ़ांसिस की मिट्टी ही समझा। और इसीलिए नारी और मिट्टी में जो भेद होता है, वह भेद कैलाश की समझ से सदा बाहर ही रहा। परंतु न जाने कैसे, उस रात स्टेशन वैगन में, जब वह उसे ड्राइविंग सिखा रहा था और तारा उसकी छाती से टिकी हुई गाड़ी का व्हील सँभाले हुए

थी तब एक बार, और आज इस अँधेरे बॉक्स में बैठे हुए तारा के हाथ के स्पर्श से अचानक फिर, वही चिनगारी-सी क्यों निकली थी, क्यों वही बिजली-सी कैलाश के शरीर में दौड़ पड़ी थी। इन दोनों बार तारा की मिट्टी में कैलाश को एक विचित्र चेतना झलक पड़ी थी। आज एक बात और हुई थी। कैलाश ने तारा को हमेशा तारा के ही रूप में देखा था, उसके जड़ तथा स्थूल रूप में। इसके अतिरिक्त वह सदा उसके इतने समीप रहा कि कलाकार तारा की ओट में बराबर जो नारी तारा थी वह उसे न दिखाई दी, और तारा की आड़ में तारा सदा ही कैलाश की पैनी आँखों से छिपी रही। आज परदे पर कैलाश ने अचानक ही एक नारी देखी और अकस्मात् ही वह पहचान गया — उस नारी को, जिसे उसने परदे पर आज बड़ी दूर से और निष्पक्ष होकर देखा, प्रेक्षक होकर देखा। और तारा के हाथ पर जब उसने हाथ रखा तो उसे लगा तारा की निर्जीव मिट्टी सचेत और सजग होकर बिजली के करंट छोड़ रही है। उसने तुरंत हाथ हटा लिया था। तारा की ओट में जो तारा थी आज ही उसे स्पष्ट रूप से झलक पड़ी थी। और अब नारी तारा के व्यक्तित्व का भान उसे हो उठा था। तारा के स्वस्थ यौवन की महक के हलके-हलके झोंके उसकी नासिका में प्रविष्ट हो रहे थे और उसके दिल की धड़कन को बढ़ा रहे थे। कैलाश को आज, परदे पर तारा को देखने के बाद, उसका — जो तारा परदे के पीछे थी उस तारा का — निजी सजीव अस्तित्व ही नहीं बल्कि उसका प्रभावपूर्ण व्यक्तित्व भी दिखाई दे गया और सहसा उसके माथे पर स्वेद-कण उभर आए। कैलाश ने रूमाल निकालकर माथे पर का पसीना पोंछा था तो रूमाल से *क्रेप डिशीन* ओडीकलोन की सुगंध उठी थी और सिगरेट की गंध से घुलमिलकर इधर-उधर फैलने लगी थी। और यही गंध, कैलाश की यही गंध, तारा को मादक लगी थी, और तारा ने जी भरके रोना चाहा था....

पिक्चर समाप्त हो रहा था। परदे पर 'समाप्त' लिख आया। कैलाश कुरसी से उठा। सभी उठने लगे। सलमा दौड़कर आई और ख़ुशी के मारे लिपट गई कैलाश से। वह यह भूल गई कि थिएटर में लोग उन्हें देख रहे हैं।

"जीओ मेरे शेर!" सलमा ने कैलाश से लिपटे हुए ही कहा। "क्या पंजा मारा है! उधेड़ दिया फ़िल्म इन्डस्ट्री को! बड़े डिरेक्टर बनते हैं लोगबाग। कैलाश सिन्हा के पाँव की धूल नहीं हैं वह। और तुमने भी तारा कमाल कर दिया। क्या तमाचा मारा है तुमने सरला देवी के मुँह पर! भई वाह!"

"बधाई है तुम्हें, कैलाश। जो कहा था सो तुमने कर दिखाया," रजनीकान्त ने कैलाश के कंधे को थपथपाते हुए कहा।

कैलाश ने रजनी और सलमा की बाँहों को थामकर उन्हे लिपटा लिया। "तुम दोनों के बग़ैर मैं कुछ नहीं कर सकता था। सफलता का सारा श्रेय तुम दोनों को है," उसने कहा; और फिर तारा की ओर मुड़कर:"और तुम्हें — तारा। तुमने बात

रख ली, नाक रख ली। पिक्चर के रशेज़ मैं रोज़ ही देखता था; पर आज पब्लिक के साथ बैठकर सारा पिक्चर देखने पर ही मैं जान पाया हूँ कि तुमने कितना सुंदर काम किया है। मैं तुम्हें भारत की सबसे बड़ी अभिनेत्री कहने को तैयार हूँ।"

कैलाश के इस प्रशंसात्मक वाक्य पर रजनी और सलमा और अभी-अभी आए हुए रहमान व फ़ांसिस ने ज़ोरों की तालियाँ बजाईं। तारा शर्मा गई। कैलाश को वह धन्यवाद भी न दे सकी। न जाने उसे क्या हो गया था कि उसका मुँह ही नहीं खुल रहा था।

कैलाश ने तब रहमान से कहा: "आज के तीनों खेलों की आमदनी स्व. गनपत की विधवा को भिजवा दी जाय।"

साथियों ने प्रस्ताव का समर्थन किया।

और रहमान ने ज़ोरों से दाद देते हुए कहा: "ऐसा ही होगा, बॉस।"

हॉल में कुरसी से उठकर बाहर निकलती हुइ प्रेक्षकों की भीड़ कलाकारों को पहचान कर चिल्लाने लगी: "तारा चौधरी — तारा चौधरी — रजनीकान्त — सलमा — तारा चौधरी —"

तब रहमान ने कहा: "चलो, बाहर चलें, वरना लोग भी बाहर नहीं निकलेंगे।"

कैलाश सबको लेकर बाहर आ गया और उसी छत के अँधेरे में वह लोग खड़े होकर भीड़ के जाने की प्रतीक्षा करने लगे।

मगर भीड़ कब छँटने लगी थी। सारे के सारे बाहर आकर अपने चहेते कलाकारों के नीचे उतरने की बाट उत्सुकता के साथ देखने लगे। उन्होंने तारा, रजनी और सलमा को देख लिया था। वह उनका नाम ले-लेकर चिल्लाने लगे, पुकारने लगे।

"कितने सारे लोग हैं!" तारा ने कहा। "अब कैसे जाएँगे?"

"मैं जाकर अपनी मोटर फाटक के सामने मँगवाता हूँ। तुम लोग आओ पीछे-पीछे। यहाँ से सीधे मेरे घर चलेंगे;" रजनीकान्त ने सुझाया।

"नहीं, रजनी, तुम्हारे घर नहीं। मेरे घर चलेंगे। मैंने खाने का इंतज़ाम किया हुआ है अपने घर। वहीं चलकर मनाएँगे," सलमा ने ज़िद करते हुए कहा।

"अच्छा, तुम्हारे घर सही," रजनी ने कहा और सीढ़ियाँ उतरकर भीड़ में से होता हुआ जाने लगा।

सलमा भी रजनी के पीछे-पीछे चल पड़ी।

लोग चिल्लाने लगे: "रजनीकान्त — रजनीकान्त — सलमा —"

लोग इसी तरह चिल्लाकर उन्हें सराह रहे थे। इतने आदमियों की भीड़ देखकर तारा घबरा उठी। उन्हीं के बीच से अब उसे भी जाना था और अब वह सारे के सारे उसीका नाम लेकर उसे पुकार रहे थे: "तारा चौधरी— तारा चौधरी कहाँ है?"

कैलाश ने तारा की बाँह पकड़कर कहा: "जाओ, तारा; लोग तुम्हें पुकार रहे हैं; तुम्हें देखना चाहते हैं।"

तारा काँप रही थी। "मुझे डर लगता है," उसने कहा और कैलाश की बग़ल में वह सटी जाने लगी।

"जाओ, नीचे जाओ।"

"मैं नहीं जाऊँगी — मैं अकेले नहीं जाऊँगी।"

"तुम अकेले जाओगी। देखो, तुम्हारे फ़ैन्स तुम्हें पुकार रहे हैं। जाओ, तारा। सर ऊँचा करके जाओ। आज तुम सिनेमा स्टार बनी हो। देखो, अपनी स्टार का मुँह देखने के लिए लोग किस तरह बेचैन हो रहे हैं।"

तारा ने कैलाश की बाँह खींचते हुए कहा: "तुम भी चलो मेरे साथ।"

कैलाश ने बाँह छुड़ाली और उँगली से नकारात्मक इशारा करते हुए कहा: "नहीं। तुम अकेले जाओगी।" फिर तारा को सीढ़ियों की ओर हलके-से ठेलकर उसने ज़ोरों से घोषित किया: "तारा चौधरी!"

नीचे भीड़ में खड़े हुए रहमान ने ज़ोरों से ताली बजाई तो सारे लोग ताली बजा-कर तारा का स्वागत करने लगे। तारा सीढ़ियाँ उतर रही थी — अकेले; और उसके घुटने ढीले पड़ रहे थे, पाँव एक-एक मन के हुए जा रहे थे, और लोग सराहनीय ढंग पर चिल्ला रहे थे: "तारा चौधरी — तारा चौधरी —" स्कूल और कॉलिज के कुछ लड़के-लड़कियाँ अपने ऑटोग्राफ़ बुक में तारा के हस्ताक्षर लेने लगे। "तारा चौधरी — तारा चौधरी" का शोर हो रहा था। सब खुश थे। तारा लोगों को नमस्कार करती हुई, उन्हें हाथ हिलाती हुई, भीड़ में से होती हुई आगे बढ़ी चली जा रही थी। भीड़ भी उसके साथ-साथ चल रही थी। और भीड़ के पीछे, बहुत पीछे कैलाश चल रहा था — अकेला। चित्र का निर्देशक कैलाश पीछे-पीछे चल रहा था। उसे किसीने नहीं पुकारा। उसकी परवाह किसी ने नहीं की। पर वह खुश था। कलाकार को नहीं, कलाकृति को ही तो सदा परखा और सराहा जाता है। *मिट्टी* और तारा दोनों ही तो कैलाश की कलाकृतियाँ थीं।

थिएटर के बाहर रजनीकान्त और सलमा की मोटरें खड़ी थीं। तारा को रजनीकान्त ने अपनी गाड़ी में पीछे की सीट पर बिठाया, फिर खुद भी बैठ गया। सलमा ने अपने ड्राइवर से कहा कि गाड़ी घर ले आए और फिर वह भी रजनी के साथ उसकी गाड़ी में बैठ गई। कैलाश को भी उन्होंने अंदर लिया। रहमान और फ़्रांसिस सामने की सीट पर ड्राइवर के पास जा बैठे। और फिर गाड़ी चल दी। पीछे-पीछे सलमा की ख़ाली गाड़ी भी चल पड़ी।

भीड़ अब भी ताली बजा रही थी।

११

आज इतवार था। इतवार की सुबह थी। बम्बई में बहुत से लोग इतवार की सुबह देर से उठते हैं, क्योंकि और दिन उन्हें देर तक सोने नहीं मिलता। और दिन तो सुबह उठकर वह अपने काम-धंदे में जुट जाते हैं और रात तक काम में जुटे रहते हैं। काम की धुन, काम की चिंता उन्हें सदा घेरे रहती है। बिस्तर पर पड़ने पर उन्हें नींद भी जल्दी नहीं आती। काम की चिंता उनकी नींद में देर तक बाधक रहती है। हफ़्ते भर की थकान व नींद की कमी शनिवार की रात को ही पूरी होती है, और इसी कारण इतवार की सुबह लोग देर तक सोया करते हैं। कैलाश भी आज देर तक सोया पड़ा रहा। परंतु उसके देर तक सोने का कारण चिंता न था। वह कल भी देर तक सोता पड़ा रहा था, क्योंकि परसों रात सलमा के घर खाने की पार्टी बड़ी देर तक चलती रही थी। जब वह घर लौटा था तो तीन बज रहे थे।

कल रात रजनीकान्त के घर पार्टी थी। बड़ी शानदार पार्टी थी। रजनी ने *मिट्टी* की सारी टीम को आमंत्रित किया हुआ था। बहुत शोर रहा और बहुत रंग जमा। १ बजे रात तक पार्टी चलती रही थी। घर लौटने पर रहमान और फ़्रांसिस ने बड़ी देर तक गपशप जारी रखी। रात पार्टी में कैलाश ने तो पी न थी बिलकुल ही और न रहमान ने पी थी, पर फ़्रांसिस ने ख़ूब छकी थी और मज़ेमज़े की बातें कर रहा था। कैलाश ख़ूब हँसा था रात और इसी तरह फिर तीन बज गए थे। इसी कारण आज सुबह देर तक वह पड़ा सो रहा था। एक-दो करवटें लेकर कैलाश ने आँखें मलीं और खोल दीं।

धूप अंदर आ रही थी। उसने घड़ी देखी, साढ़े-आठ बज रहे थे। सर के नीचे दोनों हाथ बाँधकर कैलाश चित पड़ा हुआ सोचने लगा। उसके विचार बिखरे हुए थे। देर तक वह किसी एक विषय पर न ठहर पाता था। बाज़ूवाली खिड़की से आकर फ़र्श पर बरसती हुई किरणों ने सारे कमरे को चौंधिया रखा था। कैलाश ने आँखें मींच लीं और सोचने लगा, अपने विषय में, अपने भविष्य के विषय में, अगले चित्र और उसकी कहानी के विषय में। परंतु वह कुछ सोच न पाया। उसका दिमाग़ सुस्त और शून्य था। नीचे गली में क़लई करनेवाला "कलाय — कलाय —" की तीव्र

कंठध्वनि कर रहा था। ट्रैमों और बसों की घरघराहट और लोगों के चलने-फिरने का शोर था। चीनी रंडी के किचन से ऑमलेट फेंटने की आवाज़ आ रही थी और बाथरूम में फ्रांसिस नहा रहा था। फ्रांसिस ही था क्योंकि जब वह नहाता तो बाल्टी और मग आपस में काफ़ी ज़ोरों से टकराया करते। और तब सहसा अत्यंत ही तीव्र गति से तारा का विचार कैलाश के मस्तिष्क में प्रविष्ट हुआ। विचार ही नहीं, समूची तारा आनकर उसके मस्तिष्क में व्याप्त हो गई। तारा उसे रातवाली पार्टी की पोशाक में दिखाई दी, उसी पोज़ में जिसमें वह रात रजनी के ड्रॉइंगरूम में, बर्फ़ की तरह सफ़ेद साड़ी पहने हुए, बर्फ़ की तरह सफ़ेद आइसक्रीम खा रही थी। कितना अच्छा खाती थी वह। खाने के ढंग में आधुनिक युवतियों की बनावटी नज़ाकत न थी। चम्मच को दो उँगलियों से पकड़कर, दो उँगलियाँ खुली छोड़, छिगुनी को ऊपर नहीं उठाया हुआ था उसने। चम्मच को बच्चों की तरह पकड़े हुए वह बच्चों की तरह ही सफ़ेद—सफ़ेद आइस्क्रीम खा रही थी और बच्चों की तरह ही मुँह भी बनाती जा रही थी। आइसक्रीम खाने का यह स्वस्थ और सुंदर ढंग था जो कैलाश ने इससे पहले न देखा था। रात तारा को आइसक्रीम खाते देख कैलाश के मन में आया कि उसका मुँह चूम ले। अगले चित्र में वह तारा को अवश्य ही किसी सीन में आइस्क्रीम खिलाएगा और बड़े-बड़े क्लोज़अप लेगा — उसके चेहरे के, उसके हाथ के, और आइसक्रीम के। कैलाश सोचने लगा क्या यह वही तारा है जो उस रात समुद्र की लहरों में फांदकर जान देने चली थी? आइसक्रीम खाती हुइ यह युवती क्या वही मिट्टी है जिसे गूँधकर, थपेड़कर, ताशकर, सँवारकर उसने अभिनेत्री का रूप दिया है? मिट्टी तारा का अस्तित्व वह भूल चुका था और अब उसके समक्ष केवल अभिनेत्री तारा का व्यक्तित्व था।

इसी समय बाहर रहमान की सीटी सुनाई दी। रहमान सीढ़ियाँ चढ़ रहा था। रहमान आ रहा था। आज इतवार था। इतवार की सुबह। समाचार पत्रों में समालोचनाएँ निकली होंगी। *टाइम्स ऑफ़ इंडिआ* में भी आज समालोचना छपी होगी। कैलाश ने आँखें खोल दीं। सामने ही दरवाज़े पर पत्र-पत्रिकाओं का पुलिन्दा बग़ल में दबाए रहमान खड़ा मुस्कुरा रहा था। कैलाश भी उसे देख मुस्कुराया। कैलाश की आँखों में कौतूहल था।

पास आते हुए रहमान ने कहा: "छप्पर फट पड़ा है, मेरे शेर, फ़िक्र न करो। इससे बढ़िया रिव्यूज़ तुमने पहले कभी न पढ़े होंगे। यह देखो —" रहमान ने सारे दैनिक और साप्ताहिक, ताश की गड्डी की तरह, कैलाश के पलंग के सामने फ़र्श पर बिखेर दिए।

कैलाश ने कुहनी के बल होकर सर हथेली पर टिका दिया और सामने, कागज़ी चीनी पंखे की तरह, खुले पड़े सिनेमा पृष्ठों पर दृष्टि दौड़ाने लगा। पर रहमान से न रहा गया। वह एक-एक पृष्ठ के शीर्षक ज़ोरों से पढ़ने लगा, पढ़कर सुनाने लगा:

"*कैलाश सिन्हाज़ मास्टरली डिरेक्शन ऐण्ड निउ फ़ाइण्ड तारा चौधरीज़ सुपर्ब परफ़ॉरमन्स मेक 'मिट्टी' ए मेमोरेबल पिक्चर।*"—टाइम्स ऑफ़ इंडिआ।

"*लाठी चार्ज ऐट इम्पीरिअल थिएटर। 'मिट्टी' ऐन एक्सलेंट पिक्चर।*"

—फ्री प्रेस

"*अनप्रिसिडेंटेड क्राउड ऐट इम्पीरिअल थिएटर। सेंसेशनल डेबो ऑफ़ कैलाश सिन्हा ऐण्ड हिज़ निउ फ़ाइण्ड तारा चौधरी।*" —बॉम्बे टाइम्स।

"*'मिट्टी' ए ग्रेट आर्टिस्टिक अचीवमेंट फ़ॉर कैलाश सिन्हा।*" —ब्लिट्ज़।

"*'मिट्टी' एक सर्वथा महान चित्र।*" —धर्मयुग।

रहमान पढ़े जा रहा था। एक-एक करके उसने सारे पत्रों के शीर्षक पढ़े। अंगरेज़ी, हिन्दी, मराठी, गुजराती और उर्दू के तमाम शीर्षक पढ़ने के बाद उसने कैलाश को सारी समालोचनाएँ पूरी-पूरी अक्षरसह पढ़कर सुनाईं। फ़्रांसिस भी बाहर आकर सुनने लगा।

घंटे भर बाद जब रहमान ने पढ़ना समाप्त किया तो उसका जबड़ा दुखने लगा था और कैलाश की आँखों में नमी आ गई थी।

चुप्पी को भंग करते हुए फ़्रांसिस ने कहा : "कलाकार को इसकी चिंता नहीं करनी चाहिए कि समालोचक उसकी कलाकृति के सम्बन्ध में क्या कहता है; पर यह भी सच है कि जब वह लोग उसकी कृति को अच्छा कहते हैं, सराहते हैं, तो उसे अच्छा लगता है।"

कैलाश ने आर्द्र दृष्टि फ़्रांसिस की ओर घुमाई फिर उसे समाचार पत्रों के पृष्ठों पर जमाकर बोला : "तुम ठीक कहते हो, फ़्रांसिस। अपनी न सही पर अपनी कलाकृति की प्रशंसा कौन कलाकार न सुनना चाहेगा।"

शीशे की सलाइयोंवाले परदे से सर निकालकर माँ ने अंदर झाँककर देखा तो तारा पलंग पर औंधी पड़ी सो रही थी। खिड़की का परदा हवा में फड़फड़ा रहा था। माँ दबे पाँव अंदर आई और उसने आहिस्ता से खिड़की बंद कर दी। ऊपर पंखा चल रहा था सो हवा के लिए काफ़ी था। मेज़ पर जीवन की फ़ोटो-फ़्रेम उलटी पड़ी हुई थी। माँ ने उसे उठाकर सीधी करके रखी और फिर एक दृष्टि तारा की ओर डाली। तारा औंधी पड़ी निश्चित सो रही थी। माँ ने तारा को सबेरे सदा इसी तरह सोते देखा है—औंधे। जब तारा नन्हीं बच्ची थी तब से वह इसी तरह सोती रही है। रात को वह पलंग पर चित पड़े या करवट के बल, पर सवेरे तक वह औंधी हो ही जाया करती थी और कभी-कभी उसका एक हाथ पलंग से बाहर निकलकर फ़र्श पर लटका हुआ होता था। माँ खड़ी सोचने लगी। तारा ने आर्थिक समस्या तो हल कर ली है। वह एक सफल कलाकार और बड़ी अभिनेत्री बन चुकी है। तमाम

समाचार पत्रों में उसकी तसवीरें निकली हैं और हर ओर उसका नाम हो रहा है.... परंतु इससे क्या होगा? कला और नाम और धन मात्र से तो नारी का जीवन परिपूर्ण नहीं हो सकता। उसे ब्याह करके घर-गृहस्थी तो बसानी ही होगी। जीवन अब पुलिस का बड़ा साहब बन गया है। दो साल के लिए बेचारे को घर से दूर आसाम जाना पड़ा था। आसाम में नागा लोग उपद्रव कर रहे थे। उसी उपद्रव की रोक-थाम के लिए सरकार ने उसे आसाम भेजा था। पर अब तो वह दिल्ली लौट आया है और मज़े में है। तारा से ब्याह करने के लिए उसने कितनी ही बार लिखा, पर अजीब लड़की है कि कोई निश्चित् उत्तर ही नहीं देती। आख़िर वह एक आदमी है, एक जवान आदमी — यह जीवन। कब तक रुका रहेगा। दिल्ली में लड़कियों की क्या कमी है? कहीं एकाध पर उसकी तबीअत आ गई तो तारा यूँही रह जाएगी और इतना सुयोग्य वर हाथ से निकल जाएगा। पर यह भी बड़ी अल्हड़ और ज़िद्दी है। न हाँ कहती है न ना। और इन दिनों न जाने इसे क्या हो गया है कि जीवन की चिट्ठियाँ भी दो-दो दिन तक खोलकर नहीं पढ़ती, और उसकी फ़ोटो भी पलटकर रख देती है। तारा के यह लक्षण माँ को अच्छे नहीं लगे और वह यकायक आशंकित हो उठी। क्या तारा जीवन को नहीं चाहती? क्या वह जीवन से ब्याह नहीं करेगी? क्या वह अभी ब्याह करना ही नहीं चाहती? जवान लड़की है, कब तक कुआँरी रहेगी? पर ऐसी जल्दी भी क्या है? अभी तो उसे सफलता मिली है। अभी तो उसका नाम हुआ है। सिनेमा का उसे सदा से शौक़ रहा है। सिनेमा में काम करके वह कितनी ख़ुश है। उसकी यह ख़ुशी वह कभी न छीनेगी। दो-चार साल सिनेमा में काम करके लड़की अपनी हसरत निकाल ले तो क्या बुरा है? पर जीवन क्या तब तक — उँह, देखा जाएगा। जो भाग्य में बदा होगा सो होगा। माँ ने देखा तारा कुछ हिली और उसके चेहरे के भाव कुछ बदलने लगे; आँखों की बरौनियाँ हिलीं मानो पपोटों के परदों पर तारा की आँखें कोई सिनेमा देख रही हों। माँ खड़ी तारा के चेहरे को ताकने लगी। तारा ने आँखें खोल दीं। सामने माँ को खड़े देख वह मुस्कुराई।

"क्या देख रही हो, माँ?" तारा ने अँगड़ाई लेकर पूछा।

माँ ने कहा: "तुझे। क्या कोई सपना देख रही थी?"

"माँ, सुना है सबेरे का देखा हुआ सपना सच्चा होता है?"

"हाँ, कहते तो यही हैं। क्या देखा तूने सपने में?"

"मैंने? ....ओह, बड़ा अच्छा सपना था, माँ! ....चाय बनी क्या?"

"पानी उबल रहा है। अभी देती हूँ।"

माँ अंदर चली गई।

तारा थोड़ी देर तक परदे की लड़ियों को देखती रही। लड़ियाँ अभी तक आंदोलित थीं, जैसे उसका मन भी आंदोलित था। तारा उठ बैठी। छोटे-से कमरे में उसकी दृष्टि एक बार चारों ओर घूम कर लौट आई और गोद में पड़े हुए हाथों पर स्थिर

हो गई। वह अपने हाथ का निरीक्षण करने लगी। हाथों पर रोएँ न थे। उँगलियाँ लम्बी और सुंदर थीं, और उँगलियों के छोर पर सुंदर नाखून थे जिनपर क्यूटेक्स की सुंदर लाली थी। कल रात इन्हीं हाथों को कैलाश ताक रहा था, रजनीकान्त की पार्टी में, जब वह आइसक्रीम खा रही थी। वह नज़र उठाकर उसे देख न सकी थी, पर वह जानती थी वह उसके हाथों को ताक रहा था। ऐसा क्यों होता है? जब कोई किसी के किसी अंग को ताकता है तो बिना यह देखे कि ताकनेवाला किस अंग को ताक रहा है, वह अंग स्वयं यह कहने लगता है कि मुझे ताका जा रहा है। क्या मनुष्य की दृष्टि में बिजली की तरह कोई करंट होता है? हर मनुष्य की दृष्टि में होता हो या न हो पर कैलाश की दृष्टि में अवश्य है; दृष्टि में ही नहीं उसके व्यक्तित्व में भी करंट है। वह जब नज़दीक–पास होता है तो तारा का सारा शरीर झंकृत हो उठता है। तारा यही सब सोच रही थी कि उसने देखा कोई मुस्कुरा रहा है। अचानक वह अपने सुखद विचारों की धारा से थपेड़े खाकर मानो किसी चट्टान पर फिंक पड़ी। होश में आकर उसने देखा सामने मेज़ पर फ़ोटोफ़्रेम रखी हुई थी जिसमें जीवन का चेहरा मुस्कुरा रहा था। वह उठी, उठकर मेज़ के पास आई, और फिर उसने फ़्रेम उठाकर मेज़ पर ही औंधी करके रख दी। इसी समय माँ चाय का कप लिए आई और बाहर ज़ोरों का शोर होने लगा जैसे कहीं कोई दुर्घटना हो गई हो। माँ ने लपककर दरवाज़ा खोला तो बालकनी में भगदड़ मची हुई थी और लोग खिड़कियों और जंगलों पर झुके हुए नीचे को घूर रहे थे।

तारा ने कौतूहलपूर्वक पूछा: "क्या हुआ, माँ?"

"मालूम नहीं, बेटा — वह सिंधी है न कोयले की टालवाला? उसकी टाल के सामने भीड़ लगी है। पुलिस भी दीख रही है।"

तारा दौड़कर बालकनी में आई और नीचे को देखने लगी। टाल के सामने पुलिस की जीप खड़ी थी और टाल को सिपाहियों ने घेर रखा था। फिर पुलिस इन्स्पेक्टर के साथ टालवाले खद्दरधारी सिंधी महाशय दुकान से बाहर निकले और जीप की ओर चलने लगे। पीछे-पीछे दो सिपाही भी थे।

माँ ने ऊपर आते हुए एक पड़ोसी से पूछा: "क्या बात है, भैया? यह मनसुखानी को पुलिस क्यों पकड़े लिए जा रही है?"

"बड़ा बदमास था वह — दारू बनाता था। बाहर कोयला भरके दिखाता था कि कोयले की टाल है, पर अंदर दारू बनाने का धंदा करता था। पुलिस को पता लग गया तो छापा मारा पुलिस ने। पकड़कर थाने ले जा रही है पुलिस," पड़ोसी ने उत्तर दिया।

तारा ने मन में कहा: "अच्छा हुआ जो पकड़ा गया। साल-दो साल को बड़े घर की हवा खाएगा तो मिज़ाज दुरुस्त हो जाएँगे। कम्बख़्त टुकर-टुकर घूरा करता था। कैसे पाखंडी होने लगे हैं यह काँग्रेसवाले!"

माँ ने कहा : "चल, बेटा, नहा-धो ले। नौ बजने आए।"

"हाँ," तारा ने कहा। "चलो।"

तारा के पीछे-पीछे अंदर आकर माँ ने दरवाज़ा भेड़कर कुंडी लगा दी।

कोलाबा के उस दरिद्र मोहल्ले में स्थित *मूलजी भाई चाल* के सामने इतनी और इतनी बड़ी-बड़ी मोटरें शायद कभी नहीं जमा हुई थीं जितनी कि आज सुबह ११ बजे हुईं। चाल में रहनेवाले लोग इतनी सारी मोटरें एक साथ चाल के सामने खड़ी देख चकित थे, और चाल की तीसरी मंज़िल पर २४ नम्बर के ब्लॉक में तारा का कमरा इन्हीं मोटरों में बैठकर आए हुए फ़िल्म प्रोड्यूसरों से खचाखच भरा था। तारा ने इतने समीप से इतने सारे निर्माताओं को पहले कभी न देखा था। वास्तव में सिवाय कैलाश सिन्हा तथा मेहता साहब के उसने और किसी निर्माता को नहीं देखा था। और आज फ़िल्म व्यवसाय के सारे बड़े और नामी निर्माता उसके कमरे में घिर पड़े थे। कोई बेंत के मोढ़े पर था, कोई काठ की कुरसी पर, कोई स्टूल पर, और कुछ उसके पलंग पर बैठे थे, कुछ खड़े थे।

जब से *मिट्टी* चित्र प्रदर्शित हुआ है, यानी १२ सितम्बर, १६५८ के बाद से, और विशेषकर जब से विभिन्न पत्रों में *मिट्टी* की समालोचनाएँ निकलीं तब से, कई सिने निर्माताओं ने अपने दूत भेजकर तारा से मिलने की इच्छा प्रकट की थी। कैलाश ने उन सबको आज ११ बजे का समय दिया था। अतएव वह सब ठीक ११ बजे आन उपस्थित हुए थे, और आनकर उन्होंने तारा को घेर लिया था।

तारा उन सबों के बीच, दरवाज़े से टिकी खड़ी, सहमी जा रही थी और शीशे की रंगबिरंगी लड़ियाँ उसके सर के पीछे परस्पर लड़ती हुई खनखना रही थीं। तारा मन में सोच रही थी : 'अजीब आदमी है — यह कैलाश! सब को ११ बजे बुलाकर ख़ुद अनुपस्थित है। अब मैं क्या बात करूँ इनसे? मुझे तो बात करनी नहीं आती....'

और सामने मेज़ पर पलथी मारे बैठा हुआ दुबला-पतला शांतिभाई देसाई बोल रहा था : "मिस तारा चौधरी, में आपके साथ एक साल का कन्ट्रेक्ट साइन करने कू तैयार हूँ।"

इस पर तुरंत ही मेहता बोल पड़ा : "मैंने आपको जो ऑफ़र दिया है वह बुरा नहीं, मिस चौधरी।"

तब बेंत का टूटा हुआ मोढ़ा चरमाया और उसमें फँसा हुआ दारूवाला कहने लगा : "मैं दस हज़ार ज्यादा देने को तैयार हूँ। *फ़्री ऑफ़ इनकम टैक्स*।"

तारा खड़ी-खड़ी सुन रही थी और सुनकर दंग खड़ी थी। उसके पीछे, शीशे की लड़ियोंवाले परदे के पीछे, पलंग पर बैठी हुई माँ भी इन बड़े लोगों की बड़ी बातें सुन-सुनकर दंग हो रही थी।

तारा ने हिम्मत करके मुँह खोला और रुक-रुककर बोली : "आप लोगों की बड़ी मेहरबानी — जो — आप लोग — मेरे घर आए हैं; पर — पर — पर बिज़नेस की यह सारी बातें — अगर — आप लोग — सिन्हा साहब से करें तो अच्छा होगा।"

उत्तर बोस ने दिया जो पलंग पर मेहता की बग़ल में बैठा था। "सिन्हा से क्यों करेगा ? आप तो बोला आप फ़्री है। सिन्हा के साथ आपका कोई कॉन्ट्रैक्ट नोई।"

"सच है, मिस्टर बोस; सिन्हा साहब के साथ मेरा कोई कॉन्ट्रैक्ट नहीं है," तारा ने उत्तेजित हो कहा, "मगर यह मैं कभी नहीं भूल सकती कि मैं आज जो कुछ भी हूँ उन्हीं के कारण हूँ।"

दारूवाला के पीछे दीवार से टिककर खड़े हुए तिवारी ने तुरंत बात काटी: "ऐसा सोचना आपकी भूल है।"

"हाँ," पटवर्धन ने कहा। "आप स्वतंत्र हैं। अपनी बात आपको ख़ुद करनी चाहिए।"

"जी नहीं, मैं अपनी बात ख़ुद नहीं करूँगी। कैलाश सिन्हा ने मुझे मरने से बचाया, मुझे नौकरी दिलाई, मुझे सिनेमा स्टार बनाया—मैं उनके उपकार कभी नहीं भूल सकती।"

शांतिभाई को ताव आ गया। बोला: "अरे आप बी क्या बात बोलती हैं। वो कल का छोकरा क्या किसी कू इस्टार बनाएगा। मेरे इस्टूडियो में अढ़ाई सौ रुपये पर नोकर था। अगर तुम—आप मेरे या और किसी प्रोडयूसर के पास आई होती तो वो बी तुमकू — आपकू इस्टार बना सकता था।"

तारा मुस्कुराई। उसकी मुस्कान में व्यंग्य था। मेहता जान गया अब वह क्या कहनेवाली है। "सेठ जी," वह बोली, "मेहता साहब भी प्रोडयूसर हैं। इन्होंने तो मुझे स्क्रीन टेस्ट के दिन लगभग रिजेक्ट ही कर दिया था। इनकी कम्पनी के दूसरे डिरेक्टरों को भी मैं पसंद नहीं आई थी।"

मेहता तह किए हुए रूमाल से गाल पर का पसीना पोंछ रहा था, मुस्कुराकर बोला: "भई ग़लती सबसे होती है। अब मैं आपके घर आया हूँ—माफ़ी माँगने। बग़ैर आपको साइन किए मैं वापस नहीं जाऊँगा। बोलिए, अब आपको क्या कहना है?"

"मैंने कह दिया, आप लोग सिन्हा साहब से ही बात करें। वह मेरे लिए जो कुछ भी तय करेंगे मुझे मँज़ूर होगा।"

शांतिभाई ने अपना बायाँ हाथ हवा में हिलाकर कहा: "तो अब हमें सिन्हा के घर जाना पड़ेगा"

"नहीं इसकी ज़रूरत नहीं पड़ेगी," कैलाश की आवाज़ आई।

लोगों ने मुड़कर देखा कैलाश दरवाज़े पर खड़ा था और उसके पीछे रहमान था। शायद यह दोनों बालकनी में खड़े हुए बातें देर से सुन रहे थे। सब कुछ सुन लिया

होगा इन्होंने । शांतिभाई मेज़ पर से उचककर खड़ा हो गया। सभी उठ खड़े हुए और कैलाश के साथ बड़े तपाक से मिले ।

"कानग्रेच्युलेसनं, सिन्हा," शांतिभाई देसाई ने कहा ।

"क्या ग्रेट पिक्चर बनाया है आपने," दारूवाला बोला ।

अन्य लोग भी चुप न रहे । उन्होंने भी अपनी बधाइयों में 'वंडरफ़ुल', 'ग्रेट', 'बेहतरीन' जैसे विशेषणों का उपयोग किया । उन्हें अपनी बात बनानी थी, सौदा करना था; और विशेषणों के उपयोग में पैसा ख़र्च नहीं होता था ।

तारा ने मन में कहा: "कितने धूर्त्त और पाखंडी हैं यह सब के सब । और कितने बेशर्म हैं । आत्माभिमान तो इनके पास रत्ती भर नहीं । सारे के सारे एक दूसरे से जलते हैं, एक दूसरे का बुरा चाहते हैं, पर जब आपस में मिलते हैं तो किस तपाक से मिलते हैं । लुच्चे कहीं के ।"

कैलाश के हाथ को अपने दोनों हाथों के बीच मसलता हुआ शांतिभाई कह रहा था: "मे तो हमेसा जानता था कि एक दिन तुम नाम पेदा करोगे ।"

रहमान को अब अपनी ज़बान पर क़ाबू न रहा । सब्र की इन्तहा हो चुकी थी । "जी हाँ," वह बोला, "इस बात का सुबूत तो आपने उस दिन ही दिया था, सेठ, जिस दिन अपनी हीरोइन सरला देवी को मस्का लगाते हुए आपने स्टूडिओ से इनका पाटिया गुल किया था ।"

शांतिभाई हक्का-बक्का देखने लगा । मन में तो आया कि गुजराती में गंदीगंदी गाली बक दे, पर बकने-झकने से बात बिगड़ जाती, सो उसने वह किया जो अपमान होने पर बहुत-से प्रतिष्ठित व्यवसायिक व्यक्ति करते हैं—उल्लू की तरह हें-हें-हें करके हँसने लगा । कैलाश ने देखा उसके दाँत नक़ली ही नहीं सस्ते भी थे । किसी छोटे डेंटिस्ट से सेट बनवाकर पैसा बचाया गया था । लाखों रुपये लगाकर पिक्चर बनाता है यह शांतिभाई पर अपने मुँह के लिए अच्छे दाँत नहीं ख़रीद सकता । कंजूसी की हद थी। भगवान् भी पैसा कैसे-कैसे उल्लू के पट्ठों को देता है । घृणा से कैलाश का मन भर उठा, पर अपने मन के भाव मन ही मन में दबाकर वह बोला:

"ख़ैर; बहुत ख़ुशी हुई आप लोगों को आज यहाँ इस तरह एक साथ देखकर । कहिए, मैं क्या सेवा कर सकता हूं आप लोगों की?"

इस पर सारे के सारे ताकझाँक करने लगे । क्या बोलें उनकी समझमें यकायक न आया ।

कैलाश ने ही फिर बात छेड़ी । "तो आप लोग मिस तारा चौधरी को अपने पिक्चर में लेने के लिए बात करने आए हैं?" उसने पूछा ।

"हाँ, हाँ," शांतिभाई ने कहा ।

"मैं पहले आया था," दारूवाला बोला ।

"हम पैशा बेशी देगा," बोस बोला ।

"मैं पूरा एक साल का कॉन्ट्रैक्ट करने को तैयार हूँ," मेहता ने कहा ।" मिस चौधरी पर मेरा भी हक़ है ।"

कैलाश तमक उठा । मेहता का अंतिम वाक्य उसे जहर में बुझाए हुए भाले की तरह लगा । "तारा पर सिर्फ़ मेरा हक़ है," उसने तीव्र स्वर में कहा । "तारा मेरी आर्टिस्ट है । समझे? इसे बहकाने, लालच दिखाने या पट्टी पढ़ाने की आप लोग कोशिश न करें ।"

सब लोग स्तब्ध रह गए । "नहीं—नहीं—, हम ऐसा क्यों करेंगे, "हमने तो कुछ नहीं कहा," के अस्फुट वाक्य मात्र ही उनके मुँह से निकल पाए ।

कैलाश ने फिर कहा, "तारा मेरी आर्टिस्ट है । चाहता तो मैं यही था कि यह सिर्फ़ मेरे ही पिक्चर में काम करे; लेकिन मेरे पास पैसा नहीं; इसलिए यह मेरे पिक्चर में भी काम करेगी और बाहर आप लोगों में से किसी एक का सिर्फ़ एक पिक्चर और लेगी । ठीक है, तारा ।"

तारा ने कैलाश की ओर देखा । वह उसी की ओर देख रहा था, आँखों में आँखें डालकर देख रहा था ।" तुम जैसा कहो," वह बोली ।

कैलाश के प्रति तारा की आसक्ति व निष्ठा देखकर मेहता को कैलाश से डाह होने लगा । मन में वह सोच रहा था इतने साल हो गए उसे फ़िल्म लाइन में धंधा करते पर ऐसी लड़की उसे आज तक न मिली जो इतनी ख़ूबसूरत भी हो और इतनी जानदेवा भी । अगर यह सिन्हा का बच्चा उसे काटकर उसकी बोटी-बोटी भी कर देगा तो यह उफ़ तक न करेगी । सुना था स्त्री जब किसी से प्रेम करती है तो अपना सबकुछ यानी तन, मन और धन प्रेमी को समर्पित कर देती है और फिर उसे अपनी सुध नहीं रहती, प्रेमी में पूर्णतया खो जाती है । बस ऐसा सुना मात्र ही था, देखा कभी न था, पर आज देख लिया । आत्मसमर्पण की पराकाष्ठा थी । और एक सलमा भी थी जो मेहता को अगर कभी तन देती भी तो धन के बदले । मेहता को उसे बिना दाम के कभी कुछ न नसीब हुआ । मेहता ने कैलाश को सर से पाँव तक अच्छी तरह देखा । वह जानना चाहता था कि उसमें ऐसी क्या विशेषता थी जो तारा को मोहित और आकर्षित किए हुए थी । उसे ऐसी कोई विशेषता दिखाई न दी । अलबत्ता वह जवान ज़रूर था, आवाज़ में जोर था, और आँखों में चमक थी, उस तरह की चमक जैसी सलमा की आँखों में कभी कभी पैदा हो जाती थी जब उसकी आँखों में काजल लगा हुआ होता था । पर क्या यह जवानी, यह आवाज़, और यह आँखें तारा को लुभाने के लिए काफ़ी थीं? मेहताके पास भी तो आँखें थीं, आवाज़ थी, वह भी तो कभी जवान था, काफ़ी घूमने-फ़िरनेवाला था; पर उसे कभी कोई ऐसी न मिली जिसने उससे कहा हो: " तुम जैसा कहो । " मेहता दिल थामे बैठा कैलाश को ताकने लगा । कैलाश बोल रहा था:

"मेरे पास इन्हें नाम तो मिल ही रहा है । मगर मैं जानता हूँ सिर्फ़ नाम ही का

नहीं, पैसा भी चाहिए—सो आप लोगों से मिलेगा। आप लोग अपने-अपने ऑफ़र्स दें।" उसने मेज़ पर रखे हुए राइटिंग पैड से एक शीट फाड़कर उसके टुकड़े किए और उन्हें थमाता हुआ बोला: "लीजिए, इस पर लिखिए।"

सबने एक-एक परची ले ली और अपनी-अपनी रक़म तथा नाम लिखकर परचियाँ वापस कर दीं।

कैलाश ने परचियों का निरीक्षण किया। शांतिभाईने ८०,०००/ रु. की संख्या लिखी थी, और मेहता ने ७५,०००/ रु. की। कैलाश बोला: "सब से बड़ी रक़म शांति-भाई देसाई की है। इसके बाद मेहता साहब का ऑफ़र है। मेहता साहब ने भी मेरे साथ व्यवहार तो अच्छा नहीं किया पर फिर भी मेरा पिक्चर, जिस तरह भी हो, इन्हीं की सहायता से बनकर तैयार हुआ है। इन सब बातों को देखते हुए मुझे मेहता साहब का ऑफ़र मंजूर है।" औरों के मुँह लटक पड़े। मेहता खुश हो गया। "मेहता साहब, मिस तारा चौधरी आपके पिक्चर में काम करेंगी," कैलाश ने घोषित किया और परचियाँ फ़ाड़कर खिड़की के बाहर फेंक दीं।

"*थैंक्स ए लॉट,*" मेहता ने कृतज्ञतापूर्वक कहा। "तो मैं ऐग्रीमेंट बनाकर भेज दूँ?"

"ऐग्रीमेंट मैं बनाऊँगा, मेहता साहब। इस बार सारी शर्तें तारा की होंगी, आपकी नहीं। मंजूर?"

"अच्छा, अच्छा, मुझे मंजूर है," मेहता ने उठते हुए कहा।

जब सब लोग चले गए तो कैलाश ने रहमान की ओर देखकर पूछा: "ठीक हुआ न?"

रहमान ने खुश होकर कहा: "एकदम ठीक हुआ, बॉस। एकदम क्या बल्कि दोदम ठीक हुआ। बस अब एक कप गर्म-गर्म चाय पिला दीजिए, तारा देवी; मिठाई फिर खिलाइएगा।"

तारा खड़ी मुस्कुरा रही थी। "हाँ, हाँ, अभी लाई," कहकर वह अंदर जाने को हुई कि चाय लिए माँ बाहर निकल आई।

कैलाश और रहमान ने नमस्ते की।

"नमस्ते। अच्छे हो?"

"जी," कैलाश ने कहा।

रहमान ने कहा: "सब ठीक हो गया, माँजी। हमारा पिक्चर भी एकदम *बॉक्स ऑफ़िस हिट* हो गया और अभी-अभी तारा देवी को एक तगड़ा कॉन्ट्रैक्ट भी मिल गया। बस अब आपके घर रुपयों की बारिश होगी।"

"भली याद आई, तारा," कैलाश बोल पड़ा। "मैं चाहता हूँ अब तुम यह चाल छोड़कर किसी अच्छे मकान या फ़्लैट में चलकर रहो।"

"जी हाँ, तारा देवी," रहमान ने कैलाश का समर्थन करते हुए कहा, "यह शो बिज़नेस है। अब आप बड़ी आर्टिस्ट बन गई हैं, बड़ी सिनेमा स्टार बान गई हैं। अब

आपको अपनी पोज़ीशन के हिसाब से आलीशान फ़्लैट में रहना चाहिए । और अब तो आपके पास एक आलीशान मोटर भी चाहिए । शो चाहिए, माँजी, शो—यह शो बिज़नेस है ।"

रहमान की बातों पर तारा मुस्कुराई और अंदर चली गई ।

"कोई मकान है नज़र में?" माँ ने पूछा ।

रहमान ने कहा: "अजी मकान भी नज़र में है और नज़र भी मकान पर है । आपने मुझे समझ क्या रखा है? दो दिन के अंदर सब तय हो जाएगा । अब आप खुश तो हैं कि आपकी बेटी इतनी बड़ी स्टार बन गई?"

कराहकर माँ मोढ़े पर बैठ गई । "भइया, यह सब तो ठीक है पर स्टार बनने से क्या होगा । सिनेमा की चमक-दमक से स्त्री का जीवन तो सार्थक नहीं होता । घर बसाने की बात भी तो उसे सोचनी चाहिए ।" हाथ बढ़ाकर उसने मेज़ पर औंधी पड़ी हुई फ़्रेम उठाई और सीधी करके रख दी । जीवन का चेहरा फ़ोटोफ़्रेम में मुस्कुरा रहा था ।

चाय पीते-पीते रहमान ने कैलाश की ओर देखा । कैलाश की निगाह जीवन की तसवीर पर थी ।

माँ ने फिर कहना आरंभ किया : "यह लड़का है—जीवन । दिल्ली में रहता है । हज़ार रुपये महीना कमा लेता है। मैं तो चाहती थी तारा इससे ब्याह करके अपना घर बसा लेती तो मुझे संतोष हो जाता । मेरी तबीअत का हाल तो तुम लोगों से छिपा नहीं है। मुझे कब क्या हो जाय इसका कोई भरोसा नहीं । इसीलिए तारा की चिंता लगी रहती है ।"

रहमान ने जीवन की तसवीर की ओर इशारा करके पूछा: "तारा देवी इन्हें चाहती हैं क्या?"

"आज से नहीं, बचपन से चाहते हैं दोनों एक-दूसरे को । तारा को हर हफ़्ते चिट्ठी आती है इसकी ।"

कैलाश को माँ की बात अच्छी नहीं लगी । चाय की आधी प्याली खिड़की में रखकर वह सोच में पड़ गया, सोचते-सोचते बालकनी में निकल आया । तो तारा जीवन को चाहती है ! बचपन से चाहती है ! दोनों एक दूसरे को चाहते हैं ! तारा इन दिनों कैलाश के इतने समीप रही पर उसे उसके मन की भावनाओं का पता न चला । सच है, नारी-हृदय मनुष्य के लिए अद्भुत समस्या है—सर्वथा अज्ञेय । जल्दी ही दोनों का ब्याह होगा । माँ जल्दी ही कराके रहेगी । कैलाश की इतनी मेहनत, जो उसने तारा को अल्हड़ छोकरी से सफल अभिनेत्री बनाने में की है, क्या वह सब अकारथ जाएगी? कैलाश का मन बैठने लगा । वह अन्यमनस्क होकर चलने लगा, उस ओर जिधर को जली और टूटी हुई छत थी, ऐसे चलने लगा जैसे नींद में कोई अंधा चलता हो ।

अंदर से तारा दो तश्तरियों में लड्डू लिए बाहर अपने कमरे में आई तो लड्डू देख रहमान के मुँह में पानी भर आया।

"मिठाई तो नहीं है पर लड्डू से मुँह मीठा हो जाएगा," तारा ने एक तश्तरी रहमान को थमाते हुए कहा।

"लाइए, लाइए, अहा! बेसन के लड्डू!" रहमान बोला।

"कैलाश कहाँ हैं?"

"यहीं तो था।"

तारा तश्तरी लिए बालकनी में आई। वहाँ वह न था। नुक्कड़ तक जाकर देखा तो वह दिखाई दे गया। छत की ओर वह चला जा रहा था। वह भी उधर ही को चल पड़ी। टूटी हुई छत के किनारे, जंगले की जली हुई दीवार पर हाथ धरे, खड़ा हुआ कैलाश दूर वहाँ देख रहा था जहाँ पर समुद्र में कुछ जहाज़ लंगर डाले खड़े थे और कुछ आ-जा रहे थे। तारा ने पास जाकर तश्तरी कैलाश के मुँह के सामने उठाई।

"यह क्या?" कैलाश ने तश्तरी देखकर पूछा।

"लड्डू। मैंने बनाए हैं। लो, खाओ—मेरी तरफ़ से भी तुम्हें बधाई है, कैलाश।"

"किस लिए?"

"तुम्हारी सफलता पर। पिक्चर हिट हो गया, तुम डिरेक्टर बन गए, और मुझे स्टार बनाने का तुमने जो बीड़ा उठाया था पूरा कर दिया।"

"अगर तुमने मेरा साथ न दिया होता तो मुझे यह सफलता कभी न मिलती," कैलाश ने समुद्र के किनारे की दीवार पर नज़र गड़ाए हुए कहा। दीवार पर समुद्र की लहरें थपेड़े मार रही थीं और वहीं पर खड़ी हुई कश्ती से कुछ बोरे निकालकर, ठेले पर रख, उन्हें पड़ोस के गोदाम में ले जाया जा रहा था।

तारा ने कैलाश के चेहरे से दृष्टि वहाँ फिराई जहाँ वह देख रहा था। "याद है, कैलाश ?" वह बोली, "यहीं — यहीं — उस रात —"

कैलाश ने उसका वाक्य पूरा किया: "हम-तुम पहली बार मिले थे।"

"हाँ — और तुमने मुझे डूबने से बचाया था।"

कैलाश ने कहा: "वह रात मुझे कभी न भूलेगी. . . . ." फिर वह मौन हो गया और एकटक दूर सामने देखने लगा, समुद्र के विस्तार को देखने लगा। वह रेखा जहाँ पर समुद्र और आकाश परस्पर मिलते थे, लुप्त हो चुकी थी, और ऐसा प्रतीत होता था मानो आकाश सूर्य की तपन से पिघलकर समुद्र में ढल पड़ा है। यकायक इधर-उधर होते हुए जहाज़ की खिड़कियों के शीशे धूप में चमक उठे और कैलाश व तारा की आँखों को चौंधियाने लगे।

तारा ने आँखें मिचमिचाते हुए पूछा: "क्या सोच रहे हो?"

कैलाश ने मुँह तारा की ओर मोड़ा। शीशों की किरणें तारा के आधे चेहरे को प्रज्वलित किए हुए थीं, और तारा हाथ में लड्डू की तश्तरी लिए उसके सामने खड़ी

"पर साथ ही साथ मैं एक स्त्री भी हूँ, कैलाश," तारा ने कहा।

"मानता हूँ; मगर पहले कलाकार हो, बाद में स्त्री। तुम्हें स्त्री को कलाकार पर बलि चढ़ाना होगा।"

"तुम कहना क्या चाहते हो?"

"यही कि अगर किसी से शादी-ब्याह करके घर बसाने का विचार तुम्हारे मन में उठ रहा हो तो ऐसा न होने दो। मैं ऐसा न होने दूँगा। इतनी मेहनत और इतनी कोशिशों से मैं जो कला-मंदिर बना रहा हूँ उसे अगर तुम एक ठोकर में तोड़ डालना चाहो तो मैं ऐसा नहीं करने दूँगा।" कैलाश ने तारा के दोनों कंधों को पकड़कर हिलाते हुए फिर कहा: "मैं तुम्हें नहीं करने दूँगा, तारा; ऐसा नहीं करने दूँगा।"

तारा के अंदर जो नारी थी वह विद्रोह कर उठी। "कैलाश—" उसने अपने को छुड़ाते हुए कहा—"कैलाश!" उसकी वाणी में असहनीय पीड़ा थी। वह काँप रही थी। उसके हाथ से लड्डू की तश्तरी फ़र्श पर गिरकर चकनाचूर हो गई और दोनों लड्डू टूटकर बिखर गए।

कैलाश ने देखा तारा मुँह लटकाए वहाँ से चली जा रही थी, बालकनी की ओर। उसने सोचा इसी तरह एक दिन वह सदा के लिए उसे छोड़कर चली जाएगी, दिल्ली—जीवन से ब्याह करने। कैलाश के मन में टीस उठने लगी। उसे लगा उसका लगा-लगाया बाग़ उजड़ा जा रहा था। वह उदास हो गया और धूप में खड़ा-खड़ा बालकनी के दरवाज़े की ओर देखने लगा। तारा दरवाज़े के बाहर जाकर ओझल हो गई।

१२

सेठ शांतिभाई देसाई को उस दिन तारा के घर मेहता ने गहरी मात दी थी। तारा को मेहता ने हथिया लिया, और सभी निर्माता अपना-सा मुँह लिए लौट आए। परंतु शांतिभाई पुराना खिलाड़ी था। सहज ही में हार माननेवालों में से वह कदापि न था। अगले ही हफ़्ते उसने कैलाश को बुला भेजा। कैलाश ने जब उसके स्टूडिओ में पाँव रखने से इनकार कर दिया तब शांतिभाई स्वयं कैलाश के घर *सागर तरंग* उससे मिलने गया और जाते ही अपना प्रस्ताव उसके सामने रख दिया।

"मे तुमकू लेने आया हूँ, सिन्हा। मे एक पिक्चर का डिरेक्सन तुम कू देना चाहता हूँ। पुरानी सब बाते दिल मे से भुलाके बस अब हाँ कर देव।"

"मगर तारा आपको अब नहीं मिलेगी, सेठ," कैलाश ने बात साफ़ करते हुए कहा।

"तारा मेरेकू चहिए बी नई। अरे मेरेकू तो तारा का बनाने वाला चहिए। वैसी दस तारा बनाएगा तुम। क्यों ठीक कहेता हूँ ना?"

"आप मुझे क्या देंगे?"

"तुम बोलो।"

"डिरेक्टर पुरी को जो मिलता है उससे एक हज़ार रुपये ज़्यादा लूँगा।"

"मेरेकू मंजूर है। लाओ, हाथ मिलाओ। कब सुरू करना है पिक्चर?"

"आप जब कहें।"

"कहानी तयार है?"

"अभी सुन लीजिए।"

"तुमकू पसंत है?"

"बेहद।"

"तो ठीक है। मे सुनके क्या करूँगा। बनाना तो तुमकू है। कबी सुना देना। अगले बुधवार कू दिन अच्छा है। मुहूरत कर डालो बुधवार कू।"

"ठीक है।"

"और हिरविन के लिए किसकू सोचा तुमने? हिरविन अच्छी चहिए।"

"पूरा कास्ट सोच रखा है, सेठ। कल सबको आपके स्टूडिओ में बुलाकर उनके

ऐग्रीमेंट करवा दूँगा। मोहन हीरो रहेगा और सलमा हीरोइन।"

शांतिभाई चौंक पड़ा। "सलमा?" उसने पूछा।

"जी हाँ, सेठ। सलमा हीरोइन रहेगी। रोल उसीके लिए लिखा गया है।"

"इस मामले मे तुमकू मेरे से ज्यादा समझ है। मुझे मंजूर है।"

शांतिभाई चला गया और दूसरे दिन कैलाश ने अपना और अपनी सारी नई टीम का *ग्रेट इंडिआ पिक्चर्स* में ऐग्रीमेंट करा लिया। और बुधवार को उसी *ग्रेट इंडिआ पिक्चर्स* के स्टूडिओ में, जहाँ से पाँच महीने पहले कैलाश बेआबरू होकर निकला था, उसके नए चित्र '*नई दुनिया*' का बड़ी शानके साथ मुहूर्त हो गया। सलमा को दिया हुआ वचन कैलाश ने पूरा कर दिया।

उसी बुधवार को कैलाश ने एक और मुहूर्त किया—अपने *जनता चित्र* के नए चित्र *ज्वालामुखी* का। यह मुहूर्त उसने मेहता के *बॉम्बे स्टूडिओज़* में सेट लगाकर तारा और रजनी पर किया। एक ही दिन में उसके दो चित्र शुरू हुए। समाचार पत्रों के संवाददाताओं पर इसका बड़ा प्रभाव पड़ा और नामी निर्देशक जलकर राख हो गए।

मेहता ने तारा को ले तो लिया था पर अभी उसे उपयुक्त हीरो न मिला था। डिरेक्टर अली हुसेन को उसने तारा के चित्र *खिलौना* के लिए नियुक्त कर दिया था, परंतु *खिलौना* के मुहूर्त में देर थी। चित्र निर्माण के कार्य का मेहता का अपना ढंग था। उसमें हस्तक्षेप करने का कैलाश को कोई अधिकार न था सो उसने कोई हस्तक्षेप नहीं किया। अपने दोनों मुहूर्त करके वह अपने घर लौट आया, अपने नए घर, '*सागर तरंग*।'

रहमान ने दादर में, शिवाजी पार्क में, समुद्र के किनारे एक अच्छा फ़्लैट खोज निकाला था। पगड़ी देकर सब तय कर दिया था। कैलाश अब वहीं, 'सागर तरंग' की दूसरी मंज़िलवाले फ़्लैट में रहने लगा था।

रहमान ने तारा के लिए भी वरली पर *मूनलाइट* में फ़्लैट का इंतज़ाम कर दिया था। तारा अपनी माँ के साथ *मूनलाइट* में रहने चली आई थी।

रहमान का कथन था : "यह शो बिज़नेस है। यहाँ शो यानी दिखावा चाहिए।"

कैलाश को दिखावा पसंद न था परंतु दिखावे के महत्त्व को वह जानता था।

तारा को भी दिखावा पसन्द न था परंतु नया फ़्लैट पाकर वह खुश थी। *मूलजी-भाई की चाल* में उसका दम घुटता था।

मुहूर्त की रात को सलमा ने अपने घर बड़ी शानदार पार्टी दी। बरसों की तमन्ना पूरी हुई थी। अब वह सेकंड हीरोइन न रही थी बल्कि हीरोइन बनी हुई थी। उसकी खुशी की सीमा न थी। पार्टी में उसके और कैलाश के सभी मित्र सम्मिलित हुए।

मेहता भी आया। तारा भी आई। मुक्ता और पुखराज भी आई थीं। सलमा ने खूबसारा खाना बनाया और लोगों की खूब खातिर की। खूब शोर रहा।।

मुक्ता बैनर्जी और पुखराज तो कैलाश के आगे–पीछे होने लगीं, सलमा से हँस-हँसकर बातें करतीं और तारा को *मिट्टी* में उसके काम के लिए बार-बार बधाइयाँ देतीं। परंतु सलमा जानती थी कि अगर मुक्ता और पुखराज किसी को मरा देखना चाहती थीं तो तारा को और उसे खुद को। तारा को इसलिए कि वह इतनी जल्दी लोकप्रियता के शिखर पर जा बैठी थी, और सलमा को इसलिए कि वह भी शिखर पर चढ़ने जा रही थी, वह शिखर जहाँ पर पहुँचना मुक्ता और पुखराज के लिए दुष्कर था। सलमा ने सोचा परस्पर कितना संघर्ष, कितनी प्रतियोगिता, कितनी स्पर्द्धा है इस फ़िल्म जगत में। कल इसी कैलाश के पिक्चर में काम करने से मुक्ता बैनर्जी और पुखराज दोनों ने इनकार कर दिया था और आज उसे मस्का लगा रही हैं।

तारा ने सलमा के पास आकर कहा : "तुम व्हिस्की पिला रही हो लोगों को, कहीं पुलिस आ गई तो?"

"पुलिस कैसे आएगी जब तक उसे पता ही न चले?" सलमा ने पूछा।

"अगर किसी ने रिपोर्ट कर दी तो?"

सलमा ने मुक्ता और पुखराज की ओर इशारा करके कहा : "पुलिस को रिपोर्ट करनेवाली यह दोनों तो यहाँ हैं, अब और कौन रिपोर्ट करेगा?"

इस पर सब लोग हँस पड़े और मुक्ता और पुखराज बड़ी कटीं।

"जवाब दो, मुक्ता। जवाब दो," रजनी ने कहा।

"इसके मुँह कौन लगे," मुक्ता ने मुस्कुराकर कहा। "इसके मुँह में ज़बान थोड़े ही है, क़ैंची है।"

सलमा हँसकर उठ खड़ी हुई और रजनी के साथ नाचने लगी। रेडिओग्राम पर क्विक स्टेप रेकार्ड चल रहा था।

कैलाश भी उठा और लाल साड़ी पहनी हुई तारा की ओर बढ़ने लगा, पर मुक्ता ने उसके कंधे को थपथपाकर कहा : "आप नहीं नाचेंगे, मि. सिन्हा?"

कैलाश ने कहा : "आइए, नाचिएगा?" और मुक्ता को लेकर वह नाचने लगा।

"मैं अपने आप को कभी माफ़ नहीं कर सकती," मुक्ता ने कहा।

"क्यों, क्या हुआ?" कैलाश ने साश्चर्य पूछा।

"*मिट्टी* बनाने से पहले आप मेरे घर आए थे।"

"मुझे याद है।"

"आप चाहते थे उसकी हीरोइन का रोल मैं करूँ।"

कैलाश मुस्कुराया। "मुझे याद है। आपने ना कर दी थी।"

"यह मैंने सबसे बड़ी भूल की। इस भूल के लिए मैं अपने को कभी माफ़ नहीं कर सकती।"

कैलाश ज़ोर से हँस पड़ा। फ़्रांसिस के साथ नाचती हुई तारा ने कैलाश की हँसी सुनी तो फ़्रांसिस के कंधे के ऊपर से उसने उस ओर देखा। मुक्ता बैनर्जी के साथ नाचता हुआ कैलाश हँस रहा था। कैलाश को हँसता देख तारा भी हँसने लगी।

"कैलाश हँसता बड़ा अच्छा है," फ़्रांसिस ने कहा। "है न?"

"हाँ," तारा ने सहमत होते हुए कहा।

सलमा ने रजनी के कान में कहा : "देखा मुक्ता को? चुड़ैल ने जाल बिछाना शुरू कर दिया। कैसे पटा रही है कैलाश को! देखो, कैसे लिपटी जा रही है!"

एक कोने में बैठे हुए मेहता ने शांतिभाई से कहा : "अरे हम प्रोड्यूसर तो ग़ुलाम हैं इन आर्टिस्टों के। पिक्चर में पैसा हम लगाएँ और मौज कम्बख़्त यह उड़ाएँ।"

"आप ठीक बोलते हैं, मेहता साहेब। पिक्चर में घाटा हुआ तो हम प्रोड्यूसरों का। इनकू तो इनका रुपया मिल ही जाता है। हम प्रोड्यूसरो से तो यह आर्टिस्ट और डिरेक्टर लोग लाख दर्जा भले। क्या लेती है यह मुक्ता आजकल, आपकू पता?"

परंतु मेहता ने सुना नहीं। उसकी नज़र सलमा पर थी जो रजनी के साथ फुदक रही थी। मेहता ने मन में कहा : 'आज सलमा मुझे न मिलेगी। यह पार्टी दो बजे से पहले ख़त्म होनेवाली नहीं। मुक्ता बैनर्जी और पुखराज दोनों सिन्हा को घेरे हुए हैं, फिर तारा भी पीछे हटनेवाली नहीं। नींद क्यों बेकार में खोई जाय। जल्दी से खाकर घर चला जाय।' प्रत्यक्ष उसने पूछा : "खाने में कितनी देर है, सलमा?"

सलमा नाचते-नाचते हँस पड़ी, बोली : "ऐ मेहता साहब, आप प्रोड्यूसर होंगे अपने स्टूडिओ में; यहाँ रोब न दिखाइए। देखते नहीं दूसरे कमरे में खाना लगा हुआ है। जिन्हें भूख लगे खा लें। जिनका जी चाहे बाद में खाएँ। कोई बंधन नहीं है यहाँ। यह मेरा घर है। समझे?"

सब लोग हँसने लगे।

"पूरी पटाखा है, पटाखा," मोहन ने पुखराज से कहा।

"मैंने सुना है, मोहन," पुखराज बोली, "कि कैलाश सिन्हा और तारा चौधरी की आपस में बड़ी दोस्ती है। दोनों ने शिवाजी पार्क में एक फ़्लैट ले रखा है, और साथ ही रहते हैं।"

"तुमसे किसने कहा?"

"कोई कह रहा था उस दिन स्टूडिओ में। क्या यह सच है?"

मोहन ने कहा : "बिलकुल झूठ है। तारा अपनी माँ के साथ वरली पर *मूनलाइट* में रहती है और कैलाश शिवाजी पार्क में *सागर तरंग* में अकेला रहता है।"

मेहता ने शांतिभाई से कहा : "चलेंगे, शांतिभाई? हम लोग खा लें।

शांतिभाई उठ गया और मेहता के साथ डाइनिंगरूम में चला गया। कुछ और लोग भी आ गए। दो मेज़ पर दो तरह के खाने सजे हुए थे — शाकाहारी तथा माँसाहारी। शांतिभाई ने पूरी और बैंगन का साग अपनी प्लेट में लिया और अचार

की ओर बढ़ने लगा। मेहता अपनी प्लेट में मुर्ग़ी की टाँग खींच रहा था।

इधर नाच ज़ोरों पर था। सबको थोड़ी-बहुत चढ़ी हुई थी। बड़े इन्तज़ार के बाद रहमान को सलमा मिली थी।

"तुम सीख क्यों नहीं लेते बराबर नाचना!" सलमा ने कहा।

"क्यों, बुरा नाचता हूँ?" रहमान ने पूछा।

"तुम इसे नाच कहते हो? यह रम्बा है, मेरे भाई, रम्बा! तुम स्टेप्स साम्ब के चल रहे हो!" सलमा खिलखिलाकर हँस पड़ी।

तारा के साथ नाचते हुए कैलाश ने पूछा: "फ़रनिश कर लिया नया मकान?"

"हाँ, किया तो है। मगर अभी परदे नहीं लगाए हैं। समझ में नहीं आता कौन-से रंग के लगाऊँ। तुमने कर लिया फ़रनिश?"

"हाँ। और परदे भी लग गए। कल मैं फ़्रांसिस को भेज दूँगा तुम्हारे यहाँ। वह सजा देगा अच्छी तरह। उसीने मेरा फ़्लैट भी सजाया है।"

तारा ने कहा: "अच्छा।" फिर बोली: "तुम अकेले रहते हो?" बोलकर तारा ने तुरंत ही सोचा उसने यह प्रश्न नहीं करना चाहिए था। वह क्या सोचेगा? पर वाक्य तो मुँह से निकल चुका था।

"हाँ, अकेला ही हूँ," कैलाश ने कहा। "इन दोनों से बहुत कहा कि वह भी आजाएँ उसी फ़्लैट में मेरे साथ, इतना बड़ा फ़्लैट है; पर वह दोनों नहीं मानते। उन्हें *सी* व्यू ही पसंद है।"

तारा चुप थी। चुप कैलाश के साथ नाच रही थी। रह-रहकर कैलाश की ठोढ़ी तारा के माथे पर लग जाया करती थी और तारा की छातियों की नोकें कैलाश के सीने में चुभी जा रही थीं। तारा को लगा वह कोमल एक बेल है जो एक मज़बूत पेड़ के सहारे पनप रही है। अगर यह पेड़ उससे अलग हो गया तो वह मुरझा जाएगी, मर जाएगी।

सहसा कैलाश ने पूछा: "तुमने नाच कब सीख लिया?"

"कभी नहीं सीखा," तारा ने उत्तर दिया। "मुझे नाचना नहीं आता।"

"तुम बहुत अच्छा नाचती हो। तुमने नाचना सीखा है। झूठ मत बोलो।"

"लोगों को नाचते देखा है उसीसे कुछ सीख गई। आज से पहले मैंने कभी नहीं नाचा। फ़ॉक्स ट्रॉट, क्विक स्टेप और रम्वा के सिवा मुझे और कुछ नहीं समझ आता।"

"वॉल्ट्ज़ नहीं आता?"

"नहीं।"

"मैं सिखाउँगा। सलमा, वॉल्ट्ज़ का रेकार्ड तो लगाना।"

सलमा ने रेकार्ड बदल दिया, और व्हिस्की का एक नया ग्लास भरकर कैलाश को पकड़ा दिया। कैलाश ने दो घूँट लेकर ग्लास शो-केस पर रख दिया और तारा का हाथ पकड़कर बोला: "आओ, तुम्हें वॉल्ट्ज़ सिखाऊँ।"

उसके बाद कई रेकार्ड वॉल्ट्ज़ के ही लगाए गए। जब तक कैलाश ने दो ग्लास ख़त्म किए तारा को वॉल्ट्ज़ नाचना आ गया और वह कैलाश के साथ बड़ी निपुणता से नाचने लगी। कैलाश को शायद अधिक चढ़ गई थी इसीलिए औरों को जगह न देकर वह सारे कमरे में व्याप्त था। लाल साड़ीवाली को लेकर वह सारे कमरे में नाच रहा था। चकरियाँ भरते हुए तारा को लगा कि वह कैलाश के साथ उड़नखटोले में बैठकर हवाओं में सैर कर रही है। अगर कहीं कैलाश का हाथ छूट गया तो वह तुरंत ही धरती पर आ गिरेगी। तारा को शराब से नफ़रत थी। उसके चाचा शराब पी-पीकर ही मर गए। मरने से पहले वह तबाह हुए थे। पर आज, इस समय, तारा के मन ने चाहा कैलाश रात भर पीता जाए और रात भर उसके साथ वॉल्ट्ज़ नाचता रहे। तारा जानती थी आज रात घर जाकर नींद में भी वह वॉल्ट्ज़ नाचेगी—कैलाश के साथ।

रजनी ने कहा : "अब तो हमें भी भूख लगी है। हम तो खाएँगे।"

"चलो सभी, खाएँ," सलमा ने सुझाया, "वरना खाना बिलकुल ही ठंढा हो जाएगा।"

सब लोग डायनिंग रूम में आकर खाने लगे। खाना अच्छा था। सलमा के घर सदा ही खाना अच्छा बना है।

"मेहता साहब कब चले गए, सलमा ?" मोहन ने शरारतन पूछा। "और वह भी तुमसे मिले बिना ही चले गए ?"

सलमा को जीतना मुश्किल था। "अच्छा !" वह बोली। "वह यहाँ आए थे क्या ?"

लोगों ने बड़े ज़ोरों का ठहाका लगाया। सलमा ख़ुद भी हँसने लगी।

खाने के उपरान्त मेहमानों ने सलमा को धन्यवाद देकर बिदा माँगी।

"तुम वरली जाओगी, तारा ?" पुखराज ने तारा से बड़े मीठे ढंग से पूछा।

"हाँ," तारा ने कहा।

"तो साथ ही चलेंगे।"

"मेरे पास गाड़ी नहीं है। मैं सलमा की गाड़ी में आई थी।"

"मैं छोड़ती जाउँगी तुम्हें अपनी गाड़ी में। मैं भी वरली रहती हूँ," पुखराज ने कहा।

"अच्छा," तारा ने कहा, और उसकी आँखें कैलाश को खोजने लगीं। कैलाश कमरे में न था। तब वह पुखराज के साथ सीढ़ियाँ उतरकर नीचे चली गई।

तब सलमा ने रजनी के कान में कहा : "रहमान और फ्रांसिस को तुम छोड़ते जाओ। मेरा ड्राइवर खाना खा ले फिर मेरी गाड़ी कैलाश को छोड़ आएगी।"

कैलाश को न देखकर रहमान उसे ढूँढने लगा। नौकर ने कहा वह बाथरूम में है।

रजनी ने बाथरूम के पास जाकर ज़ोरों से कहा : "तो हम लोग चलते हैं, कैलाश। तुम्हें सलमा की गाड़ी छोड़ आएगी। मेरी गाड़ी फ़ुल है।"

बाथरूम से आवाज़ आई: "अच्छा।"

जब कैलाश बाथरूम से बाहर निकला तो कमरा मेहमानों से ख़ाली था। दरवाज़े के सामने हाथ में व्हिस्की का ग्लास लिए सलमा खड़ी थी। सब मेहमान जा चुके थे। लाल साड़ीवाली तारा भी जा चुकी थी।

"इतनी देर तक क्या कर रहे थे बाथरूम में?" सलमा ने मुस्कुराकर शरारतन पूछा।

"अरे, अन्दर जाकर भूल गया कि वहाँ क्यों गया। बड़ी देर तक खड़ा-खड़ा सोचता रहा कि यहाँ क्यों आया — पर कुछ समझ न आया। तुमने आज बहुतसारी पिला दी, सलमा। मैंने जब बेसिन के नल से पानी लेकर सर पर डाला — तो — तो कुछ होश आया है। कहाँ हैं सब लोग?"

"गए सब," सलमा ने कैलाश को सर से पाँव तक देखकर कहा। वह देख रही थी कि कैलाश को वास्तव में चढ़ गई है और बोलते हुए उसकी ज़बान लड़खड़ाती है, अटकती है।

"अब — मैं — कैसे जाऊँगा घर?"

"तुम्हें मेरी गाड़ी छोड़ देगी। ड्राइवर खाना खा रहा है। लो यह ग्लास।"

"अब नहीं, खाने के बाद नहीं। आज बहुत पी ली।"

सलमा ने मुस्कुराकर कहा: "जितनी पी थी वह सारी तो बाथरूम में निकाल आए। लो, यह आख़िरी है — वन फ़ॉर द रोड।"

कैलाश ने ग्लास ले लिया और बालकनी में निकला आया। चौड़ी बालकनी में मोढ़े पड़े हुए थे। वह एक मोढ़े पर बैठ गया। सामने सड़क मौन थी। समुद्र भी बहुत पीछे को हटा हुआ मौन पड़ा था। सलमा ने ड्राइंगरूम के कुछ लाइट बुझाए और फिर बालकनी के अँधेरे में आकर दूसरे मोढ़े पर बैठती हुई बोली:

"कितना अच्छा हो रहा है यहाँ?"

"तुम्हारी माँ — नहीं दिखाई दीं — आज?"

"अम्माँ सो रही हैं। रात के वह देर तक नहीं जागतीं। पहले इतना जाग चुकी हैं कि अब उन्हें जल्दी नींद आती है।"

मज़ाक करने में सलमा का सानी नहीं। अपनी माँ को भी नहीं छोड़ती। कैलाश अपनी मदहोशी में भी समझ गया कि सलमा का इशारा किधर था। सलमा की माँ एक रंडी थी। इलाहाबाद की मशहूर रंडी। किसी मारवाड़ी सेठ के साथ बम्बई आई थी और उसीकी रखैल थी। सलमा ने उसे कभी अपनी सारी दास्तान सुना रखी थी। सलमा को भी अम्माँ उसी रास्ते लगाना चाहती थी और उसकी नथनी उतारने की चिंता में थी कि मारवाड़ी मर गया। अब तो कोठा लेकर धंधा शुरू करने के अतिरिक्त उसके लिए और कोई चारा न था। इसी सिलसिले में उसने एक दलाल से बातचीत की, पर उस कम्बख़्त ने न तो कोई सलमा की नथनी उतारनेवाला

आसामी लाया न कोठे का ही प्रबंध किया बल्कि उन्हींके घर धरना देकर टुकड़े तोड़ने लगा। एक रोज़ बहुत कहा-सुनी होने पर उसने अम्माँ से कहा कि सिनेमा में एक्स्ट्रा आर्टिस्ट की नौकरी पर सलमा को वह लगा सकता है। अम्माँ तो खीझ उठी पर सलमा उसके साथ काम पर चली गई। साल भर वह एक्स्ट्रा बनी रही; फिर *मॉडर्न आर्ट पिक्चर्स* के प्रॉडक्शन मैनेजर, दिलीप ठाकुर, की मेहरबानी से उसे एक छोटा-सा रनिंग रोल मिल गया, अलबत्ता दिलीप ठाकुर को ख़ुश करने में सलमा की नथनी खुल गई थी। उसके बाद ही मेहता साहब की उस पर नज़र पड़ी और उसे सेकंड हीरोइन का चान्स मिल गया। सेकंड हीरोइन के चान्स में भी नथनीवाली ही बात थी। उस बात को आज लगभग पाँच साल होने आए। और पाँच साल से वह सेकंड हीरोइन ही बनी रही। पर थी बड़ी अच्छी, बड़ी मस्त, बड़ी ख़ुशमिज़ाज और बड़ी साफ़ तबीअत की — यह सलमा। अपने दोस्तों के दिल बहलाने में, उन्हें खिलाने-पिलाने में उसका जवाब न था।

"तुम्हारे घर खाना बहुत अच्छा बनता है," कैलाश ने कहा।

"तुमने बराबर खाया नहीं। क्या बात है, तुमने खाया क्यों नहीं?"

"ज़्यादा पी जाने पर खाना नहीं चलता।"

"तो इतनी पी क्यों?"

"तुमने पिलाई जो।"

"मैंने कब पिलाई?"

"ग्लास भर-भरके दिए जा रहीं थीं। तुम्हें मालूम है मुझे पीने की आदत नहीं है। पीता हूँ तो फ़ौरन चढ़ जाती है, इसीलिए मैं नहीं पीता।"

"कभी नहीं पीते?"

"कभी-कभी — ऐसे ही — पार्टियों में। अकेले बैठकर कभी नहीं पीता। पार्टी में पीने से मज़ा आता है। मुझे नींद आ रही है। अपने ड्राइवर से कहो मुझे छोड़ आएगा।"

"खाना खा रहा है। अभी छोड़ आएगा। क्या कह रही थी मुक्ता?"

"कह रही थी: 'किसी रोज़ खाने के लिए मेरे घर आना।'"

"और पुखराज?"

"कह रही थी: 'पैसों की कोई बात नहीं है, एक पिक्चर में मुझे भी लो न। तुम्हारे साथ पिक्चर में काम करने के लिए बहुत जी कर रहा है।'"

"और तारा क्या कह रही थी?"

"तारा ने कुछ नहीं कहा।"

"आज तुम बहुत नाचे। तुम्हें मैंने इतना ख़ुश पहले कभी नहीं देखा।"

"शायद मुझे बहुत चढ़ गई है आज।"

"तुम्हें नहीं चढ़ी है। पिओ न, ख़त्म करो ग्लास।"

"पी तो रहा हूँ।"

"कहाँ पी रहे हो? आधा ख़ाली है।"

कैलाश ने ग्लास उठाकर बड़े-बड़े घूँट लिए फिर सिगरेट सुलगाकर लोला : "तुम आज मुझे इतना क्यों पिला रही हो, सलमा?"

सल्मा शर्मा गई। उसने देखा कैलाश अभी तक होश में है। वह ताड़ गया है कि वह उसे जानबूझकर पिलाए जा रही है। पर सहसा वह हँस पड़ी। कैलाश के मुँह में सिगरेट लगी हुई थी मगर वह एक और सुलगा रहा था।

कैलाश ने सलमा को देखकर पूछा : "क्यों हँस रही हो?" कैलाश उस तरह बोला जैसे शराबी बहुत चढ़ जाने पर बोलते हैं।

"क्यों? क्या मैं हँस भी नहीं सकती?"

"क्यों नहीं। जानती हो, सलमा—हँसी ही दुनिया में सबसे बड़ी चीज़ है। मैं कहता हूँ—जिसे—जिसे—हँसना नहीं आया उसे जीना नहीं आया.... जानती हो तुम मुझे इतनी अच्छी क्यों लगती हो?"

"क्यों?"

"क्योंकि तुम्हें हँसना आता है। तुम बहुत अच्छा हँसती हो।" कैलाश की ज़बान अब और अधिक लड़खड़ाने लगी थी और आँखें झपक रही थीं।

"क्या मैं तुम्हें बहुत अच्छी लगती हूँ, कैलाश?" सलमा ने तिपाई पर से ग्लास उठाकर फिर से उसे थमाते हुए पूछा।

कैलाश ने ग्लास ख़ाली कर दिया। "बहुत," उसने कहा। "तुम मुझे—बहुत अच्छी लगती हो। सब—अच्छे लगते हैं। सच पूछो—तो—बुरा कोई नहीं है—इस दुनिया में। सब अच्छे हैं....सब....सब लोग अच्छे हैं....अच्छे हैं....सब लोग....जो लोगों को बुरा कहता है—वही बुरा है....नहीं.... वह भी बुरा नहीं....कोई बुरा नहीं....सब...."

कैलाश का सर लटक पड़ा। सलमा ने उसके होंठों में दबी हुई सिगरेट निकाल कर बाहर फेंक दी और उसके सर पर हाथ फेरने लगी। कैलाश को होश न था। वह नशे में चूर ऊँघ रहा था। सलमा ने कैलाश को सहारा देकर उठाया और उसे सहारा देकर चलाती हुई वह उसे अपने बेडरूम में ले गई। पुरुषों के शरीर तथा उनके वज़न से सलमा अनभिज्ञ न थी। वह जानती थी कब, कहाँ और किस अवस्था में पुरुष का वज़न सहसा हलका या भारी हुआ करता है, और कमसे कम कितना हलका व भारी से भारी कितना भारी हुआ करता है। परंतु नशे में टुन्न तथा अर्ध-सुप्तावस्था में लड़खड़ाते हुए कैलाश को सहारा देते हुए उसने यह पहली बार ही जान पाया कि अपने पाँव चलता हुआ दुबला, पतला, छरहरे बदनवाला युवक भी सहारा देनेवाले पर इतना भारी हो सकता है। बेडरूम तक पहुँचते-पहुँचते सलमा के माथे पर, गले में और छातियों के बीच की घाटी में पसीना फूट निकला। कैलाश ने एक बार

आँखें खोलीं और सामने पलंग देखकर धड़ाम-से उस पर जा पड़ा। सलमा बाहर गई और घर के लाइट बुझाकर बेडरूम में लौट आई। कमरे के लाईट में उसने कैलाश को एक नज़र फिर ताका। वह सलमा के विस्तर पर बेख़बर पड़ा सो रहा था। सलमा उसे देख मुस्कुराई। सोता हुआ व्यक्ति कितना असहाय मालूम होता है! क्या यह वही कैलाश है जिसने '*मिट्टी*' जैसे महान् चित्र का निर्माण किया है, जिसने तारा जैसी अद्‌भुत अभिनेत्री को बनाया है, और जो सलमा को बड़ी स्टार बनाने जा रहा है? क्या वह प्रतिभाशाली युवक, जो आँखों में आँखें डालकर बात किया करता है, जिसकी आवाज़ में ज़ोर और बात में जादू का-सा असर होता है, और जो अभी-अभी ड्रॉइंगरूम में तारा के साथ वॉल्टज़ नाच रहा था, खिलखिलाकर हँस रहा था—यही है? क्या वह हस्ती, जिसके हाथों सलमा की ज़िंदगी बनने चली है, यही है? पलंग पर लाश की तरह पड़ा हुआ जिस्म ही क्या कैलाश है? कितना चुप है यह जिस्म? कितने ख़ामोश हैं कैलाश के होंठ। यह वही होंठ हैं कि जब कहानी सुनाने लगते हैं तो जी करता है उन्हें चूमा जाय। एक ज़िंदादिल, उतावला और महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति क्या कभी इतना ख़ामोश हो सकता है? कैसी अजीब ज़िंदगी है इस कैलाश की? सारे वक़्त अपने काम और विचारों में व्यस्त रहता है, परंतु वास्तव में कितना सूना है उसका जीवन? इतने साथियों और सहकारियों के बीच भी कैलाश का जीवन बिलकुल अपनी ही चीज़ है, जो एकदम ही अकेली और सुनसान है। और अब अपने नए फ़्लैट में वह अकेला ही रह रहा है। क्या उसे किसी साथी की कमी कभी न महसूस होती होगी? क्या मौसम योंही तबदील हो जाया करते होंगे और कैलाश अकेला अपने ख़यालात में और काम के सहारे गुज़र कर लेता होगा? क्या कभी काली घटा देखकर या पूनम की चाँदनी में उसकी तबीअत न मचलती होगी? अजीब जीव है यह कैलाश? सलमा का दोस्त है, पुराना दोस्त, जो अब उसकी ज़िंदगी बनाने चला है, और जो इस समय उसके बिस्तरे पर बिलकुल ख़ामोश पड़ा सो रहा है। कैलाश का सूनापन दूर करने के लिए सलमा तड़प उठी।

अब तक इतनों ने सलमा से प्यार किया है, इतनों के साथ वह सो चुकी है, यानी लगभग दस–बारह व्यक्तियों के साथ, परंतु आज तक उसने दिल से कभी भी किसीके साथ सोना नहीं चाहा। कभी मजबूरी में सोना पड़ा था उसे, और कभी इसलिए कि किसीको मायूस करके किसीका दिल तोड़ना उसकी फितरत में शुमार न था। वह दिलफेंक न थी पर बड़े दिलवाली ज़रूर थी। किसीका दिल दुखाना उसे न आता था। किसीको—अपने किसीको—खुश करने के लिए वह सब-कुछ कर सकती थी, उसके साथ सो भी सकती थी। लेकिन आज, न जाने क्यों, कैलाश को प्यार करने के लिए, उससे लिपटने के लिए, उसके साथ सोने के लिए उसका अंग-अंग बेसब्र और बेचैन हो उठा। उसने मन में सोचा कहीं इश्क़ ऐसे ही न होता हो। कहीं उसे कैलाश से मुहब्बत तो नहीं हो गई है?

कितनी अजीब बात है, कैलाश को इतने दिनों से जानकर भी उसे लगा कि वह उसे बराबर नहीं जानती। कैलाश की तमाम आदतों, ख़ूबियों व त्रुटियों से वह भली-भाँति परिचित थी। इतने दिनों के सम्पर्क में वह कैलाश को अच्छी तरह जान गई थी, पहचान गई थी, समझ गई थी। इतनी अच्छी तरह समझती थी वह उसे कि शायद उसके साथ रहनेवाले रहमान और फ़्रांसिस जैसे लंगोटिया दोस्त भी नहीं समझते होंगे। पर फिर भी सलमा को लगा वह कैलाश से बराबर परिचित नहीं, उसके व्यक्तित्व से परिचित है, पर उस व्यक्तिविशेष से नहीं, उसके शरीर से नहीं, उसकी शारीरिक विशेषताओं से नहीं। दोस्ती पूरी निबाह रहा था यह—यह कैलाश। किसी वक़्त दिया हुआ वचन पूरा कर रहा था। उसे स्टार बना रहा था। कैसा पायेदार आदमी है कि जिनका हाथ थाम लेता है उसे भँवर के बीच से निकालकर किनारे तक पहुँचा देता है। सलमा का हृदय कृतज्ञता और अनुराग से भर आया। सलमा धीरे-धीरे झुकी और कैलाश के चेहरे को प्यार भरी निगाहों से ताकने लगी। आँखें बंद थीं और होंठ चुप थे। सलमा ने होंठों को चूम लिया, फिर पलंग के पैताने जाकर फ़र्श पर घुटनों के बल बैठ गई और उसके जूते खोलने लगी।

समुद्र भर-भरकर आ रहा था और लहरें नागिनों-सी फुँकारती हुई हवा में उचक रही थीं, बाँध की दीवारों से टकरा रहीं थीं, किनारे के नारियल और झाऊ झूम रहे थे, और काली रात सनसनाती हुई ढली जा रही थी। मरीन ड्राइव की दीवार हज़ार नागिनों के डसने से तिलमिलाकर चीख़ उठी और वह भीषण चीत्कार सलमा के कमरे में प्रवेश करने लगी।

कैलाश की नींद सहसा खुलने लगी तो उसे लगा बाहर ज़ोरों की आँधी चल रही है और उसका गला सूख रहा है। वह कहाँ है उसकी समझ में न आया। ज़रूर ही वह किसी दुर्घटना में ग्रस्त होकर कहीं गिरा पड़ा है। क्या वह किसी जंगल से गुज़र रहा था और आँधी में किसी पेड़ से टकराकर गिर पड़ा और उसका गला कट गया? सहसा उसे पूरी जाग आ गई और वह जान गया कि उसका गला नहीं कटा उसे प्यास लगी है, जिससे उसका गला सूख रहा है, और यह शोर आँधी का नहीं, समुद्र की लहरों का है। पर वह है कहाँ? समुद्र के किनारे? समुद्र के किनारे वह कैसे आया? अँधेरे में उसने आँखें खोलीं तो ऊपर छत का कुछ हिस्सा, बाहर कहीं से आती हुई महीन रोशनी में, झलक पड़ा। इसी समय उसे भान हुआ कि उसके सीने पर कोई मुलायम-सी चीज़ पड़ी है। उसने टटोल कर देखा तो साँप न था, हाथ था, उसका ख़ुद का हाथ न था, किसी और का हाथ, जो उसके सीने पर पड़ा हुआ था, और उससे सटा हुआ एक गर्म-गर्म शरीर था। उसने गर्दन घुमाई और कुहनी के बल अपने को उठाकर सर को हथेली पर टिका देखने लगा। कमरे की उस धुँधली आभा में उसने

देखा सलमा उसकी बग़ल में पड़ी हुई उसे ताक रही थी। आँखें चार हुईं तो सलमा मुस्कुराई और फिर कैलाश की समझ में परिस्थिति आने लगी।

"पानी दो," कैलाश ने कहा, "बहुत प्यास लगी है।"

सलमा उठी, कुहनी के बल, और हाथ बढ़ाकर उसने बाजू में रखी हुई तिपाई पर से पानी का ग्लास उठाकर कैलाश को थमा दिया।

कैलाश ने ग्लास ख़ाली करके कहा: "और चाहिए।"

सलमा ने तिपाई पर रखा हुआ जग उठाकर ग्लास में उँड़ेलना चाहा तो कैलाश उठ बैठा, और उसके हाथ से जग लेकर, जग से घट-घट करके पानी पीने लगा।

"लो," उसने जग लौटाते हुए कहा।

"सारा जग ख़ाली कर दिया तुमने?" सलमा ने साश्चर्य कहा।

"बहुत प्यास लगी हुई थी। न जाने तुमने रात कितनी पिला दी थी। गला सूखने से नींद खुल गई। नींद खुलने पर मैं सोचने लगा यह आवाज़ काहे की है, क्योंकि जब मैं तुम्हारी बालकनी में बैठा था तो लो टाइड थी और अब समुद्र हाई टाइड पर है। क्या बजा होगा?"

"घड़ी तुम्हारे हाथ में है।"

"अँधेरे में दिखाई नहीं देता।"

"तो लाइट जलाऊँ?"

"हाँ।"

सलमा ने बेड-लैम्प का स्विच दबाया और कैलाश ने घड़ी देखी। सवा-तीन बज रहे थे और सलमा उसी के पलंग पर बिना बाँहोंवाली महीन रेशम की नाइटी पहने पड़ी थी। नाइटी के अन्दर उसकी छातियाँ झलक रहीं थीं, सफ़ेद-सफ़ेद छातियाँ थीं, जिनके गहरे लाल शिखर नाइटी फाड़कर निकले पड़ रहे थे।

"लाइट बुझा दूँ?" सलमा ने पूछा।

"बुझा दो।"

सलमा ने लाइट बुझा दिया। कमरे में फिर से अँधेरा हो गया। कैलाश लेटने लगा तो सलमा ने उसके सर के नीचे अपनी बाँह सरका दी। कैलाश का सर सलमा की नंगी बाँह और छाती के बीच आनकर जम गया। कैलाश का नशा यद्यपि उतर चुका था अभी ख़ुमार बाक़ी था। वह सोचने लगा तारा उससे मिले बिना ही चली गई। पर वह कैसे मिलती? वह तो उसके जाते समय शायद बाथरूम में था। तारा के साथ आज वह बहुत नाचा। कितना हलका नाचती है वह? हर चीज़ उसकी प्यारी है। नाचते-नाचते कभी-कभी वह दोनों आपस में अनायास ही सट जाया करते थे और उसके वक्ष का तनाव तथा वक्ष की नोकें उसकी छाती को छू जाया करतीं थीं। अब भी छू रही हैं नोकें..... पर नहीं, यह वक्ष तारा के नहीं, किसी और के हैं, सलमा के हैं। नशे में जब वह बेसुध था न जाने इसने उसके साथ क्या किया होगा।

"क्या सोच रहे हो?" अँधेरे में बहुत पास से सलमा की आवाज़ आई।

"कितना सुहाना समय है? अँधेरे में तुम्हारी बालकनी के दरवाज़े का यह लाल परदा बाहर के उजाले में फड़फड़ाता हुआ कितना खूबसूरत लग रहा है — जैसे कोई लाल परी अँधेरे में नाच रही हो?"

"परी तो तुम्हारी बग़ल में है," सलमा ने कहा और प्रेमासक्त हो कैलाश को चूमने लगी — उसके माथे को, उसके गालों को, उसकी आँखों को, उसके होंठों को चूमने लगी। 'क्या दिमाग़ पाया है कैलाश ने?' उसने मन में कहा। 'आधी जाग में भी मुँह से शायरी निकलती है। लाल परदे को लाल परी कहता है।' कैलाश के सारे शरीर से वह लिपट पड़ी और उसे अपनी बाँहों व टाँगों में कसकर बोली: "तुम बड़े अच्छे हो, मुझे बड़े प्यारे लगते हो!"

कैलाश का हाथ उसके नाइट गाउन के अंदर प्रवेश करके उसके वक्ष पर फिसल रहा था। "मैं तो तुम्हारी बालकनी के मोढ़े पर ढेर हो गया था शायद, फिर यहाँ कौन लाया मुझे?" उसने आहिस्ता-से पूछा।

"मैं लाई," सलमा ने भी बहुत आहिस्ता-से कहा।

"कैसे?"

सलमा मुस्कुराई। "गोद में उठाकर," उसने कहा।

"मुझे कुछ याद नहीं आता। फिर — फिर क्या हुआ?"

"फिर तुम बिस्तर देखकर बिस्तर पर ढुलक पड़े।"

"फिर?"

"फिर मैंने तुम्हारे जूते-मोज़े खोले।"

"और फिर?"

"फिर बड़ी देर तक मैं तुम्हारे नंगे पाँवों को चूमती हुई बैठी रही।"

"फिर?"

"फिर लाइट बुझाकर मैंने अपने कपड़े बदले और तुम्हारे पास लेट गई।"

"उसके बाद?"

"उसके बाद कुछ नहीं हुआ। तुम्हें बर्बाद नहीं किया मैंने।"

कैलाश का हाथ सलमा के वक्ष को जकड़ने लगा।

सलमा का समस्त शरीर उत्तेजित हो थिरकने लगा। "कैलाश!" उसने कहा। "तुम बड़े अच्छे हो! तुम मेरे सबसे प्यारे दोस्त हो। तुम मुझे सबसे अच्छे लगते हो।"

"सबसे?" कैलाश ने साश्चर्य पूछा।

"हाँ, सबसे अच्छे," सलमा बोली और फिर उसका हाथ नीचे को खिसकने लगा। "मुझे एक बच्चा चाहिए, कैलाश.... तुम से.... तुम जैसा....दोगे?"

कैलाश के कपड़े खुलने लगे थे। उसका पतलून नीचे खिसकाकर सलमा

ने अपनी नाइटी उतार फेंकी और फिर दोनों के शरीर आपस में सट गए। चमड़ी से चमड़ी चिमट पड़ी। प्रेमोन्मत सलमा का थिरकता हुआ शरीर कैलाश के शरीर से लिपट रहा था। सलमा की साँसों में तेज़ी आ गई थी और उसकी नोकें अधिक नुकीली हो उठी थीं। वह अपने अरमानों की आग पर भुनी जा रही थी। और कैलाश का समस्त अस्तित्व, सलमा के बाहुपाश में बँधा हुआ, मरीन ड्राइव की दीवार की तरह, चीत्कार कर रहा था। उसका सर चकरा रहा था और उसका शरीर भी चकरा रहा था, क्योंकि वह उस अँधेरे वातावरण में चकरियाँ ले रहा था — वॉल्ट्ज़ की चकरियाँ — तारा के साथ। तारा! .... उसके दिल की धड़कन बढ़ने और बंद होने लगी। उसका शरीर सुन्न हो गया और पेट के अंदर कैसा तो लगने लगा, ढीला-ढीला, ख़ाली-ख़ाली, जैसे वह मर रहा हो; और तारा के स्वस्थ शरीर की मादक महक उसके नथनों में समाने लगी; और वह सुस्त और शिथिल पड़ा मर रहा था....

"क्या मैं अच्छी नहीं लगती?" सलमा ने कैलाश के कंधे पर दाँत गड़ाते हुए पूछा।

कैलाश चौंक पड़ा।

"तुम्हें अच्छा नहीं लगता?" सलमा ने फिर पूछा।

"क्या?" कैलाश ने कहा।

"यही —यही सबकुछ।"

कैलाश के मन और शरीर में खींचातानी हो रही थी। शरीर सलमा के साथ था, पर मन कहीं और था। कैलाश ने पूरी ताक़त से उसे बाँहों में कसकर कहा: "अच्छा लगता है।"

सलमा ने ख़ुश होकर आक्रमण तेज़ कर दिए और जोंक की तरह लिपटने लगी, चूमने, काटने, और चूसने लगी। प्रेमप्रकाशन और रतिक्रीडा के जितने ढ़ंग उसे ज्ञात थे उन सबका प्रयोग करने लगी, प्रेमी को तपाने, पिघलाने के सारे उपचार करने लगी; परंतु कैलाश रोमांचित न हो पाया और उसका शरीर सुस्त और शिथिल ही रहा, मानो वह एक ज़िंदा लाश हो, जिसे सलमा की लपटें जला तो सकती हैं पर, उसमें गर्मी नहीं पैदा कर सकतीं। सलमा पसीना-पसीना होकर थक गई, निराश हो गई। डाह की एक प्रचंड लहर सहसा उसके मन में दौड़ पड़ी और वह आहत शेरनी की तरह कराह उठी। कैलाश को बाँधे हुए हाथ ढीले करके उसने कहा:

"इतनी प्यारी लगने लगी है वह?"

कैलाश ने कहा: "कौन?"

"तारा — तुम तारा से प्यार करते हो।"

"मैं?"

"हाँ, तुम। सच कहो, मेरी क़सम खाके कहो कि करते हो या नहीं।" सलमा को इस बात का पता तो पहले ही चल गया था कि कैलाश को तारा चाहने लगी है, पर कैलाश भी तारा को चाहता है इसकी ख़बर उसे आज रात ही लग पाई।

कैलाश की बाँहें भी ढीली हो आईं।

"बोलो न?" सलमा ने फिर पूछा।

"पता नहीं," कैलाश बोला। "तुम्हें कैसे पता?"

"प्यार ऊँट पर चढ़के बोलता है, कैलाश। वह छिपाए नहीं छिपता। वरना क्या यह मुमकिन था कि मेरे फड़कते हुए गोश्त की गर्मी में तुम इस तरह ठंडे पड़े हुए आहें भरते? सच बता दो, तुम तारा से मुहब्बत करने लगे हो न?"

"सच कहता हूँ, सलमा, मुझे नहीं पता।"

"तुम्हें कुछ हो ज़रूर गया है।"

"मैं भी समझता हूँ मुझे कुछ ज़रूर हो गया है। तबीअत कुछ सुस्त-सी रहती है। मैं समझता हूँ मैं बीमार हूँ।"

तारा हँस पड़ी। बोली: "बीमार होंगे तुम्हारे दुश्मन। तुम्हें इश्क़ हुआ है, मेरी जान। तारा के साथ इश्क़ हो गया है तुम्हें।"

कैलाश चुप रहा। न जाने वह क्या सोच रहा था। सामनेवाले लाल परदे को ताक रहा था जो हवा में फड़फड़ा रहा था।

"वाल्ट्ज़ नाच रही है तारा," सलमा ने परदे को घूरते हुए कहा। "उठो, तुम भी नाचो साथ में। बेचारी अकेली नाचे जा रही है।"

कैलाश मुस्कुराया और परदे से नज़र फेरकर, सर के नीचे हाथ बाँधे, ऊपर छत को ताकने लगा।

सलमा को लगा कि कैलाश को बुरा लग गया। बहुत बुरा किया उसने जो उसके साथ बुरा व्यंग्य किया। उसके दिल को नाहक़ दुखाया। कितना शरीफ़ है कि चुप है, चुप पड़ा छत को ताक रहा है। और कोई होता तो लात जमा देता। पर नहीं, यह नहीं करेगा ऐसी हरकत, क्योंकि यह कैलाश है — एक महान् कलाकार, एक महान् व्यक्ति, एक महान् प्रेमी। हर बात इसकी निराली है। हर ढंग इसका अनोखा है। कितना कोमल, स्वच्छ, और तीव्र है इसका प्रेम — तारा के प्रति इसका प्रेम! कितनी गहराई है इसके प्रेम में कि सलमा के गर्म शरीर की गर्मी भी उसके मन में कामेच्छा को प्रज्वलित न कर सकी, और वह तारा के प्रेम की गहराइयों के तल में, समाधि लगाए, एकाग्रचित्त और अविचलित पड़ा रहा! जो काम करता है, धुन में करता है। लिखता धुन में है, डिरेक्ट भी धुन में करता है। काम की धुन में उसे किसी बात की फ़िक्र नहीं रहती, खाना और सोना तक भूल जाता है। जीनियस है, पूरा जीनियस। तारा के साथ प्रेम भी धुन में कर रहा है। तारा की इस क़दर लौ लगी हुई है कि अपने आपको भूला हुआ है, उसे यह भी ख़बर नहीं कि सलमा उसकी बग़ल

में लेटी हुई उससे लिपटी जा रही है। किसी को मन देने पर क्या तन पर कोई ज़ोर नहीं चलता? क्या प्रेम में — सच्चे प्रेम में — ऐसा ही होता है? आदमी जब किसी का हो जाता है तो दूसरों के लिए क्या वह निकम्मा और बेकार हो जाता है? ज़रूर होता होगा। औरों का तो पता नहीं पर कैलाश ज़रूर हो गया है। कैलाश की एकनिष्ठा पर सलमा मुग्ध हो गई। काश ऐसा कोई उसे मिलता! सहसा कैलाश के माथे को अनुराग और भक्ति से चूमकर वह बोली: "तुम बड़े अच्छे हो। मैंने तुमसा नहीं देखा। जी चाहता है तुम्हारी पूजा करूँ। रोज़ तुम्हारे पाँव धोकर पीया करूँ।"

कैलाश ने उसे सीने से लिपटा लिया और उसके सर को थपथपाकर बोला: "ऐसा नहीं कहते।"

सलमा चुप हो गई, चुप लिपटी पड़ी रही। कैलाश भी चुप था। रात ढल रही थी। पौ फटने लगी।

"अजीब रात थी। मुझे हमेशा याद रहेगी," सलमा ने उसे ताकते हुए कहा। "तुम मन में गाली तो नहीं दे रहे हो मुझे?"

"नहीं, ऐसा क्यों समझती हो?" कैलाश ने कहा, फिर कहीं दूर देखकर बोला: "अच्छी रात थी। मुझे भी हमेशा याद रहेगी। सुना है हज़रत मूसा को तूर के पहाड़ पर तजल्ली हुई थी। मुझे भी, सलमा, रात तुम्हारे इस बेडरूम में सत्य से साक्षात्कार हुआ है।"

कैलाश फिर शायरी बोल रहा था, नहीं फलसफ़ा, और सुनकर सलमा की रूह को नशा आ रहा था।

"लाओ, सिगरेट दो," कैलाश ने बनियान पहनते हुए कहा। "पतलून की जेब में है।"

सलमा ने पलँग के नीचे क़ालीन पर पड़े हुए पतलून और बुशकोट को उठाकर झटका और कपड़े कैलाश के ऊपर फेंक दिए। कैलाश बिस्तर में जाँघिया ढूँढ रहा था।

"तुम कपड़े पहनो तब तक मैं गर्म-गर्म कॉफ़ी बनाकर लाती हूँ," सलमा ने दरवाज़े की ओर जाते हुए कहा।

कैलाश ने पुकारकर कहा: "ऐसे ही जाओगी बाहर?"

सलमा चौंककर ठिठक गई, और फिर खिलखिलाकर हँसती हुई पलँग के पास लौट आई। "अजीब पागल हूँ मैं भी!" उसने कहा और अपनी नाइटी उठाकर पहनने लगी। सलमा का गोरा नग्न शरीर महीन रेशमी नाइटी में ढँकने लगा।

सिगरेट सुलगाते हुए कैलाश ने सलमा के शरीर पर, जो नाइटी में लुप्त हो रहा था, अंतिम बार दृष्टि डाली। सवेरे के प्रकाश में नाइटी पहनती हुई सलमा लजा रही थी। वह सलमा, जो पूर्ण नग्नावस्था में न लजाई थी, नाइटी पहनती हुई अर्ध-

नग्नावस्था में लजा रही थी और जल्दी-जल्दी नाइटी से शरीर को ढँक रही थी। कैलाश से सलमा की आँखें चार हुईं तो वह मुस्कुरा दी। कैलाश भी मुस्कुराया। कैलाश को लगा वीणा पर खोल चढ़ रहा है। जो अद्‌भुत वीणा रात भर मदमाती रागिनियों से झंकृत थी, सवेरे खेल समाप्त होने पर, रेशम के महीन खोल में बंद हुई जा रही है।

१३

तारा के दोनों फ़िल्मों का काम शुरू हो गया था और दोनों फ़िल्में बड़ी तेज़ी से बन रही थीं। कैलाश के *ज्वालामुखी* के निर्माण-वेग से प्रभावित होकर निर्माता मेहता को भी जोश आ गया था और उसने अपने निर्देशक अली हुसेन को चाबी कस दी थी। अली हुसेन भी परिश्रम किए जा रहा था। अली हुसेन ने तारा के साथ रजनीकान्त को नायक बनाया हुआ था। *मिट्टी* की टीम दुहराई गई थी। काम ज़ोरों से चल पड़ा था। और तारा व रजनी पूरा सहयोग दिए जा रहे थे।

तारा के दोनों चित्रों में परस्पर प्रतियोगिता थी। कैलाश निर्देशित *ज्वालामुखी* और अली हुसेन निर्देशित *खिलौना*। *ज्वालामुखी* समस्यापूर्ण, गंभीर कहानी थी, और *खिलौना* संगीत-प्रधान चलती चीज़ थी। दोनों फ़िल्मों में तारा के पात्र बिलकुल भिन्न थे। अली हुसेन के *खिलौना* का रोल लाइट यानी चलती-फिरती, हँसमुख, अल्हड़ छोकरी का था, जो तमाम समय नाचती, गाती रहती है। तारा अपने रोल से संतुष्ट न थी, अली हुसेन के निर्देशन से संतुष्ट न थी। वह उसे कुछ विशेष न बता पाता था। सबकुछ तारा पर छोड़े हुए था। तारा ने जब कभी कुछ कैलाश से पूछना चाहा तो अली हुसेन के पिक्चर में किसी भी तरह का दख़ल देने से उसने साफ़ इनकार कर दिया। "मैं तुम्हें सिर्फ़ अपने *ज्वालामुखी* का डिरेक्शन दे सकता हूँ, दूसरे के पिक्चर का नहीं, क्योंकि ऐसा करना तुम्हारे और अली हुसेन के साथ अन्याय होगा," कैलाश कहा करता। अतएव तारा, जहाँ तक *खिलौना* का प्रश्न था, अपने को बिलकुल असहाय पाने लगी। अपनी समझ से, जो कुछ उससे बनता, करती, और ख़ूब मेहनत करती। वह नहीं चाहती थी कि उसका कोई चित्र भी फ़ेल हो जाए। इसीलिए वह सतत परिश्रम किए जा रही थी।

अपने दोनों चित्रों के अंतरगत तारा को मुश्किल से महीने में तीन या चार दिन छुट्टी मिला करती थी। पिछले तीन महीने से यही हाल था। जिस दिन शूटिंग न होती उस दिन भी *ज्वालामुखी* के रिहर्सल का या *खिलौना* की डांस-प्रैक्टिस का काम निकल ही जाता, और तारा इन तीन महीनों के लगातार काम से थक गई। सुबह-सुबह कम्पनी से गाड़ी आ जाती और उसे स्टूडिओ ले जाती। घर लौटते चिराग-बत्तीका समय हो जाता। घर पर माँ बीमार पड़ी थी। अब तो उसने बिस्तर ही पकड़ लिया

था। घर नया था, सुंदर था, परंतु अजीब मनहूसियत थी घर में — जैसी कि हर उस घर में हुआ करती है जहाँ कोई आत्मीय शय्या पर बीमार पड़ा कराह रहा हो। कभी-कभी तारा झुँझला उठती — अपने ऊपर। पर उसकी यह झुँझलाहट अधिक समय तक न ठहर पाती, क्योंकि तुरंत ही वह अपने काम में फिर व्यस्त हो जाती। 'काम के बिना जीवन दुष्कर है!' वह सोचा करती। 'अगर आदमी के पास कुछ काम करने को न हो तो शायद वह मर ही जाय। कैलाश जैसा व्यक्ति तो अवश्य ही मर जाएगा.... और शायद बिना काम के मैं भी जीवित न रह सकूँ....'

सो अपने काम में तारा अपने को भुलाए हुए थी। जब नौ दिन के बाद आज उसे छुट्टी मिली तो वह सुबह बड़ी देर तक सोई, और इस समय भी पड़ी सो रही थी कि उसकी आया, ऐनी, ने आकर उसे जगा दिया।

"मोटर कम्पनीवाला गाड़ी लेकर आया है, मेम साहब," ऐनी ने कहा।

तारा ने आँखें खोलीं और वह फ़ौरन उठ बैठी। "ओह! आ गई गाड़ी!" उसने सानंद कहा। "क्या टाइम हुआ है?"

"आठ बजने में दस मिनट देर है।"

"उसे ड्राइंगरूम में बिठा, मैं अभी तैयार होती हूँ," तारा ने कहा और बाथरूम की ओर लपक पड़ी।

आध घंटे के अन्दर ही तारा नहा-धोकर तैयार हो गई और अपनी नई गाड़ी देखने के लिए उत्तेजित हो कमरे से बाहर लॉबी में भागने लगी।

"क्या है, बेटा, क्या हुआ,?" बाज़ूवाले कमरे से आवाज़ आई।

तारा ने भागते हुए ही उत्तर दिया: "कुछ नहीं, माँ, नई मोटर लेकर आया है। उसे देखने जा रही हूँ।"

मोटर देखकर तारा ख़ुश हो गई।

"गुड मॉर्निंग, मैडम," सेल्समैन ने कहा।

"गुड मॉर्निंग, मि. स्वामी," तारा बोली।

"आपने जो रंग कहा था वोच रंग लेके आया हूँ, मैडम।"

"बिलकुल नई है न?"

"शो रूम से ला रहा हूँ, मैडम। कलच रहमान साब कम्पनी आया था इसको देखने।"

"बड़ा अच्छा रंग है," तारा ने मोटर के बॉनेट पर हाथ रखते हुए कहा; "खैर मि. स्वामी, आप तो डॉज लानेवाले थे न? सिन्हा साहब को आपने डॉज गाड़ी दी है न?"

"डॉज में लाल और क्रीम रंग का कॉम्बिनेशन नहीं था, तो सिन्हा साब स्टुडबेकर या ब्यूक लाने को बोला। और कल रहमान साब ने आकर ये वाली गाड़ी को पसंद

किया। बोला, सुबे मिस तारा चौधरी के घर लेके जाओ। सो मैं रात को गाड़ी लेके अपने घर गया और सुबे उठके सीदा यहाँ आया हूँ।"

तारा ने गाड़ी को ताका फिर कहा : "अच्छी है। मुझे पसंद है। क्या क़ीमत है इसकी?"

"रहमान साब ने *जनता चित्र* का कल चेक दे दिया, मैडम। आप उन्हीं से पूछिए। डिसकाउंट भी मिला है आपको। आइए, आपको ट्रायल देता हूँ।"

तारा चौधरी स्टुडबेकर में स्वामी के पास सामनेवाली सीट पर बैठ गई और स्वामी ने गाड़ी स्टार्ट की। कुशल सेल्समैन की तरह स्वामी ने गीअर बदले और एक्सलरेटर दबाया। गाड़ी फिसलने लगी और फाटक के बाहर निकल गई।

रास्ते में स्वामी ने जगह बदली और तारा ख़ुद गाड़ी चलाने लगी। गाड़ी नई मोटर की चाल से चल रही थी, और अपनी नई मोटर पाकर तारा प्रसन्न थी। पेडर रोड पर स्वामी को *संघवी मोटार* के शो रूम पर छोड़कर वह गाड़ी लिए अकेली निकल गई, शहर के बाहर। घाटकोपर, थाना होती हुई वह घोड़बंदर की ओर चलने लगी। थाना के बाद सूनी सड़क पाकर उसने एक्सलरेटर दबाया। ४०, ५०, ६० की रफ़्तार पर गाड़ी चली तो जनवरी की सुबह की ठंढी हवा उसके मुँह पर थपेड़े मारने लगी और उसका जूड़ा खुल पड़ा और बाल सर के पीछे हवा में उड़ने लगे और एक मोटी लट ने माथे पर फैलकर आँखों को ढँक लिया। बालों के बीच से देखती हुई आँखों को लगा कि वह किसी अज्ञात स्थान की ओर चली जा रही है जहाँ पर समय अपनी गति खो बैठा है। सामने की काली सड़क, दोनों ओर के हरे-हरे पेड़, और ऊपर का नीलाकाश परस्पर मिलकर एक हो गए और तारा ने सोचा अब मरी वह। तुरंत उसने एक्सलरेटर से पाँव हटाया, ब्रेक दबाया, मुँह पर से लटें सरकाईं तो सामने भारी भरकम ट्रक आ रहा था जो प्रायः सारा रास्ता घेरे हुए था। धड़कते हुए दिल से तारा ने गाड़ी किनारे की और आहिस्ता चाल चलने लगी। गाड़ी चलाना वह सीख चुकी थी। कैलाश ने सिखाया था उसे। पर जब वह गाड़ी चलाती कैलाश सदा साथ ही रहता था। आज वह एकदम अकेली चला रही थी, बिना किसीके सहारे चला रही थी, बिना किसीकी निगरानी के चला रही थी, और अच्छा चला रही थी। उसके मन में आत्मविश्वास उत्पन्न होने लगा और उसने सोचा कि वह उतनी निर्बल या असहाय कदापि नहीं है जितना कि वह अपने को समझे हुए है। वह स्वस्थ है, सबल है, सतर्क है, योग्य है, और सफलता के शिखर पर बैठी हुई है। देश भर में अब वह एक तेजस्वी नक्षत्र की भाँति चमक रही है। उसका जीवन सुखी और परिपूर्ण है।

इसी समय दूर सामने से एक किसान युवती ने, काँधे पर खाने की पोटली लिए, सड़क पार किया और वह खेतों की ओर जाने लगी तो तारा के दिल में गुदगुदी-सी होने लगी। वह सोचने लगी कि अगर इस समय कैलाश भी उसके साथ मोटर में होता

तो कितना अच्छा होता। अकेला रहता है। अकेला खाता है। उसके लिए कोई खाना लेकर नहीं जाता। जो कुछ नौकर बनाके देता है वही खाता होगा। और तब गुदगुदी का रूपान्तर टीस में होने लगा। इतनी बड़ी मोटर में अकेले बैठे हुए तारा को अटपटा लगने लगा। जीवन सहसा निरर्थक व रिक्त प्रतीत होने लगा। सिवाय काम के उसके जीवन में और कुछ नहीं। बिना साथी के, बिना प्रेमी के, बिना भरतार के उसे जीवन शुष्क व निष्प्राण लगने लगा। और उधर घर में माँ बीमार पड़ी थी, तिल-तिल मर रही थी, मर जाएगी बेचारी एक दिन, और तब वह बिलकुल अकेली रह जाएगी इस दुनिया में। तारा की आँखें छलछला उठीं। एक पेड़ के नीचे उसने गाड़ी रोकी और स्टीअरिंग व्हील पर सर रखके रोने लगी। खूब रोई। फूट-फूटकर रोई, मानो उसका कुछ खो गया हो, सर्वस्व खो गया हो....

बड़ी देर बाद आँसू पोंछकर उसने सर उठाया तो दाईं ओर घोड़बंदर का पानी थलथला रहा था और उसके चकाचौंध उदर में सूर्य की तेज़ किरणें छिदी जा रही थीं। पानी को देखकर उसे फिर कैलाश याद आने लगा। वह सोचने लगी — कैलाश के बारे में। विचित्र आदमी है! शादी के विरुद्ध क्यों है? क्या उसने कभी प्रेम नहीं किया? कहता है: 'कला साधना है।' शादी और प्रेम क्या कला की साधना में बाधक होते हैं? क्या संसार के प्रख्यात पुरुष, प्रख्यात कलाकार महान प्रेमी भी नहीं थे? क्या उन्होंने ब्याह नहीं किया? फिर यह कैलाश सदा उससे शादी-ब्याह के विरुद्ध क्यों कहता रहता है। पत्थर है कैलाश, और उसके सीने में भी दिल की जगह पत्थर ही रखा हुआ है, तभी तो प्रेम से उसे द्वेष है। परंतु अगर वास्तव में प्रेम से उसे द्वेष होता तो प्रेम के बारे में, प्रेमियों के बारे में इतना कुछ ज्ञान उसे कैसे प्राप्त हुआ? अपनी कहानियों में वह कितना सुंदर प्रेम-रस भरता है। ऐसा लगता है कि जीवन के हर पहलू से, भावनाओं के हर रंग से वह पूर्णतः परिचित है। अगर वह पत्थर होता और अगर उसके सीने में दिल की जगह पत्थर ही रखा होता तो उसकी रचनाओं में यह धड़कन, यह स्पन्दन, यह प्राण, यह विलक्षण लोच कैसे संभव होता? .... तारा इन्हीं सब गुत्थियों में उलझ गई। उसकी समझ में कुछ न आया। कैलाश को समझने में वह असमर्थ रही। उसका मस्तिष्क कुछ कहता और मन कुछ और। मस्तिष्क कहता कैलाश बड़ा मतलबी और महत्त्वाकांक्षी है, मौक़े से फ़ायदा उठा रहा है, तारा का उपयोग कर रहा है, फिर दूध की मक्खी की तरह अलग कर देगा उसे। मन कहता कैलाश एक महान् कलाकार है जो निर्लिप्त है, काम की धुन में खोया हुआ, है उसे अपना भान नहीं तो फिर तारा का भान कैसे संभव है। मस्तिष्क कहता कैलाश स्वार्थी और बेमुरव्वत है। मन कहता कैलाश उदार और भावुक है। मस्तिष्क कहता कैलाश पत्थर है जिसपर सर पटक-पटककर तारा एक दिन अपनी जान दे देगी। मन कहता कैलाश ताल की काई के बीच फूला हुआ वह सुंदर कमल है जिसे एक दिन तारा प्राप्त करके ही रहेगी। मस्तिष्क कहता कैलाश के दिमाग़ के कुछ पुरज़े ढीले

हैं, वह एक बहका हुआ युवक है। मन कहता कैलाश के दिमाग़ के पुरज़े ठीक हैं, वह बहका हुआ नहीं बल्कि अपनी कला-सिद्धि पर अविचलित व व्यस्त है; तारा की तरह उसके दिल में भी झंझावात हुआ करता होगा, पर वह मन पर क़ाबू पाए हुए है, मन उसके वस में है, वह मन के बस में नहीं, और यह बड़ी बात है। मस्तिष्क कहता यह सब झूठ है, अपने को वहलाने के लिए तारा की यह सब मनगढ़ंत और झुठी दलीलें हैं, तारा अपने आपको धोखा दे रही है, कैलाश से मन लगाकर पछताएगी, वह उसे नहीं चाहता, वह उसकी शिष्या है, सहयोगी है, मित्र है, परंतु प्रेमिका कदापि नहीं हो सकती, कभी नहीं हो सकती। मन कहता अगर ऐसी ही बात है तो कैलाश के स्मरण मात्र से तारा के दिल में गुदगुदी क्यों होने लगती है। सुना है कि प्रेम से प्रेम प्राप्त होता है। प्रेम जब उत्पन्न होता है तो बिजली के करंट की तरह जाकर लगता है। प्रेम एकतरफ़ा नहीं होता। प्रेम दो व्यक्तियों के बीच ही होता है। तारा का मन यह मानने को तैयार न था कि कैलाश के मन में उसके लिए प्रेम नहीं है। अगर है, तो फिर वह कभी अपना प्रेम दर्शाता क्यों नहीं? दूर-दूर खिंचा-खिंचा क्यों रहता है? दो-चार बार तो तारा को लगा था कि कैलाश उसे खींचकर चूमनेवाला है — उस रात स्टेशन वैगन में जब वह उसे ड्राइविंग सिखा रहा था तब, और उसके बाद रिलीज़ की रात को बॉक्स में बैठे हुए, और उसके बाद सलमा की पार्टी में वॉल्ट्ज़ नाचते समय, और उसके बाद स्टूडिओ में एक दिन लंच टाइम में जब उसकी प्लेट में वह घर से वनाकर लाया हुआ बैंगन का भुरता परसने लगी थी तब। कैलाश की आँखों से इन अवसरों पर जो छलक रहा था वह क्या प्रेम न था? अगर न था, तो फिर क्या था वह? ....

तारा के मन और मस्तिष्क में बड़ी देर तक द्वंद्व चलता रहा। एक ने दूसरे की वात काटी और कुछ फल न निकला। तारा के लिए कैलाश पहेली था और पहेली ही वना रहा। तारा के आँसू सूख गए और गला भी। बिना ब्रेकफ़ास्ट लिए ही वह निकल पड़ी थी। अव तो लंच टाइम हो चला था। घर पर माँ उसकी राह देख रही होगी, परेशान हो रही होगी कि लड़की गाड़ी लेकर गई तो अब तक लौटी क्यों नहीं। कहीं ऐक्सीडेंट तो नहीं कर बैठी।

तारा ने इंजन स्टार्ट किया और गाड़ी मोड़कर चल पड़ी, शहर की ओर, वरली की ओर, घर की ओर। रास्ते में उसके मन व मस्तिष्क में कोई बातचीत न हुई। दोनों सुस्त और चुप थे। और तारा की नई स्टुडबेकर भी सुस्त चाल से चली जा रही थी।

जब तारा घर पहुँची तो डेढ़ बज रहा था। नौकर ने कहा माँजी परेशान हो रही थीं। आज तारा को अपना घर सहसा विचित्र लगा, मानो उसमें कोई बड़ी तबदीली हुई है।

"श्यामू, कोई आया है क्या ?" उसने नौकर से पूछा।

"हाँ, मेमसाहब। दिल्ली से एक साहब आए हैं," नौकर ने उत्तर दिया।

"कहाँ हैं वह ?"

"माँजी के पास बैठे हुए हैं।"

तारा का कौतूहल बढ़ा। आशंकित मन से वह माँ के कमरे की ओर बढ़ी। 'कहीं जीवन न आ धमका हो!' उसने सोचा।

तारा को देख माँ के पास एक कुरसी पर बैठा हुआ युवक उठ खड़ा हुआ और आँखें फाड़कर तारा को घूरता हुआ बोला : "हलो, तारा!"

"हलो, जीवन!" तारा ने कहा। "कब आए ?"

"आज ही आया हूँ। अभी। फ्रंटिअर मेल से। होटल में सामान रखकर सीधा यहाँ आ रहा हूँ।"

माँ ने तारा से शिकायत करते हुए कहा : "देखा, तारा! घर रहते हुए होटल में इसे ठहरने की क्या ज़रूरत थी ?"

जीवन हँसने लगा।

"अभी तो रहोगे कुछ दिन ?" तारा ने पूछा।

"पंद्रह दिन की छुट्टी लेकर आया हूँ।"

"कुछ काम था बम्बई में ?"

"तुम लोगों से मिलने आया हूँ। सोचा बूआजी इतने रोज़ से बीमार हैं, उन्हें भी देख लूँगा और तुमसे भी मिल लूँगा। अब तो तुम बड़ी स्टार बन गई हो। तुम्हें तो पहचानना मुश्किल हो गया।"

तारा मुस्कुराई। "तुम भी बहुत बदल गए।"

"तीन साल हो गए हमें मिले।"

"हाँ, तीन साल। चाचाजी, चाचीजी अच्छे हैं ?"

"मज़े में हैं।"

"और तुम्हारी बहन — बड़ी हो गई होगी अब तो ?"

"मैट्रिक का इम्तहान देगी सरोज इस साल।"

माँ ने तब पूछा : "तू कहाँ चली गई थी, तारा, मोटर लेकर ? मुझे तो फ़िकर हो गई थी।"

"गाड़ी का ट्रायल लेने गइ थी, माँ। तीस मील दूर निकल गई थी।"

"सुना आज तुमने नई गाड़ी ली है ?" जीवन ने पूछा।

"हाँ, आज सुबह ही डिलिवरी ली है। उसी का ट्रायल लेने गई हुई थी। आओ, तुम्हें दिखाऊँ।"

"नहीं, बेटा, पहले तुम लोग जाकर खाना खाओ। जीवन को भी भूख लगी होगी और तूने भी सुबह नाश्ता नहीं किया था। जाओ, खाना खाओ," माँ ने कहा।

"आओ, जीवन, खाना खाएँ," तारा बोली और जीवन को साथ लेकर दूसरे कमरे में चली गई।

टेबल पर श्यामू खाना लगा रहा था।

जीवन ने बेसिन में हाथ धोए।

तारा ने उसे तौलिया पकड़ाते हुए पूछा : "तुमने यह मूँछें कब से रखी थीं ?"

जीवन मुस्कुराया। "साल भर हो गया," उसने कहा।

तारा प्लेटों में खाना परसने लगी।

जीवन तारा को ताक रहा था। वह मन में सोचने लगा क्या यह वही तारा है जिसके साथ बचपन में वह घंटों खेला करता था ? क्या यह सुंदर युवती, यह मगरूर सिनेमा स्टार वही अल्हड़ छोकरी है जो कभी अमृतसर में आँगन की दीवार फाँदा करती थी ? उसके साथ जामुन के पेड़ पर चढ़ जाया करती थी ? और चौमासे में पड़ोस की दीगर स्त्रियों के साथ बैठकर ढोलक बजाया करती थी ? गर्मियों की दोपहर में खटियों पर सिवैयाँ और बड़ियाँ डाला करती थी ? . . . .

तारा ने कहा : "खाओ न, क्या सोच रहे हो ?"

जीवन खाने लगा। "तुम्हें देखकर मुझे बहुत खुशी हुई, तारा।"

"सच ?"

"तुम मेरी चिट्ठियों का बराबर जवाब क्यों नहीं देती थीं ?"

"देती तो थी।"

"तीन-तीन चिट्ठियाँ लिखने पर तुम्हारी एक चिट्ठी आती थी," जीवन ने शिकायत की। उसने सोचा तीन साल पहले की मित्रता को शिकायत के बहाने ही ताज़ा किया जाय, वरना तारा तो छिटककर अलग जा खड़ी हुई है और बिलकुल अपरिचित बनी हुई है।

तारा शर्माई। बहाना बनाते हुए उसने कहा : "क्या करूँ, काम के मारे फ़ुरसत ही नहीं मिलती है।"

"बहुत काम रहता है तुम्हें ?"

"आज नौ दिन के बाद छुट्टी मिली है मुझे।"

तारा को जीवन ताकने लगा। आँखें चार हुईं तो बोला: "मेरी कभी याद नहीं आती थी तुम्हें ?"

तारा ने आँखें नीची कर लीं और हँसकर प्रश्न की धार पर रेती रगड़ती हुई बोली: "सब याद आते हैं। श्यामू, माँ को १२ बजे दलिया बनाकर दिया था ?"

"जी, मेम साहब।"

"और फल भी।"

"जी, मेम साहब।"

"डॉक्टर साहब आए थे ?"

"जी, मेम साहब ।"

जीवन ने पूछा: "किसका इलाज चल रहा है ?"

तारा ने कहा : डॉ. सी. एम. पटेल का ।"

"बडा डॉक्टर है वह बम्बई का?"

"बहुत बड़ा डॉक्टर है वह, और आदमी भी बहुत अच्छा है । उसीकी दवा से माँ को इन दिनों कुछ फ़ायदा है । महीने भर पहले तो हालत बहुत ख़राब हो गई थी । क्या देख रहे हो?"

"तुम्हें ।"

तारा लजा गई । "तुम खा नहीं रहे हो बराबर ।" उसने कहा ।

"खाना तो रोज़ ही खाता हूँ," जीवन ने तारा की आँखों में देखते हुए कहा । "तुम्हें देखने को आँखें तरस गईं थीं ।"

तारा हँस पड़ी ।

दूसरे कमरे में बिस्तर पर खड़ी हुई माँ ने तारा की हँसी सुनी तो खिल उठी । महीनों बाद उसने तारा को घर में इस प्रकार जोरों से खिलखिलाकर हँसते सुना था । माँ मन में कहने लगी: 'चलो अच्छा हुआ जो जीवन आ गया है । यही मनाएगा अब तारा को ब्याह के लिए ।'

और जीवन सोच रहा था कि उसकी तसवीर कहाँ चली गई । न बैठक में दिखाई दी, न बूआ के कमरे में और न डाइनिंगरूम में । ज़रूर ही तारा ने उसकी तसवीर फ़ोटो-फ्रेम में मढ़कर अपने बेडरूम में रखी होगी ।

"तुम बम्बई पहली बार आए हो, जीवन ?" तारा ने पूछा ।

"हाँ, पहली बार । खाने के बाद क्या प्रोग्राम है तुम्हारा?"

"कुछ खास नहीं ।" तारा सोच रही थी इतने दिनों बाद छुट्टी मिली है तो आज घर पर ही रहेगी, आराम करेगी ।

जीवन ने सोचा घर पर बात न बनेगी, बोला: "शहर नहीं दिखाओगी मुझे? बड़ा नाम सुना है तुम्हारी बम्बई का ।"

"अच्छी बात है," तारा ने कहा । "चलो, तुम्हें शहर की सैर कराऊँ ।"

तारा की नई स्टुडबेकर में, तारा की बग़ल में बैठा, जीवन बम्बई की सैर करता हुआ खुश था । चौपाटी, ऑपेरा हाउस, क्रॉफ़र्ड मार्केट, विक्टोरिआ टरमिनस होती हुई तारा की गाड़ी फ़्लोरा फ़ाउन्टेन पहुँची, फिर काला घोड़ा । तारा मोटर चलाना जानती तो थी पर मोटर चलाने की उसे आदत न थी । शहर के बाहर मोटर चलाना और बात थी, शहर के अंदर कुछ और । अतएव वह संभलकर धीरे-धीरे चला रही थी । *थैकर ऐण्ड कम्पनी* के सामने पहुँचकर तारा ने दूकान के सामने गाड़ी पार्क कर दी ।

"दो मिनट दुकान में काम है मुझे। आओगे?" उसने गाड़ी से उतरते हुए जीवन से कहा।

"चलो," जीवन बोला और गाड़ी से वह भी उतर पड़ा।

ज़ीना चढ़कर तारा ऊपर गई। जीवन भी साथ गया। चारों ओर किताबों से आलमारियाँ लदी हुई थीं। बेशुमार मेज़ पर बेशुमार किताबें क़रीने से रखी हुई थीं। नई-नई किताबें रंग-बिरंगी आवरण में सजी-धजी थीं। कमरा नई किताबों से महक रहा था। किताबों से तारा को नया शौक़ हुआ था। यह शौक़ कैलाश के सहवास के कारण हुआ था। तारा ने हान सुइन किए *मेनी स्प्लेण्डर्ड थिंग* और फ़्राँसुवास सेगाँ की *बाँजूर त्रिसतेस* खरीदीं और फिर मैगज़ीनों के मेज़ के पास जाकर मैगज़ीनें देखने लगी।

जीवन मन में कह रहा था: 'इसे पढ़ने का शौक़ कब से हो गया? हान सुइन और फ़्राँसुवास सेगाँ—अजीब नाम हैं लेखकों के। मैंने तो कभी नहीं सुने......'

तारा ने कहा: "तुम कोई किताब नहीं पसन्द करोगे?"

"किताबों से मुझे दिलचस्पी कभी नहीं रही," जीवन ने मुस्कुराकर कहा। "क्या नॉवेल्स हैं यह दोनों?"

"हाँ।"

"हान सुइन तो चाइनीज़ आदमी का नाम मालूम होता है?"

"हाँ, चाइनीज़ ही है, मगर चाइनीज़ आदमी नहीं, औरत है। और फ़्राँसुवास सेगाँ फ्रेंच लड़की है। दोनों ग़ज़ब का लिखती हैं।"

"तुमने पढ़ी हैं इनकी दूसरी किताबें?"

"नहीं, पर कैलाश ने पढ़ी हैं। वही तारीफ़ कर रहे थे इन दोनों लेखकों की। कहते थे बहुत अच्छा लिखती हैं।"

"कौन कैलाश?"

"मेरे डिरेक्टर, कैलाश सिन्हा। कल शूटिंग पर चलना मेरे साथ स्टूडिओ। तुम्हें मिलाऊँगी उनसे।"

तारा ने बुनाई काम की तीन-चार पतली-पतली किताबें, और दो-तीन सिनेमा मैगज़ीनें चुनीं और उन्हें बाँध देने को कहा। नीचे काउन्टर पर दाम चुकाकर उसने बंडल लिया और जीवन को साथ लिए गाड़ी के पास लौट आई।

"यह सामने म्यूज़िअम है," तारा ने कहा।" चलोगे? देखोगे?"

"नहीं, आज नहीं, फिर कभी। गेट वे ऑफ़ इंडिआ भी तो शायद इधर ही कहीं है?"

"हाँ, पास ही है। चलो, तुम्हें दिखाऊँ।"

गेट वे ऑफ़ इंडिआ पर पहुँचकर तारा ने गाड़ी रोक दी और दोनों नीचे उतर पड़े।

"सामने यह ताजमहल होटल है," तारा ने इशारे से दिखाया फिर कहा: "आओ, नारियल पीएँ।"

सीढ़ियों पर बैठकर दोनों ने नारियल का पानी पिया। समुद्र का पानी हिलोरें ले रहा था, और दूर एक जहाज़ लंगर डाले खड़ा था। पास में नावें चल रही थीं।

जीवन देख रहा था। "बड़ा ख़ूबसूरत है तुम्हारा शहर—यह बम्बई!" उसने कहा। "पर भीड़ बहुत है यहाँ। दम घुटता है।"

"बड़ा अच्छा है बम्बई!" तारा ने कहा, और मकानों की क़तार को, जो दाईं ओर चली गई थी, दिखाकर बोली, "वह कोलाबा है, वह हिस्सा कोलाबा कहलाता है।"

"तुम पहले वहीं कहीं रहती थी न?"

"हाँ, वह जगह भी तुम्हें दिखाऊँगी।" तारा दूर देख रही थी, कोलाबा के छोर पर। मन में उसने कहा: 'वहीं कैलाश ने मुझे मरने से बचाया था, वहीं पर उससे मेरी मुलाक़ात हुई थी। कैसी विचित्र थी वह रात! न जाने उतनी रात को वहाँ अकेला वह क्या कर रहा था। विचित्र आदमी है—यह कैलाश!' सहसा तारा ने देखा लोगों की भीड़ उसे घेरे "तारा चौधरी, तारा चौधरी" चिल्ला रही है। "चलो चलें," तारा ने चट-से उठते हुए कहा।

जीवन मुस्कुराया और तारा के साथ जाकर मोटर में बैठ गया।

जब मोटर चली तो जीवन ने कहा: "तुम्हें तो सब पहचानते हैं। मालूम होता है तुम्हारी फ़िल्म काफ़ी कामयाब रही थी।"

"तुमने देखी थी?"

"तुम काम करो उसमें और मैं न देखूँ, ऐसा कभी हो सकता है?"

"तुमने अपनी चिट्ठी में तो कभी नहीं लिखा कि तुमने *मिट्टी* देखी है।"

"शायद लिखना भूल गया हूँगा।"

"तुम्हें कैसी लगी थी?"

"ठीक थी।"

"शायद ज़्यादा पसन्द नहीं आई तुम्हें?"

"अच्छी थी।" फिर तारा के बालों में उँगलियाँ चलाकर बोला: "तुम बहुत अच्छी लगीं उसमें।"

तारा मुस्कुराई, बोली: "यह दाईं ओर को सचिवालय है। नया ही बना है। मेरे सर पर से हाथ हटा लो वरना पुलिस पकड़ लेगी तुम्हें।"

जीवन ठहाका मारकर हँस पड़ा, पर हाथ उसने हटा लिया। मरीन ड्राइव से होती हुई गाड़ी मलबार हिल पर चढ़ने लगी।

हैंगिंग गार्डन और कमला नेहरू पार्क-जीवन को बहुत पसन्द आए। नीचे सारा बम्बई फैला पड़ा था। इस दृश्य के फ़ोटो वह पहले देख चुका था।

"चाय, कॉफ़ी—कुछ पीओगे?" तारा ने पूछा।

"यहाँ मिलेगी?" जीवन बोला।

वहीं पर बने हुए *नाज़* रेस्तोराँ में जाकर तारा ने कॉफ़ी का ऑर्डर दिया और जीवन ने बॉय के कान में कुछ कहा, फिर जिधर बॉय ने इशारा किया उधर को चल दिया।

तारा जानती थी जीवन पेशाब करने गया है। बंडल खोलकर उसने बुनाई की किताबें निकालीं और पन्ने उलटने लगी। सर्दी शुरू हो गई थी और कैलाश के लिए उसे स्वेटर बुनना था। स्वेटर के लिए डिज़ाइन ढूँढ़ने लगी। इससे पहले उसने या तो अपने लिए या माँ के लिए स्वेटर बुने थे। किसी पुरुष के लिए कभी नहीं बुना था। किस नाप से बुनेगी वह? कैलाश की छाती का नाप तो वह ले नहीं सकती। कैलाश को पता नहीं चलना चाहिए कि उसके लिए स्वेटर बुना जा रहा है। उसके विना जाने वह बुनेगी। वह तभी जान पाएगा जब वह उसे भेंट करेगी। वरना भेंट का सारा मज़ा निकल जाएगा। यह स्वेटर उसका *सरप्राइज़ प्रेज़ेंट* होगा। आज तक उसने कैलाश को एक चीज़ भी भेंट नहीं की। वह बेचारा कितनी सारी चीज़ें भेंट कर चुका है। दर्जनों किताबें ही दी होंगी। रिलीज़ पर रिस्टवॉच दी थी, वह भी रोलेक्स की क़ीमतीवाली। *ज्वालामुखी* के मुहूर्तवाले दिन मेकअप बॉक्स भेंट किया था। फ़्रांसिस भी बेचारा एक सुन्दर मूर्ति भेंट कर चुका है जो उसने अपने ड्रॉइंगरूम में रखी हुई है, और रहमान तो हमेशा ही उसका काम करता है। घर ढूँढ़ने में बड़ी मेहनत की थी उसने। मोटर के लिए भी उसे बहुत धक्के खाने पड़े। तारा ने तय किया कि कैलाश को स्वेटर बुनके देगी, और फ़्रांसिस को उसके घर के लिए फ़रनीचर का एक सेट भेंट करेगी, और रहमान को पार्कर ६१ फ़ाउन्टेनपेन ख़रीदकर देगी। पर इस स्वेटर का क्या होगा? नाप? जीवन के पास भी स्वेटर होगा। वह साथ ज़रूर लाया होगा अपना स्वेटर। उसीके घर गिनकर अंदाज़ लग जाएगा। कैलाश लगभग जीवन की ही तरह है, शायद ज़रा-सा दुबला होगा। पर स्वेटर के घर में कोई फ़र्क़ करने की ज़रूरत नहीं होगी। स्वेटर जीवन के ही नाप का ठीक आ जाएगा। और डिज़ाइन? डिज़ाइन अच्छा होना चाहिए, नई तरह का, मॉडर्न ..... तारा पन्ने उलट-पुलटकर देखने लगी। एक डिज़ाइन उसे पसन्द आ गया। उसे देखने लगी, समझने लगी।

बॉय क़ॉफ़ी का ट्रे लिए आया। जीवन भी आकर तारा के सामनेवाली कुरसी पर बैठ गया।

"कुछ सैंडविच, समोसे वगैरह मँगाऊँ ?" तारा ने पूछा।

"नहीं, कुछ नहीं। सिर्फ़ कॉफ़ी पीऊँगा। तुमने बहुत खिला दिया आज।"

तारा ने कॉफ़ी बनाई और एक प्याली जीवन को पकड़ाती हुई बोली: "दिल्ली तो बहुत ठंडा हो रहा होगा इन दिनों ?"

"काफ़ी ठंडा है। मगर ठंड तो अब पड़ेगी। जनवरी के हिसाब से तुम्हारा बम्बई कोई ख़ास ठंडा नहीं। यह सोचकर कि यहाँ पर भी ठंड होगी, मैं सारे कपड़े गरम लाया हूँ। शायद स्वेटर की तो यहाँ ज़रूरत ही नहीं पड़ेगी।"

"रात को पड़ेगी। अगर कोल्ड वेव आ गई तो यहाँ काफ़ी ठंढी हो जाएगी।"

"तुम बहुत बदल गईं, तारा।"

"कब देखा था पहले तुमने मुझे?"

"तीन साल हो गए। दिल्ली में।"

"तीन साल बहुत लम्बा समय होता है, जीवन। तीन साल में कौन नहीं बदल जाता। शहर और देश के नक़्शे बदल जाते हैं, फिर मैं तो इनसान हूँ। तुम भी तो बदल गए। अब तुम बड़े साहब लगने लगे हो। पुलिस की नौकरी में क्या मूँछें रखना ज़रूरी होता है?"

जीवन हँसा। "नहीं तो," वह बोला। "क्या मूँछें मुझ पर जँचती नहीं?"

"जँचती हैं। योंही पूछा क्योंकि पहले तुम्हारा चेहरा साफ़ था। पर यह मूँछें तुम पर अच्छी लगती हैं। मैं हमेशा सोचती थी कि तुम्हारे चेहरे पर किसी चीज़ की कमी है। शायद मूँछों की कमी थी," तारा ने मुस्कुराकर मज़ाक किया।

जीवन ज़ोर से हँस पड़ा। "एक ख़ुश ख़बरी सुनाऊँ?" उसने कहा।

"सुनाओ।" तारा उत्सुकता से जीवन को ताकने लगी।

"मुझे प्रमोशन मिल रहा है। डी. वाई. एस. पी. से मैं डी. एस. पी. बनाया जा रहा हूँ।"

तारा ने जीवन से हाथ मिलाकर कहा: "कॉनग्रैच्युलेशन्स। कब तक मिलेगा प्रमोशन?"

"यहाँ से लौटकर।" फिर तारा की आँखों में देखकर बोला: "तुम कब आओगी?"

तारा सकपकाई। "कहाँ?" उसने मतलब न समझने के ढंग पर पूछा।

"दिल्ली।"

"दिल्ली? दिल्ली देखने को तबीअत तो बहुत करती है, पर क्या करूँ, शूटिंग के मारे यहाँ से निकलना ही नहीं होता।"

"दिल्ली देखने के लिए नहीं, रहने के लिए कब आ रही हो?"

प्रश्न बिलकुल साफ़ था। बात फिराना मुश्किल था। तारा ने जीवन की ओर देखा। "पता नहीं," वह बोली। "शायद कभी नहीं।"

जीवन के दिल पर हथौड़ा पड़ा। हथौड़े जैसी ही किसी चीज़ की उसे आशंका थी। पर यह तो हथौड़ा भी नहीं घन मारा था तारा ने। "क्यों? क्या तुमने इरादा बदल दिया?"

"कैसा इरादा?"

"अपनी शादी की बात थी।"

"किसने की थी?"

"बूआजी ने और माताजी ने।"

"मुझे पता नहीं।"

"तुम्हें पता था ।"

"नहीं, मुझे नहीं पता था ।"

"मैंने भी चिट्ठियों में तुम्हें कई बार इशारा किया था मगर तुमने जानबूझकर हर बार मेरी बात उड़ा दी, ऐसी बनती रहीं जैसे मेरी बात ही समझ में न आई हो ।"

तारा मुस्कुराई । "मेरे फ़ैन मेल की अगर तुम चिट्ठियाँ पढ़ो तो दंग रह जाओगे । सारे के सारे बस इशारों में लिखा करते हैं । शादी की तरफ़ कितनों ही का इशारा होता है ।"

"मैं तुम्हारा फ़ैन नहीं हूँ, तारा । मैं तुम्हारा दोस्त हूँ, बचपन का दोस्त । हमारी शादी की बात तय पा चुकी थी । तुम्हारे पिताजी भी यही चाहते थे और तुम्हारी माँ भी यही चाहती हैं ।"

तारा ने जीवन के हाथ पर हाथ रखकर गम्भीरतापूर्वक कहा: "समझने की कोशिश करो, जीवन । मैं अब एक बेकार लड़की नहीं रही कि शादी करके किसी का घर बसा सकूँ । अब मैं एक सिनेमा स्टार हूँ । शायद मैं अब घर-गृहस्थी के लायक भी नहीं रही । ख़ुदमुख़्तार ज़िंदगी की मुझे आदत हो गई है जिससे मैं फूहड़ हो गई हूँ । अब शायद मुझसे गृहस्थी नहीं संभलेगी ।"

"ख़ूब संभलेगी," जीवन ने तारा का हाथ पकड़कर दबाते हुए कहा । "तुम्हें मैं जानता हूँ, बरसों से जानता हूँ । तुम ज़रा नहीं बदलीं । अब तुम बड़े बंगले में रहती हो, बड़ी मोटर है तुम्हारे पास, ख़ुद ड्राइव करती हो, बड़ी सिनेमा स्टार बनी हुई हो, पर, मैं कहता हूँ, तुम ज़रा नहीं बदलीं । तुम वही हो जिसे मैं बचपन से जानता आया हूँ, जिसे मैं बचपन से प्यार करता आया हूँ, और अब भी करता हूँ, और हमेशा करता रहूँगा । समझीं, तारा? अब मुझे और इंतज़ार करने को न कहो । अब मुझसे अकेले नहीं रहा जाता ।"

"किसी और से ब्याह कर लो ।"

"यह नामुमकिन है । क्या बात है? क्या अब मैं तुम्हें पसंद नहीं?"

"कैसी बातें करते हो?"

"तो फिर क्या बात है? क्या कोई और है?"

तारा ने उसकी ओर देखा ।

जीवन ने फिर कहा: "क्या किसी और को तुम चाहने लगी हो?"

"किसे?" तारा ने पूछा ।

"अपने हीरो को—रजनीकान्त को !"

तारा ज़ोर से हँस पड़ी । "कैसी बच्चों की-सी बातें करते हो !"

"पिक्चर में उसके साथ तुम्हारे सीन बड़े रोमांटिक थे । सीन देखकर मुझे तो लगा दाल में कुछ काला है ।"

तारा फिर हँसी ।

"बोलो न? क्या रजनीकान्त से उलझी हुई हो?"

"जानते हो? रजनीकान्त शादी शुदा है, दो बच्चों का बाप है, बहुत सुखी है वह।"

"शादी शुदा होने से और बाप होने से क्या होता है। मेरी आँखें धोखा नहीं खा सकतीं।"

"रजनीकान्त के साथ मेरे सीन देखकर तुम्हें जलन हुई थी?" तारा ने बड़ी दिलचस्पी के साथ मुस्कुराकर पूछा।

"बहुत," जीवन बोला। "तुम्हारी आँखों से तुम्हारे मन की बात झलक उठती थी। मैं जानता हूँ वह ऐक्टिंग न थी, असली बात थी, जिसे तुम छिपा न सकीं।"

तारा ने मन में कहा: 'मेरी ऐक्टिंग पर यह सबसे बड़ा कॉम्प्लिमेंट है कि जीवन भी ऐक्टिंग को सच समझ बैठा।'

जीवन ने कहा: "बोलो न, रजनीकान्त आ गया है हमारे बीच में?"

तारा मुस्कुराई। "नहीं," उसने कहा।

"तो फिर कौन है वह?"

"कोई नहीं।"

"तो फिर तुमने मुझे क्यों भुलाना चाहा?"

"तुम तो पागल हो! कैसी बहकी-बहकी बातें कर रहे हो। आओ चलें। बॉय।"

बॉय ने आकर बिल पेश किया। तारा ने अपना पर्स खोला पर जीवन ने चट पैसे चुका दिए।

तारा ने उठते हुए कहा: "चलो, तुम्हें होटल छोड़ दूँ। कहाँ ठहरे हुए हो?'

जीवन ने कहा: "ऐस्टोरिआ।" फिर बोला: "चलो, कोई पिक्चर देखने चलें।"

तारा ने अपनी घड़ी देखी। सवा-छै हो रहे थे। "कौन-सा पिक्चर?" उसने पूछा।

"कोई भी। चलो मेट्रो चलें।"

"वहाँ क्या चल रहा है?"

"पता नहीं। जो भी चल रहा हो।"

"ठहरो घर पर फ़ोन करके माँ की तबीअत पूछूँ," तारा ने कहा, फिर काउन्टर पर जाकर अपने फ़्लैट का नम्बर लगाया। श्यामू से बात की। माँ ठीक थीं। पाँच बजे डॉक्टर पटेल आए थे और माँ को देख गए थे। तारा ने कहा वह रात को देर से आएगी। मलहोत्रा साहब के साथ सिनेमा देखने जा रही है।

रास्ते में जीवन चुप रहा। वह रूठा हुआ था। तारा ने उसका दिल तोड़ दिया था। 'ज़रूर कोई है। अगर नहीं है, तो तारा ब्याह के विरुद्ध क्यों है? क्यों इस तरह खिंची हुई है? दिल खोलकर बात क्यों नहीं करती? बड़ी स्टार बन गई है तो इसका यह मतलब तो नहीं कि पुराना संबंध भी भुला दे। फिर क्या बात है? नई-नई स्टार बनी है। नया-नया शौक़ है। यह पब्लिसिटी, यह ख्याति, यह पैसा छोड़कर किसी

की पत्नी बनकर गृहस्थी चलाने का विचार अब उसे शायद नहीं भाता। अपना स्वतंत्र जीवन त्यागकर ब्याह के बंधन में फँसना उसे पसन्द नहीं। उसकी बातों से तो यही लगता है। अजीब गुत्थी है! बड़ी उलझन है!' पर जीवन ने ठान लिया कि वह तारा को रास्ते पर लाकर ही रहेगा। शायद इस काम में उसे कुछ समय लग जाए। आज तो पहला ही दिन है। अभी तो पंद्रह दिन और बाक़ी हैं। इस अंतरगत वह उससे रोज़ ही मिलता रहेगा और आहिस्ता-आहिस्ता उसे अपनी ओर आकर्षित करता रहेगा। उससे "हाँ" करवा कर छोड़ेगा। उसका सिनेमा में काम करना छुड़वाकर रहेगा। उसे दिल्ली ले जायेगा। उसे अपनी बनाकर रहेगा। तीन साल तक उसे दूर बम्बई में अकेली छोड़कर उसने बड़ी ग़लती की। इस बीच उसे चाहिए था कि बम्बई आकर उससे मिलता रहे। बड़ी भूल हुई। ख़ैर, बहुत नहीं बिगड़ी है बात। इतने दिनों बाद आज पहली मुलाक़ात हुई है। संभव है झिझक रही हो। उसने भी तो गधे की तरह छटते ही शादी की बात कर दी। मजे में सैर हो रही थी। बम्बई दिखा रही थी वह। दो-तीन रोज़ साथ-साथ बने रहने पर पुरानी स्मृतियाँ याद हो आतीं, पुराना सम्बन्ध ताज़ा हो आता, तब कहीं शादी-ब्याह की बात छेड़नी चाहिए थी। कितनी ही मॉडर्न क्यों न हो, लड़की अपने मुँह से तो एकदम नहीं कहेगी कि हाँ, मैं तुमसे शादी करने को तैयार हूँ, कब करते हो शादी?

सिनेमा हॉल में तारा के पास बैठा हुआ जीवन यही सब सोच रहा था। बग़ल में बैठी हुई तारा पिक्चर देखने में तल्लीन थी। न जाने क्या पिक्चर था। *मेट्रो* में प्रवेश करते हुए उसने बाहर पोस्टर तो देखा था पर नाम उसे याद न रहा। कॉमेडी पिक्चर था शायद क्योंकि पिक्चर में डेनी के था। तारा ख़ूब हँस रही थी। सारे लोग हँस रहे थे। जीवन उस अँधेरे में तारा को ताकने लगा। रह-रहकर तारा हँस रही थी। वह शायद जानती थी कि वह उसे ताक रहा है, पर उसने मुड़कर उसकी ओर न देखा, सामने देखती रही, हँसती रही। जीवन ने आहिस्ता-से अपना हाथ सरकाकर तारा के हाथ पर, जो कुरसी के दस्ते पर पड़ा था, रख दिया। तारा का गर्म हाथ खिसककर दूर हो गया और तारा परदे पर दृष्टि जमाये हँसती रही।

इन्टरवल में जीवन ने दो आइस्क्रीम लिए। एक तारा को दिया और दूसरा उसने खुद खाया। पिक्चर शुरू हुआ तो तारा दोनों हाथ आपनी गोद में रखे, परदे पर आँखें जमाए, हँसने लगी।

खेल समाप्त होने पर जीवन को लेकर तारा *ऐस्टोरिआ* होटल पहुँची। साढ़े नौ बज रहे थे।

"अच्छा, जीवन, तो कल मिलेंगे," तारा ने कहा।

"उतरोगी नहीं? मेरे साथ खाना खाकर जाओ," जीवन ने गाड़ी से उतरते हुए कहा।

"नहीं, जीवन, देर हो जाएगी। वरली जाना है। माँ की तबीअत अच्छी नहीं

है। नौ दिनों के बाद छुट्टी मिली मगर मैं सुबह से पाँच मिनट भी उनके पास नहीं बैठी। अब चलती हूँ।"

जीवन ने यह सोचकर कि बात न बिगड़ने पाए मज़ाक़ का सहारा लिया और मुस्कुराकर बोला : "जैसी मरज़ी। जा तो रही हो पर सपने में ज़रूर आओगी आज रात।"

तारा भी मुस्कुराई। "होटल का फाटक रात को बंद हो जाता है," उसने कहा, "फिर कोई नहीं अंदर आ सकता।"

जीवन हँसने लगा और तारा चली गई। वह होटल के सामने खड़ा हुआ तारा की दूर जाती हुई गाड़ी को देखने लगा। ज़रा देर में गाड़ी के बड़े-बड़े, लाल-लाल बैक लाइट्स बहुत दूर जाकर अंधकार में विलीन होगए। जीवन मुड़ा और होटल के काउन्टर पर आकर उसने कमरे की चाबी ली।

"खाना तैयार है," रिसेप्शनिस्ट ने डाइनिंगरूम की ओर संकेत करते हुए कहा।

"मेरे कमरे में भिजवा दीजिए," जीवन बोला और लिफ़्ट के पास जाकर उसने बटन दबाई।

ख़ाली लिफ़्ट नीचे आया। जीवन दरवाज़ा खोलकर अंदर गया और फिर दरवाज़ा बंद करके उसने दूसरी मंज़िल की बटन दबाई। लिफ़्ट ऊपर की ओर सरकने लगा, बिना आवाज़ के, जैसे आदमी, बिना आवाज़ के, सपने में उड़ता है। वह सोचने लगा — तारा के बारे में। वह जानता था आज रात तारा सपने में नहीं आएगी; क्योंकि आज रात उसे नींद नहीं आनेवाली है।

१४

"आपका टेलीफोन आया है, साहब।"

"किसका है? नाम पूछो।"

"कोई मिस पारिख हैं।"

कैलाश ने बाथरूम का दरवाज़ा खोला और तौलिये से बदन पोंछता हुआ बाहर निकल आया। "ला, मेरा ड्रेसिंग गाउन दे," उसने नोकर से कहा। शंकर बेडरूम में गाउन लाने चला गया और कैलाश ने रिसीवर उठाया। "हलो, कौन, रति?" उसने पूछा।

"हाँ, मैं हूँ," टेलीफ़ोन में आवाज़ आई।

"कहाँ से बोल रही हो?"

"*शांतिनिवास* से।"

"कब आईं?"

"कल। तुम कैसे हो?"

"ठीक हूँ। कै दिन रहीं तुम कश्मीर?"

"तीन महीने। तुम क्यों नहीं आए? मैंनें लिखा था आने के लिए। बड़ा अच्छा मौसम था। तुम्हें मेरी चिठ्ठी नहीं मिली?"

"मिली थी—" कैलाश ने कहा और गीला तौलिया निकालकर शंकर को पकड़ा दिया। उसके नंगे बदन पर शंकर ड्रेसिंग गाऊन पहनाने लगा। "पर क्या करूँ, मेरा शूटिंग चल रहा है। दो-दो पिक्चरों का शूटिंग हो रहा है।"

"आज क्या कर रहे हो।"

"शूटिंग।"

"आज भी है?"

"हाँ।"

"हम लोग तुम्हारी शूटिंग देखने आएँ आज?"

"हम लोग कौन?"

"मैं और कान्ति और उमा।"

"हाँ, हाँ, ज़रूर आओ।"

"कहाँ हो रही है शूटिंग ?"
"वहीं — दादर में — *बॉम्बे स्टुडिओज़* में।"
"कब से रहोगे तुम वहाँ ?"
"सवा-नौ बजे मैं वहाँ जाऊँगा।"
"दिन भर होगी न तुम्हारी शूटिंग ?"
"हाँ, दिन भर।"
"तो हम लोग कब आएँ ?"
"जब तुम्हारी मरज़ी।"
"तो हम लोग साढ़े-नौ बजे पहुँच जाएँगे। मैं शूटिंग शुरू से देखना चाहती हूँ।"
"ठीक है। खाना हमारे साथ ही खाना।"
"अच्छी बात।"
"कान्ति कैसे हैं ?"
"ठीक हैं।"
"कश्मीर से मेरे लिए तुम क्या लाई ?"
"कुछ लाई हूँ।"
"क्या ?"
"टेलीफ़ोन पर नहीं बताऊँगी। स्टूडिओ ला रही हूँ तुम्हारा प्रेज़ेंट।"
"अच्छा," कैलाश ने मुस्कुराकर कहा। "और सुनाओ, रति, और क्या ख़बर है ? रेजि की कोई चिट्ठी आई थी तुम्हें ?"
"हाँ जब से वह गया है दो चिट्ठियाँ आ चुकी हैं उसकी। एक मुझे कश्मीर में मिली थी और एक यहाँ लौटने पर मिली। तुम्हें याद दिलाने को कहा है। तुम्हें भी शायद उसने लिखा था।"
"हाँ, एक चिट्ठी आई थी उसकी, मगर मैं उसका जवाब न दे सका। आज-कल में दूँगा।"
"तुम बड़े सुस्त आदमी हो !" रति ने शिकायतन कहा। "न चिट्ठी लिखते हो, न टेलीफ़ोन करते हो। देखो, मैंने बम्बई आते ही तुम्हें फ़ोन किया।"
"मुझे अगर पता होता कि तुम यहाँ पहुँच गई हो तो मैं भी तुम्हें ज़रूर फ़ोन करता।"
"पिछली बार कश्मीर जाने से पहले मैं यहाँ दो रोज़ ठहरी थी। तुम्हें चिट्ठी द्वारा सूचित किया था मैंने। मगर तुमने फ़ोन नहीं किया मुझे।"
"तब मेरे घर टेलीफ़ोन नहीं था।"
"बाहर से तो कर सकते थे।"
"हाँ, बाहर से तो कर सकता था।"
"तो फिर क्यों नहीं किया ?"

कैलाश हँस पड़ा, बोला : "भई गलती हो गई, रति। क्या करूँ इतनाकुछ काम रहता है मुझे कि मेरा दिमाग़ ठिकाने नहीं रहता।"

रति हँसने लगी। "अच्छा, तो अब तुम्हारा दिमाग़ ठिकाने लाना पड़ेगा," उसने कहा। "क्या कर रहे हो शाम को?"

"पता नहीं। शायद आज देर तक शूटिंग करना पड़े। बड़ा लम्बा-चौड़ा सीन है।"

"अच्छा, कैलाश, तो स्टूडिओ में ही मिलकर शाम का प्रोग्राम बनाएँगे।"

"अच्छी बात है।"

रति ने टेलीफोन बंद कर दिया। बंद करने से पहले उसने 'चीअर्स' भी नहीं कहा, 'सो लॉंग' भी नहीं कहा, कुछ नहीं कहा। फट-से बंद कर दिया। यह रति का अपना ढंग था। एक बात के बीच दूसरी बात ले उठती थी। सिनेमा जाने को निकलती तो जुहू पहुँच जाती। जिस तरह वह एक जगह जमकर नहीं ठहरती, उसी तरह उसका दिमाग़ भी एक बात पर अधिक समय तक स्थिर न हो पाता था। शरीर और मन — दोनों चलायमान थे, दोनों भटका करते थे। लखपतियों का पैसा बहुधा उनके बेटे-बेटियों को इसी प्रकार निकम्मा कर देता है; उन्हें किसी स्थान से, किसी काम से, किसी व्यक्ति या वस्तु से स्थायी समाधान नहीं मिलता; इसीलिये वह सदा भटकते रहते हैं, जैसा रति भटकती रहती है — कभी पूना, कभी बम्बई, कभी अहमदाबाद, कभी ऊटी, कभी बंगलोर, तो कभी कश्मीर। लड़की अच्छी है, खुशमिज़ाज है, मिलनसार है, पर उसके साथ आध घंटा बात करने पर आदमी थक जाता है। बहुत ऊटपटांग बात करती है, कभी इधर की तो कभी उधर की। कोई बड़ी बात, गम्भीर विषय पर चर्चा या कोई अनोखे विचार या भावना पर नहीं बोलती। बहुत छोटी बात करती है। फरनीचर की बात करती है या मौसमी फूलों की बात या हैंडलूम साड़ियों की चर्चा या इसकी-उसकी बात करती है, बच्चों की तरह बात करती है। फिर भी अच्छी है, रति। अपने ढंग की निराली है। इतनी धनी और इतनी आधुनिक होते हुए भी अंदर से स्वदेशी है। कुछ पोज़ भी है। चालाक भी है वह। दीखने में भोली लगती है पर उतनी भोली नहीं है, या शायद है भी। लहरी है ज़रा। पल में तोला और पल में माशा। अजीब चीज़ है यह लड़की — यह रति! महीने, दो महीने बाद शाम को घंटे, आध-घंटे मनोरंजन के लिए अच्छी है, रेडिओ सीलोन से अधिक अच्छी है।

शंकर ने घोषित किया : "ब्रेकफास्ट लग गया, साहब।"

कैलाश जाकर टेबल पर बैठ गया और ब्रेकफास्ट खाने लगा, खाते-खाते सोचने लगा, जैसे कि उसकी आदत थी। आज के सीन के विषय में सोचने लगा। पर सीन के विषय में सोचते हुए तारा का विचार प्रबल रूप से उठने लगा। आज-कल, पिछले दस रोज़ से — जब से जीवन मलहोत्रा आया हुआ है — तारा का विचार ही उसे घेरे रहता है। जीवन बुरी तरह पड़ा हुआ है तारा के पीछे। ठहरा तो होटल में है

कैलाश हँस पड़ा।

शंकर दो प्लेटें लाकर टेबल पर रख गया।

रहमान ने फिर कहा : "बात हँसी में न टालो, कैलाश। सच कहता हूँ, अब एक दुलहन ले आओ।"

"सुबह-सुबह क्यों बकवास कर रहे हो?" कैलाश ने कहा। "अभी-अभी तो मुझे सफलता मिली है। अभी कितना कुछ करना है मुझे। अगर मैं शादी-ब्याह के चक्कर में पड़ गया तो बस मेरा और मेरे आर्ट का ख़ात्मा ही समझो।"

"यार, पचास मर्तबा यही डायलॉग सुन चुका हूँ तेरे मुँह से। तू यह जो कहता है, यह ऊपरी दिल से कहता है। दिल के अंदर कुछ और बात है।"

"दिल से कह रहा हूँ। मेरे पास वक़्त कहाँ जो —"

"तुम्हें वक़्त नहीं बर्बाद करना पड़ेगा दुलहन खोजने में," फ़्रांसिस ने कहा।

रहमान बोला : "हाँ। तुम 'हाँ' कर दो, दुलहन हम खोज लाते हैं।"

कैलाश मुस्कुराया। वह जानता था दोनों साज़िश करके यहाँ आए हैं। "कहाँ से?" उसने पूछा।

"इससे तुम्हें मतलब? तुम 'हाँ' भर कर दो।"

"वाह जी! मुझे अपनी पत्नी का — होनेवाली पत्नी का — पता-ठिकाना पूछने का भी हक़ नहीं?"

रहमान गम्भीर होकर बोला : "याद है, कैलाश, पिछले साल, जब तुम *ग्रेट इंडिआ पिक्चर्स* में असिस्टंट डिरेक्टर थे, एक रोज़ *कोलाबा कॉर्नर* में हम लोगों में शादी-ब्याह पर बहस छिड़ गई थी? मैंने कहा था : 'जब बाज़ार में दूध मिलता हो तो घर में गाय रखने की आदमी को क्या ज़रूरत है?' और तुम्हारा क़ौल इसके बिलकुल ख़िलाफ़ था!"

कैलाश ने पूछा : "क्या कहा था मैंनें?"

"तुम्हारी राय थी कि आदमी को चाहिए कि शादी जल्दी करे। तुम्हारा कहना था कि पचीस से अट्ठाईस साल के दरमियान आदमी ने शादी कर ही डालनी चाहिए वरना सेहत को, समाज को, और देश को नुक़सान पहुँचता है। कुछ लोग चालीस साल तक आवारागर्दी करने के बाद जब थक जाते हैं तब कहीं जाकर शादी करते हैं। थकेहारे आदमी से कब क्या काम बना है। बच्चे की उम्र दस साल की होती है तो बाप की पचास साल की। दूसरे बच्चों के बाप जवान होते हैं और घर जाकर वह बच्चे अपने बाप के साथ खेलकूद सकते हैं। पर यह दस साल का बच्चा और उसके नन्हे भाई-बहन अपने पचास सालाना बाप के साथ क्या खेलेंगे? जब सबसे छोटा बच्चा दो-तीन साल का ही होता है तो बाप मर चुका होता है। मैंने उस वक़्त तुम्हारी मुख़ालिफ़त की थी, पर वाक़ई तुमने उस वक़्त बिलकुल सच कहा था। अगर किसी को तमाम उम्र शादी ही नहीं करनी हो — जैसा कि हमारा फ़्रांसिस है — तो बात

दीगर है, पर अगर शादी करनी हो तो इनसान जल्दी शादी करे। यानी मेरा मतल है कि अब तुमने शादी कर डालनी चाहिए। तुम तीस के हो चले हो, कामयाबी की चोटी पर पहुँचे हुए हो, धन-दौलत सबकुछ हासिल है। तुम्हारे लिए यही मौक़ा है, यार, हनीमून मनाने का।"

कैलाश और फ्रांसिस दोनों हँस पड़े। खाते-खाते रहमान को हिचकी लगी तो वह पानी पीने लगा और कैलाश हँसता हुआ उठ खड़ा हुआ और जाकर टेलीफ़ोन का नम्बर घुमाने लगा।

"हलो —" टेलीफ़ोन में तारा की आवाज़ सुनाई दी।

"आज के सीन के डायलॉग में मैंने थोड़ा फ़र्क़ किया है। सुबह छोकरे के हाथ नए डायलॉग तुम्हारे पास भिजवाए थे। मिल गए?" कैलाश ने कहा।

"हाँ, मिल गए हैं। मैंने याद भी कर लिए।"

"माँजी की तबीअत कैसी है आज?"

"आज तो ठीक मालूम होती है। नर्स रात भर यहीं रही। दिन को भी यहीं रहेगी।"

"तुम जल्दी आना स्टूडिओ। आज बहुत इम्पॉरटंट सीन है।"

"अभी नौ बजे डॉक्टर साहब आने वाले हैं। बस उनके जाते ही मैं निकलूँगी। मेकअप घर से करके आ रही हूँ।"

"अच्छा," कैलाश ने कहा और टेलीफ़ोन रख दिया।

तारा भी टेलीफ़ोन रखकर उठ खड़ी हुई, मुड़ी तो खुले हुए दरवाज़े में जीवन खड़ा था।

"आओ, जीवन, अंदर आओ," तारा ने कहा।

जीवन ने अन्दर आते हुए पुछा: "सवेरे-सवेरे किस से बातें हो रही थीं टेलीफ़ोन पर?"

"कैलाश का फ़ोन था," तारा ने कहा। "आज के काम के बारे में बात कर रहे थे।"

"बड़ी दिलचस्पी लेता है वह तुम्हारे काम में!"

"मेरा डिरेक्टर जो है," कहती हुई तारा अपने बेडरूम की ओर चली गई।

जीवन चुप रहा, जेब से सिगरेट केस निकालकर सिगरेट सुलगाने लगा। अब वह जानता था तारा किससे उलझी हुई है। इन दस-ग्यारह दिनों में उसने बहुत कुछ देखा था। स्टूडिओ में, सेट पर, कैलाश के सामने तारा की कुछ और ही दशा हो जाती थी। तारा के मन के भाव उसकी आँखों में दिखाई देने लगते थे। प्रेम न कहीं छिपा है, न छिपेगा। कैलाश के प्रति तारा का प्रेम भी न छिप सका था, जीवन की नज़रों से न छिप सका था। पर वह मनमसोस कर रह गया। वह तारा पर यह

प्रकट करना नहीं चाहता था कि वह सबकुछ जान गया है। स्टूडिओ के मेकअप रूम में, सेट पर, प्रोजेक्शन-रूम में, रिहर्सल के समय, या शूटिंग के समय कैलाश और तारा का परस्पर संबंध देखकर जीवन जल उठता था; उसका मन ख़राब हो जाता था। कैलाश कितने समीप होकर तारा से बात करता था! कितने आहिस्ता से बोलता था! किसी को कुछ समझ में नहीं आता, कुछ सुनाई नहीं देता कि वह क्या बोल रहा है, पर तारा उसकी बातें समझ जाती थी और जैसा वह कहता उस तरह ऐक्टिंग करती थी। विचित्र सम्बंध था दोनों में! एक दूसरे के इशारे को समझते थे — इस प्रकार कि क्या कोई पति-पत्नी समझेंगे। और यह साला कैलाश भी अजीब तरह से हक़ जमाए हुए था तारा पर, मानो वह उसकी रखैल हो। जहाँ-तहाँ तारा के बदन को छूता रहता, कभी बाँह पकड़कर बात करता, कभी कंधा पकड़कर, कभी उसके सर की लटें सँवारता, कभी उसका आँचल ठीक करता — और इस तरह सबकुछ करता मानो तारा उसकी अपनी चीज़ है, जिसपर उसे हर तरह का अधिकार है। जीवन रोज़ तारा के साथ स्टूडिओ जाता था और रोज़ ही जलता था। बीच में तीन दिन तारा का शूटिंग अली हुसेन के सेट पर हुआ था, और कैलाश से तीन दिन छुटकारा मिला था। आख़िर यह अली हुसेन भी तो डिरेक्टर है, और नामी डिरेक्टर है। यह क्यों तारा के साथ वैसी हरकतें नहीं करता जैसी कैलाश करता है? कितना सभ्य है अली हुसेन! कितनी शराफ़त और तमीज़ से पेश आता है तारा के साथ! कभी 'आप' के सिवा बात नहीं करता। कितनी आवभगत की उसने जीवन की उन तीन दिनों में! सेट पर उसके बैठने को आराम कुरसी रखवाता था, लंच में घर से ख़ास खाना पकवाकर मँगवाता था। और यह बदतमीज़, कैलाश सिन्हा का बच्चा तो शूटिंग के समय सेट पर जीवन को कचरे के समान समझता था। उसके लिए जीवन कोई हस्ती न था और न जीवन का कोई अस्तित्व ही था।

जीवन के मन में कई बार आया कि कैलाश के साथ वह किसी न किसी बहाने झगड़ा मोल ले ले। पर किस बहाने? कैलाश बात करने में तो बड़ा सभ्य था। जब कभी जीवन से बात करता तो बड़ी सभ्यता के साथ, और बात बड़ी अच्छी करता, दिलचस्प बात करता। जीवन को कैलाश आदमी पसंद था। कितना होशियार है वह! कितना पढ़ा-लिखा है! पर तारा जब कैलाश की तरफ़ देखती तो जीवन के सीने में नश्तर की पीड़ा होने लगती, और उसका जी करता कि कैलाश का गला दबा दे। पर वह लाचार था।

जीवन अपना दिल थामकर तारा के पीछे पड़ा हुआ था, मौक़ा तलब था। थोड़ा-थोड़ा करके अनेक अवसरों पर उसने सब मिलाकर तारा से अबतक बहुतकुछ कह दिया था। अगर एक मौक़ा और मिला तो वह शादी की बात फिर छेड़ेगा। 'हाँ' करवा के रहेगा। अभी तो चार दिन और बाक़ी हैं उसके दिल्ली लौटने में। तब तक वह तारा को सीधे रास्ते पर ले आएगा। आख़िर उसने भी कच्ची गोलियाँ नहीं खेली

हैं। लड़कियों के सम्पर्क में वह भी आया है। लड़कियों को खुश करना उसे भी आता है। तारा को वह पटा लेगा। आखिर पुरानी दोस्ती भी तो अपना महत्त्व रखती है। कैलाश किस खेत की मूली है। ऐसे बहुत कैलाश देखे हैं। पर यह भी तो संभव है कि तारा और कैलाश के बीच कोई बात न हो और यह सारा जीवन का भ्रम ही भ्रम हो। पर कैलाश को देखकर तारा की आँखों में जो छलक उठता है वह क्या है? और कैलाश — उसकी आँखों में तो कभी प्यार नहीं देखा। तो क्या यह एकतरफ़ा प्यार है? क्या तारा ही उससे प्यार कर रही है और वह तारा को प्यार नहीं करता? क्या वास्तव में, जैसा कि सुना है, कैलाश अपने काम की धुन में पागल है? क्या सच में कैलाश के मन में तारा के प्रति कोई प्रेम-भावना नहीं है? या है मगर वह प्रकट करना नहीं चाहता?... जीवन किसी निर्णय पर न पहुँच सका। 'अक़्लमंदी इसी में है,' उसने सोचा, 'कि जल्द से जल्द तारा को सिनेमा से निकालकर दिल्ली ले चलूँ। आग के पास घी को रखा ही क्यों जाए?'

तारा ने बाहर आकर कहा, "आओ, जीवन, ब्रेकफ़ास्ट लग गया।"

तारा के साथ जीवन डाइनिंगरूम में चला गया और ब्रेकफ़ास्ट खाने लगा।

तारा के हाथ में एक काग़ज़ था। वह खाती जा रही थी पर उसकी दृष्टि काग़ज़ पर ही जमी हुई थी।

"क्या पढ़ रही हो?" जीवन ने पूछा।

"आज के सीन के डायलॉग हैं," तारा ने कहा; "उन्हें दुहरा रही हूँ।"

थोड़ी देर बाद तारा ने देखा जीवन उसे ताकता हुआ मुस्कुरा रहा है। "क्यों, क्या बात है?" उसने पूछा। "हँस क्यों रहे हो?"

"ऐसे पढ़ रही हो जैसे स्कूल के बच्चे पढ़ा करते हैं," जीवन ने कहा, फिर बोला: "दूसरे आर्टिस्ट्स तो, मैंने देखा है, सेट पर ही याद करके फ़ौरन डायलॉग बोल देते हैं; फिर तुम क्यों डायलॉग घर से याद करके जाती हो?"

"मेरी याददाश्त ज़रा कमज़ोर है। मुझे जल्दी याद नहीं होता," तारा ने कहा।

"तुम्हारी याददाश्त बहुत तेज़ है, मैं जानता हूँ। तभी तो मेरी समझ में यह बात नहीं आई।"

"सब आर्टिस्टों को घर से याद करके जाना चाहिए।"

"मगर उस दिन अली हुसेन के सेट पर —"

"अली हुसेन की बात और है। वह बेचारा तो सारे वक़्त आर्टिस्टों की जी-हुज़ूरी में लगा रहता है। अगर कैलाश के सेट पर कोई आर्टिस्ट बिना डायलॉग याद किए पहुँच जाय तो उसकी ख़ैर नहीं।"

"बहुत डरती हो तुम इस कैलाश से?"

"ठीक तो है उसका तारीक़ा। जब आर्टिस्ट को डायलॉग ही बराबर याद न होंगे

तो वह ऐक्टिंग क्या ख़ाक करेगा। आधा ध्यान तो उसका डायलॉग याद करने में रहेगा।"

"अजीब ज़िंदगी है तुम्हारी।"

"अच्छी है!"

"सारा दिन स्टूडिओ में कोल्हू के बैल की तरह काम करती हो। तीन-तीन घंटे डांस-रिहर्सल करती हो। घर में भी वही हाल। सुबह डांस प्रैक्टिस, रात को डायलॉग। मुझे बम्बई आए ग्यारह दिन हो गए। तुम्हें इतनी भी फ़ुरसत नहीं मिली कि थोड़ी देर इतमीनान से बैठकर मेरे साथ बात करो। दूसरे भी तो स्टार्स हैं सिनेमा में। सुना है वह लोग खूब सैर-सपाटे करते हैं, रेस जाते हैं, घूमते हैं, मौज उड़ाते हैं।"

"उनकी बात और है, जीवन। अपना-अपना ढंग होता है। अपनी-अपनी तबीअत होती है। मुझे नई-नई सफलता मिली है। जानते हो यह सफलता प्राप्त करने के लिए कितना कष्ट उठाना पड़ा है, कितनी मेहनत करनी पड़ी है? मुझे ज़िंदगी और मौत से लड़ना पड़ा है, जीवन। यह चान्स, यह सफलता मुझे यूँही नहीं मिल गई। अब अगर मैं अपनी कामयाबी पर इतराने लगी, फ़ालतू बातों की ओर ध्यान देने लगी तो अपनी जगह मैं खो बैठूँगी। मैं अपना स्थान खोना नहीं चाहती, जीवन। नहीं, इतनी जल्दी नहीं। अभी तो मैं अपने आपको सफलता की पहली सीढ़ी पर समझती हूँ।"

"मैं समझता हूँ तुम इस वक़्त सफलता के शिखर पर हो। तमाम स्टार्स में आज तुम्हारा नाम अौवल है।"

"यह एक भ्रम है, जीवन; लोगों का भ्रम है। मैं जानती हूँ कि जो सफलता मुझे मिली है वह एक संयोग है। इसकी असली हक़दार मैं नहीं, कैलाश हैं। कहानी और मेरा पात्र ही कुछ इस तरह सुंदर थे कि लोगों को मैं जँच गई। मैंने कुछ विशेष नहीं किया, मुझे कुछ विशेष नहीं करना पड़ा, मगर अब करना पड़ेगा। हर पिक्चर में '*मिट्टी*' की तरह ही तो मुझे रोल नहीं मिलेंगे जो कि मुझ पर पूरे-पूरे फ़िट आते हों।"

"फिर भी इतनी मेहनत करने की ज़रूरत? आख़िर तुम सदा तो सिनेमा स्टार बनी नहीं रहोगी।"

"क्या मतलब?" तारा ने साश्चर्य पूछा।

"बूआजी कह रही थीं कि तुमने सिनेमा लाइन जो जाइन की है यह शौक़िया की है। अब तो तुम्हारा शौक़ पूरा हो गया होगा?"

"नहीं, जीवन। अभी पूरा नहीं हुआ," तारा ने मुस्कुराकर कहा। "अभी तो मैंने मंच पर प्रवेश मात्र किया है। अभी तो सारा खेल बाक़ी है।"

जीवन ने कहा: "कैसा खेल?"

तारा सहसा गम्भीर होकर बोली: "सुनो, जीवन। तुम जब से आए हो मैंने अपने

बारे में, तुम्हारे बारे में बहुत कुछ सोचा है। तराजू के एक पल्ले में मैंने अपना काम और करीअर रखा, और दूसरे में तुम्हारे साथ घर-गृहस्थी की योजना। पहला पल्ला सदा ही भारी रहा।"

"तुम कहना क्या चाहती हो?" जीवन ने तारा को ताककर पूछा।

"यही कि मैं अपना काम और करीअर छोड़ने के लिए तैयार नहीं।"

"मेरे लिए भी नहीं?"

"किसी के लिए भी नहीं।"

"क्यों ?"

"क्योंकि मेरा काम, मेरी कला मेरे लिए एक साधना है। अपनी साधना में मैं किसी तरह की बाधा या रुकावट नहीं डालना चाहती।"

"कैसी रुकावट?"

"सिनेमा में काम भी करूँ और गृहस्थी भी चलाऊँ—एक साथ यह दोनों मुझसे नहीं हो सकते।"

"तो सिनेमा छोड़ दो। मेरे साथ दिल्ली चली चलो। घर सम्हालना। वह भी बहुत बड़ा काम है, तारा।"

तारा हँस पड़ी, क्योंकि बात बहुत गम्भीर हो चली थी। अब बात को हँसी में उड़ा देना ही उचित था।

"क्यों, हँस क्यों रही हो?" जीवन ने पूछा।

"यह मुझसे नहीं होगा," तारा ने कहा। "मैं अपना काम छोड़कर दिल्ली नहीं आ सकती।"

"आखिर कब तक बनी रहोगी सिनेमा स्टार?"

"पता नहीं।"

"आखिर एक न एक दिन तो तुम्हें शादी की बात सोचनी ही पड़ेगी।"

"शायद।"

"तो फिर ?"

"तब देखा जाएगा।"

जीवन ने तारा का हाथ अपने हाथ में लेते हुए कहा: "तुम चाहती हो मैं तब तक तुम्हारे लिए इंतज़ार करूँ?"

तारा ने अपना हाथ हटा लिया। "नहीं," वह बोली। "तुम क्यों इंतज़ार करो? तुम शादी कर लो।"

"किससे।?"

"किसीसे भी। दिल्ली में तो तुम बहुतों को जानते होगे। वह सब मुझ जैसी फूहड़ के मुक़ाबले में अच्छी ही होंगी।"

जीवन ठहाका मारकर हँस पड़ा। इस समय बात को ज़्यादा खींचना उसने भी

उचित न समझा। लगातार तारा के पीछे पड़े रहने से इतना तो अवश्य हुआ कि वह अब इन दिनों शादी-ब्याह के बारे में सोचने लगी है। दिल्ली जाने में अभी चार दिन बाक़ी हैं। तब तक मना लेगा उसे। हर लड़की 'ना' करती है। पर उनकी 'ना' को 'हाँ' में बदलते देर नहीं लगती। प्रकट उसने कहा: "तुम्हारी साधना को भंग कर दिया आज मैंने—तुम्हें डायलॉग नहीं याद करने दिया।"

"याद हैं मुझे, तारा ने मुस्कुराकर कहा। "रात में याद कर लिए थे। इस वक़्त तो मैं सिर्फ़ दुहरा रही थी उन्हें। तुमने कुछ खाया नहीं। एक अंडा क्यों छोड़ दिया?"

"बस, काफ़ी खाया है।"

"एक कप कॉफ़ी और लोगे?"

"अच्छा।"

जीवन ने प्याली बढ़ा दी और तारा उसमें केतली से कॉफ़ी उँड़ेलने लगी। इसी समय श्यामू शोर मचाता हुआ अंदर दौड़ा आया।

"मेम साहब—मेम साहब—" वह बोला, "माँजी की तबीअत ख़राब हो गई! वह कैसी तो कर रही हैं!"

तारा केतली छोड़कर उठ खड़ी हुई। उसके मुँह से एक हलकी-सी चीख़ निकली। अंदर को लपकते हुए उसने घबराई हुई आवाज़ में श्यामू से कहा: "देखो, डॉक्टर को फ़ोन करो। फ़ौरन आने के लिए कहो।"

तारा के पीछे ही जीवन भी माँ के कमरे की ओर लपक पड़ा। श्यामू टेलीफ़ोन पर पहुँचकर नम्बर घुमा ही रहा था कि दरवाज़े की घंटी बज उठी। श्यामू ने दौड़कर दरवाज़ा खोला तो डॉक्टर पटेल खड़े थे।

"जल्दी आइए, डॉक्टर साहब। मैं आप ही को फ़ोन कर रहा था," श्यामू ने कहा।

"क्यों, क्या हुआ?" कहते हुए डॉक्टर पटेल तेज़ी से माँ के कमरे की ओर जाने लगे।

अंदर जाकर डॉक्टर ने देखा माँजी बिस्तर पर बेहोश पड़ी थीं। सारा चेहरा पसीने से तर था। नर्स, तारा और जीवन पलंग को घेरे परेशान खड़े थे।

माँ के कंधों को हिलाती हुई तारा कह रही थी: "माँ—माँ—माँ! क्या हो गया माँ को!..... डॉक्टर साहब, माँ को यह क्या हो गया?"

डॉक्टर ने नब्ज़ देखी, फिर आँखें, फिर अपने बैग में से एक इंजेक्शन निकालकर बनाने लगे। नर्स से उन्होंने पूछा: "लंच दिया था?"

"जी," नर्स ने उत्तर दिया।

"क्या दिया था?"

"चिकन सूप, दलिया और अंगूर।"

तारा की ओर देखकर डॉक्टर ने कहा: "घबराइए नहीं; कमज़ोरी की वजह से बेहोश हो गई हैं।"

तारा सहमी हुई खड़ी थी। उसकी आँखें लबालब भर आई थीं।

नर्स ने माँ का हाथ ठीक किया और डॉक्टर ने इंजेक्शन दिया। सब लोग माँ को ताकने लगे। कोई सात या आठ मिनट के बाद माँ की पलकें हिलीं और चेहरे का तनाव दूर होने लगा, होंठ फड़के, और फिर माँ ने धीरे धीरे-आँखें खोल दीं। सामने तारा खड़ी हुई थी।

"तारा—बेटी तारा!"

"अब कैसा लग रहा है, माँ?"

माँ ने दो-एक बार आँखें मिचमिचाईं, फिर पूरी खोल दीं। चारों ओर नज़र घुमाकर वह लड़खड़ाती हुई आवाज़ से बोलीं: "अच्छी हूँ, बेटा। क्या हो गया? तुम सब इतने घबराए हुए क्यों हो?"

तारा ने कहा: "तुम बेहोश हो गई थीं, माँ। डॉक्टर साहब ने इंजेक्शन दिया तब तुम होश में आई हो।"

डॉक्टर ने माँ की नब्ज़ देखी। "घबराने की कोई बात नहीं। अब आप ठीक हैं।"

माँ ने ऊपर छत की ओर दूर—कहीं मील, दो मील दूर—देखते हुए थकी हुई आवाज़ में कहा: "इस तरह इंजेक्शन दे-देकर कब तक काम चलेगा, डॉक्टर साहब? मैं जानती हूँ अब मेरा समय आ गया।"

"यह आप कैसी बातें करती हैं, बहनजी। ज़रा कमज़ोरी है, सो आराम करने से और दवाई से दूर हो जाएगी," डॉक्टर ने ढाढ़स बँधाते हुए कहा, फिर मुस्कुराकर वह तारा की ओर देखते हुए बोले: "और फिर आप इतनी जल्दी जा कैसे सकती हैं? अभी तो आपको तारा देवी के हाथ पीले करने हैं।"

डाइनिंगरूम में टेलीफ़ोन की घंटी बज रही थी। तारा ने श्यामू की ओर देखा तो वह टेलीफ़ोन लेने दौड़ गया।

माँ कह रही थीं: "इच्छा तो यही थी, डॉक्टर साहब, कि जल्दी से तारा का ब्याह कर देती..... अपने को यह कलाकार कहती है..... आर्टिस्ट..... हुँ!..... यह सब धोखा है..... तू अपने आपको धोखा दे रही है, बेटा। याद रख—बिना—बिना पति और बाल-बच्चों के—बिना घर-गृहस्थी के नारी का जीवन अधूरा रहता है, बेटा।"

"माँ। तुम भी इस वक़्त नाहक़ परेशान हो रही हो। तुम अच्छी तो हो जाओ फिर—"

"स्टूडिओ से फ़ोन आया है, मेम साहब," श्यामू ने दरवाज़े पर पहुँचकर कहा। "आपको जल्दी बुलाया है।"

"कह दो मैं आज नहीं आ सकती। माँ की तबीअत—"

"नहीं, बेटा, मुझे कुछ नहीं हुआ। अब ठीक हूँ। तू जा काम पर," माँ ने कहा।

"कह दो अभी आती हैं।" डॉक्टर ने कहा।

तारा ने माँ का हाथ पकड़कर कहा: "माँ, तुमने तो आज डरा दिया मुझे।"

"पगली!" माँ ने कहा और तारा को छाती से चिमटा लिया।

जीवन ने डॉक्टर को बाजू ले जाकर पूछा: "कैसी है इनकी हालत?"

डॉक्टर ने कहा: "कहना मुश्किल है। हालत नाजुक है।"

तब जीवन ने कहा: "मैं समझता हूँ, तारा, आज तुम काम पर न जाओ तो अच्छा है।"

"नहीं—" माँ ने कहा, "तारा को मत रोको। जा, बेटा— मैं अच्छी हूँ। तू जा काम पर।"

"मैं तुम्हें अकेले छोड़कर कैसे जाऊँ, माँ?"

"नर्स है, बेटा, मेरे पास। डॉक्टर साहब भी तो हैं।"

श्यामू ने कमरे में पुनः प्रवेश किया। "फिर से टेलीफ़ोन आया है, मेम साहब। पूछ रहे हैं कि आप निकल गईं क्या।"

तारा बोली: "कहना बस निकल रही हूँ। डॉक्टर, आप यहीं रहिए आज, माँ के पास।"

"अच्छा, अच्छा, मैं अभी अपने कन्सल्टिंग रूम से होकर आता हूँ। घंटे भर में लौट आऊँगा। आप फ़िक्र न करें। नर्स भी यहीं रहेगी।"

"और, नर्स, तुम हर आध घंटे में मुझे स्टूडिओ पर फ़ोन करके माँ की तबीअत का हाल बराबर बताती रहना।"

नर्स ने कहा: "जी, बहुत अच्छा।"

"अच्छा, माँ, मैं काम ख़त्म करके जल्दी से लौट आऊँगी। जीवन तुम यहीं माँ के पास रहना।"

सारा स्टूडिओ घुमाने के बाद कैलाश ने रति, उमा, और कान्ति को सेट पर लाकर बिठा दिया और उन्हें रहमान के सिपुर्द करके स्वयं काम में व्यस्त हो गया।

नया सेट था—गाँव के पनघट का। नया सेट जमाने के लिए हमेशा पहले दिन समय अधिक लगता है। आर्ट डिरेक्टर, कैमरामैन, और डिरेक्टर मिलकर सेट को सँवार रहे थे। कभी एक पेड़ को इधर सरकाया जाता और कभी उधर। रति ने इतनी आसानी से पेड़ सरकते हुए पहले कभी न देखे थे, आज ही देखे—स्टूडिओ में। शूटिंग देखने का उसका पहला ही अवसर था। उमा और कान्ति ने पूना में शूटिंग देखी हुई थी—पूना के प्रभात स्टूडिओज़ में। नक़ली कुएँ में बालटियों से पानी भर दिया गया था, और कुएँ को स्प्रेइंग मशीन द्वारा गंदा किया जा रहा था जिससे कुआँ पुराना मालूम पड़े। कुएँ को घेरे हुए कुछ ग्रामीण युवतियाँ खड़ी हुई थीं जिन्हें कैमरा-मैन बैनर्जी लाइट कर रहा था। कैलाश भी उन युवतियों को तरतीब दे रहा था।

"यह सब क्या हो रहा है?" रति ने रहमान से पूछा। "शूटिंग कब शुरू होगी?"

रहमान ने उत्तर दिया: "हीरोइन का इंतज़ार है। बस उसके आते ही शुरू हो जाएगी।"

कान्ति ने कहा: "सुना है आपको सिनेमा में आर्टिस्ट लोग बहुत तंग करते हैं, बहुत लेट आते हैं, और मनमानी करते हैं?"

"बात तो सच है," रहमान ने कहा, "पर हमारे यहाँ ऐसा नहीं होता। बराबर साढ़े-नौ बजे काम शुरू हो जाता है। तारा देवी की माँ बीमार हैं इन दिनों, शायद इसीलिए लेट हो गई हैं आज, आती ही होंगी—वह आ गई।"

रति ने देखा एक सुंदर देहाती युवती ने स्टूडिओ में प्रवेश किया और सेट की ओर, जहाँ कैलाश खड़ा था, जाने लगी। "यह आपकी हीरोईन है?" रति ने पूछा।

"जी," रहमान ने कहा।

"क्या यही है वह तारा चौधरी?" रति ने फिर पूछा।

"जी।"

उमा ने कहा: "मेकअप में है शायद?"

"जी हाँ," रहमान बोला। "*ज्वालामुखी* की हीरोइन एक देहाती लड़की है। इसीलिए देहाती लड़की के कपड़े और मेकअप में हैं तारा देवी।"

"गुड मॉर्निंग एवरी बॉडी," तारा ने सेट पर पहुँचते ही कहा।

तारा को देख लोग खुश हो गए। "गुड मॉर्निंग, मैडम," लोगों ने कहा।

"गुड मॉर्निंग, तारा देवी," कैमरामैन बैनर्जी ने कहा।

कैलाश कुएँ के पास पीठ किए खड़ा था, सो खड़ा ही रहा, मुड़ा नहीं—वह जानता था पीछे तारा खड़ी है और वह उससे नाराज़ था, क्योंकि आज वह देर करके आई थी।

"गुड मॉर्निंग, कैलाश," तारा ने पास पहुँचकर धीरे-से कहा।

कैलाश पलटा। "पूरा एक घंटा लेट आ रही हो!" उसने भावहीन चेहरे से दबी हुई आवाज़ में कहा। "इतना इम्पॉरटंट सीन है आज; इसीलिए तुम्हें जल्दी आने को फ़ोन किया था।"

तारा ताड़ गई कैलाश ग़ुस्से में है। "ज़रा देर हो गई," वह बोली। मेकअप मैंने गाड़ी में ही कर लिया था।"

"जब तक देर से न आओ बड़ी स्टार कैसे कहलाओगी!"

"कैलाश!" तारा ने तमककर कहा। "इस तरह ताना कसने की ज़रूरत नहीं। उधर मेरी माँ मर रही है फिर भी मैं आई हूँ। कह तो दिया देर हो गई। मगर कोई जिए या मरे तुम्हें इससे क्या! तुम्हें तो सिर्फ़ अपने काम से मतलब है। जब देखो सर्कस के रिंगमास्टर की तरह चाबुक लिए तैयार रहते हो!"

तारा की आवाज़ अधिक ऊँची न उठी थी, पर फिर भी कैमरामैन बैनर्जी ने चट से तारा के पास पहुँचकर अपने लाइटों के लिए ज़ोर-ज़ोर से आवाज़ लगाना शुरू

कर दिया था, और इसीलिए तारा और कैलाश के बीच क्या बातचीत हो रही थी किसी को सुनाई न पड़ी।

कैलाश कह रहा था: "मगर तुमने तो टेलीफ़ोन पर कहा था कि माँ की तबीअत आज अच्छी है। अगर ख़राब थी तो तुम्हें नहीं आना चाहिए था।" फिर शांतवाणी में उसने कहा: "अगर जाना चाहो तो शूटिंग बंद कर दूँ।"

"नहीं, शूटिंग क्यों बंद करोगे मेरे लिए। तुम्हारा काम करके जाऊँगी। चलो, मैं तैयार हूँ।"

"ओ. के." कैलाश ने कहा फिर ज़ोर से बोला: "रिहर्सल। कम ऑन, आर्टिस्ट्स।"

इसी समय फ़्रांसिस डिसूज़ा कैलाश के पास आया और बोला: "शूटिंग देखने के लिए डिस्ट्रीब्यूटर्स की तरफ़ से कुछ लोग आए हैं। इजाज़त है?"

कैलाश ने खीझकर कहा: "ओह!..... यह लोग भी ज़रा काम नहीं करने देते। ख़ैर, आने दो। वहाँ मेरे मेहमान बैठे हुए हैं, उन्हीं के पास बिठा दो।"

फ़्रांसिस दरवाज़े पर जाकर मेहमानों को अंदर लिवा लाया, और उन्हें सादर कुरसियाँ दीं।

फिर रति ने रहमान के कानों में कहा: "कैलाश ने शायद तारा चौधरी को डाँटा है, क्यों?"

रहमान मुस्कुराया। "शायद," उसने कहा।

तारा ने अपने नौकर को इशारे से पास बुलाकर कहा: "श्यामू, तुम टेलीफ़ोन के पास रहो। जब-जब घर से टेलीफ़ोन आए, मुझे ख़बर करते जाना। मैंने ऑपरेटर से कह दिया है कि कोई ज़रूरी फ़ोन आए तो अंदर सेट पर लाइन दे देगा।"

"जी बहुत अच्छा," कहकर श्यामू सेट के उस किनारे पर जहाँ टलीफ़ोन रखा था, चला गया।

उसके बाद रिहर्सल शुरू हो गया। पनघट का सेट लाइट में जगमगा उठा। रिहर्सल पर रिहर्सल होने लगे। स्टूडिओ में एकदम सन्नाटा था। मेहमान चुप बैठे तमाशा देख रहे थे।

गोकुल मेहरा नामक एक नये युवक को कैलाश ने इस चित्र का हीरो बनाया हुआ था। कुएँ के पास मँडराता हुआ गोकुल कह रहा था: "कुछ नहीं लिखा, राधा। हरदम तेरे खयाल में बस डूबा रहता हूँ।"

तारा ने कहा: "तो मैं नहीं देखूँगी तेरी तरफ। तू जा, मुझे काम करने दे।"

कैलाश कुरसी से उठ खड़ा हुआ। "नहीं, नहीं, ऐसे नहीं," उसने कहा। "लाइटस् ऑफ़। फिर से बोलो। शुरू से। एक और हिरर्सल।"

तारा भी उठ खड़ी हुई। "कितने सारे रिहर्सल हो गए। मैं थक गई।"

कैलाश ने कहा: "मैं क्या करूँ। अभी तो बात ही नहीं पैदा हुई। सब ग़लत हो रहा है। तुम्हारे चेहरे पर हाव-भाव, एक्स्प्रेशन—कुछ नहीं है। रटे हुए तोते की

तरह बस डायलॉग बोले जा रही हो।" फिर तारा के पास आकर उसके कंधों को पकड़कर उसे झखझोरता हुआ ज़ोर से बोला: "ऐक्टिंग करो, तारा, ऐक्टिंग। और अगर काम में दिल नहीं लगता है तो घर जाओ।"

सब लोग सहम गए। रहमान ने मन में सोचा कि मेहमानों के सामने कैलाश ने तारा को झिड़क दिया यह अच्छा नहीं किया। अब बात ज़रूर बढ़े बिना न रहेगी। अजीब तुनक-मिज़ाज़ है यह कैलाश भी।

तारा कुएँ की जगत पर बैठ गई, बोली: "तुम टेक कर लो, सब ठीक हो जाएगा।"

कैलाश ने कहा: "क्या ख़ाक ठीक हो जाएगा। तारा, मूड में आओ।"

"टेक कर लो।"

"*ऑल राइट। टेकिंग*।"

बैनर्जी ने चिल्लाया: "लाइट्स।"

लाइट्स ऑन हो गए। टेकिंग की सारी तैयारियाँ शुरू हो गईं।

रहमान ने आहिस्ता-से फ़ांसिस से पूछा: "क्या बात है आज तारा देवी मूड में नहीं मालूम होतीं?"

फ़्रांसिस ने कहा: "माँजी बहुत बीमार हैं आज; मूड कहाँ से आएगा।"

फ़्रांसिस के उद्गार मेहमानों के कानों तक पहुँच गए। वह लोग तारा को ताकने लगे।

"बेचारी!" कान्ति ने उमा से कहा।

कैलाश ने आवाज़ लगाई: "साउंड स्टार्ट।"

साउंड बूथ से लाउड स्पीकर पर आवाज़ आई: "स्टार्टेड।"

क्लैपर बॉय ने क्लैप दी और कैलाश ने कहा: "ऐक्शन।"

अभिनय शुरू हो गया। तीन चार युवतियाँ, जो कुएँ के नीचे कपड़े धो रही थीं, उठकर जाने लगीं, और तारा, कमर की गागर जगत पर रखकर, डोल से पानी निकालने लगी। बंसी की भूमिका में गोकुल मेहरा कुएँ के पास आकर तारा को घूरता हुआ मँड़राता है। तारा उसकी ओर ध्यान ही नहीं देती।

"काहे इत्ता गुमान करे है! एक नजर इधर तो देख। नहीं देखेगी?" गोकुल ने मुस्कुराकर कहा।

"उँहुँ—पहले सुना," तारा ने कुएँ के अंदर देखते हुए कहा।

"कुछ नहीं लिखा, राधा। हरदम तेरे खयाल में बस डूबा रहता हूँ।"

"तो मैं नहीं देखूँगी तेरी तरफ। तू जा, मुझे काम करने दे।"

तब गोकुल ने शरारत भरी निगाह से तारा को ताका और गुनगुनाने लगा:

"घुमड़-घुमड़कर आए बदरा, बरसन लागीं बूँदनियाँ।
ठुमक-ठुमककर चले गुजरिया, बाजन लागीं झाँझनियाँ॥"

तारा ख़ुशी से खिल पड़ी। पानी भरा डोल खींचकर उसने जगत पर रखते हुए कहा: "है! बड़ा अच्छा है! यह दोहा तूने कब बनाया?"

"तुझे पसंद आया?"

"बड़ा अच्छा है।"

"सच ?"

"तेरी कसम रे, बंसी।"

"फिर कह।"

"तेरी कसम।"

गोकुल ने आगे बढ़कर तारा का हाथ थाम लिया और बोला : "बस, बस, बस! तेरी इसी अदा पे तो फिदा हूँ मैं। चौबीसों घंटे बस समझ ले आग में जला करता हूँ।"

तारा लजाई, फिर मुस्कुराकर उसने कहा : "च—च—च—बुझा दूँ तेरी आग ?"

"अँ ?" गोकुल ने साश्चर्य कहा। फिर बोला: "बुझा दे, राधा। बुझा दे।"

"तो बैठ जा, यहाँ बैठ जा। यहाँ नहीं, नीचे।"

गोकुल कुएँ की जगत के नीचे पत्थर पर बैठ गया।

"आँख मींच," तारा ने कहा।

गोकुल ने आँखें मींच लीं।

तारा ने डोल उठाया और सारा पानी उसपर उँड़ेल दिया। गोकुल ठंड में ठिठुरकर चिल्ला पड़ा और तारा खिलखिलाकर हँसने लगी, ज़ोर-ज़ोर से हँसने लगी.....

"कट," कैलाश ने खुश होकर कहा। कैमरा बंद हो गया। "*गुड ! वेरी गुड !* बहुत अच्छा तारा !"

सेट पर के सारे लोग, मेहमान भी, ताली बजाने लगे। कान्ति की ताली सबसे ऊँची थी, इतनी ऊँची कि उमा और रति उसे घूरने लगीं।

और उधर तारा हँस रही थी, हँसे जा रही थी। उसकी हँसी रोके नहीं रुक रही थी। हँसी का उसे फ़िट आ गया था। सहसा उसकी दृष्टि कोने में टेलीफ़ोन पर पड़ी। उसने देखा श्यामू सर लटकाए उसकी ओर आ रहा था। तारा की हँसी रुकने लगी, और उसकी आँखों में आँसू छलछलाने लगे.....

कैलाश ने तारा के पास जाकर उसकी पीठ थपथपाते हुए शाबाशी दी: "वेरी गुड, तारा ! तुमने आज कमाल कर दिया। तुम्हारा जबाब नहीं। क्यों क्या हुआ तारा ?" कैलाश ने देखा तारा के चेहरे से हँसी उड़ी जा रही थी और आँखों में पानी भर आया था और वह डोल रही थी मानो अभी चक्कर खाकर गिर पड़ेगी। कैलाश ने उसे थाम लिया। तारा ने अपना सर कैलाश की छाती में गाड़कर कहा: "कैलाश !" और फिर वह रोने लगी।

"क्या बात है, तारा ?" कैलाश ने साश्चर्य पूछा।

"माँ चल बसीं।"

कैलाश ने सामने देखा श्यामू आकर खड़ा हो रहा था।

श्यामू ने सूचित किया: "अभी फ़ोन पर घर से खबर आई, साहब..... नर्स ने कहा माँजी—" श्यामू ने मुँह ढाँप लिया और मुड़कर नीचे घूरने लगा।

रहमान दौड़ा हुआ पास आया, फ़्रांसिस भी।

कैलाश ने घोषित किया: "*पैक अप प्लीज़!* काम बन्द कर दो, रहमान। आओ, तारा।" तारा को थामे कैलाश आगे बढ़ा। रति, क्रान्ति और उमा भी उठकर आगे बढ़ीं। कैलाश ने उनसे कहा: "सोचा था शूटिंग के बाद आप लोगों का तारा से परिचय कराऊँगा। फिर कभी सही।"

क्रान्ति ने कहा: "हाँ, फिर कभी। सुनकर हमें बड़ा दुख हुआ, मिस चौधरी।"

परंतु कैलाश की बाँह पकड़े तारा डबडबाई आँखों से कहीं दूर देख रही थी। वह चुप रही। और कैलाश उसे लेकर तेज़ी से बाहर निकल गया।

डिस्ट्रीब्यूटरों के मेहमान भी पीछे-पीछे आ रहे थे। उनमें से एक बोला: "इसे कहते हैं ऐक्टिंग। इधर माँ मर रही है और उधर चेहरे पर शिकन भी न आने पाए। क्या ग़ज़ब की आर्टिस्ट है!"

उसके एक साथी ने उसका समर्थन करते हुए कहा: "मान गए हम भी। सिनेमा-वालों पर हम हँसते हैं, सोचते हैं, क्या है—मुँह पर चूना पोतकर कैमरे के सामने कोई भी मुँह मटका सकता है। पर नहीं; यह कला बड़ी बिकट है। मान गए आज!"

रहमान ने टेलीफ़ोन द्वारा तारा चौधरी की माँ के स्वर्गवास हो जाने का समाचार शहर के सारे स्टूडिओ को विदित कर दिया, जिन व्यक्तियों के घरों पर फ़ोन था उन्हें भी उसने फ़ोन कर दिया। ४ बजे अरथी निकलनेवाली थी। यद्यपि मरनेवाला सिनेमा व्यवसाय का कोई बड़ा कलाकार या निर्देशक या निर्माता न था, फिर भी वह एक महत्त्वपूर्ण मृत्यु थी, क्योंकि मृत्यु तारा चौधरी की माँ की हुई थी, और तारा चौधरी आज भारत की प्रथम श्रेणी की अभिनेत्रियों में थी। अतएव, ज़रा देर में वरली पर समुद्र के किनारे की सड़क, *मून लाइट* के दोनों ओर, दूर तक मोटरों से खचाखच भर गई। ३ बजे तक सारी फ़िल्म इंडस्ट्री उलट पड़ी। सलमा और रजनीकान्त की पत्नी ने अन्य स्त्रियों के सहयोग से शव को नहला-धुलाकर तैयार किया। तारा, शव के पैताने बैठी, माँ की सूरत को अवाक् ताकने लगी और रह-रहकर सिसकियाँ लेती रही। घर का सगा-संबंधी एक मात्र जीवन मलहोत्रा ही था, परंतु उसे कुछ करना न पड़ा। सारी व्यवस्था कैलाश और रहमान कर रहे थे। फ़्रांसिस शिवाजी पार्क के स्मशान पर व्यवस्था करने गया हुआ था। और तारा, माँ के शव के पास, गुमसुम बैठी हुई थी।

इस वर्ष फ़िल्म व्यवसाय के लोगों की इतनी बड़ी भीड़ एकत्र होने का यह दूसरा अवसर था। तीन महीने पहले जब प्रख्यात मसखरे दुलदुल की मृत्यु हुई थी, तब भी

उसके घर बांदरा में ऐसी ही भीड़ हुई थी जैसी कि आज हुई थी। सारे कलाकार, निर्देशक, निर्माता और अन्य लोग शोक मनाने आए हुए थे।

जीवन मलहोत्रा ने फ़िल्म इंडस्ट्री के इतने सारे प्रतिष्ठित व्यक्ति एक साथ पहले कभी न देखे थे। देखकर वह दंग रह गया। वह समझे हुए था बम्बई में तारा अपनी माँ के साथ अकेली रही है, बम्बई में तारा का और कोई नहीं, वह बिलकुल असहाय है। पर उसकी धारणा झूठ निकली। तारा के असंख्य 'सम्बंधियों' का असाधारण समुदाय आज उसने प्रत्यक्ष देख लिया। सब प्रकार के लोग थे — पुरुष थे, स्त्रियाँ थीं, धनी थे, निर्धन थे, मध्यम वर्ग के लोग भी थे, पड़ोसी भी सम्मिलित हो गए थे। 'आपस में कितना भाईचारा है इनकी फ़िल्म इंडस्ट्री में!' जीवन ने सोचा। 'एक दूसरे के दुख-सुख में कैसे हाथ बँटाते हैं यह लोग! इतना बड़ा बम्बई शहर है, जो शैतान की आँत की तरह फैला हुआ है, पर ज़रा देर में, न जाने कैसे, सब के सब तारा के घर आकर जमा हो गए!' तारा के व्यक्तित्व व उसकी प्रतिष्ठा के सामने जीवन अपने को सहसा बहुत ही तुच्छ तथा गौण पाने लगा और उसके आत्माभिमान पर बुरी चोट पड़ने लगी।

जितने लोग फ़्लैट के अंदर समा सकते थे उतने अंदर थे, बाक़ी के बाहर आँगन में और सड़क के किनारे खड़े थे, आपस में छोटे-छोटे गुट बनाकर खड़े बातचीत कर रहे थे।

रहमान ने कैलाश से कहा : "मातमपुर्सी के लिए बहुत लोग आ गए!"

कैलाश चुप रहा। वह सोचने लगा बहुत लोग आए तो हैं पर इनमें से वास्तव में मातमपुर्सी के लिए कितने आए हैं और दिखाने के लिए कितने, यह कहना मुश्किल है। कैसे खड़े आपस में ग़प्पें हाँक रहे हैं, सिगरेट धुनक रहे हैं, हँस रहे हैं! और इस कम्बख़्त शांतिभाई देसाई को देखो! मुक्ता बैनर्जी को घेरे न जाने घंटे भर से क्या बात कर रहा है। ज़रूर अपने पिक्चर के लिए उसे सधा रहा होगा। पर शांतिभाई ही क्यों? वह मेहता साहब भी कुछ कम नहीं। किंगकाँग को पटा रहे हैं। और वह मोहन को देखो। भंडारकर की ख़ुशामद कर रहा है। दारूवाला उधर संगीत निर्देशक सानियाल को पटा रहा है। सब अपना-अपना पैंतरा साधे हुए हैं। पिक्चरों के मुहूर्त और रिलीज़ के दिन जो अवसर नहीं मिल पाता वह अवसर ऐसी मौत-मैयतों पर ही तो प्राप्त हुआ करता है, जब सारे के सारे लोग इकट्ठा होते हैं, और जो जिससे चाहे मिलकर मनचाही बात कर सकता है। हर कोई बनता तो यों है कि फ़लाँ से अनायास ही भेंट हो जाने के कारण बात करने लगा है, पर वास्तव में हर व्यक्ति सोचकर आया हुआ होता है कि उस अवसर पर उसे किससे मिलकर क्या बात करनी है। कितने मतलबी, कितने पाखंडी हैं यह फ़िल्म प्रोड्यूसर और यह फ़िनांसर्स, यह डिस्ट्रीब्यूटर्स और यह आर्टिस्ट्स और यह डिरेक्टर्स व म्यूज़िक डिरेक्टर्स और यह सारे के सारे! मैयत को बाज़ार बना रखा है — जहाँ सारी

दुकानें खोलकर रख दी गई हैं, और माल का निरीक्षण हो रहा है, मोल-तोल हो रहा है, सौदा हो रहा है, और होता रहेगा, स्मशान भूमि तक यह चरखा सतत चलेगा। कैलाश ने पिछली मैयतें देखी हुई थीं। यही हाल था वहाँ भी। कितने ही निर्माताओं ने उससे कॉन्ट्रैक्ट की बात करनी चाही थी पर कैलाश ने उनसे सविनय कह दिया था कि बिज़नेस की बात वह स्मशान पर नहीं कर सकता, उनके घर या स्टूडिओ आकर बात करने को वह सदा तैयार है। और यह आर्टिस्ट्स लोग भी तो बाज़ नहीं आते। पुखराज को देखो, कैसे बनठनके आई है! मेकअप करके आई है! गालों पर कितना सारा रूज थोप रखा है! और लिपस्टिक तो ऐसे चुपड़ रखी है मानो किसी की बारात में शरीक होने आई है! कहने लगी मेकअप करके शूटिंग पर जा रही थी कि उसे रहमान का टेलीफ़ोन आया। कितनी झूठी है! भला कोई बताए तो कहाँ था आज उसका शूटिंग? *श्री साउंड स्टूडिओ* में उसके पिक्चर का अभी तो सेट ही लग रहा है, कल तक समाप्त होगा। कैलाश जानता था पिछले दो रोज़ से पुखराज ख़ाली थी, और परसों तक ख़ाली रहेगी। रहमान का टेली फ़ोन पाक उसने सोचा होगा: 'चलो मेकअप करके चले चलो, कह दूँगी शूटिंग पर जा रही थी, कोई न जान पाएँगा, और इतने सारे लोगों पर मैं इम्प्रेशन मार दूँगी, इतने सारे प्रोड्यूसर आएँगे, ज़रूर ही आएँगे, बात करने का यही तो मौक़ा है।'

रहमान ने कैलाश की ओर देखकर पूछा: "क्या देख रहे हो?"

कैलाश ने कहा: "पुखराज को!"

रहमान ने नज़र घुमाकर देखा पुखराज दरवाज़े के पास जे. सी. जैन के साथ खड़ी हुई बात कर रही थी, उस ढंग से कर रही थी जिस ढंग से सिनेमा अभिनेत्रियाँ किया करती हैं जब उन्हें पता होता है कि हज़ार आँखें उन्हें ताक रही हैं — यानी बात के ढंग में अभिनय मिला देती हैं। "शूटिंग पर जा रही थी इसीलिए मेकअप में आई है," रहमान ने कहा।

"कहाँ थी शूटिंग?" कैलाश ने पूछा। "बिना मेकअप के तुमने कभी पुखराज की शक्ल देखी है?"

बात रहमान की समझ में आ गई। "हरामज़ादी!" उसने कहा। "देखो न, किस तरह पटा रही है जैन को। फ़िल्मफ़ेअर में अपनी पब्लिसिटी करवाने के लिए ख़ुशामद कर रही होगी।"

कैलाश अंदर चला गया। शव उठाना था। तारा की चुप्पी उससे देखी नहीं जाती थी। इसीलिए रह-रहकर वह बाहर चला आता था। तारा, पैताने बैठी, शव को ताक रही थी। बड़ी देर से माँ चुप पड़ी थी और उसे ऐसा लगता था कि अभी उठ बैठेगी। कितने सारे लोग आए हुए थे। माँ सामने फ़र्श पर पड़ी थी। यह सब क्या हो रहा है? माँ मर गई? क्या सच में माँ अब कभी न जागेगी? कभी न बोलेगी? क्या अब घर में माँ की आवाज़ कभी सुनाई न देगी? क्या अब उसे 'बेटा' कहकर

कोई न पुकारेगा ? क्या अब वह घर में बिलकुल अकेली रहेगी ? क्या माँ का कमरा अब सुनसान पड़ गया ? वहाँ कोई न होगा ? माँ चल बसी ? यह सब लोग मिलकर माँ को ले जाएँगे ? आग में फूँक आएँगे ? तारा सुन्न हो गई। उसे लगा वह किसी पिक्चर का कोई ऊटपटाँग सीन, जिसका सिर-पैर कुछ नहीं, देख रही हो।

ठीक ४ बजे कमरे से शव हटाया गया। तारा के रुके हुए आँसुओं का बाँध टूट पड़ा, परंतु सलमा ने तारा को कसकर लिपटा लिया और कैलाश, रहमान, बैनर्जी व जीवन के कंधों पर माँ की अरथी *मून लाइट* से बाहर निकली।

क्रिया-कर्म समाप्त करने के बाद स्मशान से कैलाश सीधा अपने घर गया और नहा-धोकर, कपड़े बदलकर *मून लाइट* के लिए निकल पड़ा। वह जानता था तारा बिलकुल अकेली पड़ गई है। बेचारी पर बुरी बीती है। दुनिया में एक माँ के सिवा और कोई न था बेचारी के, सो माँ भी चल बसी। आज रात घर उसे खाने को दौड़ेगा। कितनी अच्छी थी उसकी माँ ! वैधव्य ने उसकी कमर तोड़ दी थी। वैधव्य बुरी चीज़ है। मुसीबत बुरी चीज़ है। सुख छीननेवाली तमाम चीज़ें बुरी हैं। ख़ुशी दुनिया में सबसे बड़ी चीज है। जब इनसान से उसकी ख़ुशी छिन जाती है तो वह लुट जाता है, उसकी कमर टूट जाती है, वह बूढ़ा लगने लगता है, मर ही जाता है।

कैलाश जब *मून लाइट* पहुँचा तो ड्रॉइंगरूम में तारा एक सोफ़े पर आँखें बंद किए बैठी थी। सलमा उसके पास थी। डॉ. पटेल और उनकी पत्नी, व कुछ पड़ोसी भी बैठे हुए थे। कैलाश की आवाज़ सुनकर तारा ने आँखें खोलीं, एक बार उसे देखा, और फिर आँखें बंद कर लीं। पलकों के बीच से आँसुओं की पतली-पतली धाराएँ फूट निकलीं और उसके होंठ फड़क उठे। कैलाश ने पास जाकर तारा के सर पर सांत्वनात्मक हाथ फेरा। तारा ने सुबकी रोककर कैलाश की ओर देखा। आँसुओं में सनी हुई लाल-लाल आँखें थीं। "जला आए मेरी माँ को !" तारा ने कहा। कैलाश मानो दोषी है, जिसने उसकी माँ को छीनकर आग में फूँक दिया। वह चुप रहा। तारा का दुख उससे देखा न गया और उसकी आँखों में गर्र-से पानी भर आया। तारा ने कैलाश की आँखों में आँसू पहले कभी न देखे थे, अब जो देखे तो वह रो पड़ी — कैलाश के लिए रो पड़ी, उस तरह रो पड़ी जिस तरह कोई बच्चा अच्छे-से खिलौने को देखकर रोता है, जिसे वह पाना तो चाहता है पर पा नहीं सकता।

इसी समय जीवन भी आ गया। अपने होटल जाकर आया था। साथ में उसके एक अटैची थी। शायद रात में यहीं रहने की तैयारी से आया था।

जीवन को देखकर डॉ. पटेल सपत्नीक उठ खड़े हुए और जीवन से बोले : "अच्छा, मिस्टर मलहोत्रा, अब हम लोग चलते हैं। तारा देवी का खयाल रखिएगा। सुबह से इन्होंने कुछ खाया-पीया नहीं है। कुछ खिलाइए इन्हें। अच्छा, तारा देवी, किसी बात की फ़िक्र नहीं करना, बेटा; हम लोग तो हैं।"

तारा ने हाथ जोड़े और डॉ. पटेल अपनी पत्नी को साथ लिए चले गए। दूसरे लोग भी उठकर चले गए।

सलमा ने कहा : "रात मैं यही रहूँगी, तारा के पास।"

"नहीं, सलमा," तारा ने कहा, "तुम लोग कोई चिंता न करो। मैं ठीक हूँ। सुबह से आई हो, तुम जाओ अपने घर।"

"नहीं, मैं यही रहूँगी आज रात," सलमा ने दृढ़तापूर्वक कहा।

कैलाश ने कहा : "ठीक है, सलमा। रात तुम यहीं रह जाओ।"

तारा चुप रही।

कैलाश ने फिर आया के पास जाकर धीरे-से कुछ कहा। सर हिलाकर वह अंदर चली गई। शो केस पर रखी हुई नन्हीं-सी घड़ी ने सुरीली आवाज़ में टन-टन दस बजाए और फिर हलके-से टिक-टिक करने लगी। मौत के घर में घड़ी की टिक-टिक कितनी सर्व-व्यापी तथा वेदनापूर्ण लगती है। आया एक ग्लास में गर्म दूध ले आई। कैलाश से इशारा पाकर सलमा ने ऐनी से ग्लास ले लिया और तारा के पास आई।

"नहीं, मुझे भूख नहीं है," तारा ने ग्लास देखकर कहा।

"थोड़ा-सा पी लो। सुबह से भूखी हो। तबीअत ख़राब हो जाएगी। हम लोग तो चाय, कॉफ़ी पीते रहे हैं सारा दिन। लो। लो,तारा, पी लो थोड़ा-सा —"सलमा ने ग्लास तारा के मुँह को लगा ही दिया। तारा ने ग्लास ले लिया और पीने लगी। आज पहली बार तारा को दूध ज़हर लगा। पर वह पी गई, क्योंकि सामने कैलाश खड़ा था।

ग्लास ख़ाली करके तारा ने कहा : "तुम लोग भी कुछ खा लो, सलमा। दोपहर का खाना तो पड़ा होगा। गर्म करवा लो। कैलाश और जीवन भी यहीं खाएँगे।"

"तुम फ़िक्र न करो, तारा," कैलाश ने कहा। "हम लोग जाकर खाएँगे।"

सलमा ने अंदर से शाल लाकर तारा को ओढ़ा दी।

जीवन ने कहा : "अगर तुम कहो तो रात मैं यहीं रहूँ।"

"नहीं, जीवन, धन्यवाद! तुम लोग जाओ, मैं ठीक हूँ।" फिर मुस्कुराकर बोली : "बिलकुल ठीक हूँ।"

"अच्छी बात है," जीवन ने कहा और उठ खड़ा हुआ। "कल सवेरे आऊँगा।"

"हाँ," तारा बोली, "सवेरे आना। मेरे साथ स्टूडिओ चलना।"

सलमा ने साश्चर्य कैलाश की ओर देखा।

कैलाश ने कहा : "कल शूटिंग नहीं है, तारा। इस हफ़्ते शूटिंग न होगी।"

तारा चुप हो गई, परंतु जब कैलाश और जीवन जाने के लिए दरवाज़े पर पहुँचे तो उसने कैलाश को पुकारा। कैलाश रुक गया।

"सारा दिन घर पर अकेले बैठे-बैठे मेरा दम घुट जाएगा," तारा ने कहा।

"तो?" कैलाश ने पूछा।

"कल शूटिंग रखो। मैं काम पर आऊँगी।"

कैलाश ने एक क्षण तारा की ओर देखा। उसकी आँखों में विनय आलोचना थी।

"अच्छा," कैलाश ने कहा और फिर वह चला गया।

बाहर कैलाश से हाथ मिलाकर जीवन मलहोत्रा अपनी अटैची लिए तारा की गाड़ी में बैठ गया। गाड़ी *ऐस्टोरिआ* के लिए शहर की ओर चल दी। कैलाश अपनी गाड़ी में बैठ शिवाजी पार्क के लिए चल पड़ा।

घर पर नौकर ने खाने के लिए पूछा तो कैलाश ने मना कर दिया और फ्रिज से एक सेव व एक केला निकालकर अपने ड्रॉइंगरूम में चला आया। फल खाते-खाते सोचने लगा—आज की बातें, तारा की बातें, तारा की माँ की बातें, अपनी बातें, तारा की बातें.... सहसा उसकी दृष्टि मेज़ पर रखे हुए पैकेट पर पड़ी जो लाल झिल्ली काग़ज़ में लिपटा हुआ था। उसे अचरज हुआ। पैकेट बहुत बड़ा था। उसने तुरंत ही खोलकर देखा तो उसमें पेपरमाशी का एक सुंदर टेबल-लैम्प था। शंकर इसी समय पानी का ग्लास लिए अंदर आया तो बोला: "मिस पारिख का ड्राइवर सुबह दे गया था।" कैलाश समझ गया। रति उसके लिए कश्मीर से जो उपहार लाई थी वह यही था। स्टूडिओ में देने का अवसर न मिलने पर ही घर पर भिजवा दिया है।

"दूध ले आऊँ, साहब?" शंकर ने पूछा।

"नहीं।"

"कॉफ़ी बनाऊँ?"

"नहीं, कुछ नहीं चाहिए। तुम जाओ, सो जाओ।"

शंकर चला गया।

और फिर, कपड़े बदलकर, लाइट बुझाकर, कैलाश भी बिस्तर पर पड़ गया। रात के सन्नाटे में उसके विचार भटकने लगे।

१५

मार्च का महीना आ गया था और गर्मी शुरू हो गई थी। माँ को मरे दो महीने होने आए थे। माँ के बिना पहलेपहल तो तारा को घर उजाड़ लगा। मैयत के तीन दिन बाद जीवन भी दिल्ली चला गया। उसके बाद तो घर में रहना दूभर हो गया। तमाम दिन तारा स्टूडिओ में काम करती। उसने नाच सिखाने के लिए एक डांस टीचर रख लिया था जो शूटिंग समाप्त होने पर शाम को घर पर उसे नाच सिखाया करता था। रात के आठ और कभी नौ बज जाते। थककर तारा खाना खाती और फिर चट सो जाती, सुबह उठकर काम पर जाती और सारा दिन स्टूडिओ में व्यस्त रहती। इसी तरह उसने अपने को बहलाए रखा और दो महीने यों बीत गए। समय में बड़ा जादू होता है। समय बहुत-कुछ भुला देता है। तारा का ज़ख्म भी भरने लगा था। मगर अब भी कभी-कभी एकान्त में बैठकर वह रो लेती थी। रोने से जी हलका हो जाता था। कभी-कभी उसे घर ही नहीं वरन् अपना जीवन भी बिलकुल रिक्त और अर्थहीन प्रतीत होता। उसने इतनाकुछ गौरव और ख्याति प्राप्त कर ली थी। समस्त देश में उसकी चर्चा थी। सड़कों पर, रेलवे प्लैटफ़ॉर्मों पर, दफ़्तरों में उसके रंगीन पोस्टर लगे हुए थे। नए कैलेण्डरों पर अधिकतर तारा का ही फ़ोटो था। समाचार पत्रों में और रेडिओ पर तारा का ही ज़िक्र था। नाम और पैसा भरपूर आ रहा था। परंतु फिर भी अपना जीवन तारा को रिक्त और अर्थहीन लगा। वह सोचने लगी नाम का क्या करेगी? पैसे का क्या करेगी? अपने अकेलेपन से वह ऊब उठी। मन में एक अजीब घुटन होने लगी। रातों को बिस्तर पर पड़े-पड़े वह कैलाश के बारे में सोचा करती और वह, पत्थर का पत्थर ही बना हुआ, अपने काम में, अपने पिक्चरों के निर्माण में व्यस्त रहता। सुना है प्रेम से प्रेम प्राप्त होता है। तो फिर तारा के प्रेम के उत्तर में कैलाश के मन में भी प्रेम क्यों नहीं जाग्रत होता? कभी अपना प्रेम वह क्यों नहीं दर्शाता? परंतु तारा ने भी तो अपना प्रेम उसे नहीं जताया था, तो फिर उस बेचारे को क्या ख़बर कि तारा के मन में क्या है। उसने सोचा था कि उसे स्वेटर बुनकर देगी और तभी उससे मन की बात कह देगी, पर स्वेटर अधूरा ही रह गया और माँ चल बसी। और इसी तरह ठंढ का मौसम निकल गया और मार्च आ गया।

जीवन भी निराश होकर चला गया था; पर कह गया था कि तीन महीने बाद

फिर आएगा, हफ़्ते भर की छुट्टी लेकर आएगा और तारा से शादी के लिए "हाँ" करवाकर रहेगा। जीवन भी अजीब ज़िद किए हुए था, बड़ा ज़िद्दी था। तारा उसे शायद बहुत भा गइ थी। और किसी से शादी करने को वह तैयार ही न था। बिलकुल बच्चों की तरह एक ही बात को पकड़े हुए था, पर अच्छा था, नेक दिल था, अपने काम में होशियार था, देखने में भी ठीक था, और तारा उसे बचपन से जानती थी, उसका बचपन का मित्र था, उसे मन से चाहता था। कभी-कभी तारा अधीर हो उठती और सोचती कि जीवन को हाँ कर दे। परंतु हर बार जब वह ऐसा सोचती तो उसका मन विद्रोह कर उठता। मन में तो कैलाश समाया हुआ था — जो एलिफ़ैंटा की गुफ़ा में बने हुए पत्थर के शिव की तरह जड़ और कठोर था। तब असहाय होकर, तकिये में मुँह देकर, वह आँसू बहाया करती। रोते-रोते वह सोचती कि मनुष्य अपना सारा जीवन अकेले काट सकता है, कम से कम वह तो काट सकती है क्योंकि अपने अकेलेपन की और अपने स्वतन्त्र जीवन की उसे आदत पड़ गई है, परंतु एक बार किसी से जब मन लग जाता है तो उसके बिना, उससे दूर रहकर, जीना एक दिन के लिए भी दूभर हो जाता है। ऐसा क्यों होता है? इसका उत्तर तो ज्ञानी भी बराबर नहीं दे पाए। उसके मन में चौबीसों घंटे ईंधन की तरह सन-सन होता रहता। अक्सर सारा-सारा दिन शूटिंग के सिलसिले में वह कैलाश के पास रहती, पर फिर भी उसका जी न भरता। शाम को उससे बिछड़ते हुए, घर जाते हुए उसको लगता कि वह मर रही है।

पहलेपहल — जब तारा को अपने मन का पता चला था, कैलाश के प्रति अपनी भावनाओं का ज्ञान हुआ था — वह समझे हुए थी कि कैलाश प्रेम-रस से अनभिज्ञ है, न वह प्रेम करना जानता है और न उसे प्रेम में विश्वास है; आधुनिक रूसी युवक-युवतियों की तरह प्रेम को वह कोई महत्त्व नहीं देता, स्त्री-पुरुष संबंध को केवल शारीरिक स्वास्थ्य व तृप्ति का आवश्यक साधन समझे हुए है, आत्म-तृप्ति का साधन नहीं। परंतु बाद में चलकर तारा को लगा कि उसका यह अनुमान सर्वथा निर्मूल है। कैलाश बहुत भावुक है, प्रेम व आत्मीयता में उसे विश्वास है, प्रेम करना वह जानता है; वरना अपनी कहानियों में, अपने संवादों में और निर्देशन में प्रेम-रस वह इस निपुणता से न दे पाता। परंतु इसी समय तारा को यह शंका भी हुई कि कैलाश कहीं उलझा हुआ है, किसी अन्य स्त्री में मन रमाये हुए है, अन्यथा तारा के मन की बात समझने में वह असमर्थ न रहता। कई दिनों तक वह समझे हुए थी कि वह स्त्री सलमा है जिसने कैलाश को लुभा रखा है; पर यह बात भी असत्य निकली। अब इन दिनों उसका मस्तिष्क कहने लगा है कि वह युवती रति पारिख है। उसका मस्तिष्क कहता है कि रति का कैलाश के साथ घनिष्ठ संबंध है, कैलाश जड़ और निर्जीव नहीं, कैलाश पत्थर नहीं है, हाड़-माँस का बना हुआ सजीव युवक है। फिर तारा के प्रति उसका व्यवहार इतना उदासीन, तटस्थ तथा कठोर क्यों? तारा को ब्याह करने

से वह रोकता क्यों रहता है ? जीवन जब यहाँ आया हुआ था तो कैलाश का मूड उन दिनों कितना बिगड़ा हुआ रहता था। तारा से न तो वह स्वयं प्यार करता है और न किसी और को करने देता है। विचित्र जीव है ! विचित्र पहेली है — यह कैलाश ! आदमी आदमी के पास रहता है पर उसे समझ नहीं सकता। तारा भी कैलाश को समझ न सकी। शायद कभी न समझ सकेगी। तब फिर क्या होगा ? होगा क्या; यों ही जलती रहेगी वह. . . .

तारा यही सब सोच रही थी। अभी आध घंटे में उसे शहर पहुँचना था। *सर कॉवसजी जहाँगीर आर्ट गैलरी* में फ़ांसिस डिसूज़ा का सत्कार होनेवाला था। अंतर-राष्ट्रीय कला-प्रदर्शनी की ओर से उसकी कलाकृति *जननी* को प्रथम पुरस्कार प्रदान हुआ था। उसी के उपलब्ध में बम्बई का *आर्ट सर्कल* फ़ांसिस का सत्कार करने चला था। तारा जल्दी-जल्दी तैयार हो रही थी, ड्रेसिंग टेबल के शीशे के सामने खड़ी होकर साड़ी पहन रही थी। रहमान की ज़बानी उसे यह भी मालूम हुआ था कि इसी रति पारिख़ ने पिछले साल फ़ांसिस की *जननी* दो हज़ार रूपये में ख़रीदी थी और फिर परिस की प्रदर्शनी में वह शिल्प-कृति प्रदर्शनार्थ भिजवा दी थी। फ़ांसिस को इसका कोई पता न चला। पता तो तब चला जब उसे पुरस्कार मिल गया। सूरत से कैसा जंगली लगता है, कितना गँवार और जाहिल प्रतीत होता है, पर कितना कुशल और महान् कलाकार है — यह फ़ांसिस डिसूज़ा ! कितना कुरूप है ! जानवर की तरह है ! क्या कोई स्त्री इससे प्यार भी कर सकेगी ? असम्भव है। पर ऐसा कुरूप व्यक्ति कैसी सुंदर-सुंदर रचना करता है, कितनी सुंदर कलाकृतियों का निर्माण करता है ! ऐसा क्यों होता है ? यह भी एक पहेली है। शायद संसार पहेलियों से भरपूर है, हर ओर पहेलियाँ ही पहेलियाँ हैं — ऐसी बिकट पहेलियाँ जिनका कोई हल नहीं।

बम्बई के सभी कला-प्रेमी व कला से प्रेम करने का दम भरनेवाले, सच्चे, झूठे और दरमियानी कलाकार तथा सभ्य लोग, सभ्य कहलानेवाले भी, ठीक नियत समय पर *जहाँगीर आर्ट गैलरी* में आन उपस्थित हुए। रति भी आई थी। साथ में उसका भाई कान्ति और कान्ति की प्रेयसी उमा भी थी। कैलाश और फ़ांसिस भी थे। कैमरा मैन बैनर्जी भी था। रजनीकान्त भी था और बाकी के बहुतसारे लोग थे जिन्हें तारा नहीं जानती थी। सिनेमा के लोग न थे, सिने क्षेत्र के बाहर के लोग थे। बड़ी भीड़ थी। एस. के. पाटिल की अध्यक्षता में सभा हुई। फ़ांसिस डिसूज़ा को देखकर लोग थोड़ी देर तो स्तब्ध रह गए, परंतु जब उसकी कलाकृति *जननी* पर चढ़ा हुआ खोल उतारा गया तो लोगों की तालियों से सारा हाल गूँज उठा। फ़ांसिस की बहुतसारी अन्य कृतियाँ भी हॉल में तरतीबवार रखी गई थीं।

तारा जाकर कैलाश के पास ही बैठी। रति आदि भी वहीं थीं। बाद में रहमान के साथ सलमा भी आ गई थी। सभा और अभिनंदन की कार्यवाही कोई घंटे भर तक चलती रही। तारा को पाटिल का भाषण अच्छा लगा, कावसजी का भाषण भी अच्छा था। एक-दो और लोग भी बोले जिन्हें तारा नहीं पहचानती। सब के सब कला पर बोले। सब ने फ़ांसिस को उसकी अद्भुत सफलता पर हार्दिक बधाइयाँ दीं। रति बहुत खुश थी। एक प्रकार से फ़ांसिस की सफलता के पीछे रति ही तो थी। जब फ़ांसिस "दो शब्द" बोलने को खड़ा हुआ तो उसने यह भेद की बात साफ़ प्रकट कर दी। सबके समक्ष उसने रति पारिख को उसका नाम लेकर धन्यवाद दिया। फ़ांसिस ने बड़ा अच्छा कहा। कहने लगा : "हम कलाकार कला की सेवा तभी कर सकते हैं जब कि हम कलाकारों की सेवा करनेवाले लोग समाज में उपस्थित हों। बिना राजाश्रय के, बिना उन लोगों की सहायता के जिनके पास धन है—और जो नहीं जानते कि क्यों है—कला कभी नहीं पनपती।" रति की ओर देखकर लोगों ने फिर तालियाँ बजाई और इस प्रकार लगभग ६ बजे सभा समाप्त हुई।

सभा के बाद कैलाश जाकर फ़ांसिस से गले मिला। दोनों मित्र एक दूसरे से लिपट गए। कैलाश ने कोई बधाई न दी और न कुछ कहा। कहने-सुनने की कोई आवश्यकता न थी इतना तो तारा जानती थी, रति भी जानती थी। कैलाश और फ़ांसिस के बीच एक बेतार का तार बँधा हुआ था और उनकी अटूट मित्रता का यही एकमात्र कारण था।

"अजीब है दुनिया और यह दुनियावाले," रहमान ने कहा। "उन उल्लू के पट्ठों को सिवा इस मोटी अम्मा के और कुछ न दिखाई दिया। उठाकर फ़र्स्ट प्राइज़ ही दे मारा इसे। पैरिस के *आर्ट क्रिटिकों* का दिवाला निकल गया है दिवाला।"

कैलाश और फ़ांसिस हँस पड़े। रति भी हँसी।

तारा ने फ़ांसिस से कहा कि वह जननी को पास से देखना चाहती है। फ़ांसिस उसे प्रतिमा के पास ले गया। सभी गए। भीड़ बाहर जा रही थी। कुछ लोग प्रतिमा के आसपास तथा अन्य कृतियों के अतराफ़ चक्कर काट रहे थे।

तारा बड़ी देर तक प्रतिमा का अवलोकन करती रही।

"कैसी है?" फ़ांसिस ने पूछा।

कैलाश और रति ने भी तारा की ओर देखा। तारा की प्रतिक्रिया देखने को वह सब उत्सुक हो उठे। उन्होंने देखा तारा के चेहरे पर सहसा एक हलकी लाली दौड़ पड़ी। फिर वह लजा गई। मुस्कुराकर उसने कहा :

"अच्छी है।"

रहमान ने कहा : "यह तो कोई जवाब नहीं हुआ। यह बताइए कि इसमें अच्छा क्या है? क्यों अच्छी है? कोई सबब दीजिये।"

तारा ने कहा : "यह तो मैं नहीं कह सकती, क्योंकि मैं कोई *आर्ट-क्रिटिक* नहीं। मुझे अच्छी लगी सो कह दिया अच्छी है।"

"जब आप *आर्ट-क्रिटिक* नहीं तो आपको कोई हक़ नहीं, तारा देवी, कि आप आर्ट के मामले में अपनी टाँग अड़ाएँ।"

तारा सहज ही में हार माननेवाली न थी, और वह भी रहमान से; मुस्कुराकर बोली: "आर्ट को सराहने के लिए आर्ट-क्रिटिक होना क्या ज़रूरी है?"

"अलबत्ता," रहमान ने कहा। "आपने चट-से कह दिया 'अच्छी है', क्योंकि पेरिस ने कहा 'अच्छी है'। अब तो सभी कहने लगे इस मोटी अम्मा को अच्छी। अजी इसके अच्छे होने का कोई सबब बताइए।"

"मेरा ख़याल है कला में और सुंदरता में कोई सबब नहीं होता," तारा ने कहा। "एक चीज़ किसी को सुंदर लगती है और वही चीज़ दूसरे को नहीं लगती। क्यों लगती है, और क्यों नहीं लगती, यह मैं नहीं जानती। शायद यह बात सौन्दर्य के परखने की अपनी-अपनी मानसिक शक्ति पर निर्भर है।"

फ़्रांसिस ने कहा: "या अपनी-अपनी मूर्खता और मूढ़ता पर।"

रति हँस पड़ी।

कैलाश ने कहा: "तारा ठीक कह रही है, रहमान। इन्होंने अपने ढंग से बात की है पर बात सच है। सौंदर्य कई प्रकार का होता है। *ब्यूटी इन फ़ॉर्म* भी है, *ऐब्स्ट्रैक्ट ब्यूटी* भी है। सौंदर्य की परिभाषा बहुत मुश्किल है। एक सुंदर सूर्यास्त सब को सुंदर नहीं लगेगा, वरना हर शाम को जूहू और चौपाटी पर घूमते हुए लोग मुँह बाये डूबते हुए सूर्य को ताका करें। तुम्हीं बताओ, कभी अपनी खिड़की पर खड़े रहकर तुमने समुद्र में डूबते हुए सूर्य को ताका है? सूर्यास्त के समय बादलों की रंगबिरंगी ओढ़नियाँ लहराते देखी हैं?"

रहमान ने हँसकर कहा: "मैं तुम्हारी सब बातें मानने को तैयार हूँ, कैलाश, पर यह मानने को तैयार नहीं कि यह मोटी अम्मा ख़ूबसूरत है।"

"तो फिर इसमें तुम्हारा दोष नहीं, तुम्हारे माँ-बाप का दोष है!" फ़्रांसिस ने अपना चुरुट सुलगाते हुए कहा। "चलो चलें।"

सब हँस पड़े।

रति ने कहा: "हाँ, चलो, चलकर कहीं खाना खाएँगे।"

"हाँ, चलिए," रहमान ने कहा। "कोलाबा पास ही है। चलिएगा? हमारे दौलतख़ाने चलिएगा? वहीं कुछ मँगवाया जाय।"

कैलाश ने कहा: "नहीं, चलो चाइनीज़ खाना खाएँ आज। *शांघाय रेस्तोराँ* चलें।"

तारा की गाड़ी में भरकर सब लोग *शांघाय रेस्तोराँ* की ओर चल पड़े। कैलाश और सलमा की गाड़ी पीछे-पीछे चल पड़ीं। रति की गाड़ी में कान्ति उमा को लेकर कहीं और चल दिया।

खाने की दावत रति की ओर से रही। उसीने मेनू चुना और उसीने बिल चुकाया।

ग्राज का दिन फ़ांसिस ग्रौर रति का दिन था। फ़ांसिस की सफलता को रति ग्रपनी सफलता समझे हुए थी। उसकी यह धारणा किसी ग्रंश तक उपयुक्त भी थी। सलमा, इतनी देर से जो चुप थी, खाने पर जोश में ग्राई।

"ग्रार्ट, कला, ख़ूबसूरती — वाह! क्या कहने हैं इनके," सलमा ने चिकन चाऊ का कटोरा पास खींचते हुए कहा, "पर पेट ग्रार्ट से नहीं, मुर्ग़ी से ही भरता है। क्यों, कैलाश?"

रहमान ठहाका मारकर हँसा। "यह बात कही है तुमने सोलह ग्रानेवाली!" उसने दाद दी।

कैलाश ने कहा: "मुर्ग़ी से ही क्यों? पेट दाल से भी भरता है, रोटी से भी।"

फ़ांसिस ने कहा: "घास से भी पेट भरता है।"

सलमा ने कहा: "शेर घास खाता है?"

रति ने कहा: "जी नहीं, शेर घास नहीं खाता पर हाथी —"

रहमान बोल पड़ा: "पर गधा ज़रूर खाता है।"

सलमा ने फ़ांसिस से पूछा: "ग्रापने कभी शेर को घास खाते देखा है?"

"नहीं," फ़ांसिस ने कहा, फिर रहमान की ग्रोर ग्राँख फिराकर बोला: "मगर गधे को मुर्ग़ी खाते देखा है।"

सब लोग हँस पड़े। तारा ग्रौर रति का हँसते-हँसते बुरा हाल हो गया।

खाने के बाद लोग उठकर ग्रपनी गाड़ियों के पास ग्राए। रहमान ग्रौर फ़ांसिस को उनके घर छोड़ने का ज़िम्मा सलमा ने लिया। रति की गाड़ी कान्ति ले जा चुका था सो उसने कैलाश से लिफ़्ट् माँगी। तारा सब से बिदा लेकर ग्रपनी गाड़ी में जा बैठी।

जब रति ग्रपने घर पर उतरी तो कान्ति नहीं लौटा था।

"ग्रंदर नहीं ग्राग्रोगे?" रति ने पूछा।

"नहीं, रति," कैलाश ने कहा, "बहुत रात हो गई है। कल सुबह जल्दी उठना है। ग्राउट डोर शूटिंग है, घोड़बन्दर जाना है।"

"ग्रच्छा, जैसी मरज़ी। मैं कल चली जाऊँगी।"

"कहाँ?"

"पूना।"

"फिर कब ग्राग्रोगी बम्बई?"

"पता नहीं। ग्रब तो शायद शादी पर ही ग्राना होगा।"

"शादी पर? किसकी?"

रति मुस्कुराई। "तुम्हारी," उसने कहा।

कैलाश हँसा। "मेरी शादी? किससे?"

"तारा से।"

मकान के बाहर अँधेरा था, पर फिर भी अंदर का प्रकाश बाहर झलक पड़ रहा था, और उस महीन प्रकाश में रति सामने खड़ी उसे ताकती हुई मुस्कुरा रही थी।

"यह कैसा मज़ाक़ है?" कैलाश ने कहा।

"मज़ाक़ नहीं है, कैलाश," रति बोली। "मैं सच कह रही हूँ। तुम जानते हो मैं सच कह रही हूँ। तुम तारा को चाहते हो। वह तुम्हें चाहती है, यह तो मैंने उसी दिन देख लिया था जिस दिन शूटिंग देखने मैं तुम्हारे सेट पर आई थी और जिस दिन तारा की माँ मरी थी और तुम्हारे कन्धे पर सर रखकर वह रोने लगी थी। पर तुमने मुझसे यह बात छिपाकर क्यों रखी?"

"मैंने कुछ नहीं छिपाया। कोई बात हो तब न?"

"तो कह दो, तुम तारा से प्रेम नहीं करते।"

कैलाश चुप हो गया।

रति ने फिर पूछा: "करते हो न?"

"शायद।"

"तो मुझे क्यों नहीं बताया?"

"मुझे यह ख़ुद पता न था।"

"यह झूठ है।"

"यह सच है।"

"तुमने जानबूझकर मुझसे बात छिपाई।"

"नहीं।"

"तुमने सोचा मुझे बुरा लगेगा।"

"मैंने कुछ नहीं सोचा। सच मानो, रति, इस बारे में मैंने कभी कुछ नहीं सोचा। वह सदा मेरे इतने पास रही है कि बहुत दिनों तक मुझे ख़ुद अपने मन का पता न चल पाया। बड़ी तेज़ आँखें है मेरी, मेरी आँखों से कुछ नहीं छिपता। सलमा कहा करती है कि मैं गिद्ध की नज़र रखता हूँ। ठीक ही कहती है। उड़ती चिड़िया के पर पहचान जाता हूँ; पर, तुम सच मानो, अपनी ही बात, अपने ही मन का भेद मैं मुद्दत तक नहीं जान पाया। और जब जान पाया तो अचानक ही जान पाया।"

रति मुस्कुराई। "कब जान पाए?" उसने पूछा।

"अभी कुछ महीने हुए एक दिन — एक रात — सलमा के घर पार्टी थी — तभी।"

"फिर? तुमने तारा से कहा?"

"नहीं, अभी नहीं कहा है।"

"क्यों नहीं कहा?"

"झिझकता हूँ। न जाने वह बात को किस तरह ले। जानती हो? वह मुझे बहुत मानती है। वह मेरी इज़्ज़त करती है, मुझे पूजती है। उससे कैसे कह दूँ कि मैं उससे प्रेम करने लगा हूँ?"

"वह भी तो प्रेम करती है।"

"हाँ, मगर किसी और से।"

"किससे?"

"जीवन मलहोत्रा नाम का एक आदमी है, दिल्ली में रहता है, उससे। उसे वह बचपन से जानती है। दोनों एक दूसरे को चाहते हैं।"

"सच?"

"हाँ।"

"तुमसे किसने कहा?"

"उन दोनों की आँखों ने। जीवन बम्बई आया हुआ था। माँ के मरने के तीन दिन बाद वापस लौटकर गया है। शायद फिर आनेवाला है।"

"तारा उसे चाहती है?"

"हाँ।"

रति ने कैलाश के हाथ को अपने हाथ से दबाकर कहा: "मेरी सुनोगे?"

"क्या?"

"तुम तारा से एक बार अपने दिल की बात कह दो।"

"उससे क्या होगा?"

"कहकर तो देखो। मेरा दिल कहता है वह उस जीवन को नहीं, तुम्हें चाहती है। कभी चूमा नहीं तुमने उसे? कभी कुछ नहीं किया?"

कैलाश हँस पड़ा। "अरे, नहीं," उसने कहा। "यह क्या कह रही हो!"

आँखें सकरी करके रति ने कहा: "मेरे साथ तो तुमने बड़ी जल्दी की थी!"

"तुम्हारी बात और है," कैलाश ने कहा; फिर फ़ौरन् ही बोल पड़ा: "तुम समझदार हो, तुम मुझे समझती हो।"

परंतु रति को कैलाश का पहला वाक्य तीर की तरह लगा—ज़हर में बुझे हुए तीर की तरह। "अच्छा, कैलाश," उसने हाथ हटाते हुए कहा, "तुम्हें देर हो रही है—"

"अच्छा, रति। चलूँ।"

"*विश यू आल द लक।*"

"*थैंक्स। आइ विल नीड इट। गुड नाइट।*"

"*गुड नाइट।*"

कैलाश अपनी मोटर में चला गया। थोड़ी देर तक वहीं खड़ी हुई रति उसकी मोटर को ताकती रही, फिर अंदर चल दी। अपने कमरे में पहुँचकर उसने कपड़ बदले। प्यास बहुत लग रही थी। थोड़ा पानी पीया और छत पर निकल आई। आधी रात हो चुकी थी। हवा में ठंडक थी। वह ठंढी हवा गालों को भली लग रही थी। उसकी दृष्टि दूर तक गई। पड़ोस के सारे मकान खड़े ऊँघ रहे थे। बाग में लगे हुए

गुलमोहर नंगे थे। उनकी टहनियों पर एक पता न था। उसने ऊपर को देखा। ग्राकाश में तारे झिलमिला रहे थे। कितने दिन हो गए ग्राकाश को देखे, ग्राकाश के तारों को देखे। उसे वह रात याद हो ग्राई जब कैलाश के साथ वह जुहू पर गई थी। कैलाश के साथ—उस रात—जुहू पर—जुहू की रेत पर पड़े-पड़े उसने ग्राकाश के तारे देखे थे। उस रात भी इसी प्रकार झिलमिला रहे थे तारे। कैसी सुंदर रात थी वह! कितनी मदमाती! ग्रौर तब कैलाश का वह वाक्य उसे फिर याद हो ग्राया: "तुम्हारी बात ग्रौर है।" वाक्य फिर उसे तीर की तरह चुभा—ज़हर बुझे तीर की तरह। इसी समय उसने ग्रनुभव किया कि उसके सर में ज़ोरों का दर्द हो रहा है। ज्यों-ज्यों वह वाक्य याद ग्राता त्यों-त्यों सर की पीड़ा बढ़ती जाती। ग्रब तो जी भी मचलाने लगा। उसे लगा कि उलटी हो जाएगी। "तुम्हारी बात ग्रौर है," उसने कहा था। "तुम्हारी बात ग्रौर है...... तुम्हारी बात ग्रौर है...... तुम्हारी बात ग्रौर है....." रति को ऐसा लगा मानो उसे चक्कर ग्रा रहा है। वह चट-से कमरे में ग्राई ग्रौर बिस्तर पर लेट गई। मचली बन्द हो गई थी पर सर का दर्द कम न हुग्रा। उसने उठकर ऐस्प्रो की एक टिकिया पानी के साथ निगल ली ग्रौर फिर लेट गई। ऊपर को देखा तो ग्राकाश न था, तारे न थे, छत थी, छत से पंखा लटक रहा था। "तुम्हारी बात ग्रौर है..... तुम्हारी बात ग्रौर है....." रति ने नज़र गड़ाकर देखा तो पंखा चुप खड़ा था, बिलकुल स्तब्ध ग्रौर मौन। उसके तीनों फल बिलकुल स्थिर थे, ग्रौर फिर वह ग्रस्पष्ट होने लगे क्योंकि रति की ग्राँखें झपकने लगी थीं। इसी समय ज़ोरों की ग्रावाज़ हुई। ग्रहाते में मोटर प्रवेश कर रही थी। उमा को छोड़कर कान्ति घर लौट रहा था।

पर मोटर की यह ग्रावाज़ रति ने न सुनी। उसे नींद ग्रा गई थी। नींद—मानव पर कृपानिधान की सबसे बड़ी कृपा, जिसे पाकर वह ग्रपने तमाम दुख-दर्द भूल जाता है।

१६

कैलाश का एक पिक्चर, *नई कहानी*, जो वह शांतिभाई देसाई के लिए बना रहा था, समाप्त होकर रिलीज़ भी हो गया था। पिक्चर सफल रहा। शांतिभाई खुश हो गया। *ग्रेट इंडिया पिक्चर्स* के सभी लोग कैलाश से खुश हो गए। कम्पनी का कोई चित्र जब सफल होता है तो उस कम्पनी में काम करनेवाले सब लोगों को बहुत खुशी होती है, क्योंकि उनकी रोजी उसके बाद बहुत दिनों के लिए स्थायी हो जाती है। कम्पनी के दो-चार चित्र फ़ेल हो जाने से सदा ही स्टूडिओ को ताला लग जाने की आशंका रहती है। इसीलिए वह सब खुश थे। सलमा की खुशी का तो पारावार न था। वह अब स्टार बन गई थी। कैलाश ने अपना दिया हुआ वचन पूरा कर दिया था।

सर्वत्र कैलाश की बड़ी पूछ होने लगी। बहुत सारे निर्माता उसके पीछे पड़ गए, अपने चित्र उसीसे निर्देशित करवाना चाहते थे। परंतु कैलाश ने कोई नया पिक्चर हाथ में लेने से साफ़ इनकार कर दिया। उसका स्वयं का *ज्वालामुखी* जब तक वह समाप्त नहीं कर लेगा कोई नया पिक्चर न लेगा, ऐसा उसने उन निर्माताओं से साफ़ कह दिया।

इन दिनों उसका सारा समय *ज्वालामुखी* के निर्माण कार्य में ही जाता था। उसकी स्वयं की कम्पनी का यह दूसरा चित्र था। इसका सफल होना कैलाश के लिए बहुत आवश्यक था अन्यथा बाज़ार में वह अपनी पत खो बैठेगा। सारे वितरक यही समझेंगे कि *मिट्टी* में अंधे के हाथ बटेर लग गई थी, दूसरे चित्र में क़लई खुल गई। यद्यपि *नई कहानी* दूसरा सफल चित्र था परंतु वह कैलाश की कम्पनी का न था, दूसरे का चित्र था, दूसरे के लिए बनाया था कैलाश ने। इन सब बातों के अतिरिक्त, कैलाश की महत्त्वाकांक्षा सदा से ही प्रबल रही थी और वही महत्त्वाकांक्षा आज उसे *ज्वालामुखी* को वर्ष का सर्वोत्तम चित्र बनाने पर बाध्य किए हुए थी, और इसीलिए कैलाश अपना सारा समय *ज्वालामुखी* को दे रहा था। बहुत पैसा लग चुका था और लगा रहा था। फ़िनांसरों से उसने लाखों रुपये व्याज पर उठाये हुए थे—लगभग साढ़े चार लाख। बाकी रुपया डिस्ट्रीब्यूटरों से आया था। सारा रुपया *ज्वालामुखी* में डाला हुआ था, डाल रहा था। उसे पूरा विश्वास था चित्र सफल बनेगा, अद्वितीय बनेगा,

उसकी सफलता को चार चाँद लग जाएँगे। सफल निर्देशक तो बन ही चुका था, अब वह भारत का श्रेष्ठ निर्देशक बनने जा रहा था। जल्द ही *ज्वालामुखी* बनकर समाप्त होगा और जल्द ही रिलीज़ होगा और जल्द ही उसकी महत्त्वाकांक्षा परिपूर्ण होगी।

कभी-कभी जब कैलाश अपनी महत्त्वाकांक्षा के विषय में सोचता तो उसकी दशा विचित्र हो जाती। साल भर पहले वह एक मामूली व्यक्ति था—एक फटीचर था, और एक फटीचर चाल में फटीचर लोगों के साथ रहता था। परंतु उसे अपने आप पर और अपनी योग्यता पर सदा ही भरोसा रहा है। उसके अंदर आत्मविश्वास विलक्षण मात्रा में था और उसी मात्रा में योग्यता तथा महत्त्वाकांक्षा भी थी। तारा की बातें सोचते हुए जब वह निष्पक्ष होकर विचारता तो उसका मन उस पर स्वार्थ की लांछना लगाए बिना न रहता। उसने तारा को डूबने से बचाया था। कोई बड़ा काम नहीं किया था। उसकी जगह और कोई भी वहाँ उपस्थित होता तो वह भी वही काम करता। उसने तारा को चोटी की सिनेमा स्टार बनाया। यह बड़ा काम अवश्य था, परंतु यह तारा पर कोई उपकार न हुआ, अपने स्वार्थ के कारण अपनी महत्त्वाकांक्षा के वशीभूत होकर ही उसने ऐसा किया था। अगर उस दिन तारा ने काम करने से इनकार कर दिया होता तो कैलाश को डिरेक्शन का चान्स कभी न मिलता और वह आज फटीचर का फटीचर ही बना रहता। उसकी मनो-कामना पूरी हुई। उसकी सफलता के मूल में तारा थी। तारा के सहारे, तारा के कारण उसने अपना उल्लू सीधा किया, और कर रहा है, अब भी। यह सोचकर उसका मन मलिन हो जाता। सफलता प्राप्त करने की धुन और जल्दी में पहले उसे इस सम्बध में सोचने का कभी अवकाश ही न मिला, परंतु इन दिनों—जबसे वह बड़ा आदमी वन गया है, जब से उसकी महत्त्वाकांक्षा बहुत अंशों में पूरी उतर आई है—वह अक्सर अपनी बातें, तारा की बातें सोचता, अपने आचरण का विश्लेषण करता, और कभी-कभी अपने को ज़ोरों से धिक्कारता। उसे अपनी सफलता खोखली प्रतीत होती। उसे अपने काम की धुन है, चित्र-कला से प्रेम है। चित्र के निर्माण में ही पारितोषिक है। चित्र के निर्माण में ही उसे आनंद मिलता है। चित्र की आय से उसे आनंद नहीं प्राप्त हुआ। वह बड़ा आदमी, सफल निर्देशक तथा निर्माता अवश्य बन गया है, परंतु उस सफलता से उसे आनंद न मिल पाया, नहीं मिल पा रहा है। पैसा सबकुछ नहीं ख़रीद सकता। पैसा आनंद नहीं ख़रीद सकता। पैसा तारा को नहीं ख़रीद सकता। पैसा ठीक है; नाम, ख्याति, ऐश्वर्य ठीक हैं; पर उसे तारा चाहिए, तारा *भी* चाहिए। इतना बड़ा घर है, इतना ऐश्वर्य है, पर सब बेकार है। ऐश्वर्य अर्थहीन है। घर सूना है। रहमान ठीक कहता है: "घर में चूडियों की खनक चाहिए।" हाँ, खनक चाहिए। परंतु किन्हीं भी चूड़ियों की खनक नहीं चलेगी। चूड़ियाँ तारा की ही होनी चाहिएँ। तारा की ही चूड़ियों की खनक चाहिए। और तब तारा के लिए कैलाश व्याकुल हो तड़पने लगता।

उसने सोचा था *ज्वालामुखी* समाप्त होने पर तारा से अपने मन की बात कह देगा, शादी का प्रस्ताव रखेगा । अभी कुल नौ दिनों का शूटिंग और बाक़ी था, फिर पंद्रह-सोलह दिन एडिटिंग और बैक ग्राउंड म्युज़िक में लगेंगे । १५ मई तक सब काम समाप्त हो जाएगा । पर कुछ और ही होता प्रतीत हो रहा है । १५ मई को तो अभी लगभग एक महीना है और सुना है जीवन फिर बम्बई आ रहा है । कल स्टूडिओ में तारा के लिए उसका दिल्ली से ट्रंक कॉल आया था । दो हफ़्ते के अन्दर बम्बई आ जाएगा । यानी तारा के जन्मदिन के दिन जीवन मलहोत्रा भी शायद बम्बई में होगा, २७ अप्रैल को तारा की पार्टी में शरीक रहेगा ।

कैलाश जानता था अबकी बार जीवन योंही लौटनेवाला नहीं, अवश्य ही वह तारा को ब्याह के लिए राज़ी करेगा । पिछली बार उसने काफ़ी प्रयत्न किया था । तारा शायद राज़ी भी हो जाती, पर इसी बीच माँ की मृत्यु हो गई और इसीसे बात टल गई । पर अब न टलेगी । तारा भी अपने अकेलेपन से ऊब उठी है । गृहस्थी बसाने के लिए तो वह एक मुद्दत से आतुर है । पर विचित्र लड़की है ! जीवन में उसे क्या नज़र आया होगा? वह इतनी बड़ी कलाकार, इतनी भावुक युवती है और एक प्रेस-वाले से शादी करके घर बसाने की ठाने हुए है । क्या तारा वास्तव में जीवन से प्रेम करती है? या गृहस्थी का प्रलोभन उसे ब्याह के लिए आकुल किए हुए है ? एक दिन रति उससे कह रही थी कि तारा जीवन को नहीं, उसे चाहती है । क्या उसकी धारणा सच होगी? क्या तारा उसे चाहती है? कई अवसरों पर उसे भी ऐसा ही लगा था, परंतु उसने सोचा यह उसका भ्रम होगा । यह अवश्य था कि तारा उसके जितना निकट आ चुकी थी उतना जीवन के न कभी आई है और न ही आ पाएगी । एक विचित्र बेतार का तार बँधा हुआ है दोनों के बीच, कैलाश और तारा के बीच । कितना मानती है उसे ! क्या यह केवल श्रद्धा ही है? क्या इसमें अनुराग लेश मात्र भी नहीं ? उसके मन ने कहा अवश्य है । सहसा उसे माँजी के वाक्य स्मरण हो आए । "तारा तुम्हारी बहन की तरह है । तुम सदा इसकी देखभाल करना और इसे कभी बिगड़ने मत देना," माँजी ने कहा था । यही वाक्य कदाचित् उसके और तारा के बीच अब तक दीवार की नाईं खड़े हुए थे । कैलाश उसे, तारा को, बहन मानने को तैयार न था । तारा ने भी उसे भाई नहीं माना । फिर यह ज़बर्दस्ती का बहन का रिश्ता उस पर क्यों लादा जा रहा था? कौन लाद रहा था? कोई नहीं । माँजी ने तो कभी घबराहट में यों ही कह दिया था । यह रिश्ता कृत्रिम था, असंभव था, उसे मान्य न था । वह तारा को चाहने लगा है । तारा भी कैलाश को चाहने लगी है, पर उसे कदाचित् इसका भान नहीं, जिस प्रकार बहुत दिनों तक कैलाश को भी भान न हो पाया था कि वह उसे चाहने लगा है । तो तारा को इसका भान कराना पड़ेगा । संभव है भान हो भी मगर बात करते वह झिझक रही हो । वह भी तो अब तक झिझकता ही रहा है । फिर तो वह लड़की की ज़ात है । लड़कियाँ ऐसी बातें करते सदा ही झिझकती

हैं। कुछ हो, वह ज़रूर बात करेगा, पहले ही अवसर पर बात करेगा। वह तारा से इतना अधिक प्रेम करता है कि यह असंभव है कि तारा के दिल में उसके प्रति कुछ भी अनुराग न हो। वह तारा को अपनी बनाकर रहेगा, क्योंकि तारा के बिना उसका जीवन रूखा और शून्य है। उसके मन ने कहा : यह फिर स्वार्थ की बात हो रही है — अपनी ख्याति बढ़ाने के लिए, अपना घर बसाने लिए, अपने को खुश करने लिए अब वह तारा का बलिदान चाहता है, तारा के समस्त जीवन और सुख की आहुति चाहता है। फिर वही स्वार्थ ! तुरंत ही उसकी आत्मा ने प्रतिरोध किया : नहीं वह तारा का बलिदान नहीं चाहता है। तारा के जीवन और सुख की आहुति वह कभी न लेगा बल्कि, अगर कभी आवश्यक हुआ तो, उसके सुख के लिए वह अपने सुख और जीवन की आहुति दे देगा। तारा से वह प्रेम करता है, अपने से भी अधिक प्रेम करता है, निस्वार्थ प्रेम, और इसीलिए वह तारा के बिना जी नहीं सकता, इसीलिए उसका समस्त अस्तित्व तारा के अस्तित्व में लीन हो जाने के लिए व्याकुल हो उठा है।

उन्हीं दिनों एक रोज़ शाम को रहमान और फ़्रांसिस कैलाश के घर आए और रात को देर तक *ज्वालामुखी* के सिलसिले में बातें करते रहे। रहमान ने सारा हिसाब-किताब समझाते हुए कैलाश से कहा कि चित्र समाप्त होने तक उसमें साढ़े-आठ लाख रुपये लग जाएँगे—ब्याज पकड़कर साढ़े-आठ लाख रुपये। सब प्रान्तों की एम. जी. मिलाकर नौ लाख रुपये होते थे। डिस्ट्रीब्यूटरों को पिक्चर की कॉपियाँ दे देने पर *जनता चित्र* को पचास हज़ार रूपये का लाभ होगा। '*ज्वालामुखी*' अगर हिट हो गया —जैसी कि सब को आशा थी—तो पाँच-दस लाख रुपये का ठोस लाभ होकर रहेगा। पिछले हफ़्ते डिस्ट्रीब्यूटरों को *ज्वालामुखी* का ट्रायल दिखाया गया था। पिक्चर उनहें बेहद पसंद आया था। पिक्चर अब लगभग समाप्त हो चुका था, परंतु कैलाश उसमें एक डान्स और रखना चाहता था। तारा के साथ नाचने के लिए उसने नवीन-कुमार को तय कर लिया था, और ज़ोरों से उस डान्स का रिहर्सल हो रहा था। हफ़्ते भर बाद नाच की टेकिंग भी समाप्त हो जाएगी और पिक्चर भी।

पिक्चर समाप्ति पास आते देख रहमान ने संतोष की साँस ली। "इसके बाद मैं तो एक महीने की छुट्टी लूँगा, कैलाश," उसने कहा। थोड़े दिनों के लिए इलाहाबाद जाऊँगा, घरवालों से मिल आऊँगा। थक गया मैं तो।"

"और मेरा क्या हाल हो रहा होगा इसकी तुम्हें ख़बर है?" कैलाश ने पूछा।

"जानता हूँ, पर तुम्हें तो काम में मज़ा आता है, तुम्हें काम की आदत है। बक़ौल फ़ांसिस के—तुम एक रचनात्मक कलाकार हो और मैं एक किराये का टट्टू।"

फ़ांसिस ने कहा: "पर इस तहर का जानलेवा काम! दिन को शूटिंग, शाम को रिहर्सल, रात को एडिटिंग, सुबह बिज़नेस की बातें—उफ़ ! इस तरह तो तुम मर ही जाओगे, कैलाश। छुट्टी की सबसे ज़्यादा ज़रूरत तो तुम्हें है। रिलीज़ के बाद

तुम एकाध महीने के लिए अपने घर नागपुर हो आओ। घरवालों से मिल भी लेना और हवा भी तबदील हो जाएगी।

रहमान ने कहा: "तुम भी अजीब हो, यार! मई के महीने में इन्हें नागपुर भेजोगे? जानते हो भट्टी की तरह सुलगता है नागपुर मई और जून में। मैं तो कहता हूँ, कैलाश, किसी हिल स्टेशन पर चले जाओ तारा को लेकर। तारा देवी भी थक गई हैं काम करते-करते।"

"हाँ, कैलाश," फ़्रांसिस ने रहमान का समर्थन किया। "तुम लोग हो आओ, फिर हम लोग भी, एक-एक करके, हफ़्ते-दो हफ़्ते के लिए, बम्बई से बाहर आवारा गर्दी कर आएँगे।"

कैलाश ने कहा: "अच्छा, सोचेंगे। अभी तो पिक्चर के रिलीज़ में समय है, पहले बन तो जाए पिक्चर।"

उस दिन बात वहीं पर रह गई और कैलाश के साथ खाना खाकर उसके मित्र चले गए। उनके जाने के बाद जब कैलाश अपने बेडरूम में आया तो टेबल पर डाक रखी हुई थी। डाक में पिताजी की चिट्ठी भी थी। मई में छोटी बहन का ब्याह तय हुआ था। कैलाश को ब्याह में अवश्य सम्मिलित होने के लिए लिखा था। लिखा था माँ उसकी बहुत याद करती है। घर गए कैलाश को सात महीने होने आए। *मिट्टी* के बाद ही वह तीन दिनों के लिए नागपुर गया था और घरवालों से मिला था। उसने मन में कहा मई में शांति के ब्याह में वह ज़रूर जाएगा, तारा को लेकर जाएगा। तब तक तारा उसकी हो चुकी होगी। रहमान ने किस सहज भाव से कहा था: "किसी हिल स्टेशन पर चले जाओ, कैलाश, तारा को लेकर।" वह सोचने लगा कि उसके दोनों मित्र उसके और तारा के बारे में क्या सोचते होंगे? क्या उन्हें भी उसके मन की भावनाओं का भान हो गया है? क्या सब को भान हो गया है? केवल तारा को ही भान नहीं हो पाया है? आज कौन तारीख़ है? उसने कैलेण्डर पर देखा। आज २१ अप्रैल थी। तारा का जन्म दिन २७ अप्रैल को था। अभी जन्मदिन में पाँच, छः दिन बाक़ी थे। वह सोचने लगा कि जन्मदिन के अवसर पर तारा को कौनसी वस्तु भेंट देगा। उसे अधिक देर सोचना न पड़ा। उसके अचेतन की दीर्घकालीन अभिलाषा अब सहसा प्रखर रूप से उसके समक्ष आई। उसने तय कर लिया कि वह उस दिन—जन्मदिन की पार्टी में—तारा को अँगूठी भेंट करेगा, और अँगूठी देते समय अपने मन की बात भी उससे कह देगा।

२६ अप्रैल, १९५९ को लगभग ११ बजे रात को कैलाश ने डान्स की शूटिंग समाप्त की। *ज्वालामुखी* का यह अंतिम सीन था जो पिछले पाँच दिनों से बराबर लिया जा रहा था। सारा-सारा दिन और आधी-आधी रात तक सब ने अथक परिश्रम

किया था। नये चित्र का जब मुहूर्त होता है तो उस चित्र से सम्बध रखनेवाले तमाम कलाकारों को और कार्यकर्ताओं को उस समय बड़ी उमंग रहती है, उत्तेजना रहती है। शूटिंग के पहले दिन सेट के नयेपन का विचित्र लोच होता है। दुसरे दिन से सेट पुराना प्रतीत होने लगता है। बहुधा एक सेट पर ६, ७ दिन से अधिक शूटिंग नहीं होती। कई सेट पर तो २, ३, या ४ दिन में ही काम समाप्त हो जाता है। परंतु ऐसे भी कुछ सेट होते हैं जिनपर १०, ११ या १५ दिन तक काम चलता रहता है। ऐसे सेट बहुधा चित्र में सबसे उत्तम तथा बड़े होते हैं और उनके बनाने में बहुत रुपया खर्च किया जाता है। परंतु ऐसे बढ़िया और सुंदर सेट पर भी लगातार काम करते-करते ६, ७ दिनों के बाद सबका मन इन सेट से ऊब जाता है। निर्देशक व कलाकारों का तथा दूसरे कार्यकर्ताओं का भी जी करने लगता है कि अब किसी दूसरे सेट पर काम हो। परंतु जबतक उस सेट पर के तमाम सीन शूट न कर लिए जाते हैं उन्हें उखाड़कर नये सेट नहीं लगाए जाते हैं और लाचारी से सबको, मन मारकर, काम पूरा करना पड़ता है। इसी तरह चित्र निर्माण की अवधि में भी एक समय ऐसा आता है कि कलाकार व निर्देशक से लेकर अदना लाइटमैन और कुली तक चित्र से ऊब उठते हैं और चाहते हैं कि पिक्चर जल्द से जल्द ख़त्म हो जाए। पिछले पाँच दिनों से जनता चित्र के संचालक से लेकर सारे कर्मचारियों तक यही मना रहे थे कि *ज्वालामुखी* जल्द ख़त्म हो जाए। एक-एक दिन, एक-एक घंटा, और अंत में एक-एक मिनट गिनने लगे थे। सो २६ अप्रैल को ११ बजे रात के जब आख़िरी शॉट लेने पर कैलाश सिन्हा ने कहा: "*ओ. के.! पैक अप!*" तो तमाम उपस्थित जनों ने संतोष की साँस ली और ख़ुशी से उछल पड़े, मानो उन्होंने सतत पाँच-छै महीने तक घेरा डाले रखने के बाद कोई बड़ा अभेद्य गढ़ जीत लिया हो।

कैलाश ने कहा: "मिठाई लाओ।"

मिठाई लाकर पहले से रखी गई थी। रहमान ने इशारा किया और असिस्टंट लोग पेड़े, जलेबियाँ, गुलाबजामुन और रसगुल्ले आदि तश्तरियों में लिए आ गए। मिठाइयाँ सब को दी जाने लगीं, और तभी — मिठाइयाँ देखकर या मिठाइयाँ खाते-खाते — लोगों के मन सहसा उदास हो गए। उन्हें लगा मानो वह मैयत की मिठाई खा रहे हों। उन सब ने पिछले ६-७ महीने से आपस में कंधे से कंधा मिलाकर चित्र-निर्माण में अपनी-अपनी हैसियत से काम किया था, और आज वह काम पूरा हो गया था। काम पूरा होने की पहले तो उन्हें ख़ुशी हुई, पर दूसरे ही क्षण उन्हें रंज भी हुआ। वह मन ही मन सोचने लगे कि आज से उनकी टीम के लोग बिछड़ जाएँगे, न जाने फिर कब मुलाक़ात हो। कितनी अच्छी तरह बीत गए यह दिन! पिछले ६-७ महीने वह सारे के सारे एक कुनबे की तरह मिलजुलकर काम कर रहे थे; और कल से उनके समक्ष यह काम न होगा। कल से दूसरा काम होगा, दूसरा कुनबा होगा। यानी कार्य-समाप्ति के आनंद में कार्य-वियोग तथा परस्पर-वियोग का सम्मिश्रण हो गया और

रहमान की मिठाइयाँ किसी को सुस्वादिष्ट न लगीं। यह बात नई न थी। *मिट्टी* की मिठाई भी लोगों को न भाई थी, और कई चित्रों की समाप्ति की मिठाइयाँ भी कइयों को नहीं भा चुकी थीं। सिनेमा व्यवसाय में यह नित्य होनेवाली बात थी।

रात को ११ बजे जब लोग सेट पर से परस्पर विदा लेकर चले तो उनके मन द्रवित और पाँव भारी हो रहे थे। कैलाश की भी यही दशा थी, और तारा की भी। *ज्वालामुखी* चित्र के सारे पात्र, जिन्हें कैलाश हर दिन सँवारकर, थपेड़कर सजाया करता था, उन्हें रूप और आकार दिया करता था, अब बनकर सजीव हो उठे थे। कल से वह पात्र सेट पर न होंगे, क्योंकि कल से कोई सेट न होगा। कलाकारों का भी अपने-अपने पात्रों से अब कोई संबंध न होगा। आज से *ज्वालामुखी* के कलाकार अपने-अपने पात्रों से सदा के लिए बिछड़ गए थे। तारा का मन बैठ रहा था। वह भी अपने पात्र से बिछड़ रही थी, उस पात्र से जिसका चरित्र-चित्रण करने में वह पिछले इतने महीनों से व्यस्त थी। उसे लगा वह अपने आपसे बिछड़ रही है, उस आपसे जिसके निर्माण में कैलाश का प्रबल हाथ था। सेट से डबडबाई आँखें लिए वह यों जाने लगी मानो अपने एक भाग को वह कैलाश को सदा के लिए सौंपे जा रही हो,और उसे उस भाग के साथ मनमानी करने की पूरी-पूरी सत्ता दिए जा रही हो। तारा के ही नहीं बल्कि दूसरों के चरित्र-चित्रण भी फ़िल्म पर अंकित हो चुके थे, और अब वह सारी फ़िल्म कैलाश के हाथ में थी, जिसे अब वह एडिटिंग टेबल पर बैठकर काट-छाँट करेगा, उस प्रकार जिस प्रकार उसे अच्छा लगे।

बिदाई की घड़ी से गम्भीरता दूर करने के हेतु रहमान ने, अपनी तबीअत के अनुसार, मज़ाक और हँसी-दिल्लगी का सहारा लेते हुए कहा: "अरे भई, सब लोग अपने-अपने घर जा तो रहे हैं पर यह मत भूल जाना कि कल होने में सिर्फ़ एक घंटा बाक़ी रह गया है और कल किसी की सालगिरह है।"

तारा ने तब सहसा मुड़कर रहमान की ओर देखा और लोगों की आँखें ख़ुशी से चमकने लगीं।

तारा ने कर्मचारियों की ओर देखते हुए मुस्कुराकर कहा: "तुम लोगों के लिए मैं कल सवेरे रहमान साहब के हाथ मिठाई भिजवा दूँगी।"

थोड़ी देर बाद जब तारा और कैलाश बाहर मोटरों के पास पहुँचे तो कैलाश ने पूछा: कल पार्टी में किस-किस को बुलाया है?"

तारा ने कहा: "तुम्हें नहीं पता? रहमान तो कह रहे थे कि मेहमानों की नामावली तुम्हीं ने बनाकर दी थी उन्हें।"

कैलाश ने संतोष प्रकट करते हुए कहा: "तो मेरी नामावली के अनुसार ही न्योता दिया गया है?"

तारा ने देखा कैलाश अपने अहं का समाधान चाहता है। तब वह मुस्कुराकर बोली: "और नहीं तो क्या? मैं तो लोगों को नहीं जानती। तुम सुबह आओगे न मेरे घर?"

"सुबह नहीं, दोपहर को आऊँगा। लंच तुम्हारे घर ही खाऊँगा।"

"अच्छी बात है; पर पार्टी का इंतज़ाम तो सुबह से करना होगा। तुम दोपहर को पहुँचोगे तो सारा इंतज़ाम हो जाएगा शाम तक?"

"मुझे क्या करना है? इंतज़ाम तो रहमान और फ़्रांसिस करेंगे। तुम फ़िक्र न करो वह दोनों काफ़ी हैं।"

तारा चुप हो गई। मोटर के बाहर ही खड़ी रही। उसने सोचा कैलाश शायद अब अपने बारे में कुछ बोलेगा, अपने और उसके बारे में, परस्पर काम के बारे में, काम समाप्ति के बारे में, किसी बारे में....

कैलाश ने तारा की ओर देखकर कहा: "आज तुम्हारा दूसरा पिक्चर भी ख़त्म हुआ, तारा!"

"हाँ," तारा ने निश्वास छोड़ते हुए कहा।

पर निश्वास कैलाश ने न सुनी। "तुम ख़ुश तो हो, तारा?" उसने पूछा।

तारा ने कहना चाहा: 'ख़ुशी कैसी?' परंतु उसके मुँह से निकला: "हाँ, कैलाश।"

कैलाश के जी में सहसा आया कि तारा का हाथ पकड़कर अपनी गाड़ी में बिठा ले और उसे अपने घर ले जाए। ऊपर कैसे ज़ोरों की चाँदनी छिटक रही है! इस समय यही चाँदनी उसके पलंग पर पड़ रही होगी। घर जाकर इसी चाँदनी में लिपटकर बैठेंगे, लेटेंगे, नहायेंगे....

तारा ने देखा कैलाश आकाश की ओर देख रहा है। "अच्छा, मैं चलूँ," उसने मोटर में बैठते हुए कहा।

"अच्छा, तारा, गुडनाइट," कैलाश ने कहा।

तारा चली गई।

फिर कैलाश भी अपनी मोटर में पीछे की सीट पर आ बैठा। ड्राइवर ने आहिस्ता-आहिस्ता मोटर फाटक से बाहर निकाली तो हवा के ठंडे झोंके कैलाश के मुँह पर आए। वह बहुत थका हुआ था, सीट पर आड़ा लेट गया, और लेटते ही सो गया।

सुबह तारा देर तक सोई पड़ी रही। बेडरूम में उसने एअरकंडीशनर लगा रखा था, सो रात उसे नींद अच्छी आई। जब उसकी आँख खुली तो ८-३५ हो रहे थे। आँख खुलते ही उसे सहसा याद आया कि आज उसका जन्मदिन है। आज वह बीस वर्ष की होगी। उसे अपनी व अपने से सम्बन्धित बहुतेरी बातें याद आने लगीं। पिताजी याद आए, माँ याद आई, अमृतसर में बिताया बचपन याद आया, दिल्ली की बातें भी याद आई, बम्बई में चाल के दिन याद आए, और फिर कैलाश याद आया, याद आने लगा, और आता ही गया—कैलाश! एलिफ़ैंटा के शिव की तरह जड़ और कठोर कैलाश! उसका सर्वस्व कैलाश! वह दो महीने पहले

कैलाश, फ्रांसिस, रहमान और सलमा के साथ एलिफ़ैंटा केव देखने गई थी। बड़ी अच्छी पिकनिक रही थी। बोट से गए थे वह सारे। सुबह गए थे और शाम को लौटे थे। वहाँ पर शिव की उस भव्य त्रिमुखी शिला मूर्ति को देखकर वह चकित रह गई थी। फ्रांसिस अपनी स्केचबुक में शिव का रेखा-चित्र बनाने लगा था और कैलाश न जाने क्या सोच रहा था, पर तारा को तभी कैलाश और शिव में एक अद्भुत साम्य प्रतीत हुआ था और तब से जब कभी वह एलिफ़ैंटा के शिव की मूर्ति के विषय में सोचती है उसे अकस्मात् कैलाश याद आ जाता है। और आज उसका जन्मदिन था। आज २७ अप्रैल थी। वह जानती थी सबसे पहले आज उसे जन्मदिन की बधाई कैलाश ही देगा। उसने ऐसा सोचा ही था कि टेलीफ़ोन की घंटी बजी। उसने हाथ बढ़ाकर सिरहाने की तिपाई पर रखा हुआ टेलिफ़ोन उठाया।

"हलो," तारा ने कहा, "हलो —"

"हलो, तारा!" टेलीफ़ोन में जीवन मलहोत्रा की आवाज़ आई।

"हलो, जीवन! कहाँ से बोल रहे हो?"

"*ऐस्टोरिआ* होटल, बम्बई से। *विश यू ए वेरी वेरी हैपी बर्थ डे, तारा।*"

"*थैंक्स,*" तारा ने उत्तर दिया, फिर बोली: "तुम कब आए, जीवन?"

"आज, अभी, सुबह के प्लेन से आया हूँ। तुम सो तो नहीं रही थीं? तुम्हें जगा तो नहीं दिया मैंने?"

"नहीं।"

"क्या कर रही थीं?"

"बिस्तर पर पड़ी थी। रात को शूटिंग से देर से लौटी थी।"

"किस पिक्चर की शूटिंग थी?"

"*ज्वालामुखी* की।"

"*ज्वालामुखी* अभीतक खत्म नहीं हुआ?"

"हो गया, कल रात को ११ बजे खत्म हो गया।"

"यह तुमने बड़ी अच्छी खबर सुनाई, तारा। आओ न, मेरे होटल चली आओ, साथ ब्रेकफ़ास्ट खाएँगे।"

"नहीं, जीवन, अभी तो उठी हूँ मैं; घर का सारा काम करना है।"

"आज तुम्हारा जन्मदिन है, तारा। मैं चाहता हूँ आज का सारा दिन तुम मेरे साथ बिताओ।"

"आज दिनभर मुझे बहुत काम है, जीवन।"

"स्टूडिओ तो नहीं जा रही हो?"

"नहीं।"

"तो मैं आता हूँ।"

"अच्छी बात है।"

पुरानी सारी बातें, सारी घटनाएँ उसे याद आने लगीं। कैलाश से उसकी प्रथम भेंट कितनी अद्भुत थी! कैलाश के और उसके बीच कब और कैसे प्रेम अविर्भूत हुआ उसे याद न आया। अद्भुत ही था उसका प्रेम। शनैः शनैः जिस प्रकार रोगी के समीप मृत्यु आती है, उसी प्रकार तारा के समीप प्रेम आया था। मृत्यु की तरह ही उसे जकड़ लिया था प्रेम ने, और तारा अपने को कैलाश के प्रेम में मृत समान ही पा रही थी। ऐसा क्यों होता है? उसने सोचा। ऐसा क्यों होता है? प्रेम में मनुष्य की अवस्था मृत समान क्यों हो जाती है? प्रेमी के बिना, प्रेमी से दूर कोई वस्तु नहीं सुहाती, न भूख लगती है, न प्यास लगती है, न कोई काम करने को जी करता है; सारे समय शरीर शिथिल पड़ा रहता है, आलस घेरे रहती है, ऐसा लगता है कुछ खो गया है, रोने को जी करता है, मन में दर्द-सा होता है — मीठा मीठा दर्द — जो बड़ा अच्छा लगता है, दूसरे लोग दिखाई नहीं देते, मानो दुनिया जनहीन हो गई — सिवाय प्रेमी के .... और अब यह जीवन आ टपका है। वह फिर शादी-ब्याह की बात छेड़ेगा। क्या उत्तर देगी उसे वह? .... कैसी अद्भुत थी फ़्रांसिस की *जननी*! कितनी सुंदर! कितनी सजीव! और उसका पेट — ऐसा लगता था — अच्छा लगता था .... तारा का पेट भी एक दिन उसी प्रकार बढ़कर फूल उठेगा, तन जाएगा, ठीक *जननी* के पेट जैसा। तब उससे बराबर चला-फिरा न जाएगा .... खूब सारे कपड़े बनाएगी वह अपने नन्हे के लिए; मोज़े बुनेगी, स्वेटर बुनेगी, गुदड़ियाँ सीयेगी! कैसा होगा उसका नन्हा? बड़ा प्यारा होगा — अपने बाप की तरह ही होगा — ठीक नन्हा कैलाश ही होगा ....

तारा अपने विचारों की लड़ियाँ पिरो रही थी कि टेलीफ़ोन की घंटी बज उठी। लपककर वह फ़ोन पर गई। कैलाश बोल रहा था।

"कहाँ से बोल रहे हो?" तारा ने पूछा।

"अस्पताल से।"

"अस्पताल से?"

"हाँ, *माणिकलाल हॉस्पिटल* से बात कर रहा हूँ —"

"क्या हुआ? वहाँ कैसे पहुँचे?"

"रजनीकान्त की स्त्री को देखने आया था।"

"क्यों, चंद्रा को क्या हुआ?"

"सुबह मुझे पता चला कि उसका ऑपरेशन हुआ है, सो मैंने सोचा उसे देखता हुआ तुम्हारे घर आऊँगा। पर यहाँ आया तो रजनी ने रोक लिया, रोक रहा है, जाने नहीं देता, कहता है यहाँ अकेले उसका जी ऊब उठता है।"

"तुमने खाना खा लिया?" तारा ने पूछा।

"नहीं, अभी नहीं। इसीलिए तुम्हें फ़ोन किया कि लंच के लिए मेरा इंतज़ार मत करना। लंच मैं यहीं खाऊँगा इन लोगों के साथ। शाम को आऊँगा तुम्हारे घर।"

"शाम को चाय पर?"

"हाँ।"

"चार बजे?"

"हाँ, चार-पाँच बजे तक।"

तारा ने कहा: "अच्छी बात। काहेका ऑपरेशन था।?"

"अपेंडिक्स का।"

"अच्छा! मुझे ख़बर नहीं दी उन लोगों ने! अब कैसी हालत है चंद्रा की?"

"अच्छी है। कोई फ़िक्र की बात नहीं अब। ठीक हो रही है।"

"उससे कहना मैं कल आऊँगी उसे देखने।"

"अच्छा।"

बाज़ू में खड़ी हुई आया टेलीफ़ोन की बातचीत सुन रही थी। बात समाप्त होने पर उसने तारा से पूछा: "खाना लगा दूँ, मेम साहब?"

"हाँ, ऐनी, लगा दे," तारा ने मन मसोसकर कहा।

आया खाना लगाने अंदर चली गई।

तारा सोचे हुए थी कि आज लंच वह कैलाश के साथ बैठकर खायेगी। परंतु कैलाश नहीं आ रहा है। जीवन को वह पहले ही मना कर बैठी है। लंच उसे आज, अपने जन्मदिन पर, अकेले बैठकर ही खाना पड़ेगा। दिन बिगड़ता दिखाई दिया। न जाने शाम को क्या होगा। उसका मन बैठ रहा था। वह जानती थी लंच का खाना उसे ज़हर लगेगा।

टेलीफ़ोन रखकर कैलाश लॉबी में आया तो उसके मस्तिष्क में एक ही ख़याल था—तारा का उपहार, जो उसे वह शाम को पार्टी में भेंट करना चाहता था। *नानुभाई ज्वेलर्स* की दूकान से वह अँगूठी ख़रीदना चाहता था। उसने सोचा था अँगूठी लेकर वह तारा के घर लंच खाने जायेगा और तभी उसे वह अँगूठी भेंट कर देगा और मन की बात भी कह देगा। परंतु अँगूठी लेने जब वह नानुभाई की दूकान पर गया और एक अँगूठी पसन्द की तो वह अँगूठी ढीली प्रतीत हुई। कैलाश के पास कोई नाप न था। तब वह दादर जाकर स्टूडिओ के कॉस्टयूम डिपार्टमेंट में गया और नक़ली ज़ेवरों में से उसने वह अँगूठी चुनकर निकाली जो तारा ने *ज्वालामुखी* चित्र में पहनी थी। नक़ली अँगूठी लेकर वह नानुभाई की दूकान को लौटा तो बारह बज गये। नानुभाई के सुनार ने कहा कि अँगूठी नमूने के नाप से काटकर तीसरे पहर तक तैयार कर देगा। कैलाश बिना अँगूठी के तारा के घर जाना नहीं चाहता था सो वह रजनीकान्त की स्त्री को देखने *माणिकलाल अस्पताल* चला आया था। वह सोचने लगा अब अँगूठी तारा को चाय पर देगा, और तबतक समय अस्पताल में ही रजनीकान्त और चंद्रा

की संगत में व्यतीत कर लेगा। परंतु उसका मन उतावला हुआ जा रहा था, छटपटा रहा था — तारा से मिलने के लिए, तारा के घर पहुँचने के लिए।

'यह क्या हो गया है मुझे?' कैलाश ने सोचा। 'इतने दिनों में तारा के साथ, उसके इतने समीप रहा पर कभी मेरी यह हालत न हुई, और अब सहसा उसके बिना, उससे दूर, एक मिनट भी मुझसे रहा नहीं जाता है।' कैलाश ने लॉबी में खड़े होकर सिगरेट सुलगाई और फिर चलने लगा, सोचने लगा। उस दिन की याद करने लगा, उस घटना के विषय में सोचने लगा जब उसे पहली बार ज्ञात हुआ था कि वह तारा से प्रेम करने लगा है, परंतु उसे कुछ याद न आया। उसने जानबूझकर प्रेम नहीं किया है, बल्कि उसने सदा पूरा-पूरा प्रयत्न किया है कि तारा से वह किसी प्रकार भी न उलझने पाये। तारा से, या किसीसे भी प्रेम करने के लिए वह तत्पर न था, तैयार न था। प्रेम करने के लिए, घर बसाने के लिए, अभी सारी उम्र बाक़ी थी। पहले उसे अपना जीवन सफल बनाना था, अनुभव उपार्जन करना था। उसे जोकुछ अनुभव प्राप्त था वह एक सफल निर्देशक के लिए काफ़ी न था; इसीलिए वह तारा के प्रति सतर्क हो उससे दूर-दूर रहता था। फिर न जाने कब और कैसे वह रीझ गया तारा पर! यह सब अनजाने ही हुआ है, अचानक ही हुआ है, इसमें उसका कोई हाथ नहीं, और न अब कोई बस ही चलता है। उसे ग़ालिब का शेर याद हो आया :

इश्क़ पर ज़ोर नहीं, है वह आतिश गालिब,
के लगाए न लगे और बुझाये न बने।

वह हँसा और उसने दरवाज़े की चौखट पर लगी हुई बटन दबाई। एक पारसी बुड्ढे ने दरवाज़ा खोला। बुड्ढे को देख कैलाश चौंक पड़ा और बुड्ढा कैलाश को देखकर। सहसा कैलाश की दृष्टि दरवाज़े के नम्बर पर पड़ी। नम्बर ४२ था। कैलाश ग़लत कमरे में पहुँचा हुआ था। क्षमा माँगकर वह लौट पड़ा। रजनीकान्त का कमरा था १६ नम्बर का, जो लॉबी के दूसरे छोर पर था।

कैलाश को देखकर रजनीकान्त ने कहा : "बड़ी देर लगा दी फ़ोन में!"

कैलाश ने देखा चंद्रा पलंग पर पड़ी हुई मुस्कुरा रही थी।

कैलाश ने ग़लत कमरे में पहुँचने की अपनी भूल उन्हें बताई तो वह दोनों ख़ूब हँसे।

"एक बात पूछूँ, कैलाश भाई?" चंद्रा ने सहसा कहा।

"पूछिए, कैलाश ने उत्तर दिया।

"क्या आप सारे वक़्त कुछ न कुछ सोचते ही रहते हैं?"

"आप नहीं सोचतीं?"

"नहीं — सारे वक़्त कोई नहीं सोचता।"

"शायद।"

"मगर शायद आप सारे वक़्त सोचा करते हैं।"

"श"

"शायद।"

"क्या सोचते हैं।?"

कैलाश मुस्कुराया। "पता नहीं — कहना मुश्किल है — यों ही इधरउधर की बातें, ऊटपटाँग बातें।"

"कहानियों के बारे में सोचते हैं?"

"नहीं — हमेशा नहीं, कभी-कभी।"

"अच्छा यह बताइये आपको कहानियाँ कैसे सूझ जाती हैं?"

कैलाश हँसा। "बड़ा मुश्किल सवाल किया आपने, भाभी," उसने कहा। "कभी किसी व्यक्ति को देखकर कहानी सूझ जाती है। और कभी कोई विशेष घटना सुझाती है कहानी।"

"मैं समझती हूँ कहानी लिखना बहुत मुश्किल काम है।"

"सब कलाएँ मुश्किल हैं।"

तब रजनीकान्त ने कहा: "हाँ, मगर कहानी लिखना शायद बहुत मुश्किल है। मैं एक कहानी नहीं लिख सकता।"

कैलाश ने कहा: "और मैं एक सीन ऐक्ट नहीं कर सकता। यह समझो कि जिसको जो कला सध जाय वह सध गई, बस।"

"उस दिन मैं आपके घर *ज्वालामुखी* का स्क्रिप्ट पढ़ रही थी। इतने पात्र हैं उसमें, इतनी सारी घटनाएँ हैं। इतना सारा अनुभव आपने कैसे हासिल कर लिया — और इतनी कम उम्र में?"

रजनी ने कहा: "अरे तुम क्या समझती हो इसे! यह बड़ा अनुभवी है, बड़ा पहुँचा हुआ है!"

"नहीं, मजाक नहीं, बताइए न, कैलाश भाई, इतनी सारी बातें आपने कैसे देख लीं, कहाँ देख लीं? इतनी सारी जानकारी आपको कैसे मिल गई?"

"भाभी —" कैलाश मुस्कुराया — "लेखक अपनी आँखों को इस्तेमाल करना जानता है," उसने कहा।

"जैसे दूसरे लोग आँखें बन्द करके जीते हैं?" रजनी ने कहा।

"नहीं, यह बात नहीं," कैलाश बोला, "पर लेखक की आँख और दूसरों की आँख में फ़र्क़ होता है; फिर लेखक के पास दो ही आँखें नहीं होतीं, हज़ार आँखें होती हैं।"

"क्या आपकी आँखें सबकुछ देख लेती हैं?"

"नहीं, सबकुछ नहीं — कुछ आँखें देख लेती हैं, और कुछ दिमाग़ तर्क कर लेता है, फिर घटना बन जाती है। घटना के सहारे कहानी बनते देर नहीं लगती। अभी का ही उदाहरण लीजिए: मैं टेलीफ़ोन करके आपके कमरे में आने के लिए निकला था और ग़लत कमरे में जा पहुँचा। कितनी सुंदर घटना है! इसे ज़रा बदलकर देखिए:

कहानी शुरू होती है तो हम देखते हैं एक युवक अस्पताल में अपने एक दोस्त से मिलने जा रहा है। दोस्त का ऑपरेशन हुआ है, या समझ लीजिये, दोस्त की स्त्री का ऑपरेशन हुआ है।"

"अपेंडिक्स का ऑपरेशन," रजनी ने मुस्कुराकर कहा।

"हाँ," कैलाश बोला, "अपेंडिक्स का ऑपरेशन।"

"फिर?" चंद्रा ने उत्सुकतापूर्वक पूछा। "फिर क्या होता है?"

"वह युवक दोस्त के कमरे में न जाकर भूल से ग़लत कमरे में जा पहुँचता है।"

"फिर?" चंद्रा ने पूछा।

"दरवाज़ा खोलनेवाला वह बूढ़ा उस युवक को डॉक्टर समझता है। युवक उसकी समझ ठीक करता है। सहसा उसकी निगाह पलंग पर पड़ती है। एक सुंदर युवती पलंग पर पड़ी कराह रही है, फिर वह बेहोश हो जाती है। बूढ़े के कहने से वह युवक डॉक्टर को बुलाने जाता है। डॉक्टर आता है। युवती को होश में लाया जाता है। इस प्रकार एक घंटा बीत जाता है। फिर बूढ़ा खाना खाने बैठता है और युवक को भी अपने साथ खिलाता है। इसके बाद युवक हर रोज़ जब अस्पताल अपने दोस्त के पास आता तो थोड़ी देर के लिए उस युवती के कमरे पर ज़रूर हो आता। बात बढ़ गई, और उस युवक के और उस युवती के दिलों में पेंच पड़ गया। मगर एक रोज़ अचानक युवक को ज्ञात हुआ कि युवती की दोनों टाँगें ऑपरेशन करके काट दी जाएँगीं।"

"हाय!" चंद्रा चीख़ उठी। "फिर? फिर क्या होता है? फिर?"

कैलाश मुस्कुराया। "आपको मैंने कहानी शुरू किस प्रकार हो रही है यह बताया है, कहानी नहीं बताई है, कहानी सोचनी पड़ेगी।"

"फिर भी, आपने क्या सोचा? आगे क्या होगा?"

"अभी सोचा नहीं। मैंने तो आपको केवल उदाहरण दिया है। सोचने से कहानी बन जाएगी।"

रजनीकान्त ने कहा: "आगे लड़की का ऑपरेशन होगा?"

"हाँ, हो सकता है," कैलाश ने उत्तर दिया।

"लड़की की टाँगें जाती रहती हैं," चंद्रा ने सुझाया।

"हाँ, जा सकती हैं।"

"लड़का और लड़की परस्पर प्रेम करते हैं," चंद्रा बोली।

"हाँ।"

"और लड़का चूँकि हीरो है पीछे नहीं हट सकता," रजनी ने कहा, "इसलिए वह उससे शादी ज़रूर करेगा।"

"हाँ, कर सकता है।"

"पंगु लड़की से शादी कर लिया हीरो ने! यह तो कहानी का बढ़िया अंत नहीं

हुआ!" चंद्रा ने अपनी राय दी। "पंगु दुलहन बुरी लगेगी। क्या इससे लोगों का समाधान होगा?"

"शायद नहीं होगा," कैलाश ने कहा।

"तो फिर?" रजनी ने पूछा।

"उसकी टाँगें न काटिए," चंद्रा ने कहा।

कैलाश मुस्कुराया। "नहीं काटेंगे उसकी टाँगें," उसने कहा। "लड़का यह जानते हुए भी कि लड़की की टाँगें जानेवाली हैं उससे प्रेम करता है। उसका प्रेम पराकाष्ठा पर पहुँचता है। टाँगों के रहने की उसे परवाह नहीं। उनके परस्पर प्रेम का उत्पादन व उनके प्रेम का चरम बिंदु पर पहुँचना ही सारी कहानी बन सकती है, और अंत में उनका प्रेम युवती पर एक विलक्षण प्रभाव डालता है। टाँगों में शक्ति का संचार होने लगता है। ऑपरेशन टल जाता है। टाँगें अच्छी हो जाती हैं और उनका ब्याह हो जाता है।"

"अहा!" चंद्रा ने प्रसन्न होकर कहा। "बड़ी अच्छी कहानी बन गई। इसे आप ज़रूर लिख डालिए, कैलाश भाई। अपना अगला पिक्चर इसे ही बनाइए।"

कैलाश हँसा।

"बनाइएगा?" चंद्रा ने फिर पूछा।

"नहीं," कैलाश ने उत्तर दिया।

"क्यों?"

"मुझे यह कहानी ख़ास नहीं जँची, कुछ और सोचना पड़ेगा।"

चंद्रा उदास हो गई।

और रजनीकान्त ठहाका मारकर हँस पड़ा।

इसी समय दरवाज़ा खुला और एक नर्स खाने का ट्रे लिए अंदर आई।

"लो, इनका तो खाना भी आ गया," रजनी ने कहा। "हम ही रह गए। आओ, कैलाश, हम भी चलें खाना खाने।"

"चलो," कैलाश ने कहा, "कहाँ चलेंगे?"

"*क्वालिटी* चलेंगे, वही पास है। अच्छा, चंद्रा, तुम खाओ, हम लोग अभी आते हैं।"

नर्स खाने का ट्रे चंद्रा के पलंग पर लगा रही थी और कैलाश नर्स को ताक रहा था। चंद्रा ने कैलाश को ताकते देखकर पूछा: "क्या कोई और कहानी सूझ रही है?"

कैलाश हँस पड़ा और रजनी के साथ बाहर चल दिया।

दरवाज़े के बाहर लॉबी में चलते हुए रजनी ने सहसा पूछा: "कैसी थी?"

"क्या?"

"नर्स—जो खाना लेकर आई थी?"

"काफ़ी खूबसूरत है। मैं अक्सर सोचता हूँ कि यह नर्सें इतनी हसीन क्यों हुआ करती हैं।"

"सब नहीं होतीं।"

"नहीं, सब नहीं होतीं।"

"यहाँ एक नर्स है जिसके दाढ़ी-मूँछें हैं।"

कैलाश मुस्कुराया। "हाँ, मैंने देखा है उसे। मैं जब टेलीफ़ोन कर रहा था तो वह वहाँ से गुज़री थी। जानते हो, रजनी, मैं जब तीन साल का था तो मैंने पहली बार नर्स देखी थी, अस्पताल में। माँ को देखने मैं जाया करता था पिताजी के साथ। मेरा छोटा भाई पैदा हुआ था। और तब मेरे दिल में प्रेम का सोता पहली बार फूटा था — उस नर्स के लिए, उस पचीस-तीस वर्षीया नर्स के लिए! और मैं तीन वर्ष का था!

"नर्स का लिवास मुझे भी बड़ा अच्छा लगता है, सदा ही लगा है।"

"बड़ा आकर्षण है उस लिबास में। शायद सारा जादू उसके लिबास में ही है — कुछ उसके सफ़ेद फ़ॉक में और बाक़ी उसके सर के सफ़ेद रूमाल में।"

"तुम्हें कैसे पता?" रजनीकान्त ने शरारतन पूछा। "किसी नर्स को कभी तुमने उसकी पोशाक उतारकर देखा है?"

"नहीं, पर मैं सोच सकता हूँ — नर्स पर से उसकी पोशाक उतार लो तो वह नर्स न रहेगी, केवल नारी का शरीर रह जाएगा।"

रजनी की सफ़ेद *क्राइसलर* गाड़ी में कैलाश उसके बग़ल में बैठ गया और रजनी ने गाड़ी चला दी। गाड़ी अस्पताल के फाटक से निकलकर सड़क पर आई।

सहसा रजनी ने पूछा: "किसी नर्स के साथ कभी सोए हो तुम, कैलाश?"

"नहीं," कैलाश ने कहा।

"किसी नर्स से प्रेम किया है?"

"नहीं।"

"अजीब बात है। तीन साल के थे तुम तब से नर्स ज़ात पर आशिक़ हो और अबतक तुम्हें कोई नर्स न मिली।"

"मिली थी एक बार।"

रजनी ने घूरकर कैलाश को देखा। "अच्छा! कब?"

"पाँच-छै साल होने आए। बम्बई में तब नया ही आया था। लैमिंग्टन रोड पर अग्रीपाडा पुलिस स्टेशन के सामनेवाली चाल में रहता था। तभी एक नर्स से मुलाक़ात हुई थी। मेरी ही बग़ल के कमरे में रहती थी। नोरा नाम था उसका, नोरा रॉड्रिक ...."

रजनीकान्त बड़ी दिलचस्पी के साथ कैलाश को ताक रहा था। "यार बड़ा अच्छा नाम था।"

"थी भी सुंदर। गोरी थी। गोआनीज़ क्रिश्चियन थी पर ऐंग्लो इंडियन मालूम होती थी।"

"बाप शायद कोई ऐंग्लो इंडियन या अंगरेज़ रहा होगा।"

"हो सकता है। मेरा भी यही ख़याल था।"

"फिर?"

"फिर कुछ नहीं। बस, उसीको जानता था मैं — नोरा को। उसके कमरे में टेलीफ़ोन था सो मैं कभी-कभी टेलीफ़ोन करने उसके कमरे में जाया करता था।

"अकेली रहती थी?"

"नहीं। उसकी माँ साथ थी, छोटा भाई भी था। भाई साँवला था — माँ की तरह।"

"मतलब की बात बताओ, यार। नोरा को कभी तुमने लिया या नहीं?"

"नहीं।"

"क्यों?"

"क्योंकि मुझे तीन बातों से नफ़रत है: ग़रीबी, गंदगी और गन्दी बीमारी। और यह बात नोरा जानती थी।"

रजनीकान्त थोड़ी देर उलझन में पड़ा रहा, फिर उसने साश्चर्य पूछा: "क्या नोरा को कोई गन्दी बीमारी थी?"

"गनोरिआ।"

"तुम्हें कैसे पता चला?"

"नोरा ने कहा।"

रजनी ने आँखें फाड़कर कैलाश को ताका। "नोरा ने कहा? तुमसे कहा?"

"हाँ।"

"नोरा ने तुमसे कहा कि उसे गनोरिआ है?"

कैलाश ने सर हिलाकर हाँ जताया।

रजनी ने कैलाश के घुटने को बाएँ हाथ से दबाकर कहा: "यार, समझ गया। बड़ी दिलवाली निकली वह — तुम्हारी नोरा — चाहती तो तुम्हें बर्बाद कर देती। पर नहीं, बचा लिया तुम्हें। क्यों किया ऐसा उसने? शायद तुम्हें चाहती रही हो। क्यों?"

"पता नहीं। हो सकता है।"

"और तुम — तुम्हारे मन में उसके प्रति कैसी भावनाएँ रहीं?"

"मेरे लिए वह एक नारी थी, नर्स नहीं। काम से जब वह घर लौटती, या घर से काम पर अस्पताल जाती, तो सदा अपने निजी फ़्रॉक में होती, नर्सवाली पोशाक में न होती। इसीलिए तो कहता हूँ नर्स का जादू उसके लिबास में है, उसकी वर्दी में। समझे, रजनी?"

रजनी हँसने लगा। "समझ गया," उसने कहा। "यार, बात तुमने सच ही कही, बड़ी बात कही है — यह मनोवैज्ञानिक सत्य है।"

क्वालिटी रेस्तोराँ में पहुँचकर रजनीकान्त ने मेनू देखा और खाने का ऑर्डर दे दिया। कैलाश ने कहा था: "जो तुम खाओगे वही मैं भी।"

थोड़ी देर बाद खाना खाते हुए रजनीकान्त बोला : "तुम्हें एक मज़े की बात बताऊँ ?"

"बताओ।" कैलाश ने रजनी की ओर देखा।

"सिनेमा में आने से पहले मैं डॉक्टरी पढ़ रहा था, थर्ड ईयर में था जब मुझे हीरो बनने का ख़ब्त सवार हुआ।"

"मुझे मालूम है। अच्छा हुआ वरना डॉक्टर बनकर हज़ारों डॉक्टरों में से तुम भी एक हो जाते। तुम्हारा उन डॉक्टरों में पता न चलता। क्योंकि सच मानो, तुम बहुत मामूली हैसियत के डॉक्टर बनते।"

रजनीकान्त हँसने लगा।

"फ़िल्मी दुनिया में तुम्हारा स्थान सबसे ऊँचा है। यह कितना बड़ा कमाल किया है तुमने !"

रजनी ने सर झुकाकर स्तुति स्वीकार की, फ़िर कहा : "पर जानते हो ? चंद्रा को सिनेमा में मेरा प्रवेश बड़ा खला था। अरे, हमारी शादी टूटने लगी थी इसी बात पर !"

"अच्छा ! और अब ? अब क्या कहती हैं भाभी ? अब तो उन्हें इतमीनान हो गया ?"

"अरे तुम उसे नहीं जानते। बड़ी शकी और ईर्ष्यालु है। तुम्हारी क़सम खाता हूँ, जब से हमारी शादी हुई है — साढ़े-पाँच साल होने आए — अपनी पत्नी के सिवा किसी और से मेरा कभी सम्बंध न हुआ। पर जानते हो वह हमेशा क्या कहा करती है ?"

"क्या ?"

"कहती है : 'यह सिनेमा-विनेमा मुझे अच्छा नहीं लगता। जब देखो मुँह पर रंग चुपड़कर नई-नई लड़कियों के साथ लव-सीन किया करते हो। ऐक्टरों की ज़ात का क्या भरोसा ! पता ही नहीं चलता कब सच बोलते हैं और कब ऐक्टिंग करते हैं। बड़े गंदे हो तुम सिनेमावाले !'"

कैलाश हँसने लगा। "फिर तुम क्या जवाब देते हो ?" उसने पूछा।

"अरे जवाब तो उसे रात वह मुँहतोड़ मिला है कि अब तक तिलमिला रही है।"

कैलाश ने कौतूहलपूर्वक रजनी की ओर देखा।

"डॉ. मोरे को तो तुमने देखा है ? हाँ, सुबह तुमसे जिसका परिचय कराया था मैंने। *माणिकलाल अस्पताल* का सबसे बढ़िया डॉक्टर है, हेड *ऑफ द सर्जिकल डिपार्टमेंट* है। सिर्फ एक इंच पेट काटकर अपेंडिक्स निकाल लेता है।"

"अच्छा ! और कितना कम उम्र है।"

"कम उम्र तो नहीं — पचास के लगभग होगा, डॉ. मोरे।"

"हो सकता है। हाँ, तो क्या —"

"हाँ," रजनीकान्त ने तुरंत कहा। "डॉ. मोरे को चंद्रा बहुत मानती आई है। मुझसे सदा कहा करती थी कि अगर मैं सिनेमा स्टार न बनता तो डॉ. मोरे की तरह योग्य सर्जन बनता, कितना अच्छा होता। और जानते हो रात को क्या हुआ? रात को करीब ८ बजा होगा। डॉ. मोरे राउंड पर था। चंद्रा को इक्ज़ामिन करके उसे गए दो मिनट भी न हुए होंगे कि वह क्या देखती है कि बराबरवाले कमरे में डॉ. मोरे नर्स को लिपटाए उसे चूम रहे हैं।"

सुनकर कैलाश चकित हो गया। "मगर," उसने कहा, "बग़लवाले कमरे की घटना भाभी कैसे देख पाईं। बीच में तो पार्टीशन है न?"

"इसी पार्टीशन के शीशों पर ही तो उन दोनों की परछाइयाँ पड़ रही थीं। आकृतियाँ बिल्कुल साफ़ थीं। चंद्रा की आँखें उसे कभी धोखा न देंगी।"

"अच्छा। और नर्स कौन थी?"

"वही — जो खाना लेकर आई थी — मिस गिडवानी।"

कैलाश हँस पड़ा।

रजनीकान्त भी हँसने लगा। "मैं जब सुबह आया तो चंद्रा ने सारा क़िस्सा मुझे सुनाया और तब से ज़िद कर रही है कि घर ले चलो। अब एक मिनट भी यहाँ रहना नहीं चाहती। कहती है: 'क्या अस्पताल में भी यह सब होता है?' मैंने कहा: 'और तुम क्या समझीं कि यह सब सिर्फ़ सिनेमा स्टूडिओ में ही होता है? अरे, हमारी करनी तो सरेआम होती है — कैमरे और लोगों के सामने — पर बाहर जो पाखंड होता है उसे किसने देखा है!' कैलाश, सच कहता हूँ, चंद्रा के मुँह पर वह तमाचा पड़ा है कि उसे होश आ गया। बहुत चूँ-चरा किया करती थी सिनेमा के बारे में। अब तो मैं उसे देवता लगने लगा हूँ।"

"यार, रजनी, यह क़िस्सा तुमने मज़ेदार सुनाया।" कैलाश ने कहा। "अब छेड़ूँगा भाभी को।"

"हाँ, ज़रूर छेड़ना। चलते हैं खाना खाकर। चाय तक हमारे साथ ही ठहरो न। तुम्हें तो चार बजे जाना है कहीं?"

"हाँ, चार बजे। रात तुम तारा के घर आ रहे हो न पार्टी पर?"

"हाँ, हाँ, ज़रूर आऊँगा। पार्टी तो ८ बजे है न?"

"हाँ," कैलाश ने कहा, "८ बजे।"

रजनीकान्त ने थोड़ी देर बाद सहसा कहा: "मेरी सुनोगे, कैलाश?"

कैलाश ने कहा: "क्या?"

"तारा से तुम शादी कर लो।"

कैलाश मुस्कुराया और नीची निगाह किए खाने लगा।

रजनी ने फिर कुछ न कहा। वह भी खाने लगा। परंतु उसकी दृष्टि कैलाश के चेहरे पर जमी हुई थी। और कैलाश का चेहरा लाल हुआ जा रहा था।

१७

"अम्माँ जल्दी करो, फ़ांसिस, क्या कर रहे हो अंदर?" रहमान ने जूते के फ़ीते बाँधते हुए कहा।

इसी समय बाथरूम का दरवाज़ा खुला और तौलिया लपेटे फ़ांसिस बाहर आया।

"नहा रहा था भई, लो आ गया। बेटा, तारा की पार्टी में जाना है तो नहाना तो चाहिए न। पर तुम साले जुम्मे के जुम्मे नहानेवाले क्या समझो।"

"हुज़ूर, ७ बज रहे हैं। वहाँ पहुँचना भी तो है!"

"अभी तैयार होता हूँ। टैक्सी के लिए छोकरे को भेजा?"

"सलमा को फ़ोन कर दिया था मैंने। उसकी गाड़ी आती ही होगी। सवा-सात बजे आने को कहा था मैंने। चलो, जल्दी कपड़े पहनो।"

"पहनता हूँ, यार, जल्दी मत मचा। पार्टी का सारा बन्दोबस्त तो करके आए हैं। अब इतमीनान से चलेंगे — मेहमानों की तरह," फ़ांसिस ने बदन से तौलिया खोलकर सर के बालों को पोंछते हुए कहा।

फ़ांसिस का नंगधड़ंग शरीर अद्भुत था, जानवारों के शरीर की तरह था, और जानवरों में भैंसों के शरीर की तरह — जंगली भैंसों के। शरीर तगड़ा था, खाल मोटी थी, और बालों से भरी थी। जाँघ पर बहुत बड़ा घाव था। घाव चिकना था और उस पर बाल न थे। फ़ांसिस तौलिये से सर रगड़े जा रहा था और हाथ के झटकों के कारण उसका पेट थलथला रहा था जैसे गोश्त की दूकान पर टंगी हुई बकरे की पेटी थलथलाती है। यह भी एक पेटी थी, बालोंवाली पेटी।

फ़ांसिस ने सर से तौलिया हटाया तो रहमान को घूरता हुआ पाया। "क्या घूर रहे हो, बेटा?" फ़ांसिस ने पूछा।

"मैं सोच रहा था कि अल्लाहमियाँ ने औरत को इतनी हसीन और गुलबदन बनाया तो मर्द का जिस्म बनाते हुए क्या उन्होंने आँखों पर पट्टी बाँध ली थी?"

फ़ांसिस हँसा, फिर बोला: "मेरा ख़याल है मर्दों को बनाने में अल्लाहमियाँ को ज़्यादा मिट्टी ख़र्च करनी पड़ी थी।"

"मुमकिन है ज़्यादा मिट्टी मर्दों को दे दी हो उसने, पर ख़ूबसूरती तो औरतों को ही दी। फ़ांसिस डिसूज़ा, तुमने औरतें नहीं देखीं और न कभी शीशे में अपना जिस्म ही देखा है।"

"रोज़ देखता हूँ, बेटा। *मैटर*, *ब्यूटी*, और *फ़ॉर्म* पर मुझसे बहस न कर। जानता है? दुनिया के तमाम नर अपनी मादाओं से कहीं अधिक सुंदर होते हैं—शेरनी के मुक़ाबले शेर को देख, सिंहनी के मुक़ाबले सिंह को देख, मोरनी के मुक़ाबले मोर को देख, मुर्ग़ी के मुक़ाबले मुर्ग़े को, और गाय के मुक़ाबले साँड़ को देख।"

"हो सकता है जानवरों में नर ज़्यादा हसीन हो पर इनसानों में औरत मर्द से ज़्यादा हसीन है।"

"यह तुम्हारा ख़याल है।"

"हाँ, मेरा।"

"यानी एक मर्द का ख़याल है। मर्द को औरत का शरीर अधिक सुंदर लगता है। उसी प्रकार औरत को मर्द का शरीर अधिक भाता है।"

"कभी नहीं भाता।"

"तुम क्या जानो। औरतों से पूछ कर देखो। पर इसका उत्तर शायद वह भी न दे सकेंगी। मर्द और औरत एक दूसरे के शरीर में आकर्षण पाने की वजह से एक दूसरे को अच्छा ही कहेंगे। उनकी राय कोई राय नहीं। पर हम आर्टिस्ट लोग जब लिंगात्मक भावनारहित होकर देखते हैं तो मर्द को औरत से उसी प्रकार सुंदर पाते हैं जिस प्रकार मोर को मोरनी से।"

"बकवास मत करो," रहमान ने कोट पहनते हुए कहा। "अपने जूते में पॉलिश तो लगा लिया होता!"

फ़्रांसिस ने कहा: "बदन को तो पॉलिश कर लिया है, जूतों को कौन देखेगा।"

"हमेशा होश ग़ायब! कहीं जब आना-जाना हो तो कुछ तो शऊर रखा करो अपने कपड़ों-लत्तों का। क्या यही गंदी टाई पहनकर चलोगे?"

"ठीक है, यार," फ़्रांसिस ने मुस्कुराकर कहा। "लाओ, एक साफ़ रूमाल दे दो।"

रहमान ने कबर्ड से एक साफ़ रूमाल निकाला और *सी व्यू* के बाहर, नीचे से, गाड़ी का तीव्र हॉर्न सुनाई पड़ा।

"चलो, आ गई पटाख़ा," रहमान ने कहा और खिड़की से झाँककर देखा तो नीचे सलमा की लाल *जैगुअर* गाड़ी खड़ी थी।

सी व्यू का ज़ीना उतरते हुए फ़्रांसिस ने रहमान से कहा: "आज कैलाश दिन भर कहाँ ग़ायब रहा? तारा के साथ लंच खाने भी नहीं पहुँचा।"

"रजनी की वाइफ़ को देखने अस्पताल गया था। उनका अपेंडिक्स का ऑपरेशन हुआ है। तारा देवी ने मुझसे तो यही कहा।"

"मगर शाम को चाय पर भी नहीं आया। हम लोग तारा के घर से छै बजे लौटे हैं। अपने घर भी न था तमाम दिन। फिर कहाँ रहा होगा? अस्पताल में तो सारा समय रह नहीं सकता।"

"मेरी भी समझ में नहीं आता कि उसे आजकल क्या हो गया है। दिल की बात कहता भी तो नहीं हमसे! हलो, सलमा!"

"हलो!" सलमा ने कहा। "आओ, तुम दोनों तैयार हो! चलो, चलें जल्दी। तारा ने जल्दी आने को फ़ोन किया था।"

सलमा के पास दोनों बैठ गए और सलमा की जैगुअर गुर्राती छूट पड़ी।

मरीन ड्राइव पर पहुँचकर रहमान ने सलमा का बाज़ू दबाया तो सलमा ने साश्चर्य मुड़कर रहमान की ओर देखा। "क्या बात है?" उसने कहा। "तबीअत तो ठीक है न?"

"ज़रा धीरे चलो। तुम्हारी स्पीड में तबीअत की तो कौन कहे जान के लाले पड़े रहते हैं!"

सलमा खिलखिलाकर हँसी। "मरने से इतना डरते क्यों हो तुम?"

"बात ही डरने की है। गाड़ी से गर्दन तुड़वाकर मरना भी भला कोई मरना है! हाँ, अपने तीरे निगाह से छलनी करो हमारा दिल, अपने मुलायम हाथों से गला घोटकर देखो मेरा, अगर मेरी ज़बान ने उफ़ भी किया तो मेरा नाम रहमान नहीं।"

"क्यों, तुम मेरे हाथों क्यों मरने की हसरत रखते हो?"

"अब यही तो एक हसरत बाक़ी रह गई है बेचारे की," फ़्रांसिस ने कहा।

"हाँ सलमा," रहमान बोला, "तुम्हारी क़सम, बस अब यही हसरत रह गई है।"

सलमा हँसी।

रहमान ने फिर कहा: "एक बात दिल में आती है। कहो तो कह ही दूँ?"

"कहो।"

"अगर हम दोनों शादी कर लें तो कैसा रहेगा? क्यों, फ़्रांसिस, हमारी जोड़ी ठीक न रहेगी?"

"अरे वाह! जोड़ी के क्या कहने!" फ़्रांसिस ने उत्तर दिया। "ठिक तो है, सलमा। रहमान से बढ़िया आपको पति न मिलेगा। आपका सारा काम कर दिया करेगा। फ़ैन मेल का जवाब दिया करेगा, सुबह चाय बनाकर देगा, खाना बनाकर खिलाएगा, बाज़ार लाएगा, आपके लिए मोटर ड्राइव करेगा — खानसामाँ की और ड्राइवर की तनख़्वाह बच जाएगी आपकी! रात को आपके पाँव भी दबा दिया करेगा।"

सलमा हँस रही थी, ज़ोर-ज़ोर से हँस रही थी, मगर मन में कहीं उसे लगा कि मज़ाक़ की आड़ में रहमान ने शायद अपने दिल की बात कह दी है। पहले भी दो-एक बार उसने दिल्लगी-दिल्लगी में कुछ इसी तरह का इशारा किया था। शायद वह दिल से चाहने लगा है उसे। मज़ाक़पसंद आदमी के दिल का जल्दी पता नहीं चलता। वैसे रहमान आदमी बुरा नहीं, अच्छा है, ख़ासा अच्छा है, मगर कैलाश की तरह नहीं। कैलाश अजीब है, लाखों में एक है, कमाल का आदमी है, कई पहलू हैं उसके, प्यार करने के लिए ख़ासी चीज़ है, थी, अब वह नहीं मिल सकती, क्योंकि अब वह

चीज़ तारा की हो चुकी है, अब उसपर और किसी का हक़ नहीं हो सकता, अब उसे कोई नहीं छीन सकता, कोई नहीं चुरा सकता, अगर कोई ऐसा कर सकता होता तो उस रात अपने बेडरूम में वह खुद ही यह सबकुछ कर गुज़री होती, पर उस रात उसने मुँह की खाई थी! .... यह भी बुरा नहीं — यह रहमान। आदमी नेक है। वह सदा से अकेले रहती आई है। बड़ी कोफ़्त होती है। घर में अगर एक आदमी हो — अपना आदमी — तो बड़े काम आता है, दिल को इतमीनान रहता है, फिर कोई खटका नहीं रहता.... अच्छा है, यह रहमान — शादी करने के लिए बुरा नहीं वफ़ादार कुत्ते की तरह घर में पड़ा रहेगा....

"खैर," रहमान ने मज़ाक़ किया, "तुम सोच लो, मुझे कोई जल्दी नहीं है। सोचकर इतमीनान से जवाब देना। पहले कैलाश और तारा की शादी हो जाने दो। क्यों, तुम खामोश क्यों हो गईं?"

सलमा ने सामने देखते हुए ही कहा : "क्या कैलाश और तारा बहुत चाहने लगे हैं एक दूसरे को?"

"कैलाश का हाल वाक़ई बुरा है," रहमान ने कहा। "खाना-पीना हराम हो गया है। काम की धुन और तारा के इश्क़ में ही उसकी सुबह से शाम होती है, शाम से रात, और रात से सहर। दिन तो काम में किसी तरह गुज़र ही जाता है पर रात बेचारे की काटे नहीं कटती। तुमने देखा नहीं उसे आजकल? ऐसा दीखता है मानो महीनों से नहीं सोया हो। हाँ, तारा के मन का कुछ पता नहीं चलता।"

फ़्रांसिस ने कहा : "तारा के मन की मुझ से पूछो। आज-ही का ज़िक्र है। तारा के घर कैलाश लंच खानेवाला था; मगर, न जाने क्यों, आ न सका। तारा बेचारी अकेले लंच खाने बैठी, पर खा न सकी, ज़रा-सा सूप पीकर उठ गई। आज — अपने जन्मदिन के दिन — वह भूखी रह गई!"

"तुम्हें कैसे पता?" रहमान ने पूछा।

"तारा की आया, ऐनी, ने मुझसे कहा। अब आप लोग अंदाज़ लगा लीजिए दोनों की हालत का।"

रहमान ने कहा : "यानी — दोनों तरफ़ है आग बराबर लगी हुई!"

सलमा ने कहा : "तो फिर शादी क्यों नहीं कर लेते दोनों?"

"कैलाश का मुँह जो नहीं खुलता। आज तक उसने तारा से कभी अपने मन की बात नहीं कही!"

"क्यों?"

"खुदा जाने। अजीब चक्कर आदमी है। अजीब-अजीब *थिओरीज़* हैं उसकी। सोचता होगा कि मुँह से क्यों कहें, इश्क़ में ज़ोर होगा तो खुद ही रंग लाएगा, एक न एक रोज़ तारा खुद ही क़दमों पर आकर गिर पड़ेगी।"

"अच्छा!" सलमा ने कहा।

"और नहीं तो क्या? अरे यह भी कोई ऐंठ है! इश्क़ में ख़ुददारी कैसी?"

सलमा ने कहा: "तुम क्या जानो इस राज़ को। अरे सोचता होगा: 'फिर दिल में क्या रहेगा जो हसरत निकल गई।' इश्क़ का लुत्फ़ तो शादी से पहले ही उठाया जाता है—सो उठा रहे हैं दोनों। क्यों फ़्रांसिस?"

"बिलकुल सच कहा आपने," फ़्रांसिस ने उत्तर दिया।

रहमान बोला: "अमाँ, अपना-अपना रवैया है। रबड़ ज़्यादा खींचने से टूट भी जाया करता है। जानते हो, जीवन मलहोत्रा फिर आन टपका है?"

"कब आया?"

"आज। अभी पार्टी में आ रहा है।"

"कौन जीवन मलहोत्रा?" सलमा ने पूछा।

"हैं एक—तारा देवी के पुराने आशिक़, दिल्ली में डी. एस. पी. हैं, तारा से से शादी करने के ख़्वाब देख रहे हैं।"

"अच्छा! मुझे नहीं पता था कि कैलाश के अलावा और भी कोई तारा का उम्मीदवार है!"

फ़्रांसिस ने कहा: "अजी हुआ करे। कहाँ हमारा कैलाश सिन्हा और कहाँ वह जीवन मलहोत्रा! कहाँ शेर और कहाँ ज़ेब्रा!"

"तो फिर ना क्यों नहीं कर देती जीवन को? क्यों उससे पानी भरवाती है?" रहमान ने कहा।

"वह थोड़े ही भरवाती है। बेटे को ख़ुद ही शौक़ है पानी भरने का। अब आप ही बताइए, सलमा, तारा जैसी नेक लड़की भला क्या जीवन को यह कह सकती है कि तुम बम्बई न आया करो। आता है तो आए, उसकी बला से। वह तो जीवन को नहीं चाहती, न उसे कोई उम्मीद ही दिलाती होगी।"

"यह तुम कैसे कह सकते हो?"

"मैं तारा को जानता हूँ। सिवाय कैलाश के उसके दिल में और किसी के लिए जगह नहीं।"

सलमा ने पूछा: "किसी को पता है कि तारा कबसे प्यार करने लगी कैलाश को?"

"उसी वक़्त से—यानी पहली मुलाक़ात से—जब कैलाश ने तारा की जान बचाई थी," रहमान ने कहा।

"नहीं, मैं ऐसा नहीं समझता," फ़्रांसिस ने कहा। "तारा के दिल में तब और उसके बाद बहुत दिनों तक कुछ न था।"

"फिर कब हुआ?"

"कहना मुश्किल है। किसी एक रोज, किसी विशेष घटना के कारण शायद तारा के दिल में प्रेम नहीं जागृत हुआ है। मैं समझता हूँ कि प्रेम का यह बुख़ार उसे हलके हलके, धीरे-धीरे ही हुआ है, और धीरे-धीरे ही बढ़ता गया है।"

रहमान ने पूछा : "और कैलाश को ?"

फ़्रांसिस ने कहा : "उसे भी। बुख़ार दोनों को लगभग साथ-साथ ही चढ़ा; पर तारा को बुख़ार का पता तुरंत ही चल गया, और कैलाश को पता चलने में देर हुई है।"

"फ़्रांसिस का क़यास बिलकुल दुरुस्त है," सलमा ने कहा।

"यानी तुम समझते हो, फ़्रांसिस, कि कैलाश आज भी नहीं जानता कि वह तारा से मुहब्बत करता है ?" रहमान ने पूछा।

"कह नहीं सकता। वह तारा से प्रेम करता है इतना तो मैं मानता हूँ, पर इसका ज्ञान उसे हो पाया है या नहीं, यह मैं नहीं जानता। मुमकिन है आज वह जानता है।"

"आप गधे हैं!" रहमान ने कहा। "आदमी इश्क़ करे और उसे ख़ुद को पता न चले, ऐसा कभी हो सकता है!"

"हो सकता है," सलमा ने कहा। "इश्क़ बड़ी अजीब शै है, रहमान। कभी जो मलेरिया के बुख़ार की तरह चढ़ता है तो सारा जिस्म कँपा देता है, हड्डी-पसली टूटने लगती है, और आदमी कराह उठता है—तब मरीज़ को ही नहीं, सभी को पता चल जाता है कि बुख़ार आया है ; और कभी जो तपेदिक़ के बारीक बुख़ार की शक्ल में होता है तो धीरे-धीरे हड्डियों में घुसकर सारे जिस्म को धीमी आँच पर तपाया करता है। इस बुख़ार का पता तो मरीज़ को तभी लग पाता है जब उसके फेफड़े ख़ून उगलने लगते हैं, जिस्म खोखला हो जाता है, और रीढ़ की हड्डी ताव खाकर चटख़ पड़ती है। कैलाश को अपने इश्क़ का एहसास पहलेपहल न हो पाया था, बाद में ही हुआ है।"

"बाद में कब ?" रहमान ने पूछा।

"बाद में," सलमा ने कहा। मन ही मन वह मुस्कुराई। उसे अपने घर की पार्टीवाली रात याद आई—वह रात जो सलमा ने नशे में चूर कैलाश के साथ लिपट-लिपट कर अपने पलँग पर काटी थी। उस रात की याद करके सलमा को रोमांच हो आया। कैसी अजीब रात थी वह! 'शबे हिज्र से वस्ल की शब बुरी थी, कि हाँ—हाँ में ना—ना, रही रात भर ही।' उस रात के मुताल्लिक़ कितना मौज़ूं शेर है यह। ऐसी ही थी वह रात, जब कैलाश की जिंदा लाश के साथ उसने ज़बर्दस्ती करनी चाही थी। प्रकट उसने कहा : "कैलाश को एहसास बाद में हुआ। शायद उस रात हुआ जिस रात मेरे घर पार्टी थी।"

"तुम्हें कैसे पता ?" रहमान ने साश्चर्य पूछा।

फ़्रांसिस भी साश्चर्य सलमा की सूरत ताकने लगा।

सलमा को याद आया कैलाश ने कहा था : 'मुझे भी, सलमा, रात तुम्हारे इस बेडरूम में तजल्ली हुई है।' सलमा मुस्कुराई। "मुझे पता है," उसने कहा। "उस रात — उस शाम को पार्टी में मुझसे कैलाश ने कहा था।"

"कैलाश ने खुद कहा था ?" फ़ांसिस ने पूछा।

"हाँ।"

"क्या कहा था ?"

"यही — कि वह तारा से मुहब्बत करने लगा है।"

रहमान बोला : "खूब याद आया। तुम्हें याद है, फ़ांसिस, उस रात पार्टी में कैलाश कितना नाचा था तारा के साथ ! वॉल्ट्स की चकरियाँ भरती हुई कैसी खुशगवार लगती थी उनकी जोड़ी ! मैंने तो तभी सोचा था कि आज रात यह चकरियाँ ज़रूर रंग लाएँगी। और सुनो, वैसा ही हुआ।"

फ़ांसिस ने कहा : "मुझे तो लगता है आज रात भी कुछ होनेवाला है। पार्टी में ज़रूर कुछ होकर रहेगा.... यह कैलाश आज दिन भर क्यों ग़ायब रहा ? .... आज तारा का जन्मदिन है। आज रात ज़रूर कुछ होगा।"

रहमान ने मुस्कुराकर सलमा की ओर देखा। "हाँ, होना तो चाहिए," उसने कहा। "हमने तो प्रपोज़ कर दिया है। तुम गवाह हो, फ़ांसिस। अब हाँ, ना, करना सलमा के अख़्तियार है।"

सलमा और फ़ांसिस ठहाका मारकर हँस पड़े और तभी सलमा की गाड़ी *सूनलाइट* के फाटक पर जा पहुँची।

घंटी सुनकर श्यामू ने दरवाज़ा खोला और अंदर से तारा मुस्कुराती हुई आगे आई।

सलमा ने उपहार का पैकेट बढ़ाते हुए कहा : "सालगिरह मुबारक हो, तारा !"

रहमान और फ़ांसिस ने भी अपने-अपने उपहारों के पैकेट तारा को भेंट किए।

रहमान ने कहा : "तुम जीओ हज़ार बरस, और हर बरस के दिन हों पचास हज़ार !"

तारा गद्गद हो उठी। "धन्यवाद," उसने कहा, "धन्यवाद। इन सब चीज़ों की क्या ज़रूरत थी। यह सब मुझे अच्छा नहीं लगता। दरवाज़ा खुला रहने दे, श्यामू। आइए, अंदर आइए। अच्छा हुआ आप लोग जल्दी आ गए। मैं बिल्कुल अकेली पड़ गई थी।"

रहमान बोला : "हम लोग तो कह गए थे कि साढ़े-सात तक पहुँच जाएँगे, सो देखिए, आ गए।"

"अच्छा किया। इतने सारे लोगों को बुला रखा है कैलाश ने, और मैं तो सबको जानती भी नहीं।"

सलमा ने ड्रॉइंगरूम और बरामदे में दृष्टि दौड़ाकर कहा : "तुमने घर अच्छा सजाया है, तारा।"

"यह सब फ़ांसिस डिसूज़ा की कृपा से हुआ है," तारा ने कहा।

फ़्रांसिस मुस्कुराया। "कैलाश नहीं आया ?" उसने पूछा।

"आते होंगे," तारा ने कहा। "पता नहीं क्यों देर कर दी। पचीस मिनट बाक़ी रह गए हैं आठ में।"

इसी समय गुडी सरवाई अपना ऑरकेस्ट्रा लिए आ पहुँचा। रहमान ने उसे उसके आदमियों समेत एक कोने में नियुक्त करते हुए कहा: "अब जमेगा रंग। सितारा भी आ रही है। बीच में उसका नाच भी होगा। मज़ा आएगा। बोतल की एक कमी रह गई, पर उसका इंतज़ाम भी हो सकता है।"

"नहीं, नहीं, "तारा ने तुरंत ही रहामान के प्रस्ताव का विरोध करते हुए कहा, "शराब नहीं पिलाऊँगी किसी को।"

"क्या हर्ज है? एक-दो पेग लेने से मज़ा आ जाएगा लोगों को।"

"नहीं, शराब नहीं। क्या बिना शराब के पार्टी नहीं हो सकती?"

"हो क्यों नहीं सकती! मैंने तो महज़ इसलिए सुझाया था कि कब रोज़-रोज़ आपका बर्थडे आता है? ऐसे ही पार्टियों में मिलकर पीते हैं हम लोग। रोज़ थोड़े ही पीते हैं।"

"नहीं, रहमान भाई, शराब नहीं—प्लीज़!" तारा ने मिन्नत की।

रहमान ने हँसकर कहा: "अच्छा साहब, नहीं आएगी। मैं तो यूँही छेड़ रहा था आपको। कैलाश ने पहले ही मना किया हुआ है।"

"अच्छा, यह तो बताइए, कहाँ से मिल जाती है आप लोगों को?" तारा ने पूछा।

"ब्लैक मार्केट से," फ़्रांसिस ने कहा।

"और प्रॉहिबिशन जो है?"

"अजी गोली मारिए प्रॉहिबिशन को," रहमान बोला। "गली-गली बोतलें मिल रही हैं, और देसी तो घर-घर बन रही है।"

"सच?"

सलमा ने कहा: "यह तो हमारी सरकार की ऐंठ है। अगर कोई आँखें बंद कर लेगा तो क्या सवेरा ही न होगा? प्रॉहिबिशन के मारे सुना है लोग ज़हर पी रहे हैं अब तो। देखो बाहर किसी की मोटर आई है।"

थोड़ी देर में कैलाश ने दरवाज़े से प्रवेश किया। अकेला था। उसके हाथ में कोई पैकेट न था। उसे देखकर सबको आश्चर्य हुआ। उसने आते ही एक नज़र में सब कुछ देख लिया।

"अच्छा, तुम लोग पहुँच गए। और मैं समझे था कि शायद मैं ही पहले पहुँचूँगा," कैलाश ने बात का सिलसिला शुरू करते हुए कहा।

"अभी आए हैं हम लोग," रहमान ने कहा।

"अच्छा किया।"

तारा ने कहा: "तुमने चाय पर पहुँचने कहा था। तुम्हारे लिए चाय मँगवाऊँ?"

कैलाश हँस पड़ा। "भई माफ़ करना, देर हो गई पहुँचते। एक बहुत ही ज़रूरी काम में फँस गया था।" तारा के पास जाकर उसने तारा का हाथ अपने हाथ में लिया। तुम्हारे जन्मदिन पर मैं तुम्हें बधाई देता हूँ, तारा।"

तारा की आँखें, जो सारा दिन कैलाश की सतत बाट जोहते हुए थक गई थीं, सहसा सजीव हो हँसने लगीं। उसका हाथ कैलाश के हाथ में था। 'काश पंद्रह मिनट पहले आए होते तुम!' उसने मन में कहा। 'इतने सारे लोग आँखें फाड़े घूर रहे हैं हमें।' उसके हाथ में बिजली दौड़ने लगी।

"धन्यवाद," उसने कहा, "धन्यवाद, कैलाश।"

कैलाश ने तारा का हाथ छोड़ दिया। बाज़ू में सलमा खड़ी मुस्कुरा रही थी। कैलाश भी मुस्कुराया। "कैसी हो, सलमा?" उसने पूछा।

"अपनी कहो। महीने भर से दिखाई नहीं दिए। जानते हो, अगर तुमने आने में पंद्रह मिनट और देर की होती तो हम लोग पुलिस थाने फ़ोन ही करने चले थे कि कैलाश सिन्हा बम्बई शहर में खो गए।"

कैलाश ज़ोर से हँस पड़ा। सभी हँसने लगे। रजनी दरवाज़े में प्रवेश कर रहा था। वह भी हँसने लगा। ८ बजते ही लोग आने लगे। रजनी के बाद डॉ. पटेल आए। उनके साथ मगनभाई व्यास भी थे। डॉ. पटेल के व्यास बहनोई थे और नामी कांगरेस कार्यकर्त्ता थे। इनके तुरंत ही बाद मेहता साहब आए, फिर शांतिभाई देसाई आए, और फिर, पाँच मिनट के अंदर, वह सभी आ गए जिन्हें आमंत्रित किया गया था।

रहमान ने इशारा किया और गुडी का ऑरकेस्ट्रा शुरू हो गया। लोगों में गपशप चलने लगी। मुक्ता बैनर्जी और पुखराज़ पर पचास-पचास हज़ार के जेवर लदे थे। पार्टियों में लोग इसीलिए तो जाया करते हैं ताकि लोगों की नज़र में रहें। लोगों से अर्थ है निर्देशकों और निर्माताओं से। इन्हीं आपस के जलसों, पार्टियों में शरीक होकर अपना सौंदर्य प्रदर्शन किया जाता है। इन्हीं जगहों पर निर्देशकों पर *इम्प्रेशन* गाँठा जाता है। ऐसे ही अवसरों पर नई-नई योजनाएँ बनती हैं, तैयार होती हैं, और उन्हें अंजाम दिया जाता है। मुक्ता और पुखराज दोनों बराबरी से महफ़िल में डटी हुई थीं। मुक्ता सर से पाँव तक लाल पहने हुए थी और पुखराज हरे रंग में थी। मगर हरे रंग में कांताकुमारी, वत्सला और कमला खेर भी थीं। पुखराज की हरियाली इनके सामने फीकी पड़ गई। मुक्ता की लाली के मुक़ाबले सलमा और शालिनी लाल पहने आई थीं। मुक्ता और पुखराज की साड़ियों के रंग इस प्रकार औरों के रंगों में यद्यपि खो-से गए, उन्होनें सोचा कि उनके बहुमूल्य आभूषण अपना रंग जमा कर ही रहेंगे। परंतु वैसा भी न हो सका। तारा के महीन सफ़ेद लिबास के सामने मुक्ता और पुखराज नंगी लगने लगीं।

तारा ने विशेष आभूषण भी न पहने थे। कानों में कटक के बने चाँदी के कर्णफूल थे, जूड़े पर चमेली की वेनी, माथे पर चंदनी टीका, हाथों में काँच की सफ़ेद चूड़ियाँ,

और एक ऊँगली में अँगूठी थी, चांदी की नक्शी की हुई अँगूठी। तारा की सुंदरता के सामने मुक्ता और पुखराज फीकी पड़ गईं। और फिर एक बात और थी— आज ही तो तारा को इक्कीसवाँ साल लगा था।

सबसे मिलती, सबसे बधाइयाँ लेती हुई तारा अपने मेहमानों में घूम रही थी कि कैलाश ने तारा के पास आकर उसे अपने साथ नाचने को आमंत्रित किया। तारा सानंद कैलाश के साथ नाचने लगी। और लोग भी नाचने लगे। सारा ड्राँइंगरूम और बरामदा नाचनेवालों से भर गया। जो नाच नहीं रहे थे वह लोग कोने-कोने में सरक कर बैठ गए या खड़े होकर ग़प्पें लगाने लगे।

ऑरकेस्ट्रा ज़ोर पर था और लोग बल खा रहे थे।

रह-रहकर तारा और कैलाश की आँखें चार हो जाती थीं। कैलाश ने नाचते-नाचते तारा से कहा: "चाहता था आज सबसे पहले मैं तुम्हें बधाई दूँ, पर वैसा न कर सका।"

"कहाँ चले गए थे तुम सारा दिन? लंच के लिए मैंने तुम्हारी बहुत राह देखी। गुच्छियाँ बनाई थीं।"

"ओह! क्या करूँ मैं आ ही न सका। मुझे बड़ा अफ़सोस है।"

तारा कुछ न बोल पाई। कलाश के निकट वह अपना समस्त अस्तित्व उसमें खो बैठती थी—ज़बान भी। उसका सम्पर्क अति सुखद था।

"मैं तुम्हारे लिए एक उपहार लाया हूँ, तारा!"

तारा ने आँखें खोलकर कहा: "क्या लाए हो, देखूँ।"

कैलाश ने जेब में हाथ डालकर मख़मल की डिबिया टटोली फिर ख़ाली हाथ बाहर निकालकर कहा: "अभी नहीं—फिर दूँगा।"

"फिर कब?"

"बाद में। पार्टी के बाद।"

तारा ने देखा कैलाश मुस्कुरा रहा था। वह भी मुस्कुराने लगी और उसके साथ चुप-चुप नाचने लगी। 'क्या लाए होगें?' उसने मन में सोचा। 'जेब में है तो कोई छोटी चीज़ होगी। पिछले हफ़्ते मेरी फ़ाउन्टेन पेन की निब टूट गई थी। शायद फ़ाउन्टन पेन लाए हों, *पार्कर सिक्स्टीवन* लाए होंगे।"

कैलाश सोच रहा था कि अगर अँगूठी बनने में देर न हुई होती तो पाँच बजे छै बजे, या सात बजे तक भी वह इतमीनान से पहुँच सकता था। अकेले में तारा को अँगूठी भेंट करता और मन की बात भी कहता, उसे मनवाकर छोड़ता। पर अब, इतनों के सामने, वह उससे क्या कह सकेगा? कहीं तारा ने भेंट लेना अस्वीकार किया तो इन सबके सामने वह उससे कुछ कह भी न सकेगा। बाद में ठीक है। पार्टी समाप्त होने पर, अकेले में बैठकर ही, अपनी भेंट उसे अर्पण करेगा।

"दो न सही, दिखाओ तो क्या लाए हो," तारा ने पुनः अनुरोध किया।

परंतु कैलाश ने कोई उत्तर न दिया। वह दरवाज़े की ओर आँखें फाड़े ताक रहा था। तारा ने मुड़कर देखा तो दरवाज़े पर जीवन खड़ा था।

"यह कब आया?" कैलाश ने पूछा।

"आज सुबह," तारा ने कहा।

इसी समय ऑरकेस्ट्रा बंद हुआ और नाच भी समाप्त किया गया।

तारा दरवाज़े पर जाकर जीवन को अंदर लिवा लाई।

"इतनी देर करके आ रहे हो!" तारा ने कहा।

"मैं तो बड़ी देर का आया हूँ, पर मेरी तरफ़ देखने की तुम्हें फ़ुरसत कहाँ," जीवन ने छूटते ही व्यंग्य किया।

तारा लजा गई।

रहमान ने सलमा के कानों में कहा: "देखा, दिल्ली से उड़कर आया है तारा की सालगिरह के लिए।"

"क्या दे रहा है उसे?" सलमा ने पूछा।

"पता नहीं। शादी की उमंग लेकर आया है तो कोई ज़ेवर ही लाया होगा।"

"यह तो मैं भी समझती हूँ। उस नन्हे डिब्बे में मोटर तो आ नहीं सकती, ज़ेवर ही होगा। मगर कौन-सा ज़ेवर?"

"जाऊँ, पूछकर आऊँ?"

सलमा हँस पड़ी।

तारा उपस्थित जनों से जीवन मलहोत्रा का परिचय करा रही थी। कैलाश वहीं पर डॉ. पटेल और मगनभाई व्यास के साथ बात कर रहा था। एक किनारे सितारा पाँव में घुँघरू बाँध रही थी।

"यह कौन, सितारा है?" जीवन ने पूछा।

"हाँ, बड़ा कमाल का नाचती है। अभी तुम थोड़ी देर में उसका नाच देखोगे।"

उधर मगनभाई व्यास ने सिनेमा पर ज़ोरों से बहस छेड़ी हुई थी। "हमारे पिक्चर बड़े लम्बे होते हैं, और सिनेमा के आर्ट में हम लोग काफ़ी पिछड़े हुए हैं," व्यास ने कहा।

सफ़ेद खद्दरपोश व्यास के उद्गार सुनकर पास-पड़ोस के लोगों में सन्नाटा छा गया। परंतु जैसा कि अक्सर होता है, बड़े लोगों की हाँ में हाँ मिलाने में लोग अपना गर्व समझते हैं। कुछ लोग पास आकर हुँकार भरने लगे। रहमान और सलमा भी पास आए, परंतु उन्हें आग लगी हुई थी।

कैलाश ने कहा: "आप महीने में कितनी बार पिक्चर देखते हैं, व्यासजी?"

"बरसों हुए हिन्दी पिक्चर देखे।"

रहमान ने सलमा के कान में कहा: "अजीब उल्लू का पट्ठा है। जब बरसों से पिक्चर नहीं देखा तो उन्हें भला-बुरा कहने का इसे क्या हक़ है?"

सलमा ने कहा : "चार आदमियों की महफ़िल में आए हैं तो कुछ तो बकना चाहिए न, वरना लोग इनकी तरफ़ मुतवज्जह कैसे होंगे ?"

रहमान ने ज़रा खाँसकर पूछा : "व्यास जी, आपने कैलाश सिन्हा का पिक्चर देखा है ?"

"नहीं ! फ़ुरसत नहीं मिलती पिक्चर देखने के लिए," व्यास ने कनखियों से सलमा को घूरते हुए कहा। "वैसे कभी-कभी अँगरेज़ी पिक्चर देख लेता हूँ।"

सलमा ने कहा : "ऐं ! व्यास जी ! आप ही लोग कहते हैं स्वदेशी माल का इस्तैमाल करना चाहिए।"

"ठीक कहते हैं।"

"फिर अँगरेज़ी पिक्चर देखना कहाँ तक मुनासिब है ?"

व्यास की बग़लवाली कुरसी पर ही सलमा बैठ गई थी। व्यास ने प्रयत्न किया कि सलमा के उभरे हुए सीने पर दृष्टि न डाले, परंतु उसकी आँखें उसके बस में न रह पाईं और कभी चेहरे पर तो कभी चेहरे से नीचे को भटकने लगीं। इतना ही नहीं अपनी बात समझाते हुए उसने अपने हाथ से सलमा के हाथ को बार-बार छूकर कहा : "भई कुछ कहिए, पर यह बात तो माननी ही पड़ेगी कि हमारे सिनेमा में अभी बहुत सुधार और तरक्की की ज़रूरत है। क्यों मि. सिन्हा ?"

"जी हाँ," कैलाश ने कहा। "उतने ही सुधार और तरक़्क़ी की ज़रूरत है जितने कि हमारे स्कूलों, हमारी सड़कों, हमारी रेलवे में ज़रूरत है। जैसे-जैसे हमारा समाज, हमारे नागरिक, और हमारी सरकार तरक़्क़ी करेगी वैसे-वैसे हमारा सिनेमा भी तरक़्क़ी करेगा, व्यास जी — इस बात का मैं आपको इतमीनान दिलाता हूँ।"

मगनभाई व्यास को मुँहतोड़ जवाब मिला था। उसकी बोलती बंद हो गई।

सलमा ने सोचा यही मौक़ा है व्यास से बदला लेने का। कम्बख़्त रह-रहकर उसके हाथ से अपना हाथ छुआए जाता था। ज्यों-ज्यों वह हाथ सरकाती त्यों-त्यों वह अपना हाथ पास ले जाता था। कैलाश ने अब जो उसकी नाक पर उस्तरा रखा था, सलमा ने उस पर हाथ मार ही तो दिया। मुँहफट सलमा ने मुँह बंद रखना कब सीखा था ?

"जवाब दीजिए, व्यास जी, कुछ जवाब दीजिए," सलमा ने ज़ोरों से हँसते हुए कहा।

"मैं किस-किसको जवाब दूँ ?" व्यास ने कहा। "तुम लोग सब यहाँ सिनेमावाले हो और मैं अकेला हूँ।"

सलमा ने फिर रगड़ा। "मगर सिन्हा साहब ने बात बिलकुल सच कही है।"

"हाँ, कही तो सच ही है," व्यास ने स्वीकार किया।

मसख़रे निर्मल खोसला ने सलमा को आँख मारकर शरारतन पूछा : "आप नाचते नहीं व्यास जी ?"

"कुछ आदत नहीं है। कभी बैरिस्ट्री के लिए विलायत गया था तो नाच लेता था।"

सलमा ने कहा : "चार आदमियों की महफ़िल में आए हैं तो कुछ तो बकना चाहिए न, वरना लोग इनकी तरफ़ मुतवज्जह कैसे होंगे ?"

रहमान ने ज़रा खाँसकर पूछा : "व्यास जी, आपने कैलाश सिन्हा का पिक्चर देखा है ?"

"नहीं ! फ़ुरसत नहीं मिलती पिक्चर देखने के लिए," व्यास ने कनखियों से सलमा को घूरते हुए कहा। "वैसे कभी-कभी अँगरेज़ी पिक्चर देख लेता हूँ।"

सलमा ने कहा : "ऐं ! व्यास जी ! आप ही लोग कहते हैं स्वदेशी माल का इस्तैमाल करना चाहिए।"

"ठीक कहते हैं।"

"फिर अँगरेज़ी पिक्चर देखना कहाँ तक मुनासिब है ?"

व्यास की बग़लवाली कुरसी पर ही सलमा बैठ गई थी। व्यास ने प्रयत्न किया कि सलमा के उभरे हुए सीने पर दृष्टि न डाले, परंतु उसकी आँखें उसके बस में न रह पाईं और कभी चेहरे पर तो कभी चेहरे से नीचे को भटकने लगीं। इतना ही नहीं अपनी बात समझाते हुए उसने अपने हाथ से सलमा के हाथ को बार-बार छूकर कहा : "भई कुछ कहिए, पर यह बात तो माननी ही पड़ेगी कि हमारे सिनेमा में अभी बहुत सुधार और तरक्की की ज़रूरत है। क्यों मि. सिन्हा ?"

"जी हाँ," कैलाश ने कहा। "उतने ही सुधार और तरक़्क़ी की ज़रूरत है जितने कि हमारे स्कूलों, हमारी सड़कों, हमारी रेलवे में ज़रूरत है। जैसे-जैसे हमारा समाज, हमारे नागरिक, और हमारी सरकार तरक़्क़ी करेगी वैसे-वैसे हमारा सिनेमा भी तरक़्क़ी करेगा, व्यास जी — इस बात का मैं आपको इतमीनान दिलाता हूँ।"

मगनभाई व्यास को मुँहतोड़ जवाब मिला था। उसकी बोलती बंद हो गई।

सलमा ने सोचा यही मौक़ा है व्यास से बदला लेने का। कम्बख़्त रह-रहकर उसके हाथ से अपना हाथ छुआए जाता था। ज्यों-ज्यों वह हाथ सरकाती त्यों-त्यों वह अपना हाथ पास ले जाता था। कैलाश ने अब जो उसकी नाक पर उस्तरा रखा था, सलमा ने उस पर हाथ मार ही तो दिया। मुँहफट सलमा ने मुँह बंद रखना कब सीखा था ?

"जवाब दीजिए, व्यास जी, कुछ जवाब दीजिए," सलमा ने ज़ोरों से हँसते हुए कहा।

"मैं किस-किसको जवाब दूँ ?" व्यास ने कहा। "तुम लोग सब यहाँ सिनेमावाले हो और मैं अकेला हूँ।"

सलमा ने फिर रगड़ा। "मगर सिन्हा साहब ने बात बिलकुल सच कही है।"

"हाँ, कही तो सच ही है," व्यास ने स्वीकार किया।

मसख़रे निर्मल खोसला ने सलमा को आँख मारकर शरारतन पूछा : "आप नाचते नहीं व्यास जी ?"

"कुछ आदत नहीं है। कभी बैरिस्ट्री के लिए विलायत गया था तो नाच लेता था।"

निर्मल ने सलमा को दोबारा आँख मारी और इशारा किया। "तो उठिए न, नाचिए आप भी। सब नाच रहे हैं। सलमा देवी, उठाइए इन्हें।"

"हाँ, हाँ, आइए, व्यास जी," सलमा ने चट उठकर अपना हाथ बढ़ाया।

व्यास ने थोड़ी देर सलमा के सुडौल हाथ को ताकने के बाद हाथ पकड़ लिया और लाँघ संभालता हुआ उठ खड़ा हुआ।

निर्मल ने हँसी रोकी और रहमान ने कहा: "मौत है बेचारे की!"

कैलाश कह रहा था: "आजकल कुछ रिवाज ही हो गया है इन पाखंडियों का सिनेमा के खिलाफ़ बोलने का, इंडिअन कलचर पर बहस करने का! और देखो ताल पर पाँव रखना तो आता नहीं पर नाचने को फ़ौरन उठ खड़ा हुआ!"

रजनीकान्त ने कहा: "अब कहाँ गया इसका कलचर।"

रहमान बोला: "उम्र में इसकी बेटी की तरह है, पर देखो तो कैसे लिपटा जा रहा है। यह तो ग़नीमत है कि पेट हज़रत का आड़े आ गया।"

रहमान की बात पर लोग हँस पड़े।

सहसा कैलाश की आँखें तारा को ढूँढने लगीं। तारा ड्रॉइंगरूम में कहीं दिखाई न दी। वह टहलता, बात करता बरामदे में निकल आया। वहाँ भी तारा न दिखाई दी। उसने सोचा शायद अंदर गई होगी। थोड़ी देर बाद उसको ख़याल आया कि जीवन भी ग़ायब है। अब तो कैलाश को बेचैनी ने धर दबाया। कहाँ गए होंगे यह दोनों? अंदर क्या कर रहे हैं? किसी ने उसके कंधे पर हाथ रखा। उसने मुड़कर देखा, पुखराज खड़ी थी।

"हलो," कैलाश ने कहा।

"अच्छा छकाया आपने इस पाखंडी को," पुखराज ने कहा। "बड़ी अच्छी पार्टी है! मज़ा आ गया!"

"आप तो नाच नहीं रही हैं।"

"किसके साथ नाचूँ? कोई कहता ही नहीं मुझे नाचने को।"

"आइए, मेरे साथ।"

दोनों नाचने लगे।

अपने बेडरूम में तारा उपहारों के पैकेट रखने आई थी तो पीछे-पीछे जीवन भी आ गया था।

"नहीं, जीवन," तारा ने कहा, "तुम लाए ही हो तो मैं अभी रख लेती हूँ पर सुबह तुम्हें वापस कर दूँगी। इतना क़ीमती हार मैं नहीं ले सकती।"

"क्यों नहीं ले सकतीं? क्या मेरा तुम पर कोई हक़ नहीं?" जीवन ने आहत हृदय से कहा।

"कोई छोटी चीज़ तुम नहीं भेंट कर सकते थे? क्या बर्थडे पर हार प्रेज़ेंट किया जाता है?"

"बर्थडे में शरीक होने कोई दिल्ली से भी तो नहीं आता ! देखो, मैं आया हूँ !"

"नहीं, जीवन, यह तुमने ठीक नहीं किया।" तारा जानती थी इतना मूल्यवान हार स्वीकार करने का अर्थ क्या होगा।

जीवन ने पास आकर हार का डिब्बा तारा के हाथों से ले लिया। "लाओ, मुझे दो," उसने कहा। "मैं अपने हाथों से तुम्हें पहना दूँ।"

"नहीं, जीवन, मैं नहीं पहनूँगी; तुम ज़िद न करो।"

जीवन ने डिब्बा खोलकर हार बाहर निकाल लिया था। "तुम्हें मेरी क़सम है," उसने कहा, और तारा के गले में हार डालकर क्लिप लगाने लगा।

तारा को लगा कि यह हार नहीं, गले में जीवन लोहे की ज़ंजीर डाल रहा है और इस ज़ंजीर द्वारा वह जीवन के साथ सदा के लिए बँध जाएगी। उसका मन रो उठा, आँखें छलछला आईं, पर वह निस्स्हाय और अवाक् खड़ी रही, और फिर चटक से हार का क्लिप बंद हो गया। तारा का जी किया कि हार नोचकर फेंक दे, परंतु ऐसा करने से जीवन का दिल दुख जाता। किसी का दिल दुखाना उसके स्वभाव में न था, सो वह कठपुतली की तरह चुपचाप खड़ी रही और सच्चे आबदार मोतियों का वह हार उसके गले में चमचमाने लगा।

जीवन ने खुश होकर कहा: "कितना भला लग रहा है तुम्हारे गले में !"

तारा चुप खड़ी सामने शून्य दृष्टि से ताक रही थी।

जीवन ने ऐसी अनुपम सुंदरता कभी न देखी थी। बचपने की अल्हड़ लड़की इस समय उसके सामने अद्वितीय सुंदरी के रूप में खड़ी थी और इस सफ़ेद परी को वह अपनी रानी बनाना चाहता था।

"तारा ! मैं तुम्हारे बिना अब रह नहीं सकता। तारा.... तुम्हें नहीं मालूम मैं तुम्हें कितना चाहता हूँ," कहते हुए जीवन ने तारा को बाहुपाश में जकड़कर उसके होंठों को चूम लिया।

तारा ने अपने को जीवन के पाश से छुड़ा लिया। "यह तुमने ठीक नहीं किया, जीवन। तुम—"

"मैं तुमसे प्रेम करता हूँ, तारा—हमेशा से प्रेम करता आया हूँ।"

"तुम पागल हो।"

"क्या तुम मुझे नहीं चाहतीं? बिलकुल नहीं चाहतीं?"

"पता नहीं।"

"जब कोई किसी से प्रेम करने लगता है तो उसके मन को इसकी ख़बर हुए बिना नहीं रहती। तुम्हारे मन को नहीं पता कि तुम मुझसे प्रेम करती हो या नहीं?"

तारा सुन्न खड़ी थी, सोच रही थी आज कैलाश जल्दी क्यों न आया, सारा दिन कहाँ रहा। उसने सोचा था कि वह आज जल्दी आएगा, सारा दिन यहीं बना रहेगा, वह आज उससे दिल खोलकर बात करेगी..... पर ऐसा लगता है कि कैलाश ने

जानबूझकर देरी की, जानकर वह जल्दी नहीं आया, जानकर वह तारा से दूर-दूर रहा; और जब आकर मिला भी तो वही रूखी-रूखी, उखड़ी-उखड़ी बातें करता रहा। जीवन को देखकर वह चौंका जरूर परंतु केवल चौंका ही। उसे इस बात का बुरा लगा कि जीवन के बम्बई आने की सूचना उसे पहले क्यों न दी गई। पार्टी में आमंत्रित लोगों की नामावली में जीवन का नाम न था, और अब यह जीवन आन टपका था, अवश्य ही तारा ने स्वयं बुलाया होगा — इसी बात की शिकायत कैलाश की आँखों में झलकी थी। तारा को यह अच्छा न लगा। काश कैलाश की आँखों में जीवन को देखते ही डाह झलकने लगता! परंतु डाह कैसे झलकता जब वह तारा से प्रेम ही नहीं करता है। कैसा पत्थर के शिव की तरह खड़ा रहा, पत्थर के शिव की तरह ही मुस्कुराकर जीवन से हाथ मिलाया, और पत्थर के शिव की तरह ही मगनभाई व्यास को आड़े हाथों ले रहा था....

"बोलो न, जवाब दो," जीवन कह रहा था।

"क्या जवाब दूँ?"

"तुम्हारे मन को नहीं पता कि तुम मुझे चाहती हो या नहीं?"

"नहीं — मेरे मन को कुछ नहीं पता," तारा ने अस्फुट स्वर में कहा।

"यह तुम झूठ बोलती हो, तारा। तुम्हें पता है पर तुम बताना नहीं चाहतीं।"

"मैं झूठ नहीं बोलती, जीवन," तारा ने जीवन की आँखों में सीधा देखकर कहा। "मैं झूठ नहीं बोलूँगी, क्योंकि झूठ की बुनियाद पर मैं अपना जीवन स्थिर नहीं कर पाऊँगी।"

बेडरूम में ड्रेसिंग टेबल के शीशे के सामने खड़ी हुई तारा के मुँह पर लैम्प-शेड से छनकर आती हुई रोशनी बड़ी भली लग रही थी। बाक़ी का सारा कमरा अँधेरे में था और बाहर घुंघरुओं की आवाज़ शुरू हो गई थी। शायद सितारा नाच रही थी। परंतु तारा को झकझोरकर उसे होश में लाना और उसके मन की उलझनों को सुलझाना आवश्यक था। इसीलिए जीवन ने फिर पूछा :

"तुम्हें नहीं पता कि तुम मुझे चाहती हो?"

तारा ने कहा : "नहीं।"

"तुम्हें यह तो पता है कि मैं तुम्हें चाहता हूँ?"

तारा मुस्कुराई। "तुमसे सुना है," उसने कहा।

"तो तुम्हें मेरे कहने पर विश्वास नहीं होता?"

"मैंने यह कब कहा? मगर एकतरफ़ा प्रेम —"

जीवन ने बात बीच में काटते हुए कहा : "इसे दोतरफ़ा बनाना मेरा काम है। तुम मुझे चाहो या न चाहो, मेरे लिए इतना काफ़ी है कि मैं तुम्हें चाहता हूँ। मैं बुरा नहीं, तारा। शादी के बाद तुम्हारे दिल में भी मेरे लिए चाहत पैदा होकर ही रहेगी — मुझे पूरा विश्वास है।"

"बर्थडे में शरीक होने कोई दिल्ली से भी तो नहीं आता ! देखो, मैं आया हूँ !"

"नहीं, जीवन, यह तुमने ठीक नहीं किया।" तारा जानती थी इतना मूल्यवान हार स्वीकार करने का अर्थ क्या होगा।

जीवन ने पास आकर हार का डिब्बा तारा के हाथों से ले लिया। "लाओ, मुझे दो," उसने कहा। "मैं अपने हाथों से तुम्हें पहना दूँ।"

"नहीं, जीवन, मैं नहीं पहनूँगी; तुम ज़िद न करो।"

जीवन ने डिब्बा खोलकर हार बाहर निकाल लिया था। "तुम्हें मेरी क़सम है," उसने कहा, और तारा के गले में हार डालकर क्लिप लगाने लगा।

तारा को लगा कि यह हार नहीं, गले में जीवन लोहे की ज़ंजीर डाल रहा है और इस ज़ंजीर द्वारा वह जीवन के साथ सदा के लिए बँध जाएगी। उसका मन रो उठा, आँखें छलछला आईं, पर वह निस्सहाय और अवाक् खड़ी रही, और फिर चटक से हार का क्लिप बंद हो गया। तारा का जी किया कि हार नोचकर फेंक दे, परंतु ऐसा करने से जीवन का दिल दुख जाता। किसी का दिल दुखाना उसके स्वभाव में न था, सो वह कठपुतली की तरह चुपचाप खड़ी रही और सच्चे आबदार मोतियों का वह हार उसके गले में चमचमाने लगा।

जीवन ने ख़ुश होकर कहा : "कितना भला लग रहा है तुम्हारे गले में !"

तारा चुप खड़ी सामने शून्य दृष्टि से ताक रही थी।

जीवन ने ऐसी अनुपम सुंदरता कभी न देखी थी। बचपने की अल्हड़ लड़की इस समय उसके सामने अद्वितीय सुंदरी के रूप में खड़ी थी और इस सफ़ेद परी को वह अपनी रानी बनाना चाहता था।

"तारा ! मैं तुम्हारे बिना अब रह नहीं सकता। तारा .... तुम्हें नहीं मालूम मैं तुम्हें कितना चाहता हूँ," कहते हुए जीवन ने तारा को बाहुपाश में जकड़कर उसके होंठों को चूम लिया।

तारा ने अपने को जीवन के पाश से छुड़ा लिया। "यह तुमने ठीक नहीं किया, जीवन। तुम —"

"मैं तुमसे प्रेम करता हूँ, तारा — हमेशा से प्रेम करता आया हूँ।"

"तुम पागल हो।"

"क्या तुम मुझे नहीं चाहतीं ? बिलकुल नहीं चाहतीं ?"

"पता नहीं।"

"जब कोई किसी से प्रेम करने लगता है तो उसके मन को इसकी ख़बर हुए बिना नहीं रहती। तुम्हारे मन को नहीं पता कि तुम मुझसे प्रेम करती हो या नहीं ?"

तारा सुन्न खड़ी थी, सोच रही थी आज कैलाश जल्दी क्यों न आया, सारा दिन कहाँ रहा। उसने सोचा था कि वह आज जल्दी आएगा, सारा दिन यहीं बना रहेगा, वह आज उससे दिल खोलकर बात करेगी ..... पर ऐसा लगता है कि कैलाश ने

जानबूझकर देरी की, जानकर वह जल्दी नहीं आया, जानकर वह तारा से दूर-दूर रहा; और जब आकर मिला भी तो वही रूखी-रूखी, उखड़ी-उखड़ी बातें करता रहा। जीवन को देखकर वह चौंका ज़रूर परंतु केवल चौंका ही। उसे इस बात का बुरा लगा कि जीवन के बम्बई आने की सूचना उसे पहले क्यों न दी गई। पार्टी में आमंत्रित लोगों की नामावली में जीवन का नाम न था, और अब यह जीवन आन टपका था, अवश्य ही तारा ने स्वयं बुलाया होगा — इसी बात की शिकायत कैलाश की आँखों में झलकी थी। तारा को यह अच्छा न लगा। काश कैलाश की आँखों में जीवन को देखते ही डाह झलकने लगता! परंतु डाह कैसे झलकता जब वह तारा से प्रेम ही नहीं करता है। कैसा पत्थर के शिव की तरह खड़ा रहा, पत्थर के शिव की तरह ही मुस्कुराकर जीवन से हाथ मिलाया, और पत्थर के शिव की तरह ही मगनभाई व्यास को आड़े हाथों ले रहा था....

"बोलो न, जवाब दो," जीवन कह रहा था।

"क्या जवाब दूँ?"

"तुम्हारे मन को नहीं पता कि तुम मुझे चाहती हो या नहीं?"

"नहीं — मेरे मन को कुछ नहीं पता," तारा ने अस्फुट स्वर में कहा।

"यह तुम झूठ बोलती हो, तारा। तुम्हें पता है पर तुम बताना नहीं चाहतीं।"

"मैं झूठ नहीं बोलती, जीवन," तारा ने जीवन की आँखों में सीधा देखकर कहा। "मैं झूठ नहीं बोलूँगी, क्योंकि झूठ की बुनियाद पर मैं अपना जीवन स्थिर नहीं कर पाऊँगी।"

बेडरूम में ड्रेसिंग टेबल के शीशे के सामने खड़ी हुई तारा के मुँह पर लैम्प-शेड से छनकर आती हुई रोशनी बड़ी भली लग रही थी। बाक़ी का सारा कमरा अँधेरे में था और बाहर घुंघरुओं की आवाज़ शुरू हो गई थी। शायद सितारा नाच रही थी। परंतु तारा को झकझोरकर उसे होश में लाना और उसके मन की उलझनों को सुलझाना आवश्यक था। इसीलिए जीवन ने फिर पूछा:

"तुम्हें नहीं पता कि तुम मुझे चाहती हो?"

तारा ने कहा: "नहीं।"

"तुम्हें यह तो पता है कि मैं तुम्हें चाहता हूँ?"

तारा मुस्कुराई। "तुमसे सुना है," उसने कहा।

"तो तुम्हें मेरे कहने पर विश्वास नहीं होता?"

"मैंने यह कब कहा? मगर एकतरफ़ा प्रेम —"

जीवन ने बात बीच में काटते हुए कहा: "इसे दोतरफ़ा बनाना मेरा काम है। तुम मुझे चाहो या न चाहो, मेरे लिए इतना काफ़ी है कि मैं तुम्हें चाहता हूँ। मैं बुरा नहीं, तारा। शादी के बाद तुम्हारे दिल में भी मेरे लिए चाहत पैदा होकर ही रहेगी — मुझे पूरा विश्वास है।"

तारा ने कहा : "चलो, बाहर चलें।"

जीवन ने तारा के दोनों कंधे थाम लिए और प्रेमाकुल वाणी में कहा : "चलो कश्मीर चलो मेरे साथ।"

"कश्मीर ?"

"हाँ, मैंने एक महीने की छुट्टी ली हुई है। कुछ दिनों के लिए मैं कश्मीर जाने की सोच रहा था। दोस्तों को लिखा भी हुआ है। चलो, तुम भी चलो मेरे साथ।"

"मैं — मैं — मैं कैसे आ सकती हूँ? मैं नहीं —"

"तुम्हारा पिक्चर तो ख़त्म हो चुका है। अब तो तुम्हें फ़ुरसत है। चली चलो मेरे साथ। में सोचकर आया था कि तुम्हें अपने साथ कश्मीर ले जाऊँगा। चलो, तारा, मेरे साथ चलो।"

"यह तुम्हें क्या हो गया है आज!" तारा ने संभलते हुए कहा। "आज तुम आए, आते ही तुमने मुझे इतना क़ीमती हार भेंट कर दिया, और अब कहते हो कश्मीर चलो! तुम्हारा दिमाग़ तो —"

"बिलकुल ठीक है, इसीलिए तो मैं एक मिनट भी गँवाना नहीं चाहता।"

"चलो, बाहर चलें — सितारा का नाच शुरू हो गया है।"

"पहले जवाब दो।"

"लोग क्या सोच रहे होंगे! सब को बिठाकर मैं ख़ुद ग़ायब हो गई! जाओ, बाहर जाओ।"

"तुम पहले हाँ कहो, कहो चलोगी कश्मीर।"

"तुम जाओ बाहर," तारा ने विनयपूर्वक कहा।

जीवन ने तारा के कंधों से हाथ हटा लिए। "चलो," उसने कहा, "चलो।"

"तुम जाओ, मैं आती हूँ।"

जीवन के जाने के बाद तारा ड्रेसिंग टेबल के सामने सेटी पर बैठ गई और उसने बाल सँवारे। मन में अजीब उलझन थी। जी किया कि सर दोनों हाथों थामकर रोए, ख़ूब रोए। पर बाहर इतने सारे लोग एकत्र थे। आज उसका जन्मदिन। जन्म-दिन के अवसर पर उसकी लाल-लाल आँखें देखकर मेहमान क्या समझेंगे? लाश क्या समझेगा? कैलाश! .... पत्थर कैलाश! .... क्यों उसने पत्थर मन लगाया? .... जी तो करता है कि कैलाश को कुछ खिला दे .... और ख़ुद कुछ खाकर सो रहे .... कैसा भयानक विचार है यह! अच्छा है! सारा झगड़ा मिट जाएगा! तारा शीशे के सामने से उठ खड़ी हुई, और फिर तुरन्त ही बेडरूम बाहर निकल गई।

"ड्राइंगरूम में सितारा नाच रही थी। उपस्थित गण उसके सुंदर कत्थक नाच ा आनंद ले रहे थे। सितारा का प्रख्यात मयूर-नृत्य था। बिजली की नाईं वह झमक हो रही थी।

जीवन, दीवार से टिका, नाच देख रहा था, पर उसकी आँखों में प्रतीक्षा थी, तारा के आने की प्रतीक्षा। तारा आई तो वह सरककर उसके पास खड़ा हो गया।

लोगों का ध्यान केवल नाच पर था; परंतु कैलाश का ध्यान सब ओर था। अतएव कैलाश ने जीवन का बाहर आना देखा था, और अब तारा का आना व जीवन का उसके पास सरककर खड़ा होना भी देखा। तारा के गले में मोतियों का हार दमक रहा था। यह हार वह अपने बेडरूम से अभी पहनकर आई है। अवश्य ही यह हार उसे जीवन ने भेंट किया है, संभव है अपने हाथों से उसे पहनाया हो। और क्या किया जीवन ने? इतनी देर तक तारा को लेकर बेडरूम में घुसा बैठा था! ....

सहसा लोगों की करतल ध्वनि से ड्रॉइंगरूम गूँज उठा। नाच समाप्त हो गया था। सितारा प्रेक्षकों को अभिवादन कर रही थी।

तारा ने आगे बढ़कर सितारा के गले में बाँह डालकर कहा: "बहुत अच्छा नाचा आपने! मैं आपको कैसे बधाई दूँ?"

"धन्यवाद," सितारा ने हँसकर कहा।

"अच्छा हुआ जो आप आ गईं आज। आपके नाच के बिना मेरी पार्टी फीकी पड़ जाती।"

"आपका जन्मदिन था और भला मैं न आती!"

इसी समय रहमान ने गुडी को इशारा किया और उसका ऑरकेस्ट्रा फिर बज उठा।

"अब तो भूख लग रही है, मिस तारा चौधरी," मगनभाई व्यास ने कहा।

"हाँ, तारा देवी, अब खाना खिला दीजिए," डॉ. पटेल ने बहनोई का समर्थन करते हुए कहा।

तारा ने कहा: "बस यह आख़िरी डान्स है — इसके बाद खाना खिला दूँगी।"

लोग फिर अपने-अपने साथियों को चुनकर नाचने लगे।

कैलाश नाच नहीं रहा था; चंचलकुमारी, मोहन, मुक्ता बैनर्जी, और जे. सी. जैन के साथ बातें कर रहा था। तारा ने सोचा कैलाश के पास जाकर खड़ी होगी तो वह उसे लेकर नाचने लगेगा। वह ज्योंही कैलाश की ओर बढ़ी तो जीवन ने उसके कमर में हाथ डाल दिया।

"आओ, तारा, नाचें," उसने कहा।

तारा, असहाय होकर, जीवन के साथ नाचने लगी। नाचते हुए उसने कनखियों से कैलाश की ओर देखा। कैलाश हँस-हँसकर अपने साथियों के साथ बातें कर रहा था। 'कैसा पत्थर है! मुझे जीवन के साथ नाचते देखकर भी उसके मन में जलन नहीं पैदा होती! और फिर जीवन कैसा चिमटाए जा रहा है मुझे!'

दूसरी ओर रहमान के साथ नाचती हुई सलमा ने आहिस्ता से कहा: "कम्बख़्त कैसे लिपटा जा रहा है तारा से!"

"नाच रहा है तारा के साथ! इसमें क्या अजीब बात है?"

"नाच न और भी कुछ। देखते नहीं, जबसे आया है बराबर पटा रहा है उसे। देखो, कैसे गाल से गाल मिलाए जा रहा है।"

रहमान ने देखा तो स्तब्ध रह गया। वास्तव में मामला संगीन हुआ जा रहा था। "अगर कैलाश देख ले तो क्या गुज़रेगी उसके दिल पर!" उसने कहा। "चेहरे से सारी हँसी काफ़ूर हो जाएगी!"

"तुम समझते हो कैलाश ने नहीं देखा? अरे गिद्ध की निगाह है उसकी। उसकी आँखों से कुछ नहीं छिपा—न वह मोतियों का हार छिपा है और न तारा से लिपटकर जीवन का नाचना, और—और न तारा—जो जीवन का हौसला बढ़ा रही है—न यही छिप रही है उसकी नज़र से।"

रहमान ने कहा: "तारा को क्या हो गया है! क्या वाक़ई वह जीवन मलहोत्रा को चाहती है, कैलाश को नहीं?"

"समझ में नहीं आता," सलमा ने कहा। "मगर कहीं कुछ दाल में काला ज़रूर है। मेरा खयाल है कुछ बात हुई है। कैलाश को जला रही है तारा।"

नाच समाप्त होते ही तारा ने अतिथियों से कहा: "खाना तैयार है; चलिए, छत पर चलिए।"

बरामदे से ज़ीना छत पर जाता था। सारे लोग छत की ओर बढ़ने लगे।

ऊपर छत पर खाने के मेज़ लगे हुए थे। खाना *क्वालिटी* होटल से आया था, क्योंकि *क्वालिटी* के वेटर खाने पर तैनात थे। रंगीन बल्ब जहाँ-वहाँ टँके हुए थे और आकाश पर अर्ध चंद्र लटका हुआ था। खाने की ओर बढ़ते हुए, या खाना खाते हुए लोगों ने छत के चारों ओर का सुहावना दृश्य देखा। तीन ओर दूर तक असंख्य मकानों की छतें थीं और असंख्य ज्योतियाँ जगमगा रही थीं। और चौथी ओर, यानी पश्चिम को, समुद्र का पानी लहरा रहा था। अतिथियों को आज इस डिनर पार्टी में विशेष आनंद आया। उन्होंने कई पार्टियाँ देखी थीं। अन्य पार्टियों में ज़ोर-शोर अधिक होता था। परंतु तारा की इस पार्टी में राग, रंग और मूड है। जैसी वह स्वयं सलोनी है वैसी ही उसकी पार्टी भी है। पकवान भी स्वादिष्ट थे और लोग स्वाद ले-लेकर खाए जा रहे थे। हर ओर ग़पशप और हँसी, दिल्लगी चल रही थी। जहाँ-वहाँ खुशी के फ़ौवारे छट रहे थे। डैनिअल मूड में था—पीने के बाद या खाना देखकर वह सदा मूड में आ जाता है। फिर बात करने में उसका जवाब नहीं। न जाने कहाँ-कहाँ के चुटकुले भर रखे थे उसने अपनी चिकनी खोपड़ी में कि हँसा-हँसा दिया उसने लोगों को। डैनिअल के मुँह से कुछ निकलने की देर नहीं कि हँसी की किलकारियाँ छूट पड़तीं। रंग जमाने में सलमा भी कम न थी। डैनिअल की बात काटने की उसकी कोशिशें और फिर सलमा को निशाना बनाकर, उसे लक्ष्य करके, उस पर डैनिअल की फबतियाँ—हद हो गई मज़ाक़ की! डैनिअल के मज़ाक झेलने की ताब केवल

सलमा में ही थी, सो लोगों के मनोरंजनार्थ, वह झेल रही थी, और लोग हँस रहे थे . . . .

श्यामू घबराया हुआ छत पर आया और रजनीकान्त के कानों में कुछ कहने लगा। रजनी तुरन्त ही नीचे लपका हुआ गया।

कैलाश ने तारा के पास आकर पूछा : "क्या हुआ ? रजनी कहाँ गया ?"

तारा ने कहा : "पता नहीं, शायद उनका फ़ोन आया था।"

इसी समय रजनी ऊपर आया। तारा और कैलाश के पास आकर उसने कहा : "अस्पताल से फ़ोन आया है। नर्स कह रही है कि चंद्रा को फ़िट आया हुआ है और वह बेहोश हो गई है। मैं चलता हूँ, तारा। मुझे अफ़सोस है तुम्हारी पार्टी छोड़कर जा रहा हूँ, पर लाचारी है।"

"कोई चिंता न करो, रजनी। जाओ, तुम जाओ। मुझे उम्मीद है तुम्हारे पहुँचने तक चंद्रा ठीक हो जाएगी। जाओ। मैं सुबह आऊँगी देखने," तारा ने कहा।

रजनी का घबराहट के मारे मुँह उतर गया था। चलने के लिए उसने कैलाश से हाथ मिलाया तो कैलाश ने कहा : "घबराओ नहीं, यार। मामूली फ़िट होगा। चलो, मैं भी चलता हूँ तुम्हारे साथ। तारा, मैं भी जाता हूँ रजनी के साथ। इन्हें अस्पताल तक पहुँचाकर आता हूँ। मैंने खाना खा लिया है। मेहमानों का खयाल रखना।"

तारा हाँ, ना कुछ कह भी न पाई थी कि कैलाश रजनी की बाँह पकड़े वहाँ से चल दिया। लोग खाने में व्यस्त थे। उनका खिसकना उस समय किसी ने न देखा। बाद में — खाना समाप्त होने पर — जब लोग छत से ड्रॉइंगरूम में आए और आइसक्रीम बँटने लगा तब कुछेक ने कैलाश और रजनी के बारे में पूछा। तारा ने बता दिया। सलमा, रहमान और फ़ांसिस कुछ चिंतित हुए, परंतु जीवन ने संतोष की साँस ली। उसके रास्ते का काँटा दूर हुआ था।

पान के बाद मेहमान जाने लगे। पार्टी के लिए व स्वादिष्ट भोजन के लिए बार-बार तारा को धन्यवाद देते हुए एक के बाद एक सभी चलने लगे। थोड़ी देर में ड्रॉइंगरूम ख़ाली हो गया और केवल जीवन व तारा रह गए।

तब जीवन ने तारा की ओर देखकर कहा : "बड़ी अच्छी पार्टी थी ! हम लोगों के घर भी पार्टी होती है, पर तुम्हारी बम्बई में — तुम सिनेमावालों के घर — पार्टियाँ इतनी जानदार होती हैं यह मैंने आज ही देखा।"

"धन्यवाद," तारा ने थककर सोफ़े पर बैठते हुए कहा।

"थक गईं ?"

"हाँ," तारा ने कहा, और तुरंत ही उठकर वह टेलीफ़ोन पर गई और *माणिकलाल अस्पताल* का नम्बर मिलाने लगी। "हलो — *माणिकलाल हॉस्पिटल* ? . . . . देखिए वहाँ पर रजनीकान्त साहब को — शायद १६ नम्बर के कमरे में — रजनीकान्त साहब होंगे — उनकी स्त्री बीमार हैं — अपेंडिक्स का ऑपरेशन हुआ है — आप वहाँ से किसी को बुला देंगी ? ज़रा बात करनी थी। उनकी स्त्री बेहोश हो गई थीं

अभी — उसी बारे में पूछना था। या आप तबीअत का हाल पूछकर बताएँगी ?"

अस्पताल से नाइट ड्यूटी वाली नर्स बोल रही थी। "बेहोशी दूर हो गई है। मामूली फ़िट था," नर्स ने सूचना दी।

"अब हालत कैसी है ?"

"अब ठीक है — बिलकुल ठीक है। मि. रजनीकान्त को बुलाऊँ।"

"नहीं, रहने दीजिए। इतना ही पूछना था। धन्यवाद।" तारा ने फ़ोन बंद कर दिया और आकर फिर सोफ़े पर बैठ गई। सोचने लगी। शायद कैलाश लौट रहा होगा। वापस आने को कह तो गया था।

जीवन पास आया। "चलो मुझे छोड़ आओ मेरे होटल तक," उसने कहा।

तारा चौंक पड़ी। "नहीं, जीवन; मैं बहुत थक गई हूँ। दिन भर इतना सारा काम किया है। तुम जाओ। ११ बजने वाले हैं — काफ़ी रात हो गई।"

"तुम भी चलो — सैर हो जाएगी।"

"नहीं, तुम जाओ। मेरी कार तुम्हें छोड़ आएगी," तारा ने कहा।

जिस प्रकार नाचते हुए, नाच के अंतरगत, सितारा के घुँघरू-बँधे पाँव अकस्मात स्थिर और स्तब्ध हो जाने पर भी घुँघरुओं से झनकार सतत निकलती ही रहती थी, उसी प्रकार, कैलाश यद्यपि वहाँ उपस्थित न था, सारा कमरा उसके अनुपस्थित व्यक्तित्व से झंकृत था, और यह झनकार तारा को विकल व उद्विग्न कर रही थी।

"चलो न," जीवन ने तारा का हाथ पकड़कर उसे खींचते हुए कहा।

"चलो, मैं तुम्हें नीचे तक छोड़ आती हूँ," तारा बोली।

दोनों ज़ीना उतरकर नीचे आए। कार में ड्राइवर न था। ऊपर खाना खा रहा था।

"पाँच मिनट ठहर जाओ, जीवन," तारा ने कहा, "ड्राइवर अभी आ जाता है।"

"अगर तुम छोड़ आओगी मुझे तो क्या मैं निगल जाऊँगा तुम्हें रास्ते में ?"

"अच्छा, चलो।"

तारा कार में स्टीअरिंग व्हील के सामने बैठ गई। जीवन उसके बाज़ू में आ बैठा। तारा ने इंजन स्टार्ट करके जीवन की ओर देखा। जीवन उसे ताकता हुआ मुस्कुरा रहा था। तारा भी मुस्कुराई। क्लच दबाकर उसने गीअर मिलाया और गाड़ी चलने लगी, पोर्च के बाहर, फाटक के बाहर।

वरली के नुक्कड़ पर जब गाड़ी पहुँची तो जीवन ने कहा : "दिन भर मुझे आने क्यों नहीं दिया तुमने अपने घर ?"

"कहा तो — मैं लंच के लिए बाहर गई हुई थी।"

"और शाम को ?"

"शाम को — इतना सारा काम जो करना था। मैं काम करती रहती और तुम अकेले बैठे रहते। क्या यह अच्छा लगता ?"

"जानती हो, तुम्हारे बग़ैर — तुमसे दूर — पिछले यह तीन – चार महीने दिल्ली में मैंने किस तरह बिताए हैं ?"

तारा चुप रही। रास्ते में जीवन यही सब बातें करेगा यह वह जानती थी और इन्हीं बातों से बचने के लिए वह साथ में नहीं आना चाहती थी।

जीवन ने फिर कहा : "कभी याद नहीं आती थी मेरी ?"

तारा मुस्कुराई। "नहीं," उसने कहा।

"सच में नहीं आती थी ?"

"उँहुँ।"

जीवन भी मुस्कुराया।

थोड़ी देर चुप्पी रही, फिर तारा ने कहा : "कब जा रहे हो वापस ?"

"तुम जब कहो। तुम पर है।"

"देखो, जीवन, बुरा मत मानो — यह हार मैं सुबह तुम्हें वापस कर दूँगी।"

"यह मेरी तुम्हें भेंट है, तारा," जीवन ने रुष्ट होते हुए कहा; "अगर तुम्हें नहीं पसंद तो तुम गले से उतारकर इसे नाली में फेंक सकती हो। मैं कुछ न कहूँगा।"

तारा चुप हो गई। चुप रही। जीवन भी चुप था। गाड़ी चली जा रही थी।

रेस कोर्स के पास जब गाड़ी पहुँची तो तारा ने जीवन के घुटने को हाथ से दबाकर कहा : "नाराज़ हो गए ?"

जीवन मुस्कुराया। "नहीं," उसने कहा।

"तो कुछ बात करो।"

जीवन ने पास सरककर बाँह तारा के गले में डाल दी।

"यह क्या करते हो !" तारा ने उसकी बाँह हटाने की चेष्टा करते हुए कहा,

जीवन ने कसकर तारा को बाँहों में समेट लिया और उसके गाल को, कान को गले को चूमने लगा।

"हटो भी —" तारा ने अपनेको छुड़ाते हुए कहा, "कहीं ऐक्सीडेंट हो गया तो ?"

"होने दो ऐक्सीडेंट," जीवन ने कहा और जेब से सिगरेट निकालकर सुलगाने लगा, फिर धुआँ तारा के मुँह पर छोड़ता हुआ बोला : "सबेरे ही मैं दिल्ली के लिए हवाईजहाज़ पर दो सीट बुक कराता हूँ। दिल्ली से सीधे कश्मीर चलेंगे। ठीक है ?"

"नहीं," तारा ने कहा, "बिलकुल ठीक नहीं।"

उस रात कैलाश जब अस्पताल से निकला तो साढ़े-ग्यारह बज रहे थे। सीधा वह *सूनलाइट* आया। उसने सोचा था मेहमान चले गए होंगे, जीवन भी चला गया होगा। खामखा यह उल्लू का पट्ठा तारा के पीछे पड़ा हुआ है। तारा को वह कभी न भाता

होगा। कैसे गाल से गाल लगाए नाच रहा था। मोती का हार भेंट करके क़ीमत वसूल करना चाहता है। पर तारा भी तो उसे प्रोत्साहित किए जा रही है। ऐसा क्यों कर रही है? वास्तव में वह जीवन से प्रेम करने लगी है? नहीं, ऐसा नहीं हो सकता, नहीं होना चाहिए। जीवन के साथ वह कभी सुखी नहीं हो सकती। संभव है जीवन के सतत अनुरोध के समक्ष वह अपनी चिंतनशक्ति खो बैठती हो और अपना भला-बुरा सोच न पाती हो....

मूनलाइट पहुँचकर कैलाश ने गाड़ी सड़क पर ही पार्क की और ज़ीना चढ़ने लगा। 'तारा इस समय अकेली होगी,' उसने सोचा। 'मैंने कहा था लौटकर आऊँगा। वह मेरा इंतज़ार तो कर ही रही होगी। कभी-कभी क्यों लगता है कि वह मुझसे प्रेम करती है। शाम को जब में यहाँ आया था तो मुझे देखकर उसकी आँखें में एक विचित्र चमक आ गई थी। वह चमक क्या थी?.... तो फिर जीवन के बम्बई पहुँचने की बात मुझसे छिपाकर क्यों रखी? .... मगर यह भी तो है कि तमाम दिन जीवन से वह मिली तक नहीं! .... जाते ही मैं अपना उपहार दूँगा। मैंनें तभी दे देना चाहिए था यह अँगूठी। अंदर ले जाकर अकेले में दे तो सकता था। अकेले में ही बात भी कर लेता। आख़िर जीवन ऐसा कर ही गुज़रा।' ऊपर पहुँचकर कैलाश ने दरवाज़े की बटन दबाई। घंटी की आवाज़ सुनकर शायद श्यामू आ रहा था दरवाज़ा खोलने, या स्वयं तारा ही आ रही थी। 'तारा मेरी है। और किसी की नहीं। मैं उसे चाहता हूँ। वह मेरी है....' दरवाज़े की चिटकनी जब खुलने लगी तो कैलाश का दिल ज़ोरों से धड़क रहा था।

दरवाज़ा खुला और श्यामू अलग हटकर खड़ा हो गया। कैलाश ने ड्रॉइंगरूम में प्रवेश किया।

"रजनीकान्त साहब की मेमसाहब अब अब ठीक तो हैं, साहब?" श्यामू ने पूछा।

"हाँ, अब ठीक हैं।"

"आपने तभी बराबर खाना नहीं खाया था। कुछ लाऊँ, साहब, आपके लिए?"

"नहीं, कुछ नहीं, हम खाना खा चुके थे।"

"थोड़ा आइसक्रीम?"

"नहीं, कुछ नहीं। तारा—"

अंदर से कोई आवाज़ न आई।

"कहाँ हैं, तुम्हारी मेमसाहब कहाँ हैं?"

"बाहर गईं हैं, साहब।"

"बाहर कहाँ?" कैलाश ने साश्चर्य पूछा।

"जीवन साहब को उनके होटल छोड़ने गईं हैं।"

"ड्राइवर भी गया है साथ?"

"जी नहीं, अकेले गई हैं," श्यामू ने कहा। श्यामू घर का नौकर था। नौकर की ही हैसियत थी उसकी। परंतु इतना तो वह भाँप गया था कि उसकी मेमसाहब दो नावों में पाँव दिए खड़ी है और नदी बाढ़ पर है। वह सहम गया।

"कब गईं?" कैलाश ने पूछा।

"जी कोई पौन घंटा होने आया।"

सुनकर कैलाश चुप हो गया। जेब से सिगरेट निकालकर सुलगाने लगा। सिगरेट पीता हुआ वह ड्रॉइंग रूम में टहलने लगा। उसके सर में तूफ़ान उठ रहा था। पेट की आँतें खिंची जा रही थीं। श्यामू एक कोने में दुबककर खड़ा हो गया।

"तुम जाओ, श्यामू। अपना काम करो," कैलाश ने कहा। "हम मेमसाहब का इंतज़ार करेंगे।"

शाभू ने सामने का दरवाज़ा बंद किया और लौटकर बरामदे में से होता हुआ अंदर चला गया।

कैलाश को लगा उसका सर फट जाएगा और आँतें मुँह में आ जाएँगीं। रह-रहकर उसे अँधियारी आने लगी। पाँव भारी हो गए। वह जाकर कोने में पड़ी हुई बेंत की लाल गोलाकार कुरसी पर धड़ाम-से बैठ गया। 'यह क्या हो रहा है मुझे?' कैलाश के मन में जिज्ञासा हुई। कैलाश के अंदर जो लेखक या निर्देशक था उसने उत्तर दिया, 'डाह हो रहा है तुम्हें। तुम्हें ग़ुस्सा कई बार आया है, पर यह ग़ुस्सा तुम्हारे लिए सर्वथा अपरिचित है। यह ग़ुस्सा डाह के कारण उत्पन्न हुआ है और ऐसा ग़ुस्सा तमाम ग़ुस्सों से अधिक तीव्र और तीखा होता है।' उसका माथा फटा जा रहा था और चेहरे पर पसीना फूट रहा था। रूमाल से उसने चेहरे का पसीना पोंछा और फिर हाथों की हथेलियाँ, फिर जेब से लाल मख़मल की डिबिया निकालकर उसे घूरने लगा। डिबिया का ढक्कन खोलकर देखा तो अंदर से हीरे की अँगूठी झाँक रही थी — यह उसका प्रेमोपहार था — तारा के लिए लाया हुआ प्रेमोपहार। आज सारा दिन वह इस अँगूठी के पीछे मारा-मारा फिरता रहा है, और एक तारा है कि इतनी रात को दिल्लीवाले के साथ आवारागर्दी को निकली हुई है। कैलाश की हथेलियाँ गर्म हो उठीं, जलने लगीं। उसने डिबिया बंद की और डिबिया के ढक्कन पर अँगूठा फेरने लगा। मखमल की चिकनाहट उसे अच्छी लगी। 'मख़मल काहे से बनता है?' वह सोचने लगा। इसी दम बाहर मोटर की आवाज आई। मोटर फाटक के अंदर आ रही थी, पोर्च में आई, ब्रेक लगा, मोटर का दरवाज़ा बंद हुआ। फिर तारा ज़ीना चढ़ रही थी। तारा ही थी। ऊँची एड़ के जूतों की खटखट साफ़ सुनाई दे रही थी। फिर घंटी बजी तो अंदर से श्यामू लपककर आया और जाकर उसने दरवाज़ा खोल दिया। दरवाज़े पर तारा खड़ी थी।

तारा अंदर आई तो श्यामू ने दरवाज़ा बंद नहीं किया। दरवाज़ा खुला ही छोड़ वह चट लौटकर बरामदे से होता हुआ अदृश्य हो गया। तारा को श्यामू की हरकत

विचित्र लगी। वह साश्चर्य उधर देखने लगी जिधर श्यामू गया था। ड्राइंगरूम में कोनेवाले लैम्प को छोड़कर बाक़ी के तमाम लाइट ऑफ़ थे। तारा ने दरवाज़ा ख़ुद बंद किया और पलटकर अँगड़ाई लेने के लिए हाथ जो ऊपर उठाए तो हाथ ऊपर के ऊपर ही रह गए। उसकी आँखें दूर लैम्प स्टैंड के प्रकाश में उठती हुई धूएँ की सफ़ेद लकीर पर जमी हुई थीं। लकीर के सहारे आँखें नीचे को फिरीं तो सिगरेट पकड़ा हुआ हाथ दिखाई दिया—और फिर समूचा कैलाश, जो उसे ही घूर रहा था। हवा में अकड़े हुए तारा के हाथ एक झटके में नीचे आ गए।

"कैलाश!" तारा के मुँह से बरबस निकल पड़ा। "तुम कब आए?"

कैलाश उठा नहीं। बैठे-बैठे ही उसने कहा: "अभी आया हूँ। अगर यह मालूम होता कि तुम बाहर गई हो तो न आता।"

तारा ने देखा कैलाश भरा बैठा है। वह सहम गई।

"मैं—मुझे—मैं समझी—" उसने कहा और आगे वह कुछ न कह सकी।

"मेहमानों का अगर इन्सल्ट ही करना था तो उन्हें पार्टी देने की क्या ज़रूरत थी?" कैलाश ने कहा।

"मैंने किसी का इन्सल्ट तो नहीं किया।"

"घर पर आए हुए मेहमानों को अकेले छोड़कर ख़ुद बेडरूम में घंटे-घंटे भर घुसे रहना शायद उनका इन्सल्ट नहीं स्वागत करना है। क्यों?"

"प्रेजेंट्स के पैकेट्स रखने मैं अंदर गई थी। पीछे-पीछे जीवन भी आ गया। बात करने लगा। अब मैं क्या उसे कमरे से धक्का देकर निकाल देती?"

"क्या बात करने लगा?"

"कुछ तो की ही होंगी बातें।" तारा ने देखा कैलाश उसे पैनी दृष्टि से ताक रहा है। तारा ने आँखें झुका लीं।

कैलाश ने ताना कसा: बड़ा सुंदर हार है! शायद सच्चे मोती हैं! जीवन मलहोत्रा ने दिया है?"

"हाँ," तारा ने कहा और सानंद सोचने लगी कि कैलाश के मन में आख़िर डाह उत्पन्न हो ही गया—जीवन के प्रति डाह—एक प्रेमी का दूसरे प्रेमी के प्रति डाह—वह डाह जिसकी तारा को दीर्घ काल से प्रतीक्षा थी। और ज़रा भड़काएगी तो वह दिल की बात उगल ही देगा। आज ही अवसर है, अभी, इसी समय। ऐसा सुअवसर फिर न आएगा। तारा के प्रति कैलाश के हृदय में कितना प्रेम है, प्रेम है भी या नहीं—इस बात का निर्णय हुआ जाता है।

कैलाश ने कहा: "तुम्हारे गले में हार शायद ज़बर्दस्ती ही पहनाया होगा?"

"हाँ।"

"तुम रोक तो सकती नहीं थीं—आख़िर सच्चे मोतियों का हार है।"

यह वाक्य तारा को बुरी तरह चुभा, पर वह चुप रही।

बैठ जाते हो! आर्टिस्ट, कलाकार, स्टूडिओ, करीअर — उफ़! मैं तंग आ गई सिनेमा से! मेकअप और ग्रीस पेन्ट से मुझे नफ़रत हो गई है, कैलाश!"

कैलाश को सहसा लगा यह वह तारा नहीं बोल रही है जिसे वह जानता आया है, जिससे वह प्रेम करता है। "यह तुम कह रही हो, तारा? यह तुम कह रही हो?" उसने साश्चर्य पूछा।

"हाँ, मैं कह रही हूँ। मैं सिनेमा में काम करते-करते तंग आ गई हूँ। माँ सच कहती थी: 'पति और घर-गृहस्थी के बिना स्त्री का जीवन अधूरा है।'"

"तुम शादी करने की सोच रही हो?"

"क्यों नहीं सोच सकती?"

"किससे? जीवन मलहोत्रा से?"

"हाँ, जीवन मलहोत्रा से — वह मुझे बचपन से जानता है — मुझे समझता है।"

"मैं तुम्हें जीवन से शादी नहीं करने दूँगा।"

'वास्तव में यह आदमी पत्थर है। अपना उल्लू सीधा करने के लिए मुझे बाँधकर रखना चाहता है। मैं इसके लिए सोने की चिड़िया जो हूँ। पत्थर से मैंने कैसे दिल लगा लिया था। क्या इतना स्वार्थी और मतलबी है यह!' तारा ने सोचा और सोचकर उसे दुख हुआ। कैलाश की ओर से उसका दिल फट गया। 'काश इस पत्थर से मैं कभी न मिली होती!'

कैलाश ने फिर कहा: "और न उसके साथ तुम्हारा मिलना-जुलना ही मुझे पसन्द है।"

तारा फुफकार उठी: "तुम्हें यह पसंद नहीं, तुम्हें वह पसन्द नहीं। यह मत करो, वह मत करो। आख़िर तुमने मुझे समझ क्या रखा है — कठपुतली? जिसे जब जैसे चाहो तुम अपने इशारे पर नाचाया करो। कैलाश, यह कठपुतली का नाच बहुत हो चुका। मैं कोई बच्चा नहीं हूँ। अपना भला-बुरा अच्छी तरह समझ सकती हूँ। मेरे मामले में तुम्हें दख़ल देने की कोई ज़रूरत नहीं।"

"ओह! तो मामला यहाँ तक बढ़ गया है!" कैलाश ने दरवाज़े की ओर चलते हुए ताना कसा। "मुझे नहीं पता था कि जीवन ने तुमपर इस क़दर जादू कर दिया है!" कैलाश के पाँव तले से धरती खिसक चुकी थी और हवा में वह क़लाबाज़ियाँ खा रहा था। वह जानता था तारा उसके हाथ से निकलकर किसी और की हो गई है, वह लुट गया, इतनी निगरानी के बावजूद दिनदहाड़े उसके घर चोरी हो गई, उसकी सम्पत्ति कोई चुरा ले गया। कैलाश हताश हो गया, उदास हो गया, परंतु उसके चेहरे पर कोई शिकन न थी — क्योंकि वह चेहरा कैलाश का था। दरवाज़े के पास अँधेरे में पहुँचकर वह पलटा।

तारा बीच ड्रॉइंगरूम में खड़ी उसे ताक रही थी।

तारा की आँखों में सीधा देखकर शांत भाव से उसने पूछा : "तो क्या यह तय है कि तुम जीवन से शादी करोगी ?"

तारा चुप खड़ी कैलाश की ओर देखती रही। उसने कोई उत्तर न दिया। कोई उत्तर उससे बन न पड़ा।

"क्या तुम जीवन को बहुत चाहती हो, तारा ?" कैलाश ने दूसरा प्रश्न किया। इस प्रश्न के उत्तर पर उसका भविष्य निर्भर था। वह अपना मन मार सकता है वह तारा को खोकर उसके वियोग में घुल-घुलकर जी सकता है, मर सकता है, परंतु तारा का दिल नहीं तोड़ सकता। प्रेम दिया और पाया जाता है, बेचा और ख़रीदा नहीं जाता। प्रेम दो दिलों का सहज सम्बन्ध है, इसमें ज़ोर-ज़बर्दस्ती, छीना-झपटी नहीं हो सकती। तारा अगर जीवन को वास्तव में चाहती है तो वह उनके बीच कदापि न आएगा। यही सब सोचता हुआ वह तारा को अपलक ताक रहा था और तारा उसे।

थोड़ी देर नज़रें चार होती रहीं फिर तारा की आँखों में आँसू उमड़ने लगे, परंतु तुरंत ही अपने को संभालकर उसने कहा : "मैं नहीं जानती।"

"तुम नहीं जानतीं कि तुम जीवन को चाहती हो या नहीं ?"

"नहीं।"

कैलाश के मन में उम्मीद बँधने लगी, मानो मुर्दे में जान आने लगी हो। "लेकिन फिर भी उससे शादी करना चाहती हो ?" उसने पूछा।

"मैं किसीसे भी शादी करूँ, तुम्हें इससे क्या ?" तारा ने कहा और मन में सोचने लगी : 'तुम रोकनेवाले कौन होते हो ? तुम तो मुझे नहीं चाहते। तुम तो मेरे साथ शादी नहीं करोगे।'

कैलाश ने सोचा रह-रहकर तारा को यह क्या हो जाता है ? कैसी उखड़ी-उखड़ी बातें करती है ! परंतु उसने कुछ न कहा और अँधेरे में खड़ा मख़मल की डिबिया पर अँगूठा फेरता हुआ, तारा को तकने लगा।

तारा ने फिर कहा : "जीवन कश्मीर जा रहा है — एक महीने के लिए। मुझे साथ चलने को कह रहा है।"

"तुम नहीं जा सकतीं। दस-बारह दिन में हमारा पिक्चर *ज्वालामुखी* रिलीज़ होनेवाला है।"

"मेरा काम तो ख़त्म हो गया। मेरा यहाँ रहना कोई ज़रूरी नहीं।"

"तुमने जीवन को क्या कहा ?"

"मैंने कहा — चलूँगी।"

कैलाश पर मानो तारा ने एक गैलन पेट्रोल छिड़कर माचिस छुआ दी हो। कैलाश का हृदय ही नहीं, समूचा कैलाश क्रोध और ईर्ष्या से भड़क उठा। "तो जाओ, मेरी बला से, जहन्नुम में जाओ !" चीख़ता हुआ हाथ की डिबिया उसने सामनेवाली दीवार

पर ज़ोर से दे मारी। अँधेरे में जाकर डिबिया शोकेस के शीशे से लगी और शीशा चटाक-से टूटकर फ़र्श पर बिखर गया।

तारा की समझ में न आया के सहसा उसके बाज़ू में शीशा-टूटने की आवाज़ कैसे आई। क्या कैलाश ने कुछ फेंककर मारा था? अँधेरे में खड़ा था, कुछ दिखाई तो नहीं दिया। बहुत गुस्सा आ गया है उसे! तुरंत ही तारा ने दरवाज़े की ओर देखा तो गुस्से में तमतमाता हुआ कैलाश चला जा रहा था। तारा अवाक् खड़ी देखती रही। कैलाश चला गया, उसके पाँव की ज़ीना उतरने की आहट भी दूर हो गई, फिर गाड़ी का दरवाज़ा बजा, और फिर गाड़ी स्टार्ट हुई, चलने लगी, जाने लगी, दूर, दूर, बहुत दूर, और फिर सर्वत्र मौन हो गया, एकदम सन्नाटा, केवल रात हाँफ रही थी।

तारा पलटी और चलने लगी—मानो नींद में चल रही हो। अपने बेडरूम में आकर अँधेरे में पलँग पर निढाल गिर पड़ी और रोने लगी, फफक-फफककर रोने लगी। उसकी सुंदर दुनिया मिट चुकी थी। इतने दिनों तक जो सुखद स्वप्न वह देखती आई थी वह सहसा नष्ट हो गया था। कैलाश उससे प्रेम नहीं करता, केवल एक निर्देशक व निर्माता की हैसियत से ही उसमें दिलचस्पी लेता है। वह सदा से कैलाश को प्यार करती आई है। उसे पूर्ण आशा थी कि एक न एक दिन उसका प्रेम रंग लाएगा और कैलाश उसका होकर रहेगा। परंतु आज कैलाश ने उसे तिरस्कृत ही नहीं किया, उसके उर पर ठोकर मारी है.... रोते-रोते उसका समस्त शरीर पसीने से तर हो गया। इसी समय पलँग के सिरहाने नाइट-टेबल पर रखे हुए टेलीफ़ोन की घंटी बज उठी। हाथ बढ़ाकर तारा ने रिसीवर उठाया और आँसू पोंछते हुए संभलकर उसने कहा: "हलो?"

"हलो!" टेलीफ़ोन में आवाज़ आई। आवाज़ जीवन की थी। "सो गई थीं क्या?" वह पूछ रहा था।

"नहीं," तारा ने अपनी सुबकियाँ दबाते हुए कहा।

"क्या कर रही थीं?"

"लेटी थी।"

"मुझे भी नींद नहीं रही थी—बिस्तर पर पड़ा छटपटा रहा था—सोचा तुमसे बात करूँ....हलो—"

"क्या है?"

"कल तुम मेरे साथ कश्मीर चल रही हो।"

"नहीं, में नहीं आ सकती।"

"मैंने होटल मैनेजर से दो सीटें बुक कराने को कह दिया है। वह कहता है, हो जाएँगी। तुम्हें चलना होगा. ... तुमने सुना? ....हलो? .... हलो?"

"हलो!"

"तुमने सुना?"

"सुना!"

"गुड नाइट!"

"गुड नाइट।" रिसीवर रखकर तारा ने सोचा यह सब क्या हो रहा है? क्या उसका निजी अस्तित्व कोई वस्तु नहीं? उसकी इच्छा, उसकी अभिलाषा, उसकी मनपसंदगी की क्यों हरओर अवहेलना की जा रही है? जिसके जी में जैसा आए उसे ठेले जा रहा है। क्या वह अँधेरी गहरी खाई में गिरकर ही रहेगी?.... वह फिर रोने लगी, पलँग पर औंधे मुँह पड़कर रोने लगी, तकिये में मुँह देकर, तकिया मसल-मसलकर रोने लगी।

और बेडरूम के बाहर, ड्राइंगरूम में श्यामू शोकेस के काँच के टुकड़े, जो फ़र्श पर बिखरे पड़े थे, कचरा उठाने के टीन में चुन-चुनकर डालता जा रहा था।

और जिस प्रकार बरसात की अँधेरी रात में मेघाच्छादित आकाश पर भटका हुआ कोई तारा झिलझिलाता है, उसी प्रकार शोकेस के पास ही, ज़रा पीछे को, श्यामू की आँख से ओझल, उस अँधेरे में, जहाँ दो दीवारें आपस में मिलती थीं, लाल मखमल की खुली पड़ी डिबिया में से अँगूठी का हीरा झिलमिला रहा था।

१८

कश्मीर को स्वर्ग कहा है लोगों ने। कश्मीर को देखकर जहाँगीर का प्रेमीहृदय भी बोल उठा था :

"अगर फ़िरदौस बर रूए ज़मीन अस्त,
हमीन अस्तो, हमीन अस्तो, हमीन अस्त।"

अर्थात् यदि पृथ्वी पर कहीं स्वर्ग है तो वह यहीं है, यहीं है, यहीं है।

जीवन मलहोत्रा के साथ तारा को कश्मीर में यानी इसी स्वर्ग देश में प्रवेश किए तीन दिन हो चुके थे। दिल्ली से पठानकोट, पठानकोट से जम्मू, और जम्मू से श्रीनगर। श्रीनगर को *वेनिस ऑफ़ दी* ईस्ट कहा गया है। ग़लत कहा गया है। क्योंकि वेनिस से श्रीनगर कहीं अधिक सुंदर है।

दिल्ली से श्रीनगर तक का सारा सफ़र मोटर में तय किया गया था। जीवन की अपनी मोटर में, जो उसने दिल्ली से साथ ले ली थी। तारा ने मोटर के सफ़र के लिए इनकार किया था, हवाई जहाज़ से ही चलने पर ज़ोर दिया था; परंतु जीवन की ज़िद के आगे तारा का ज़ोर न चला और सफ़र मोटरकार द्वारा ही किया गया।

बम्बई छोड़ने के बाद तारा जैसे ही दिल्ली पहुँची थी उसे इकबारगी महसूस हुआ कि उसकी डोर टूट गई, और वह अब एक कटी हुई पतंग के समान है जिसकी गति हवा के झोंकों पर निर्भर है, जिसकी अपनी कोई गति नहीं, कोई इच्छा नहीं, कोई हस्ती नहीं। यही सत्य और भी अधिक उज्ज्वल हो उठा था जब कि सफ़र के लिए जीवन अपनी कार ले आया था और तारा का सामान उसमें रखने लगा था!

"जो कश्मीर तुम्हें कार से दिखाई देगा वह हवाई जहाज़ से कभी नहीं दिखाई देगा," जीवन ने कहा था।

बात सच ही कही थी। तारा पहली बार कश्मीर जा रही थी। कश्मीरदर्शन हवाई जहाज़ द्वारा उपयुक्त न था, यह तो तारा भी जानती थी; परंतु फिर भी हवाई जहाज़ के लिए उसने आग्रह किया था। इसका कारण था। जीवन के साथ वह उसकी कार में अकेले नहीं बैठना चाहती थी। दिन-रात सफ़र में सदा ही मन चलायमान हो उठता है। कश्मीर की पहाड़ियों में से सफ़र होगा; वादियों, घाटियों में से कार चलेगी; चिनार, चीड़, देवदार और सफ़ेदे के पेड़ हर ओर झूमते होंगे; पहाड़ी नालों

में वेगपूर्ण प्रवाहित जल गुंजार करता होगा; झीलों में कमल फूल रेह होंगे; नाविक गा रहे होंगे; खेतों में गूजर रूपवतियाँ अठखेलियाँ कर रही होंगी; पहाड़ियों के वक्ष पर बादल तुले जा रहे होंगे — और जीवन के साथ मोटर में वह,अकेली होगी, उसके साथ जीवन अकेला होगा — बात बढ़कर रहेगी। बरसों की वह चिनगारी, जिसे जीवन अपने हृदय में दबाए हुए है, अब सहसा भड़क उठेगी, जीवन उसे भड़काकर ही रहेगा....

यह सब आशंकाएँ तारा के नारी-हृदय में सहज ही व तात्कालिक उत्पन्न हुई थीं और तारा को उसके हृदय ने सचेत व सावधान कर दिया था; परंतु तारा कुछ इस प्रकार उदासीन हो उठी थी कि इन आशंकाओं के बीच वह सिहर न पाई, वह चुप रही, और चुपचाप ही उसने अपने को सबल नियति की कठोर गोद में निढाल छोड़ दिया।

तारा को भाग्य में विश्वास था, नियति में विश्वास था, ईश्वर में विश्वास था। वह जानती थी जो होगा उचित ही होगा ; जो हा रहा है उचित ही हो रहा है; और जो हुआ वह भी उचित ही हुआ। पत्थर को उसने अपना भगवान समझा था — उससे दिल लगाया था, उसे चाहा था, उसे पूजा था; पर वह पत्थर ही रहा, निरा पत्थर ....और उस पत्थर को वह बम्बई में छोड़कर निकल आई थी, जीवन के साथ — जो उसका भगवान बनने जा रहा था। तारा पर यह विदित था कि जीवन पत्थर कदापि नहीं है, जीवन के लिए पत्थर होना कभी संभव ही नहीं। जीवन एक स्वस्थ जीव है, एक सुंदर युवक है, एक भावुक पुरुष है — जो तारा से अपनी बात मनवाने के लिए तारा के क़दमों पर सर पटककर अपनी जान दे सकता है; अर्थात् जीवन एक खरा प्रेमी है, पत्थर नहीं, पत्थर कदापि नहीं, और न उसका भगवान ही है — यह जीवन।

तारा तब नहीं जान पाई थी, परंतु वह भ्रम में पड़ चुकी थी। भ्रम सदा ही विकार का कारण रहा है। तारा के मन में विकार उत्पन्न होने लगा — जीवन उसका प्रेमी हो सकता है, पति हो सकता, परंतु भगवान नहीं....

जिसे वह एक बार भगवान मान चुकी है वह उसे न मिल पाया। वह अपने भगवान को न जीत सकी। उसका भगवान उसे न मिल पाया, उससे दूर रहा, अब तो और भी दूर होता जा रहा था, और शीघ्र ही सदा के लिए दूर हो जाएगा। पति की खोज में वह भगवान को खो बैठी। पति, बाल-बच्चे, व घर-गृहस्थी के मोह में पड़कर उसने अपने भगवान का मंदिर नष्ट-भ्रष्ट कर डाला....तारा का हृदय रुदन कर उठा। उसकी आत्मा भीषण चीत्कार कर उठी।

परंतु बग़ल में स्टीअरिंग व्हील पर बैठे हुए जीवन ने तारा के हृदय व आत्मा की चीख़-पुकार न सुनी और वह मदमस्त की नाईं मोटर चलाता रहा। सारा दिन सफ़र होता। रात किसी डाकबंगले में या होटल में टिक जाते। सुबह फिर सफ़र।

श्रीनगर पहुँचते-पहुँचते जीवन को नशा हो गया था — तारा के सम्पर्क में तारा का नशा, उस प्रकार का नशा जो शराबी को अच्छी शराब की बंद बोतल देखकर ही हो जाया करता है। बोतल का काग खोलने के लिए जीवन श्रीनगर पहुँचते ही उतावला हो उठा।

श्रीनगर में जीवन ने तारा को जगह-जगह की सैर कराई, चश्मेशाही के झरने दिखाए, निशात बाग़ और शालिमार बाग़ घुमाए और अब डल झील पर उसे शिकारे में लिए घूम रहा था। शाम का समय था। झील पर किनारे की ओर हाउस बोटें खड़ी थीं व बीच में शिकारे चल रहे थे। एक ओर *हरि पर्वत* अटल खड़ा था और पृष्ठभूमि पर *पीर पंचाल* की बर्फ़ाच्छादित चोटियों पर मई के डूबते हुए सूर्य की सुनहरी किरणें थिरक रही थीं। बसंत की मदमाती बयार तारा की लटों को आंदोलित किए जा रही थी; और तारा शिकारे में बैठी हुई, पानी में एक हाथ डाले, हाथ से पानी को काट रही थी, पानी का कटना देख रही थी। पानी चर्र-चर्र कटा जा रहा था, जैसे उसका दिल कटा जा रहा था। तारा का हृदय रो रहा था। उसकी आत्मा चीत्कार कर रही थी। वह जानती थी बाँसों गहरे पानी में उसने छलाँग मार ली है, और उसे तैरना, उभरना नहीं आता, वह डूब रही है, डूबकर रहेगी, उसके चारों ओर पानी बंद हुआ जा रहा है....

जीवन के आदेशानुसार शिकारे के खेवइये ने गाना शुरू किया था और कोई कश्मीरी ग्राम्य-गीत गाए जा रहा था। गाने के शब्द अपरिचित थे परंतु अर्थ सर्वथा लोप न हो पाया। कोई प्रेम-गीत था; और प्रेम-गीतों में शब्दों से अधिक प्रभाव उनके आलापों का, उनकी तानों का, उनकी धुनों का पड़ता है। यह प्रभाव जीवन पर भी पड़ा जा रहा था और तारा पर भी। जीवन एकटक तारा को घूर रहा था— वह सुन्दर रमणी जो उसके इतने पास होकर भी उससे दूर-दूर छिटक रही है, परंतु जो अब उसकी होने जा रही है, सदा के लिए।

और तारा पानी में हाथ लटकाए पानी काट रही थी। खेवइये की आलाप ज्यों-ज्यों तीव्र होती त्यों-त्यों तारा के दिल की टीस बढ़ने लगती। कैलाश की याद में वह तिलमिला उठी, और यह बसंती क्रीड़ा उसके लिए असह्य हो उठी। कश्मीर उसे नरक लगने लगा। वह सोचने लगी कि वह किसके साथ कहाँ आ गई, क्यों आ गई, अब क्या होगा....वह लुट गई, उसका सर्वस्व खो चुका....

"क्या सोच रही हो?" जीवन ने सहसा पूछा।

तारा ने जीवन की ओर देखा। "कुछ नहीं," उसने कहा।

"अपना हाथ दिखाओ।"

तारा ने हाथ दिखा दिया।

"यह नहीं, बायाँवाला हाथ।"

तारा ने पानी में लटका हुआ हाथ निकालकर दिखाया। जीवन ने हाथ थाम लिया।

अपने पंजे को तारा के गीले पंजे में फँसाकर उसकी कोमल उँगलियों को एक बार उसने हलके-से दबाया। तारा मुस्कुराई। परंतु यह मुस्कुराहट हार्दिक न थी, बनावटी थी, मुस्कुराने का उसने अभिनय मात्र किया था। यह मुस्कुराहट जीवन को खरी ही लगी, क्योंकि तारा कुशल अभिनेत्री थी; और वह निहाल हो गया। तारा के हाथ को उसने रूमाल से पोंछकर अपनी गोद में रखा और अपनी जेब में से कुछ निकालने लगा। सफ़ेद खरगोश के मुलायम बच्चे की तरह जीवन की गोद में तारा का मुलायम हाथ थोड़ी देर दुबका रहा और फिर जीवन का सबल पंजा उस पर छा गया। जेब से निकाली हुई डिबिया से अँगूठी लेकर जीवन सहसा तारा की उँगली में पहनाने लगा। अँगूठी का नगीना हरा कंच था। अँगूठी सुंदर थी और नगीना बड़ा था। पन्ना हरा होता है। अवश्य ही यह पन्ना था।

"यह तुम्हारे लिए है, तारा। शायद ज़रा ढीली है। कल कटवाकर ठीक कर दूँगा। बड़ी भली लग रही है। पहने रहो," जीवन ने कहा।

तारा ने अँगूठी की इस प्रेम-भेंट पर कोई आपत्ति न की। कभी अँगूठी को और कभी जीवन को वह ताकने लगी, फिर मुस्कुरा दी — वही अभिनयवाली मुस्कुराहट— कैलाश की सिखाई हुई मुस्कुराहट। जीवन निहाल हो गया। तारा ने हाथ फिर पानी में छोड़ दिया और पानी चर्र-चर्र फिर कटने लगा। तारा के सीने पर भी आरा चलने लगा। कैलाश याद आने लगा। वह सब बातें, पुरानी बातें याद आने लगीं — वह घड़ियाँ, वह घटनाएँ, वह उद्‌गार —

"तुम्हें किसी आदमी का भरोसा नहीं करना चाहिए," कैलाश ने एक दिन कहा था। तारा सोचने लगी: 'ऐसा उसने क्यों कहा होगा? और फिर तुरंत ही मुझसे स्टीअरिंग व्हील ले लिया था उसने। क्यों? कभी-कभी कैलाश अजीब हरकतें कर जाता था, अजीब बातें बोल जाता था। मानो मुझ पर उसकी पूरी सत्ता हो। मानो मैं उसकी हूँ.... उस रात— मिट्टी के रिलीज़ के अवसर पर — *इम्पीरिअल* थिएटर के बॉक्स के अँधेरे में — सहसा उसकी आँखें चमकने लगीं थीं। कितनी अद्‌भुत और प्यारी थी वह चमक! कितनी मदमाती सुगंध उठ रही थी उससे, उसके कपड़ों से, उसके शरीर से.... कैलाश के शरीर के गंध तारा को याद आई तो उसके शरीर में भरभरी होने लगी। 'कैसी मादक गंध थी कैलाश के शरीर की जो मैंने सेट पर या रिहर्सल के दौरान में कभी-कभी-अनायास ही सूँघी थी! और यह —जीवन के शरीर की गंध— क्यों खटकती है? हाँ और उस रात — पार्टीवाली रात को — क्या कहा था कैलाश ने?'

कैलाश ने कहा था: "मैंने तुम्हारी उस तरह हिफ़ाज़त की है जिस तरह कभी अपनी जान की भी नहीं की.... मैं तुम्हें जीवन महोत्रा से शादी नहीं करने दूँगा। नहीं करने दूँगा...."

तारा को पानी में, हाथ के पास, कैलाश की सूरत दिखाई देने लगी। "तो जाओ,"

वह कह रहा था, "मेरी बला से, जहन्नुम में जाओ —" कैलाश ने कुछ फेंककर मारा।

तारा चौंक पड़ी और उसके मुँह से हलकी-सी एक चीख़ निकल गई।

"क्या हुआ, तारा ?" जीवन ने साश्चर्य पूछा।

"कुछ नहीं," तारा ने सकपकाकर उत्तर दिया।

जीवन विस्मित आँखों से तारा को घूर रहा था। तारा से कुछ कहते बन न पड़ा। एक क्षण जीवन को ताकने के बाद वह मुस्कुरा दी। जीवन ने उसे बाँहों में कस लिया। तारा ने सर जीवन के सीने पर निढाल छोड़ दिया। जीवन खुश था। प्रकृति खुश थी। झील पर शिकारा खुश-खुश चला जा रहा था .... और तारा, पानी में हाथ लटकाए, जीवन के सीने पर सर को निढाल छोड़े, दूर, बहुत दूर, टीले पर स्थित शंकराचार्य के प्रख्यात प्राचीन मंदिर को ताक रही थी, अष्टकोणी उँची नींव और सीढ़ियों को ताक रही थी, जो बिना चूने-गारे के, केवल पत्थर पर पत्थर रखकर, बनाई गई थीं। सुबह गाइड ने तो यही कहा था। पत्थर पर पत्थर। पत्थर .... 'क्या फेंककर मारा था कैलाश ने ?' तारा ने सहसा सोचा। 'बड़े ज़ोर की आवाज़ हुई थी, मानो बाज़ूवाले शो-केस के काँच पर कोई चीज़ ज़ोर की लगी हो .... क्या फेंका था कैलाश ने ? क्या फेंका था ? काँच चकनाचूर हो गया था। क्या फेंककर मारा था ? क्या फेंका होगा ? ...

ओबेरॉय पॅलेस पहुँचकर जीवन मलहोत्रा ने कहा : "आओ, थोड़ी देर डाइनिंग रूम में बैठें, चाय पीएँगे।"

तारा ने कुछ न कहा और जीवन के साथ होटल के डाइनिंगरूम की ओर चलने लगी। वह ऐसे चल रही थी मानो नींद में चल रही हो।

डाइनिंग रूम में पहुँचते ही वहाँ उपस्थित लोगों ने हलके-से आपस में कहा : "तारा चौधरी !" लोगों के यह उद्‌गार तारा के कानों तक सहज ही पहुँच गए। इसकी वह आदी थी। बम्बई में भी जहाँ कहीं से वह गुज़रती थी, पास-पड़ोस के लोग भी इसी प्रकार "तारा चौधरी — तारा चौधरी —" के उद्‌गार निकाला करते थे। अंतर केवल इतना था कि सड़क चलते लोगों के उद्‌गार ऊँचे में हुआ करते थे और होटल के *लाऊँज* के अंदर के सभ्य समाज के उद्‌गार धीमे स्वर में थे।

तारा की ओर देखकर जीवन मुस्कुराया। "तुम्हें तो यहाँ पर भी लोग पहचान जाते हैं। मुझे नहीं पता था कि तुम इतनी मशहूर हो।"

तारा के चेहरे पर एक हलकी-सी मुस्कान उदित होकर रह गई परंतु उसके मुँह से कुछ न निकला। होटल के बैरे ने उन्हें टेबल दिखाया। दोनों बैठ गए। साढ़े छै बज रहे थे। ठंढ हो रही थी।

"चाय लाओ," जीवन ने कहा।

"मैं कॉफ़ी लूँगी।"

"अच्छा। देखो, एक चाय और एक कॉफ़ी, और पेस्ट्री वग़ैरह भी ले आओ।"

"जी, हुज़ूर," कहकर बैरा चला गया।

जीवन ने तारा की ओर देखा। वह कुरसीपर पीछे को टिकी बैठी थी और आँखें मूँदे हुए थी।

"थक गईं?"

तारा ने आँखें मूँदे हुए ही सर हिलाकर हाँ जताया।

सहसा तारा के पीछे से आते हुए व्यक्ति को देखकर जीवन उठ खड़ा हुआ। "हलो, शर्मा!" आगे हाथ बढ़ाते हुए उसने सहर्ष कहा।

"हलो!" शर्मा ने हाथ मिलाया। "तुम कब आए कश्मीर?"

"कल। कल दोपहर को।"

"प्लेन से आए?"

"नहीं, कार से। पठानकोट, जम्मू होते हुए आए हैं। श्रीनगर कल ही पहुँचे — कल सुबह।"

"कहाँ ठहरे हो?"

"यहीं, इसी होटल में। और तुम?"

"मैं हाउस बोट में ठहरा हूँ। *नगीन* लेक पर एक छोटी-सी बोट ले रखी है। वहीं पर हूँ।"

"अकेले हो या भाभी भी आई हैं?"

"हाँ, वह भी साथ हैं," शर्मा ने कहा और तारा की ओर देखने लगा।

तारा ने आँखें खोल दी थीं और सीधी होकर बैठ गई थी।

जीवन ने कहा: "यह हैं तारा चौधरी, और यह मेरे दोस्त शर्मा — मेरे *क्लास-फ़ेलो* रह चुके हैं, और अब दिल्ली में *हिस्ट्री* के प्रोफ़ेसर हैं।"

तारा और शर्मा ने एक दूसरे को सविनय अभिवादन किया। बैरा चाय, कॉफ़ी लेकर आया।

"बैठो न, शर्मा। बॉय, एक कप और ले आओ।"

"बड़ी ख़ुशी हुई आप से मिलकर, मिस चौधरी। *मिट्टी* फ़िल्म में तो आप को देख चुका था पर साक्षात् देखने का सौभाग्य मुझे आज ही प्राप्त हुआ है।"

"मुझे भी ख़ुशी हुई आप से मिलकर," तारा ने मुस्कुराकर कहा।

"आप भी यहीं ठहरी हुई हैं?"

"जी।"

"फ़िल्म की शूटिंग के सिलसिले में आई हैं आप या योंही सैर के लिए?"

जीवन ने कहा: "तारा मेरे साथ आई हैं, बम्बई से। यह मेरी मंगेतर हैं।"

शर्मा की आँखें विस्मय से फट पड़ीं।
जीवन सगर्व मुस्कुरा रहा था।
तारा चुप-चुप कॉफ़ी बना रही थी।
शर्मा ने कहा : "ओह ! तब तो बधाई है आप दोनों को ! "
जीवन और तारा मुस्कुरा दिए। तारा कॉफ़ी पीने लगी। जीवन और शर्मा भी चाय पी रहे थे।
थोड़ी देर बाद शर्मा ने कहा : "आप शायद पहली बार आई हैं कश्मीर ? "
"जी हाँ।"
"और तुम, मलहोत्रा ? "
"तीसरी बार।"
"आपको कश्मीर कैसा पसंद आया, मिस चौधरी ? "
"सुंदर है।"
"सुंदर है या बहुत सुंदर है ? "
तारा मुस्कुराई। "बहुत सुंदर है," उसने कहा।
शर्मा ने संतोष की साँस लेकर कहा : "अजी कश्मीर की सुंदरता के क्या कहने ! मैं हर साल गर्मियों की छुट्टियों में आ जाता हूँ यहाँ। कश्मीर के बाद और कोई पहाड़ नहीं भाता। कश्मीर की छटा ही न्यारी है। मुझे याद है कश्मीर की प्रशंसा करते हुए पंडित नेहरू ने कहीं लिखा है : 'एक ऐसी अनुपम सुंदरी के समान, जिसका सौंदर्य विशिष्ट व्यक्तित्वरहित व कामेच्छा के परे हो, कश्मीर का सौंदर्य है, और इसके मनोहर झील, पेड़, घाटियाँ, सरिताएँ ऐसे ही सौंदर्य से ओतप्रोत हैं।' "
जीवन ने कहा : "अहा, कितना बढ़िया कहा है ! फिर तो सुनाओ।"
शर्मा वाक्य दुहराने लगा और जीवन सोच रहा था कि सच है — कश्मीर ऐसी ही अनुपम सुंदरी के समान है जो इतनी अधिक सुंदर है कि उसे देखने से इच्छा नहीं जाग्रत होती, उसे तो देखने मात्र से ही समाधान हो जाता है, आत्म-तृप्ति हो जाती है। कश्मीर ऐसी ही अद्वितीय रूपवती के समान है, बिलकुल तारा के समान है, और तारा का सौंदर्य भी बिलकुल कश्मीर के सौंदर्य के समान निर्मल और स्वच्छ है, अनुपम और अलौकिक है....
तारा पूछ रही थी : "ऐसी अनुपम सुंदरियाँ कहीं होती हैं ? "
"क्यों नहीं होतीं ? " शर्मा ने कहा।
"ज़रूर होती हैं," जीवन ने कहा, फिर तारा की आँखों में ताककर बोला : "एक तो इस वक़्त हमारे साथ ही बैठी है — अनुपम सुंदरी ! "
"बिलकुल सत्य कहा तुमने," शर्मा ने समर्थन किया।
तारा लजा गई ; फिर मुस्कुराकर उठी और क्षमा माँगकर डाइनिंगरूम के एक ओर जाने लगी।

जीवन बराबर तारा को ताकता रहा जब तक कि वह लेडीज़ टॉयलेट के अंदर जाकर दृष्टि से अोझल न हो गई।

शर्मा ने तब कहा : "भई, मलहोत्रा, सगाई पर तो तुमने याद न किया, पर अब कहीं अपनी शादी पर न भूल जाना हमें।"

"नहीं, यार; शादी पर कैसे भूलूँगा।"

"कब है शादी ?"

"मैं चाहता तो हूँ कि इसी हफ़्ते हो जाए।"

"अच्छा ! क्या यहीं श्रीनगर में शादी करने का इरादा है ?"

"हाँ, इरादा तो कुछ ऐसा ही था — मेरा मतलब — है।"

"तो फिर ? देर किस बात की है ?"

"तारा ने भी तो हाँ करना चाहिए।"

"क्या कहती हैं ? शादी अभी नहीं करना चाहतीं ?"

"कुछ कहा नहीं बराबर उसने। अब तक जिसका स्वतंत्र जीवन रहा हो वह यकायक अपनी स्वतंत्रता खो बैठने को जल्दी तैय्यार कैसे हो सकती हैं ? पर हो जाएगी। कल सुबह तुम भाभी को लाना तारा से मिलाने।"

शर्मा ने कहा : "अच्छा, ज़रूर।"

तारा टॉयलेट से निकलकर बाहर आई और रास्ते में काउंटर पर जाकर एक परचे पर कुछ लिखने लगी फिर परचा बैरे को देकर टेबल की ओर आने लगी।

"क्या बात है ?" जीवन ने पूछा। "क्या लिख के दिया छोकरे को ?"

"टेलीफ़ोन नम्बर," तारा ने बैठते हुए कहा।

"किसका ?"

"अपना।"

"अपना ?"

"हाँ। बम्बई अपने घर ट्रंक कॉल करना चाहती हूँ।"

"क्यों ?"

"आने से पहले बिजली का बिल देने भूल गई। दो-दो रिमाइंडर आ चुके थे। कहीं बिजली न काट दें घर की। श्यामू से कह दूँगी। वह दे देगा।"

जीवन मुस्कुरा रहा था। अपने मन में वह सोच रहा था कि शादी के बाद तारा बम्बई लौटने ही कब वाली है जो उसे बम्बई के घर की फ़िक्र पड़ी हुई है। अब तो उसका घर दिल्ली में होगा, बम्बई में नहीं। बम्बईवाला फ़्लैट उठा दिया जाएगा। तारा को अब वह बम्बई न जाने देगा, सिनेमा में काम न करने देगा, कभी नहीं। अब तारा उसके घर की रानी बनकर उसका घर चलाएगी, उसके बच्चों की माँ बनेगी।

शर्मा अपनी चाँद पर हाथ फेर रहा था। ठंडी चाँद पर गर्म हथेली अच्छी लग रही थी। तारा को रह-रहकर वह ताकता जा रहा था।

तारा के मन ने कहा कि उसकी अनुपस्थिति में अवश्य ही दोनों में बहुतकुछ बातचीत हुई है और जीवन ने बात बढ़ा-चढ़ाकर ही कही होगी। तारा को अटपटा-सा लगा, सोचने लगी कहाँ देखे, बात करने के लिए विषय ढूँढने लगी....थोड़ी देर बाद चुप्पी भंग करते हुए उसने कहा : "कश्मीर का क्या अर्थ हुआ, शर्माजी ?"

शर्मा ने चाँद पर से हाथ हटाते हुए कहा : "बड़ा इन्टेलिजेंट प्रश्न पूछा आपने। कश्मीर का नाम पहले कश्यपमीर था।"

"कश्यपमीर ? उसका क्या अर्थ हुआ ?"

"बड़ा पुराना है कश्मीर का इतिहास। प्राचीन काल में, जहाँ अब कश्मीर की घाटी है वहाँ, सतिसार नामक एक विशाल झील थी। झील का नाम सती यानी पार्वती के नाम पर ही पड़ा था, क्योंकि इस झील के किनारे के प्रदेश में ही पार्वती रहा करती थी और इसी झील पर नौकाविहार किया करती थी। कहते हैं एक समय राक्षसों ने झील पर अपना आधिपत्य जमा लिया और जलोद्भव राक्षस के नेतृत्व में इतना उपद्रव किया कि सर्वत्र हाहाकार मच गया। वह क्रूर राक्षस मानव का भक्षण करने लगे। तब एक दिन कश्यप मुनि का वहाँ आगमन हुआ। कश्यप मुनि ने उन दुष्टों के अत्याचार से मानव को मुक्त करने के लिए हज़ार वर्ष तक तपस्या की। अंत में, उनकी तपस्या से प्रसन्न होकर, देवी शरीका, हरी यानी मैना के रूप में चोंच में एक कंकड़ दबाए, प्रकट हुईं, और मैना ने कंकड़ ताककर जलोद्भव पर गिराया। कंकड़ गिरते ही पहाड़ बन गया और जलोद्भव उसके नीचे दबकर मर गया। वही पहाड़ आज भी *हरि पर्वत* के नाम से प्रख्यात है। जलोद्भव के नाश के बाद सारे राक्षस भयभीत हो भाग निकले और लोगों ने संतोष की साँस ली। कश्यप मुनि ने तब झील का पानी बारामुला की ढाल पर बहाकर झील को रिक्त किया और वहाँ बस्तियाँ आबाद कीं। तभी से यह सारा प्रदेश कश्यप मुनि के नाम पर ही कश्यपमीर कहाया, जो आगे चलकर, संक्षिप्त में, कश्मीर हुआ।"

तारा ने कहा : "सुंदर कथा है।"

"कथा नहीं, मिस चौधरी," शर्मा ने सावेश कहा, "यह कश्मीर का इतिहास है—पुरातन इतिहास।"

"इतिहास नहीं, किंवदंती हो सकती है," तारा ने कहा।

"किंवदंतियाँ भी इतिहास ही हैं।"

जीवन ने साश्चर्य कहा: "तुम इतिहास के प्रोफ़ेसर होकर किंवदंतियों को इतिहास कहते हो, शर्मा ?"

शर्मा हँसा। "जो लिखा गया है उसे लोग इतिहास कहते हैं, और जो लिखित नहीं है, केवल मुखाग्र है, उसे किंवदंतियाँ। किंवदंतियाँ भी इतिहास का एक रूप हैं, अंग हैं। कश्मीर का ही क्यों, सारे विश्व का बहुत प्राचीन इतिहास इन्हीं किंवदंतियों में बद्ध है और इन्हीं किंवदंतियों द्वारा हमें प्राप्त होता है। किंवदंतियों में हम सुनते

हैं कि कश्मीर का प्रदेश पहले सतिसार झील था। आपको सहज ही इस पर विश्वास नहीं होता, पर यहाँ की पहाड़ियों और घाटियों पर — दस-दस, बारह-बारह हज़ार फ़ुट ऊँचाई पर — पाए गए सीप, शंख, मूँगों और अन्य चिन्हों के द्वारा भूगर्भशास्त्रियों ने आज यह सत्य प्रमाणित कर दिया है कि कश्मीर वास्तव में कभी जलप्रदेश था।"

शर्मा के वक्तव्य से जीवन और तारा प्रभावित हुए।

शर्मा ने फिर कहना आरंभ किया : "बड़ा पुराना है कश्मीर का इतिहास ! क्योंकि कश्मीर बहुत पुराना प्रदेश है। प्राचीन काल में यही केकय देश कहाता था। कैकेयी यहीं की थी। यही गंधर्व देश था। पौराणिक काल में देवतागण यहीं बसते थे। अद्भुत है यह प्रदेश, यह देवस्थान, यह तपोभूमि। तभी तो हम कश्मीर को नहीं छोड़ सकते। यह सदा हमारा रहा है। लाखों वर्षों से हिंदुओं की यह धर्मपीठ रहा है। हिंदुओं के बाद इस प्रदेश पर बौद्धों का वर्चस्व रहा। फिर, बहुत बाद में, चार्क, मुग़ल, पठानों और सिखों ने यहाँ शासन किया। तातारों ने चौदहवीं शताब्दी में कश्मीर पर जो ज़ुल्म किए वह जगविख्यात हैं। तलवार की नोक और आग की लपटों से हिंदुओं पर अत्याचार किया गया, उन्हें मौत के घाट उतारा गया, उन्हें धर्मभ्रष्ट करके मुसलमान बनाया गया। यहाँ के जितने प्राचीन सुंदर-सुंदर मंदिर तथा अन्य इमारतें, जो आज नकटी-बूची और टूटी-टाटी दिखाई देती हैं, यह सब सुलतान सिकंदर की राक्षसी कारस्थानी है — जो रोम के नीरो की तरह ही क्रूर व हिंसक था। सत्रहवीं शताब्दी में औरंगज़ेब के अत्याचारों के कारण भी काफ़ी हिंदुओं को इसलाम धर्म ग्रहण करना पड़ा।"

जीवन ने कहा : "में अब समझा। तभी मैं सोचा करता था कि कश्मीर में मुसलमान कैसे आ गए। यानी यहाँ भी हिंदुओं को मार-मारकर मुसलमान बनाया गया है ! अच्छा, यह तो बताओ, यहाँ के लोगों के नाकनक्शे, ख़ासकर यहाँ की औरतें इतनी खूबसूरत क्यों हैं ? किसी-किसी की शकल तो बिलकुल ग्रीक की तरह है।"

शर्मा ने कहा : "सबों ने रौंदा है इस कश्मीर को। कई ख़ून आकर मिले हैं यहाँ। विभिन्न जातियों के सम्मिश्रण से संतान सदा ही सुंदर और बलवान उत्पन्न होती हैं — यह शास्त्रोक्त सत्य है। अब रही यूनानी साम्यता की बात, सो तो है ही। पोरस से युद्ध के बाद जब सिकंदर भारत से लौट रहा था तो उसके बहुत से सैनिक कश्मीर की युवतियों के सौंदर्य पर रीझकर यहीं बस गए।"

सहसा जीवन ने पूछा : "शेख़ अब्दुला के क्या हाल हैं ?"

"पड़ा है जेल में," शर्मा ने कहा। "मैं तो कहता हूँ नेहरू ने बड़ी भूल की। बँटवारे के बाद ही सारे पंजाबी व सिंधी शरणार्थियों को कश्मीर में ला बसाना था।"

तारा ने देखा शर्मा अब राजकारण पर बहस छेड़ने चला है। इतिहास पर तो जीवन चुप रह गया पर राजकारण के विषय में वह अपनी टाँग अड़ाए बिना न रहेगा।

ठंढ बढ़ रही थी। दिन भर की सैर से तारा थक गई थी। वह सोचने लगी अपने कमरे के एकान्त में थोड़ी देर लेट रहेगी। वह चट उठ गई।

"अच्छा, आप लोग बैठिए, मैं ज़रा अपने कमरे में चलूँ। बड़ी खुशी हुई आपसे बात करके, शर्माजी," तारा ने कहा।

"तो कल मुलाक़ात होगी आपसे?" शर्मा ने पूछा।

उत्तर जीवन ने दिया: "हाँ, कल सवेरे तुम भाभी को ला रहे हो न? ऐसा करो, ब्रेकफ़ास्ट हमारे ही साथ खाना।"

तारा चली गई। चलकर अपने कमरे में आई। कमरा ठंढा था। पर्स टेबल पर डालकर वह बिस्तरे पर गिर पड़ी। ऊपर से उसने कम्बल खींच लिया और आँखें बंद कर लीं। इसी समय बाज़ू रखा हुआ टेलीफ़ोन बजा। तारा ने रिसीवर उठाया। होटल का टेलीफ़ोन ऑपरेटर बोल रहा था।

"बम्बई लाइन बिगड़ी हुई है, मैडम।"

"कब तक सुधरेगी?" तारा ने पूछा।

"पता नहीं। कॉल का क्या करूँ? कैंसल कर दूँ?"

"नहीं, कॉल चालू रखो — मुमकिन है रात में लाइन ठीक हो जाए।"

"जी बहोत अच्छा।"

तारा टेलीफ़ोन रखकर फिर लेट गई। आँखें बंद करते ही कश्मीर के अनेक सुहाने दृश्य, जो उसने पिछले तीन-चार दिनों में देखे थे, उसकी आँखों के सामने झूलने लगे। कश्मीर वास्तव में सुंदर था। ऐसे सुंदर प्रदेश में अकेले भ्रमण करने में कोई आनंद नहीं आता। साथ में अगर कोई मित्र हो, या वह हो जिससे मन हिलगा हुआ हो, तो बात बनती है। जीवन का साथ नहीं के बराबर था। अजीब है जीवन! सारा दिन बकझक करता रहता है। कितना बोलता है! जब देखो प्रशंसा के पुल बाँधे जाता है, तरह-तरह के उपहार देता रहता है। कितना अक्खड़ है! कितना औसती और सामान्य प्रकार का पुरुष है। कैलाश से कितना भिन्न है! कैलाश कलाकार है। सातवें आसमान पर उसके पाँव रहते हैं। बादलों और हवाओं में उसके विचार घूमते हैं। अगर आज वह यहाँ होता तो कितना मज़ा आता! झील पर शिकारे में सैर करते! दो-चार वाक्य तो उसके मुँह से अवश्य ही ऐसे निकलते कि उसका मुँह चूमने को जी करता.... शर्मा की बातें जीवन बच्चे की तरह चुप सुनता रहा। कैलाश होता तो शर्मा की बोलती बंद कर देता। प्रोफ़ेसर साहब अपना सारा इतिहास भूल जाते। परंतु कैलाश नहीं था कश्मीर में। जीवन था। जीवन.... जीवन उससे प्रेम करता है, बहुत प्रेम करता है। रास्ते में — भ्रमण में — कार के अंदर — डाकबंगलों में — उसने कोई बेजा हरकत नहीं की। संभव है तारा पर अच्छा प्रभाव डालने के लिए ही उसने अपना आचरण व बर्ताव ठीक रखा हो। संभव है वह अच्छा ही हो। संभव है न भी हो। पुरुषों के बारे में कुछ भी कहना असंभव है। बचपन में

देखा था उसे। बचपन में जानती थी उसे। तब से तो सालों बीत गए। अब जीवन वही थोड़े होगा! ऊपर से तो वैसा ही लगता है, पर अंदर से न जाने कैसा हो। अच्छा ही होगा। शादी की बात लिए बैठा है। वह अब क्या करेगी? शादी तो करनी ही है। फ़िल्म से तो जीवन परिपूर्ण नहीं होता। फिर जीवन उसका जाना-पहचाना है, अच्छा है, नेक है, सीधा है, पति जैसा चाहिए वैसा ही है। फिर वह तारा को इतना चाहता भी तो है। और तारा? शायद वह भी उसे पसंद करने लगी है। तारा यह नहीं कह सकती कि वह जीवन को चाहती है या नहीं। शायद चाहती है। शायद नहीं चाहती। चाहने लगेगी — शादी के बाद चाहने लगेगी....

शर्मा ने वह 'अनुपम सुंदरी' की क्या बात कही थी? क्या तारा का सौंदर्य कश्मीर की तरह ही है, जो पुरुषों के मन में इच्छा पैदा नहीं करता? क्या तारा का यह सौंदर्य ही बाधक हुआ और कैलाश के मन में उसके प्रति इच्छा पैदा न हो पाई? कैलाश को वह अच्छी लगती है, अवश्य लगती है, परंतु उसके मन में इच्छा नहीं जाग्रत होती। इच्छा न हो, परंतु प्रेम तो वह कर सकता था। वह प्रेम भी तो नहीं करता है। या करता है? कुछ नहीं पता चलता। जीवन प्रेम करता है तो उसके माथे पर लिखा हुआ है कि वह प्रेम करता है। मगर कैलाश के माथे पर कभी कुछ नहीं लिखा दिखाई दिया.... तारा का मन रो उठा। मन अपनी हार पर रो उठा।

फिर तारा ने सोचा, जीवन से वह शादी तो कर लेगी पर कैलाश को अगर वह कभी न भूल पाई तो? तो क्या होगा? तन से वह जीवन की होगी पर मन से तो वह कैलाश की ही रहेगी। नहीं, ऐसा नहीं होगा। जीवन से व्याह करके वह कैलाश को मन से भुला देगी, भुलाने का प्रयत्न करेगी...काश एक बार कैलाश उसे प्यार करता, बाँहों में लेकर अच्छी तरह प्यार करता! काश एक बार एक रात, एक दिन-रात वह कैलाश के साथ बिता सकती! काश एक बार वह अपने को कैलाश को अर्पण कर सकती! काश एक बार कैलाश उसे अपनाता! .... यह कैसे विचार उठ रहे हैं! गंदे विचार हैं — वेश्याओं के-से विचार हैं। नहीं, इसमें गंदगी कैसी? और वेश्यापन कैसा? यही तो सत्य है। वास्तव में क्या तारा ने मन से अपने को कैलाश को अर्पण नहीं किया हुआ है? एक अरसे से वह उसकी हो चुकी है। उसे अपना मान बैठी है। वह अब जो जीवन से व्याह करने चली है तो वह पर-पुरुषगाभिनी बनने चली है और यह बात गंदी है — वेश्यापन इसमें है। उफ़! तारा का मस्तिष्क चकराने लगा। वह क्या करे? वह क्या न करे? ....बंद पपोटों के अंदर, आँखों के आगे, अँधेरा छा गया।

दरवाज़े की खटखटाहट से तारा की आँख खुली। कमरे में अँधेरा था। "कौन?" उसने पूछा।

"मैं। क्या कर रही हो?" जीवन की आवाज़ थी। "खाने को नहीं चलना है!"

तारा ने टेबल लैम्प जलाकर हाथ की घड़ी देखी। साढ़े-आठ बज रहे थे। कदाचित् उसे झपकी आ गई थी। वह लगभग एक घंटा सोई होगी। "दस मिनट ठहर जाओ, फिर चलती हूँ।"

"तैयार होकर मेरे कमरे में आ जाना। मैं इंतज़ार कर रहा हूँ।"

"अच्छा।"

जीवन मलहोत्रा चला गया। उसका कमरा तारा के कमरे से लगा हुआ ही था।

तारा चट बिस्तर से उठ बैठी। साड़ी निकालकर उसने बिस्तर पर डाली और बाथरूम में जाकर वॉशबेसिन में मुँह-हाथ धोने लगी। थकान बहुत लग रही थी। नींद अभी तक आँखों में भरी हुई थी। सुस्ती दूर करने का एक ही उपाय था। तारा ने टब की ओर देखा, फिर गर्म और ठंडे पानी के नल खोल दिए। नलों से पानी के सोते ज़ोरों से फूट निकले और टब में पानी रेलपेल होने लगा। कपड़े छोड़ तारा टब में उतर पड़ी।

तैयार होकर जब तारा अपने कमरे से बाहर निकली तो उसे लगा नया दिन हुआ है। परंतु लॉबी की खिड़कियों के बाहर अँधेरा देखकर उसे तुरंत ही भान हो गया कि नया दिन नहीं, उसी दिन की रात शुरू हुई है। लॉबी में चहल-पहल थी। अच्छा ठंढा हो रहा था। तारा का मन हलका था, शांत था, किंचित् प्रफुल्लित भी था। नींद और स्नान ने उसके मन और शरीर थकान और पीड़ा मानो दूर कर दी। बड़ा अच्छा हो रहा था। कश्मीर वास्तव में अच्छा था। और यह कश्मीर की शाम थी। नीचे डाइनिंगरूम में ऑरकेस्ट्रा बजने की आवाज़ आ रही थी। तारा को भूख लग आई। जीवन के दरवाज़े पर दस्तक देते ही वह दरवाज़ा खोलकर बाहर निकल आया।

"बड़ी देर कर दीं। क्या कर रही थीं?"

"नहा रही थी।"

"इतनी देर तक?"

"तुम जब आए थे तो मैं सोई हुई थी।"

"अच्छा! तभी। बड़ी प्यारी लग रही हो!"

तारा मुस्कुराई।

जीवन ने दरवाज़े का ताला बंद किया और तारा को साथ लिए चलन लगा। लॉबी पार करके वह दोनों ज़ीने पर आए, फिर ज़ीना उतरकर नीचेवाली लॉबी में।

लॉबी में जीवन के साथ चलते हुए तारा को आज सहसा लगा कि वह अपने पति के साथ चल रही है; किन्तु तुरंत ही वह यह भी भाँप गई कि उसका यह एहसास उसके मस्तिष्क का विकार है, मन का नहीं।

इसी समय चलते-चलते जीवन ने तारा का हाथ अपने हाथ लिया। "जानती हो? —मैं सदा यही सोचा करता था कि एक रोज़ तुम्हें लेकर कश्मीर आऊँगा और यहीं —" तारा ने जीवन की ओर देखा। जीवन ने मुस्कुराकर कहा: "और यहीं हम अपना *हनीमून* मनाएँगे।"

तारा लजा गई।

"मैं तुम्हें बहुत चाहता हूँ, तारा!"

तारा ने जीवन के हाथ को सस्नेह दबाया। हाथ से हाथ को आश्वासन मिला। आज जीवन मलहोत्रा संसार में सबसे अधिक सुखी जीव था।

डाइनिंगरूम में लोग खा रहे थे। तारा के पहुँचते ही लोगों की आँखें उसकी ओर आकर्षित हो गईं। रूम खचाखच भरा था। तारा और जीवन अपने टेबल पर जा बैठे और तारा ने मेनू चुना। तारा ने देखा, बीच हॉल में एक युवती के साथ बैठे खाता हुआ एक सरदार उसे घूर रहा था। यह सरदार शाम को चाय पर भी घूर रहा था। युवती कोई और थी। कल रात भी खाने पर उसने यही हरकत की थी। कल रात भी उसके साथ एक युवती थी, एक ऐंग्लो-इंडिअन युवती थी। अजीब आदमी है! नित नई लड़कियाँ लेकर आता है। कैसे आँखें फाड़-फाड़कर घूरे जा रहा है। तारा ने उसकी ओर देखना ही छोड़ दिया और एकाग्रचित्त होकर खाने लगी। *मिक्स्ड ग्रिल* अत्यंत स्वादिष्ट बना था।

"क्या सोच रहे हो?" तारा ने पूछा।

जीवन ने रसयुक्त नेत्रों से तारा की ओर देखा। "पुरानी बातें — अमृतसर की बातें — तुम्हें याद हैं?"

"कुछ-कुछ।"

"जैसे?"

"जैसे —" वह अब क्या उत्तर देती? सभी कुछ तो याद था। "जैसे तुम्हारे घर चोरी हुई थी," वह बोली।

"और छोटी बुआ की शादी याद है?"

"हाँ। मेरठ से बारात आई थी।"

"तुम उस रात गुलाबी दुपट्टा पहने हुए थीं।"

"मुझे नहीं याद।"

"मुझे याद है," जीवन ने तारा की आँखों में देखते हुए कहा।

तारा लजा गई। वास्तव में तारा को सब याद था — अपना गुलाबी दुपट्टा भी याद था और छत पर रात के अँधेरे में जीवन का उसके गुलाबी दुपट्टे को थामकर सहसा उसे बाँहों में भींच लेना भी याद था। उस रात को, जब बाहर मण्डप में शादी के बाजे बज रहे थे, दूल्हा घोड़े पर चढ़ा फाटक पर पहुँचा हुआ था, घर की अँधेरी छत पर खड़े बच्चे और स्त्रियाँ बारात देख रहे थे, तब अकस्मात् जीवन ने, मुंडेर

की ओट में, तारा को बाँहों में भींचकर चूम लिया था — गाल पर। तारा को स्पष्ट याद है। वह घटना वह कभी न भूली। वह चुम्बन वह कभी न भुला सकी — क्योंकि वह उसका प्रथम चुम्बन था।

जीवन शरारत भरी निगांह से एकटक तारा को ताक रहा था। तारने टेबल के नीचे जीवन के टख़ने पर अपने जूते की नोक ज़ोरों से गड़ाई।

"क्यों घूर रहे हो?" उसने कहा। "खाना खाओ।"

जीवन हँस पड़ा। थोड़ी देर बाद गम्भीर होकर उसने कहा : "तुमने फिर क्या सोचा?"

"काहेके बारे में?" तारा ने बात न समझने के ढंग पर कहा।

"अपनी शादी के बारे में क्या सोचा?"

"कुछ नहीं सोचा।"

"मैंने सोचा है।"

"मैं जानती हूँ।"

"इसी हफ़्ते करेंगे।"

तारा चुप रही। चुप खाए जा रही थी।

"आज कौन दिन है?" जीवन ने पूछा।

"२ तारीख़ है।"

"आज शनिवार है। अगले इतवार को शादी ठीक रहेगी।"

"कब — कल? इतनी जल्दी?"

"कल नहीं, उसके बादवाले इतवार को, यानी १० मई को।"

"कहाँ?" तारा ने बिस्मित स्वर में पूछा।

"यहीं। श्रीनगर में।"

"इतनी जल्दी क्या है?"

"देर भी क्यों हो?"

तारा ने प्लेट की ओर देखते हुए ही पूछा : "शादी के बाद फिर क्या होगा?"

"शादी के बाद हम लोग एक हफ़्ता और यहीं रहेंगे — हनीमून मनाएँगे।"

"और फिर?"

"फिर तुम मेरे साथ दिल्ली चलकर रहोगी।"

"और बम्बई कब जाऊँगी?"

"कभी नहीं। शादी के बाद तुम सिनेमा में काम नहीं करोगी। मेरी रानी बनकर दिल्ली में रहोगी।"

तारा चुप हो गई। उसका मन यह सोचकर रो उठा कि वह जो बम्बई छोड़कर जीवन के साथ आई है तो सदा के लिए आई है, अब वह कभी बम्बई न लौट पाएगी।

टेबल के नीचे जीवन का जूते भरा पाँव तारा के जूते भरे पाँव को चूम रहा था।

१६

शाम को कोई ७ बजा होगा। सूर्यास्त हो चुका था। पश्चिम की ओर आकाश अभी तक गुलाबी था। पूर्व को कालिख फैल रही थी। धरती तपी हुई थी और समुद्र से गर्म-गर्म भाँप उठ रही थी। मई के सूर्य की तपन से समस्त वातावरण में अभी तक दाह था। भारत के और स्थानों पर तो इस समय झुलसती लू चला करती है जिसके कारण लोगबाग खस की गीली टट्टियों के अंदर से बाहर नहीं निकला करते। अंदर बड़ा आराम रहता है। गर्मियों में ठंढक सदा ही भायी है। परंतु बम्बई की यह गीली गर्मी, क्षय के बारीक दाह की तरह, त्वचा और माँस के भी अंदर पहुँचकर हड्डी-पिंजर तक को हलके-हलके तपाती रहती है और समस्त शरीर से हलके-हलके पसीना निकला करता है। इस गीली भाँप से तो झुलसती लू भली। लू से शरीर जलता है पर भाँप में तो दम घुटता है।

कैलाश सिन्हा इसी भाँप में नहाता हुआ पिछले तीन घंटे से अपने ड्रॉइंगरूम में सोफ़े पर बैठा हुआ था और सामने मेज़ पर पड़े हुए *फ़िल्मफ़ेअर* के मुखपृष्ठ को, जिस पर तारा का रंगीन फ़ोटो छपा हुआ था, सतत ताक रहा था। जब से तारा गई थी — यानी पिछले आठ-नौ दिनों से — उसका मन उचाट रहने लगा था। किसी बात में मन नहीं लगता था। कोई बात नहीं सुहाती थी। *ज्वालामुखी* चित्र के रिलीज़ की जल्दी थी, सो वह किसी प्रकार धुन में काम किए जा रहा था। सारा-सारा वक्त एडिटिंग-रूम में बैठे फ़िल्म को एडिट किया करता, काम की लगन में तारा को भूलने का प्रयत्न करता, किसी हद तक भूलने में सफल भी होता, परंतु उसकी उँगलियों के बीच फिसलती हुई फ़िल्म पर तथा मूवीओला के काँच पर अंकित तारा के बड़े-बड़े क्लोज़अप जब आने लगते, और जब लाउड स्पीकर तारा की सुरीली आवाज़ से झंकृत हो उठता, तो कैलाश का कलेजा चर्र-चर्र फटने लगता, हृदय में टीसें उठने लगतीं और आँखों के आगे अँधेरा छा जाता। फिर उसका जी काम में न लगता। तारा की याद उसे विव्हल कर देती। फिर भी, न जाने कैसे, उसने *ज्वालामुखी* का संपादन लगभग समाप्त कर दिया था। तारा के जाने के बाद से रात-दिन वह एडिटिंग-रूम में ही बना रहा, घर कभी-कभी आता। न खाने की सुध थी, न नहाने की, न सोने की। सारा समय या तो वह काम करता या सुन्न बैठा हुआ तारा की याद में खो जाता।

आज वह सुबह से ही सुन्न था। सुबह से ही उसे तारा की याद घेरे हुए थी। सुबह से ही उसका शरीर गर्म था। रात वह बराबर सोया भी नहीं। आज वह काम पर भी नहीं गया। कल भी नहीं गया था। कल वह बहुत थका हुआ था। उसने सोचा था घर पर बैठकर सुस्ता लेगा। परंतु कल वह घर पर जो रहा तो सारा दिन तारा का ख़याल उसे घेरे रहा। रात भी तारा की याद में कटी। आज सुबह जो उठा तो शरीर तपा हुआ था और मन बिलकुल उदास था। ऊपर से यह गीली गर्मी!

सोफ़े पर पड़े-पड़े कैलाश सिगरेट पी रहा था और तारा के चित्र को ताक रहा था। तारा को बम्बई छोड़े नौ दिन हो गए थे, आज नौवाँ दिन था। पार्टी के दूसरे ही दिन जीवन के साथ हवाई जहाज़ में बैठकर वह चली गई थी। बाद में श्यामू द्वारा पता चला था कि एक दिन दिल्ली ठहरेगी, फिर दिल्ली से कश्मीर जानेवाली थी — जीवन मलहोत्रा के साथ। इस समय वह कश्मीर में होगी — जीवन मलहोत्रा के साथ। जीवन ने तारा को घेर लिया है, एक पल भी उसे नहीं छोड़ता होगा, तारा से ब्याह करके ही दम लेगा। तारा जो बम्बई छोड़कर गई है तो अब कभी न लौटेगी। तारा को कैलाश ने गँवा दिया, सदा के लिए गँवा दिया! .... कैलाश के सीने पर मानो नौ मन का पत्थर रख कोई लोहे के घन से दनादन पीटे जा रहा था।

सारा दिन कैलाश का बुरा बीता। उसे मारने को मई की गीली गर्मी की काफ़ी थी, तिसपर तारा की याद! .... वह दिन दहाड़े लुट गया। दिल्ली से कम्बख़्त चील की तरह आया और चील की तरह झपट्टा मारकर ले गया उसकी तारा को। कैलाश अपनी ग़लती महसूस कर चुका था। वह जानता था उसने रबड़ को बहुत ताना है। तारा को खो देने का उसे बहुत ग़म था। उसपर उसकी मानहानि भी हुई थी। उसकी तारा को बाहर का एक व्यक्ति छीन ले गया। कैलाश का यह व्यक्तिगत अपमान हुआ था। कैलाश सौ-सौ बिच्छुओं के डंक से तिलमिला उठा था। तारा का विछोह दूभर हो गया।

थके हुए शरीर पर रात बहुत भारी नहीं होती; झपकी आ ही जाती है, आँख लग ही जाती है, रात किसी तरह कट ही जाती है, दिन भी किसी तरह कट जाता है। परंतु शाम का वह समय — जिसकी गणना न दिन में होती है रात में — वह कठिन समय, वह दो घंटे कांटे नहीं कटते, किसी तरह नहीं कटते, किसी तरह नहीं कट रहे थे। यह वह घड़ी थी जब वैराग्यवृत्ति प्रबल होती है। ऐसी ही घड़ियों में विछोह-ग्रसित प्रेमीगण आत्महत्या करते हैं।

कैलाश का जी समुद्र में फांदकर जान देने को करने लगा। उसे तैरना आता था, पर फिर भी वह डूबकर मर सकता था। उसने सोचा वह किनारे से दूर तैरता चला जाएगा, पश्चिम की ओर, क्षितिज की ओर, तब तक जब तक उसके हाथ-पाँव जवाब न दे दें। फिर डूबना आसान था। परंतु शिवाजी पार्क के बीच पर भीड़ थी। मरने के लिए वह जुहू बीच भी जा सकता था। वह स्थान निर्जन था। परंतु शरीर टूट रहा

था। आलस घेरे हुए था। तारा की याद और हृदय में उठती हुई टीसें उसे इस समय हिलने तक नह देंगी। तारा! ....तारा! .... उसकी प्राणेश्वरी तारा! जिसके बिना कुछ नहीं सुहाता। सफलता, महत्त्वाकांक्षा, पैसा, प्रतिभा—सब अर्थशून्य है, व्यर्थ है। तारा के बिना कुछ अच्छा नहीं लगता। सहसा उसने अनुभव किया कि उसकी प्रगति, उसकी सफलता, उसके आर्थिक तथा कलात्मक उत्थान के पीछे केवल काम की लगन ही न थी, उसकी साधना व महत्त्वकांक्षा ही न थीं, वरन् तारा के प्रति उसके हृदय का अदृश्य प्रेम भी था, तारा की प्रेरणा भी थी। और अब तारा न रही, उसकी प्रेरणा न रही, उसकी प्रेयसी न रही। वह अकेला रह गया। अपने संसार में अकेला रह गया, बिलकुल अकेला। उसका अकेलापन उसे डसने लगा। सब दुखों से उग्र अकेलेपन का दुख होता है। अन्य दुख असह्य हो सकते है परंतु अकेलेपन का दुख असह्य ही नहीं, घातक होता है। कैलाश का मन रो उठा। उसकी आत्मा रो उठी। उसकी आँखों में हलाहल छलछला उठा, जैसे, सुनते हैं, कभी समुद्र-मंथन के उपरांत छलछलाया था....

कैलाश विवेकशून्य व हतबुद्धि होकर बैठा था। शंकर ने लॉबी का दरवाज़ा कब खोला और रहमान व फ़्रांसिस ने कमरे में कब प्रवेश किया इसका उसे भान न हो पाया।

आते ही रहमान और फ़्रांसिस ने कमरे की जो दशा देखी तो दंग रह गए। कैलाश की दशा और भी चिंतनीय थी। सोफ़े पर बैठा हुआ वह सिगरेट पीए जा रहा था। राखदानी में सिगरेट के जले हुए छोटे-बड़े टुकड़ों का ढेर लगा हुआ था। कितनी सारी सिगरेटें फूँक डालीं। तारा की तसबीर पर उसकी टकटकी बँधी हुई थी। कैलाश के माथे पर पसीने की बूँदें चमक रही थीं; गाल, नाक, कनपटी और गर्दन गीली थीं; यद्यपि ऊपर पंखा चल रहा था। यह पसीना गर्मी के कारण नहीं हो सकता। कैलाश बीमार था। उसकी बढ़ी हुई दाढ़ी और उसकी तीव्र साँसें इसकी सूचक थीं।

"हलो, कैलाश," रहमान ने आगे बढ़ते हुए पुकारा।

कैलाश चौंक पड़ा। "हलो," उसने कहा। "आओ।"

"कैसी है तबीअत?"

फ़्रांसिस डिसूज़ा ने माथा छूते हुए पूछा "बुख़ार है क्या?"

कैलाश का माथा गर्म था।

कैलाश ने कहा: "यूँही—ज़रा हरारत हो गई है।"

"मौसम ख़राब है। पसीने में कभी हवा लग गई होगी।"

रहमान बोला: "ज़रा नब्ज़ देखूँ।" कैलाश का हाथ लेकर वह डॉक्टरों की तरह नब्ज़ देखने लगा। "अरे, यह बात है!"

"क्या बात है?" कैलाश ने लापरवाही के साथ पूछा।

"मेरी जान, यह मामूली हरारत नहीं, दिल की हरारत है। तुम्हारे दिल में

उछलकूद मची हुई है। तारा देवी की जुदाई में अगर दिल को इस क़दर बेचैनी है तो उन्हें एक तार न दे दो? सच कहता हूँ, कच्चे धागे से चले आएँगे सरकार बँधे।"

"यह क्या बेहूदा बातें लगा रखी हैं!" कैलाश ने ऊबकर कहा।

"मेरी क़सम खाके कहो, उसकी याद में नहीं तड़प रहे हो। अरे, मेरी जान, हम तो नब्ज़ देखके दिल का हाल बताते हैं। मगर, यार, यह बात समझ में नहीं आई कि जब तुम्हें इतना चाहती थी वह तो फिर तुम्हें ठुकराकर उस चण्डूल के साथ कश्मीर कैसी चली गई?"

"तुमसे किसने कहा कि वह मुझे चाहती थी?"

"अमाँ यार, तुम भी पूरे आँख के अंधे हो। जो सारी दुनिया को दिखाई देता था, तुम्हें नहीं दिखाई दिया? बेचारी हथेली पर दिल लिए तुम्हारे चक्कर काटा करती थी; और तुम हो कि कभी उसकी तरफ़ तवज्जह नहीं की। घर की मुर्ग़ी दाल बराबर।"

फ़्रांसिस ने कहा: "एक बार शादी का प्रस्ताव तो करना था!"

रहमान ने सहसा पूछा: "उस दिन वह अँगूठी लेकर गए थे। क्या किया उसका?"

कैलाश ने साश्चर्य रहमान की ओर देखा। "तुम्हें कैसे पता?"

"रसीद तो मेरे ही पास आई थी। क्या किया अँगूठी का?"

"मैंने नहीं दी अँगूठी उसे।"

रहमान तो सुनाने आया ही था। "बस यह तुम्हारी अकड़ ने ही तो मार डाला तुम्हें कैलाश," उसने सुनाया। "और उधर वह मलहोत्रा न जाने कहाँ से और कब गिद्ध की तरह टपक पड़ा और गिद्ध की तरह ही ले उड़ा तुम्हारी तारा को!"

फ़्रांसिस भी चुप न रह सका, बोला: "आखिर बेचारी कब तक इंतज़ार करती!"

रहमान ने फिर कहा: "सुनो, कैलाश, अभी तारा की शादी नहीं हुई होगी, हालाँकि वह मलहोत्रा का बच्चा जल्दी ज़रूर मचा रहा होगा। अपनी यह अकड़ छोड़कर अभी भी तार दे दो। मलहोत्रा को छोड़कर वह फ़ौरन तुम्हारे पास चली आएगी। लाऊँ, फ़ॉर्म लाऊँ तार का?"

अंतिम वाक्य रहमान ने हास्यास्पद ढंग से कहा था जो कैलाश को खल गया। तारा के प्रति उसकी एकनिष्ठ मनोभावना को ठेस लगी। उसे लगा मानो उसका असीम प्रेम मित्रों की बहस के कारण दूषित हुआ जा रहा है। उसका प्रेम उसकी निजी वस्तु है और इसकी चर्चा भरे बाज़ार नहीं होनी चाहिए। बौखलाकर वह बोल पड़ा: "अब बकवास बंद भी करोगे या तुम्हें धक्के देकर बाहर करूँ? शंकर।"

"जी साब," कहता हुआ नौकर फ़ौरन कमरे में दौड़ा आया।

रहमान हाज़िरजवाबी में कम न था। फ़ौरन ही उसने कहा: "एक ग्लास पानी ले आओ — ठंढा।"

शंकर पानी लेने चला गया।

कैलाश मुस्कुराने लगा।

फ़्रांसिस भी मुस्कुराया, फिर सहसा गम्भीर होकर बोला : "कैलाश, अब यह हाथ पर हाथ रखके घर में बैठना बहुत हो चुका। आज दो दिन से तुमने स्टूडिओ में क़दम नहीं रखा। ऐसे से कैसे काम चलेगा ?"

रहमान मौक़ातलब तो था ही, फ़ौरन शुरू हो गया : "जानते हो आज मई की ६ तारीख़ हो गई। १५ तारीख़ को अपना रिलीज़ है। सोचो तो कितने दिन बाक़ी रह गए ? मुश्किल से एक हफ़्ता। और तुमने अभी तक एडिटिंग नहीं ख़त्म की। कब बैकग्राउंड-म्युज़िक लोगे, कब कॉपीज़ प्रिंट होंगी, कब पिक्चर सेंसर कराओगे — मेरी समझ तो काम नहीं करती !"

"क़र्ज़ में तुम गले तक डूबे हुए हो, कैलाश," फ़्रांसिस ने समझाया। "रहमान कहता है, पूरे साढ़े-चार लाख का क़र्ज़ा है। हमारा सारा दारोमदार बस अब अपने इसी *ज्वालामुखी* पिक्चर पर है। मेरे मते पिक्चर बहुत बढ़िया बना है। पर तुमने अगर इसे एडिटिंग में विगाड़ दिया, या इसे बराबर फ़िनिशिंग टचेज़ न दिए, या कहीं यह बैकग्राउंड-म्युज़िक में मार खा गया तो, मुझे डर है, मामला चौपट हो जाएगा।"

रहमान ने कहा : "हाँ, कैलाश। तुम्हें पूरा-पूरा दिल लगाकर काम करना होगा, वरना मैं कहे देता हूँ, कहीं, *ज्वालामुखी* फ़ेल हो गया तो बस बेड़ा ही ग़र्क़ हो जाएगा — और — और — इसके ज़िम्मेदार सिर्फ़ तुम होगे। मैं जानता हूँ तुम्हारे दिल पर इस वक़्त क्या गुज़र रही होगी, पर काम तो करना ही होगा — या कहो तो चला जाऊँ कश्मीर ? मलहोत्रा तो मलहोत्रा, शैतान के भी चुंगल से निकाल लाऊँगा तुम्हारी तारा को। जाऊँ ?"

कैलाश कुछ कहने को था कि शंकर पानी का ग्लास लिए अंदर आया और इसी क्षण टेलीफ़ोन बज उठा।

रहमान टेलीफ़ोन की प्रतीक्षा कर ही रहा था। सलमा ने उससे वादा किया था कि वह ठीक साढ़े-सात बजे कैलाश के घर फ़ोन करेगी। अगर रहमान ने उसे आने को कहा तो वह फ़ौरन चली आएगी और फिर तीनों मिलकर कैलाश को समझाएँगे, उसका ग़म दूर करने की कोशिश करेंगे, उसे कोई रास्ता सुझाएँगे, कोई हल निकालेंगे, उसे मूड में लाकर उसे काम करने के लिए तत्पर करेंगे।

रहमान ने घड़ी देखते हुए टेलीफ़ोन रिसीवर उठाया। घड़ी में सात बजकर पचीस मिनट हुए थे और टेलीफ़ोन *बॉम्बे स्टूडिओज़* से आया था। स्टूडिओ का ऑपरेटर घबराई हुई आवाज़ में बोल रहा था।

"सिन्हा साहब हैं ? सिन्हा साहब को जल्दी बुलाइए —"

रहमान ने कहा : "हाँ, हाँ, हैं। क्या बात ? ....क्या ? ....कहाँ ? .... स्टूडिओ में ? ....एडिटिंग–रूम के पास आग लगी है ! ...."

कैलाश और फ़्रांसिस अवाक् रहमान को घूरने लगे।

रहमान ने टेलीफ़ोन रखते हुए घबराकर कहा : "कैलाश ! ....स्टूडिओ में आग लगी हुई है !"

"आग!" कैलाश चीख़ उठा। "मेरी फ़िल्म वहीं पड़ी है! .... *ज्वालामुखी* चित्र जल जाएगा! .... नहीं! .... ऐसा नहीं हो सकता .... मेरी फ़िल्म *इन्श्योर्ड* भी नहीं है! ओह! मैं — मैं —" वह पागलों की तरह उठा और बाहर की ओर लपक पड़ा।

रहमान और फ़्रांसिस भी उसके पीछे भाग निकले।

कैलाश, जो अभी-अभी सोफ़े पर निढाल पड़ा कराह रहा था, इस तेज़ गति से सीढ़ियाँ उतर सकता है यह देखकर रहमान और फ़्रांसिस दंग रह गए।

ड्राइवर को पुकारता हुआ कैलाश गराज की ओर भागा जा रहा था।

फटी बनियान पहने, हक्काबक्का होकर, ड्राइवर गराज के पीछेवाली कोठरी से बाहर निकला। कैलाश ने चाबी माँगी। ड्राइवर ने दे दी। कैलाश मोटर की ओर झपट पड़ा। ख़ुद ही उसने इंजन स्टार्ट करके गाड़ी गराज से बाहर निकाली।

रहमान और फ़्रांसिस कूदकर गाड़ी में बैठ गए।

गाड़ी तेज़ी से फाटक के बाहर निकल गई।

ड्राइवर आँखे फाड़े देखता का देखता रह गया। उसकी समझ में न आया कि साहब अचानक पागलों की तरह क्यों कर रहे हैं। दो दिन से उनकी तबीअत ख़राब थी। कहीं हवा तो नहीं लग गई? दाढ़ी बढ़ी हुई है, पाजामा चुड़मुड़ था, कुरते की बटनें खुली थीं, बाल बिखर रहे थे ....

शंकर ने पास आकर कहा: "स्टूडिओ में आग लगा है। अपनी फिलम खतरे में है। साब वहींच गया है।"

ड्राइवर की आँखें पहले ही फटी जा रही थीं, अब मुँह भी खुल पड़ा।

कैलाश की ब्यूक सड़कों की भीड़ को चीरती हुई चली जा रही थी। पाँव से उसने एक्सलरेटर लगभग पूरा दबाया हुआ था, और एक हाथ उसका हॉर्न पर था, जो सतत बज रहा था।

चौरास्तों पर स्थित पुलिसमैन के सिगनलों की परवाह न करते हुए कैलाश गाड़ी चला रहा था, पागलों की तरह चला रहा था।

गाड़ी की स्पीड देखकर रहमान और फ़्रांसिस घबराए जा रहे थे। उन्हें लगा अब गाड़ी के नीचे बच्चा आया, अब गाड़ी सामनेवाली बस से टकराई, और अब वह मरे, सब के सब। परंतु सर्वनाश का विचार मौत के विचार से भी भयंकर था। स्टूडिओ में आग लगी थी — एडिटिंग-रूम के पास कहीं। फ़िल्म जल गई तो वह कहीं के न रहेंगे। यह सोचकर ही उनके दिल दहल उठे।

कैलाश के मन में *मूवीओला* पर चलते हुए दृश्यों की तरह अनेक दृश्य नाच उठे। उसका दाह, उसकी थकान, उसकी पीड़ा, क्षण भर में जाती रही। भग्नहृदय लिए

उसका टूटा शरीर सहसा तनकर अकड़ा हुआ था और आँखें अपलक सामने को ताक रहीं थीं। उसका सर्वनाश होने जा रहा था। तारा गई। अब *ज्वालामुखी* भी जा रहा था।

गाड़ी जब कैलाश ने तिलक ब्रिज से दाईं ओर की कोतवाली वाली गली में, रौंग साइड से, मोड़ी तो चर्र की आवाज़ इतनी प्रचंड रूप से हुई कि लगा रबड़ के टायर ने डामर की सड़क फाड़ दी। और फिर सामने, मकानों की ऊँची छतों के पीछे, दूर आकाश में उचकती हुई लपटें दिखाई दीं। कैलाश के रोंगटे खड़े हो गए!....

बॉम्बे स्टूडिओज़ के बाहर लोगों की भीड़ लगी हुई थी। मोटरों, फ़ायर ब्रिगेड की गाड़ियों, पुलिस और तमाशबीनों से सड़क खचाखच भरी हुई थी। फाटक के अंदर से आग की ऊँची उठती हुई लपटें दिखाई दे रही थीं। फ़ायर ब्रिगेड के होज़ पाइप से पानी के फ़ौवारे छूट रहे थे। सब ओर शोरोगुल मचा हुआ था। फाटक से जो दिखाई दिया वह केवल महाप्रलय की झाँकी थी। महाप्रलय अंदर था, फाटक के अंदर।

कैलाश ने गाड़ी रोकी और कूदकर बाहर निकला। लोगों में घुसकर, उन्हें हटाता हुआ, वह तेज़ी से फाटक पर पहुँचा। अंदर घुसना ही चाहता था कि पुलिस इन्स्पेक्टर ने उसे रोक दिया।

"कहाँ जाते हो? अंदर नहीं जा सकते," कैलाश की बाँह पकड़कर उसने फटकारा। "आग लगी है अंदर। मर जाओगे।"

"मुझे जाने दो। मेरा पिक्चर जल जाएगा। मुझे जाने दो," कैलाश ने तिलमिलाकर कहा। झटका मारकर उसने हाथ छुड़ा लिया और घुस पड़ा फाटक के अंदर।

इन्स्पेक्टर खड़ा देखता रह गया!

धुएँ और फ़ौवारों के बीच भागता हुआ कैलाश तुरंत ही अदृश्य हो गया।

रहमान और फ़्रांसिस भी अवाक् खड़े देखते रह गए। चित्र तो गया ही था अब मित्र भी जा रहा था। दिल ज़ोरों से धड़कने लगा है या बंद हुआ जा रहा है इससे वह दोनों सर्वथा अनभिज्ञ रहे। उनके घुटने सहसा ढीले पड़ गए और जी किया कि कहीं बैठ जाएँ। पर वहाँ तो खड़े रहने को जगह न थी और शोर क़यामत का था।

फाटक के बाहर से कैलाश ने महाप्रलय की झाँकी ही देखी थी, अब वह फाटक के अंदर जो पहुँचा तो उसके चारों ओर साक्षात् महाप्रलय मचा हुआ था। स्टूडिओ के एक ओर—जहाँ प्रॉपर्टी-रूम, सुतार खाता, और मेकअप-रूम थे—लपटें धधक रही थीं। इनके पीछे थिएटर और एडिटिंग-रूम थे। आग की लपटें सर्प-जिव्हा की नाईं लपलपा रही थीं और थिएटर व एडिटिंग-घरों को झुलस रही थीं। फ़ायर ब्रिगेड के होज़ पाइप से छूटते हुए फ़ौवारे आग की लपटों पर गिरते ही सूख जाते थे और ऐसा प्रतीत होता था मानो वह पानी के नहीं घी के फ़ौवारे हैं जो आग को और भी अधिक प्रज्वलित किए जा रहे हैं। सारा वातावरण रक्तिम हो उठा था। गर्मी इतनी थी कि कोई हवा में पापड़ भून ले। सर्वत्र कुहराम मचा

हुआ था। छप्परों के जलने, टूटने, और गिरने की भयंकर ध्वनियाँ उठ रही थीं। तिसपर आग की वह भीषण लपटें, जो चालीस-पचास फ़ुट ऊँची उचक रही थीं, अपना पृथक् वीभत्स नाद किए जा रही थीं। फ़ायर ब्रिगेड के सैनिक तथा स्टूडिओ के कुछ कर्मचारी स्टूडिओ से व दफ़्तरों से जल्दी-जल्दी सामान निकालकर बाहर ले जा रहे थे। सर्वत्र भगदड़ मची हुई थी। और ऐसा प्रतीत होता था कि कुछ ही देर में सब कुछ जलकर राख हो जाएगा। अहाते के अंदर लगे हुए ऊँचे-ऊँचे ताड़ों के पत्ते, यद्यपि लपटों से पचास फ़ुट दूर थे, झुलसकर मरोड़ खा रहे थे।

इसी समय कैलाश की दृष्टि अपने एडिटर, रामराव, पर पड़ी, जो हाथ में एडिटिंग-रूम की चाबी लटकाए एक ओर किंकर्तव्य-विमूढ़ की तरह खड़ा था। झपटकर कैलाश ने रामराव के हाथ से चाबी छीन ली।

कैलाश ने सहसा देखा अग्नि-जिव्हाएँ थिएटर व एडिटिंग-रूम के छप्परों को चाट रही हैं। वह सहम गया। उसका भविष्य अग्नि-कुंड में होम होने जा रहा था। उसके और एडिटिंग-रूम के बीच लगभग १२० फ़ुट का अंतर था और मार्ग में शोले बरस रहे थे। उसने आगे देखा न पीछे और दौड़ पड़ा। वह आशंकित था। क्या वह ठीक समय पर पहुँच पाएगा?

परंतु वह पहुँच गया। जैसे ही वह बरामदे में पहुँचा, दो एडिटर अपने-अपने फ़िल्मों के डिब्बों की गठरी बाँधे बाहर को झपट रहे थे, अपना माल बचाए लिए जा रहे थे। और कैलाश की पूँजी अंदर कबर्ड में बंद थी, जो आधा मिनट बाद आग के हवाले हो जाएगी। कैलाश पागलों की तरह घुस पड़ा अपनेवाले एडिटिंग-रूम में, और इसी क्षण ऊपर का छपरा तड़तड़ लगा जलने।

कैलाश ने अंदर पहुँचकर टेबल पर बिछी हुई चादर खींची और आलमारी से *ज्वालामुखी* की नेगेटिव के डिब्बे निकालने लगा। अब तो कमरे की खिड़की भी धधक रही थी। उसी के प्रकाश में उसने डिब्बों का निरीक्षण किया और अपने चौदह डिब्बे गठरी में बाँधकर बाहर को भाग निकला। अभी वह बरामदे की देहली पर ही था कि धड़ाके की आवाज़ हुई। उसने भागते हुए मुड़कर देखा। उसके कमरे का छपरा गिरा हुआ था और बाक़ी भाग गिरने जा रहा था। उसने संतोष की साँस ली। उसका सर्वनाश होते-होते बच गया। गिरे हुए छपरे के बीच से आग में जलते हुए फ़िल्म के डिब्बे पटाखों की तरह फूट रहे थे, हवा में छूट रहे थे। भयंकर दृश्य था। कैलाश को परिचित-सी बू आई, जैसे कोई आग में मुर्ग़ी भून रहा हो। सहसा उसने महसूस किया उसके सर के बाल झुलस रहे हैं। वह, अपनी गठरी काँधे पर उठाए, सर को हाथ से मलता हुआ, और तेज़ भागने को हुआ, पर सामने उसने जो देखा तो उसके रोंगटे खड़े हो गए। पहले जो खुली जगह थी, जो उसके बाहर निकलने का मार्ग था, अब वहाँ पर आग की चादरें तनी हुई थीं—यानी इस चादर को फाड़कर उसे बाहर निकलना होगा! और उसके काँधे पर फ़िल्म की गठरी

थी जो बारूद की गठरी के समान थी। कैलाश का कलेजा दहल गया। परंतु मरता क्या न करता! जान मुट्ठी में लेकर वह इसके लिए तत्पर हो गया। मारे गर्मी और पसीने के वह लथपथ हुआ जा रहा था। मन भर का बोझ उसके काँधे पर था और अब उसे आग फाँदकर निकल जाना था। वह लपक पड़ा। परंतु जैसे ही उसने दो क़दम रखे उसे एक हृदयद्रावक कराह सुनाई दी। आवाज़ बच्चे की थी। कौन था? आवाज़ फिर आई, दर्दनाक किलकारी के रूप में आई। फिर कैलाश के पाँव आगे न बढ़ सके। उसने तुरंत ही मुड़कर उस ओर देखा जहाँ से किलकारी आ रही थी। पास ही, उसके दाईं ओर, लगभग तीस फुट पर, एक बच्चा, आग में घिरा, किलकारियाँ मार रहा था और बढ़ती हुई लपटों से बचने के लिए मार्ग खोज रहा था। कैलाश ने पहचान लिया बच्चे को। मैना का बच्चा था, मेहतरानी मैना का बच्चा, गमन।

अब क्या करे कैलाश? अपनी गठरी लिए अगर वह भाग निकला तो उसका भविष्य सुरक्षित हो जाएगा, परंतु एक बच्चा बेमौत भुनकर मर जायगा। अगर बच्चे को बचाने की चेष्टा करता है तो निश्चित नहीं कि उसे बचा पाएगा, पर यह अवश्य निश्चित है कि उसकी गठरी जलकर राख हो जाएगी। यह सब उसने एक क्षण के सौवें भाग में ही सोच लिया और अब आगामी कार्यवाही निश्चित करने के लिए उसके पास अधिक से अधिक क्षण का एक और सौवाँ भाग था। वह धर्म-संकट में पड़ गया। उस पल, विपल, या द्विपल में उसके अंदर भीषण द्वन्द्व हुआ। उसके अंदर जो कलाकार था, जो दुनियादार *बिज़नेसमैन* था, और जो मनुष्य था — सब यकायक और इकबारगी उभर पड़े और उनमें घमासान भिड़ंत हुई, और सहसा कैलाश गठरी डालकर बच्चे को बचाने के लिए घुस पड़ा आग में। उसके अंदर जो मानव था विजयी हुआ था, और इस एहसास से कैलाश आज इस घड़ी, आग फाँदते हुए, सहसा शांत और तृप्त था। एक फ़ुट चौड़ी आग की छिन्न दीवार में घुसते हुए एक बार तारा की याद उसे आई, फिर पिता की, माँ की, फिर तारा की, और फिर वह गमन के पास पहुँच चुका था, गमन लपककर उससे लिपटा जा रहा था, और फिर दोनों उस आवे में झुलस रहे थे, चारों ओर लपटें उचक रही थीं। फिर, सहसा एक ओर, दूर कुछ लोग खड़े दिखाई दिए। मैना का सर दिखाई दिया। कभी-कभी वह कमर तक दिखाई दे जाती थी, वह रो रही थी, चिल्ला रही थी, छाती पीट रही थी। कैलाश ने गमन को झट हाथों में उठाया और फाँद पड़ा आग में। सोचा था पहले की नाईं ही आग के परदे को चीरकर निकल जाएगा, परंतु वह जैसे ही लपटों में घुसा वह परदा चौड़ी दीवार बन गया; पर इसी क्षण पानी का ज़ोरदार फ़ौवारा उसके समस्त शरीर पर बरस पड़ा और आग लोप हो गई। उस असहनीय गर्मी और गहरे घुआँधार के बीच से कैलाश आगे बढ़ा, और अब वह खुले स्थान में पहुँचा ही था कि मैना ने झपटकर अपने बच्चे को उससे ले लिया। बच्चे को छाती से चिमटाकर मैना ने ज्योंही कैलाश की ओर अपनी कृतज्ञ आँखें उठाईं तो कैलाश सामने न था।

हुआ था। छप्परों के जलने, टूटने, और गिरने की भयंकर ध्वनियाँ उठ रही थीं। तिसपर आग की वह भीषण लपटें, जो चालीस-पचास फ़ुट ऊँची उचक रही थीं, अपना पृथक् वीभत्स नाद किए जा रही थीं। फ़ायर ब्रिगेड के सैनिक तथा स्टूडिओ के कुछ कर्मचारी स्टूडिओ से व दफ़्तरों से जल्दी-जल्दी सामान निकालकर बाहर ले जा रहे थे। सर्वत्र भगदड़ मची हुई थी। और ऐसा प्रतीत होता था कि कुछ ही देर में सब कुछ जलकर राख हो जाएगा। अहाते के अंदर लगे हुए ऊँचे-ऊँचे ताड़ों के पत्ते, यद्यपि लपटों से पचास फ़ुट दूर थे, झुलसकर मरोड़ खा रहे थे।

इसी समय कैलाश की दृष्टि अपने एडिटर, रामराव, पर पड़ी, जो हाथ में एडिटिंग-रूम की चाबी लटकाए एक ओर किंकर्तव्य-विमूढ़ की तरह खड़ा था। झपटकर कैलाश ने रामराव के हाथ से चाबी छीन ली।

कैलाश ने सहसा देखा अग्नि-जिव्हाएँ थिएटर व एडिटिंग-रूम के छप्परों को चाट रही हैं। वह सहम गया। उसका भविष्य अग्नि-कुंड में होम होने जा रहा था। उसके और एडिटिंग-रूम के बीच लगभग १२० फ़ुट का अंतर था और मार्ग में शोले बरस रहे थे। उसने आगे देखा न पीछे और दौड़ पड़ा। वह आशंकित था। क्या वह ठीक समय पर पहुँच पाएगा?

परंतु वह पहुँच गया। जैसे ही वह बरामदे में पहुँचा, दो एडिटर अपने-अपने फ़िल्मों के डिब्बों की गठरी बाँधे बाहर को झपट रहे थे, अपना माल बचाए लिए जा रहे थे। और कैलाश की पूँजी अंदर कबर्ड में बंद थी, जो आधा मिनट बाद आग के हवाले हो जाएगी। कैलाश पागलों की तरह घुस पड़ा अपनेवाले एडिटिंग-रूम में, और इसी क्षण ऊपर का छपरा तड़तड़ लगा जलने।

कैलाश ने अंदर पहुँचकर टेबल पर बिछी हुई चादर खींची और आलमारी से *ज्वालामुखी* की नेगेटिव के डिब्बे निकालने लगा। अब तो कमरे की खिड़की भी धधक रही थी। उसी के प्रकाश में उसने डिब्बों का निरीक्षण किया और अपने चौदह डिब्बे गठरी में बाँधकर बाहर को भाग निकला। अभी वह बरामदे की देहली पर ही था कि धड़ाके की आवाज़ हुई। उसने भागते हुए मुड़कर देखा। उसके कमरे का छपरा गिरा हुआ था और बाक़ी भाग गिरने जा रहा था। उसने संतोष की साँस ली। उसका सर्वनाश होते-होते बच गया। गिरे हुए छपरे के बीच से आग में जलते हुए फ़िल्म के डिब्बे पटाख़ों की तरह फूट रहे थे, हवा में छूट रहे थे। भयंकर दृश्य था। कैलाश को परिचित-सी बू आई, जैसे कोई आग में मुर्ग़ी भून रहा हो। सहसा उसने महसूस किया उसके सर के बाल झुलस रहे हैं। वह, अपनी गठरी काँधे पर उठाए, सर को हाथ से मलता हुआ, और तेज़ भागने को हुआ, पर सामने उसने जो देखा तो उसके रोंगटे खड़े हो गए। पहले जो खुली जगह थी, जो उसके बाहर निकलने का मार्ग था, अब वहाँ पर आग की चादरें तनी हुई थीं—यानी इस चादर को फाड़कर उसे बाहर निकलना होगा! और उसके काँधे पर फ़िल्म की गठरी

थी जो बारूद की गठरी के समान थी। कैलाश का कलेजा दहल गया। परंतु मरता क्या न करता ! जान मुट्ठी में लेकर वह इसके लिए तत्पर हो गया। मारे गर्मी और पसीने के वह लथपथ हुआ जा रहा था। मन भर का बोझ उसके काँधे पर था और अब उसे आग फाँदकर निकल जाना था। वह लपक पड़ा। परंतु जैसे ही उसने दो क़दम रखे उसे एक हृदयद्रावक कराह सुनाई दी। आवाज़ बच्चे की थी। कौन था ? आवाज़ फिर आई, दर्दनाक किलकारी के रूप में आई। फिर कैलाश के पाँव आगे न बढ़ सके। उसने तुरंत ही मुड़कर उस ओर देखा जहाँ से किलकारी आ रही थी। पास ही, उसके दाईं ओर, लगभग तीस फ़ुट पर, एक बच्चा, आग में घिरा, किलकारियाँ मार रहा था और बढ़ती हुई लपटों से बचने के लिए मार्ग खोज रहा था। कैलाश ने पहचान लिया बच्चे को। मैना का बच्चा था, मेहतरानी मैना का बच्चा, गमन।

अब क्या करे कैलाश? अपनी गठरी लिए अगर वह भाग निकला तो उसका भविष्य सुरक्षित हो जाएगा, परंतु एक बच्चा बेमौत भुनकर मर जायगा। अगर बच्चे को बचाने की चेष्टा करता है तो निश्चित नहीं कि उसे बचा पाएगा, पर यह अवश्य निश्चित है कि उसकी गठरी जलकर राख हो जाएगी। यह सब उसने एक क्षण के सौवें भाग में ही सोच लिया और अब आगामी कार्यवाही निश्चित करने के लिए उसके पास अधिक से अधिक क्षण का एक और सौवाँ भाग था। वह धर्म-संकट में पड़ गया। उस पल, विपल, या द्विपल में उसके अंदर भीषण द्वन्द्व हुआ। उसके अंदर जो कलाकार था, जो दुनियादार *बिज़नेसमैन* था, और जो मनुष्य था — सब यकायक और इकबारगी उभर पड़े और उनमें घमासान भिड़ंत हुई, और सहसा कैलाश गठरी डालकर बच्चे को बचाने के लिए घुस पड़ा आग में। उसके अंदर जो मानव था विजयी हुआ था, और इस एहसास से कैलाश आज इस घड़ी, आग फ़ाँदते हुए, सहसा शांत और तृप्त था। एक फ़ुट चौड़ी आग की छिन्न दीवार में घुसते हुए एक बार तारा की याद उसे आई, फिर पिता की, माँ की, फिर तारा की, और फिर वह गमन के पास पहुँच चुका था, गमन लपककर उससे लिपटा जा रहा था, और फिर दोनों उस आवे में झुलस रहे थे, चारों ओर लपटें उचक रही थीं। फिर, सहसा एक ओर, दूर कुछ लोग खड़े दिखाई दिए। मैना का सर दिखाई दिया। कभी-कभी वह कमर तक दिखाई दे जाती थी, वह रो रही थी, चिल्ला रही थी, छाती पीट रही थी। कैलाश ने गमन को झट हाथों में उठाया और फाँद पड़ा आग में। सोचा था पहले की नाईं ही आग के परदे को चीरकर निकल जाएगा, परंतु वह जैसे ही लपटों में घुसा वह परदा चौड़ी दीवार बन गया; पर इसी क्षण पानी का ज़ोरदार फ़ौवारा उसके समस्त शरीर पर बरस पड़ा और आग लोप हो गई। उस असहनीय गर्मी और गहरे घुआँधार के बीच से कैलाश आगे बढ़ा, और अब वह खुले स्थान में पहुँचा ही था कि मैना ने झपटकर अपने बच्चे को उससे ले लिया। बच्चे को छाती से चिमटाकर मैना ने ज्योंही कैलाश की ओर अपनी कृतज्ञ आँखें उठाईं तो कैलाश सामने न था।

वह उस स्थान की ओर लपका जा रहा था जहाँ लपटें थिरक रही थीं और शोले बरस रहे थे।

कैलाश, हर क़दम पर अपनी जान पर खेलता हुआ, फिर उसी स्थल पर पहुँचा जहाँ उसने अपनी गठरी छोड़ी थी। आग अब तक बढ़ चुकी थी। पहले तो चारों ओर की दीवारें जल रही थीं परंतु अब धरती भी धधक उठी थी व आकाश अंगारे उगल रहा था। कैलाश ने देखा अब तो गठरी की चादर भी एक छोर से आग पकड़ चुकी थी। वह काँप उठा और छलाँग मारकर गठरी पर जा पहुँचा। चादर का जलता हुआ छोर हाथों में लेकर उसने रगड़ दिया। आग बुझ गई। गठरी खींचकर उसने बग़ल में ली और बाहर निकलने का रास्ता खोजने लगा। कैलाश ने देखा वह आग की बढ़ती हुई लपटों में घिर चुका था। उससे फाटक के पास का सुरक्षित स्थान लगभग ६० फ़ुट दूर था। सामने जगह-जगह आग की चादरें तनी थीं, ज़मीन पर जगह-जगह अंगारे पड़े थे और पानी की नालियाँ बन गई थीं। कैलाश फिर जान पर खेल गया, और गिरता, पड़ता, संभलता, लपटों को चीरता, फ़ौवारों में नहाता हुआ वह आगे बढ़ने लगा। गठरी बग़ल से गिर-गिर पड़ती। वह गठरी फिर समेटता, अपने को समेटता, और आगे बढ़ चलता। गठरी ढीली पड़ गई और उसमें से उसकी नेगेटिव के टिन एक-एक करके गिरे जाने लगे....

बड़ी मुश्किल से, कीचड़-पानी में सना, फटे चीथड़ों में, कैलाश फाटक के पास पहुँचकर, क्षणिक मूर्च्छा के कारण, गिर पड़ा। फ़ायर ब्रिगेड के सैनिक दौड़कर उसके पास पहुँचे। रहमान और फ़्रांसिस भी पहुँच गए। मित्र को जीवित देखकर उन्होंने संतोष की साँस ली। कैलाश ने आँखें खोलीं, मित्रों को देख मुस्कुराया, और उठ बैठा। तुरंत ही फिर उसकी निगाह अपनी कसी हुई मुट्ठी की ओर गई। मुट्ठी में चादर जकड़ी हुई थी और चादर की वह तनी हुई गठरी सहसा बैरागी की पोपली झोली की तरह पिचकी हुई थी। एक झटके में कैलाश ने गठरी को खोलकर पलट दिया। गठरी में से दो डिब्बे बाहर को ढुलक पड़े। कैलाश पर वज्र टूट पड़ा। चौदह डिब्बों में से केवल दो ही बचे! उसका सर्वनाश हो गया! उसके दो हाथों में *ज्वालामुखी* के दो डिब्बे थे और सामने ज्वालामुखी धधक रहा था। वह पागलों की तरह ठहाका मारकर हँस पड़ा। दिये से दिया जलता है, आग से आग प्रज्वलित होती है। उसके अंतर में एक और ज्वालामुखी था जो अब तक मौन था; अब, सहसा आँच पाकर, उसका स्फोट हुआ, और वह लावा उगलने लगा। संयमों की बाँधें टूट पड़ीं। कैलाश ज़ोर-ज़ोर से चीत्कार व अट्टहास करने लगा। सामने स्टूडिओ धाँए-धाँए जल रहा था। बचे हुए वह दो डिब्बे उसने एक-एक करके आग में फ़ेंकते हुए कहा:

"जहाँ सत्यानाश वहाँ साढ़े-सत्यनाश! जा, तू भी जा—और तू भी—" फ़िल्म के डिब्बे आग में गिरे और गिरते ही यों उड़े आकाश में जैसे पटाख़ोंवाली सुपारियाँ उड़ती हैं। आकाश में जाकर डिब्बों के ढकलन खुले और धधकती फ़िल्म

के गोले चकरी मारते हुए नीचे आने लगे, और फिर आग में समा गए .... "कितनी खूबसूरत आग है!" कैलाश ने कहा। "कभी देखी थीं तुमने ऐसी लपटें? रहमान, फ्रांसिस — देखो, देखो; मेरे अंदर भी ज्वालामुखी धधक रहा है और बाहर यह आग की लपटें भी झुलस देने को उतावली हो रही हैं — आग से आग मिली जा रही है। बोलो — बोलो — इसे तुम ट्रैजिडी कहोगे या कॉमेडी? हाः हाः हाः — हाःहाःहाः — हाः हाः हाः — लो, यह प्रेस रिपोर्टर भी आ गया!"

कैलाश को देख *स्क्रीन* का प्रतिनिधि, माथुर, फाटक से बुलककर कैलाश के पास पहुँच चुका था और चटाचट फ़्लैश फ़ोटो लिए जा रहा था।

रहमान और फ़्रांसिस ज़ोरों से कैलाश को पकड़े हुए थे। उन्हें अंदेशा था कहीं हाथ छुड़ाकर कैलाश आग में न फाँद पड़े।

"कहिए, सिन्हा साहब, क्या ख़बर है?" माथुर ने पूछा।

कैलाश का अट्टहास रुकने लगा। "बड़ी सनसनीखेज़ ख़बर है, यार," उसने कहा। "बड़े मौक़े से आए तुम! सबसे बड़ी ख़बर सुनो: 'कैलाश सिन्हा का महान् और बहुमूल्य चित्र *ज्वालामुखी* जलकर राख हो गया!'.... दूसरी हेडलाइन लो: 'कैलाश सिन्हा सड़कों पर।' कैसी ख़बर है? हाः हाः हाः! ...."

रहमान और फ़्रांसिस की आँखें छलछला आईं।

माथुर, अपना कैमरा लिए, भौंचक्का खड़ा, कैलाश को घूरे जा रहा था!

२०

हवा में सर्दी थी और वातावरण में मस्ती। रात के लगभग ग्यारह बज रहे थे। होटल के मुलायम लॉन पर रंगीन फ़ौवारे के पास खड़ी हुई तारा सामने होटल के नीचे, सड़क के उस पार, दूर तक फैले हुए डल झील को ताक रही थी। तारा के पास ही, तारा की कमर में हाथ डाले, जीवन खड़ा था।

"ठंड हो रही है," तारा ने सहसा कहा।

"चलो अंदर चलें," जीवन बोला।

दोनों धीरे-धीरे जब होटल की ओर चलने लगे तो "तारा चौधरी — तारा चौधरी —" की फुसफुसाहट से वातावरण झंकृत हो उठा।

जीवन को लोगों की यह हरकत खल गई। क्यों? सो, वह नहीं जानता। तारा के साथ वह जहाँ कहीं भी जाता है, लोग तारा को पहचानकर "तारा चौधरी — तारा चौधरी —" चिल्लाने, फुसफुसाने लगते हैं। परंतु फिर जीवन ने सोचा भारतीय रूपहरी परदे की सबसे प्रख्यात अभिनेत्री को वह ब्याहनेवाला है, और वह अनुपम सुंदरी इस समय उसकी बाँह मे बाँह डाले कश्मीर में विचर रही है, तो इस विचार से उसे समाधान हुआ और वह मन ही मन मुस्कुराने लगा।

होटल के लॉन मे वह दोनों चले जा रहे थे। होटल के बाहर अँधेरा था, ठंढा और सुखद अँधेरा। उस अँधेरे में दूर डल झील का काला पानी हिलोरें ले रहा था, झील पर शिकारे चल रहे थे, हाउस बोटें खड़ी थीं और उनके प्रकाश की रेखाएँ वातावरण मे बिंध रही थीं। पानी में प्रकाश के अनगिनत प्रतिबिंब डोल रहे थे।

जीवन का मन भी डोल उठा। लगभग नौ दिन से तारा उसके साथ घूम रही थी। भ्रमण में, मोटर के अंदर, उसके पास रही थी। यहाँ कश्मीर में भी वह उसके पास ही थी। परंतु इतने पास रहकर भी वह उससे कितनी दूर-दूर थी, मानो पत्थर या इस्पात की कोई अदृश्य दीवार उन दोनों के बीच खड़ी हुई हो। तारा के मन में क्या हो रहा है, उसे इसका कुछ भान नहीं। कभी वह हँसती है, कभी एकदम चुप्पी साध लेती है, कभी बिलकुल बेतुकी बातें करती है। शादी के लिए उसने अभी तक साफ़-साफ़ हाँ नहीं कहा। हर घड़ी उसका मूड बदलता रहता है। अगर सुबह उठकर उसने बम्बई लौटने की ठान ली तो वह क्या करेगा? नहीं, ऐसा नहीं होगा। वह

ऐसा नहीं होने देगा। वह उसे अपनी बनाकर छोड़ेगा। संभव है वह कैलाश से उलझी हुई हो। संभव है उसीकी याद तारा को रह-रहकर विचलित करती हो। तारा के मन से कैलाश की याद वह भुलाकर रहेगा। नज़र से दूर तो दिल से दूर। जीवन के साथ रहने पर कैलाश का विचार कब तक पीछा करेगा ? तारा को जीवन इतना सुखी कर देगा कि वह स्वयं ही कैलाश को भूल जाएगी। केवल समय की बात है। थोड़ा समय चाहिए। कश्मीर का सुंदर, सुखद वातावरण और जीवन के प्रेम की प्रबलता तारा को बरबस जीवन की ओर आकर्षित करके रहेगी। तारा को वह जीतके रहेगा, उसे अपनी बनाकर रहेगा। एक बार वह उसकी हो गई तो कैलाश को भूल जाएगी, बम्बई को भूल जाएगी, सिनेमा को भूल जाएगी। बस, एक बार वह उसकी हो भर जाए, यह तारा, यह अनुपम सुंदरी — जिसके बिना, जिससे दूर, अब वह रह नहीं सकता। तारा — अनुपम सुंदरी तारा, उसकी हृदयेश्वरी तारा, उसकी रानी तारा....

"कितना सुंदर दृश्य है ?" तारा ने कहा।

"कश्मीर का यह सफ़र मुझे हमेशा याद रहेगा, तारा," जीवन ने कहा। "ऐसा लगता है तुम्हारे साथ मैं स्वर्ग में सैर कर रहा हूँ।"

तारा ने जीवन के हाथ को हलके-से दबाया। जीवन ने तारा को अपने और निकट सटा लिया। लॉन पर इस प्रकार साथ चलते हुए तारा के मस्तिष्क ने कहा कि वह अपने पति के साथ चली जा रही है — कहीं। कहाँ ? उसे नहीं मालूम। और यह, यह पुरुष भला आदमी है — उसका पति अच्छा है। मन ने कहा कि पता नहीं। सहसा वह उदास हो गई।

वह लोग लॉन से बरामदे में और बरामदे से मुड़कर लॉबी में आए। बरामदे की तरह ही लॉबी में भी एकाध व्यक्ति इधर-उधर हो रहा था। सँकरी लम्बी लॉबी सामने दूर तक चली गई थी। फ़र्श पर सँकरा लाल रंग का, डिज़ाइनदार कश्मीरी क़ालीन पड़ा हुआ था। आधे इंच मोटे मख़मली क़ालीन पर जो पाँव पड़ता तो धँस-धँस जाता और जूतों की कोई आहट न होती। तारा का जी किया कि जूतों को हाथ में पकड़कर वह नंगे पाँव चले, उस क़ालीन पर फुदके, दौड़े....

ज़ीना चढ़कर वह दोनों ऊपर की लॉबी में आए। लॉबी के दोनों ओर कमरों के दरवाज़े थे जो बंद थे और वातावरण में, रात के इस समय, उसी प्रकार की हलचल या शिथिलता आ गई थी जो होटलों की लॉबियों में डिनर के बाद आ जाया करती है। सामने से एक विदेशी युवक व युवती झूमते आ रहे थे। रह-रहकर वह परस्पर प्यार करते व चूमते जाते थे। दोनों देखने में भद्दे थे परंतु उनका भद्दापन उनकी प्रेमक्रीड़ा में बाधक न था। मस्त थे। लॉबी के बीचोबीच वह चले आ रहे थे। ऐसा लगा कि अब पास आकर वह पागलों का जोड़ा तारा व जीवन से टकराने ही वाला है। परंतु सहसा वह लोग रुके और युवक ने एक कमरे के दरवाज़े की ओर हाथ से

इशारा किया। युवती ने आँखें फाड़कर दरवाज़े का नंबर ज़ोर से पढ़ा और हँसकर फ़राँसीसी भाषा में कुछ बोला। फिर दोनों लडखड़ाते हुए दरवाज़े की ओर बढ़ गए व दरवाज़ा खोलकर अंदर हो लिए। दरवाज़ा बंद होते ही अंदर से युवती की बड़े ज़ोरों की खिलखिलाहट सुनाई दी। वह हँसी लगनेवाली हँसी थी। जीवन और तारा भी हँसने लगी।

तारा सोचने लगी की ऐसी क्या बात हुई होगी जो युवती इस ज़ोरों से खिला-खिलाकर हँसे जा रही है। कमरे के अंदर अवश्य ही कोई हास्यास्पद घटना हुई होगी। युवती हँसे जा रही थी, युवक नहीं। क्या बात होगी? उसने महसूस किया जीवन उसे घूर रहा था। जीवन की नज़र उसके सर, चेहरे, गर्दन से लिपट रही थी। पर वह चलती रही, बिना जीवन की ओर देखे। अपने कमरे पर पहुँचकर उसने दरवाज़ा खोलने को हाथ बढ़ाया तो जीवन ने उसका हाथ थाम लिया।

"आओ, तारा क, मेरेमरे में चलो। थोड़ी देर बात करेंगे।"

तारा ने कहा: "नहीं, जीवन, बहुत रात हो गई। ग्यारह बजनेवाले हैं। अब सोऊँगी।"

"थक गईं क्या?"

"हाँ"।

"नींद आ रही है?"

"हाँ।"

"झूठी! दोपहर को तो तुम काफ़ी सो चुकी हो। आओ न मेरे कमरे में। जब नींद आने लगे तो चली आना।"

"ना, अब तुम जाकर सो जाओ।" तारा ने हाथ छुडाकर ताले में चाबी लगाई। दरवाज़ा खुला। अंदर जाती हुई वह बोली: "गुड नाइट, जीवन।"

जीवन ने कहा: "गुड नाइट।"

तारा ने दरवाज़ा बंद करके अंदर से ताला लगा दिया।

बग़लवाला कमरा जीवन का था। वह अपने कमरे में आया और आकर कपड़े बदलने लगा। अपने कमरे से उसने तारा के कमरे में होती हुई आवाज़ें सुनीं — तारा के बाथरूम के फ़्लश की आवाज़ सुनी, वॉश बेसिन में नल के पानी की आवाज़ सुनी, साबुनदानी की आवाज़ सुनी, तौलिये के झटकने की आवाज़ सुनी, तारा का एकाध बार खाँसना सुना, दरवाज़ा बंद करने की आवाज़ सुनी, स्विच की आवाज़ सुनी, कुछ सरसराहटें सुनीं, और फिर सारी ध्वनियाँ लोप हो गईं और एकदम सन्नाटा हो गया। शायद तारा बिस्तर पर पड़कर सोने की चेष्टा कर रही थी।

अपने पलंग के सामने गद्दीदार कुरसी पर बैठे हुए जीवन ने सिगरेट सुलगाई और सोचने लगा। परंतु वह कुछ भी सोच न सका। उसका शरीर जल रहा था, कश्मीर की ठंढी रात में अपने कमरे मे अकेले बैठे-बैठे उसका शरीर जल रहा था, और बाज़ूवाले कमरे

में, केवल एक दीवार की आड़ तारा — उसकी तारा—उसकी होनेवाली पत्नी तारा — पलंग पर पड़ी सोने की चेष्टा कर रही थी। और वह — जीवन — तारा का प्रेमी जीवन — तारा का होनेवाला पति जीवन — अपने कमरे में गद्दीदार कुरसी पर बैठा हुआ जल रहा था। दोनों के बीच दीवार तनी हुई थी। कल को यह दीवार न रहेगी। कल — यानी जल्दीही—वह दोनों दीवार के एक ही ओर और एक साथ होंगे। जल्दी ही यह दीवार न होगी। होंगे केवल दोनों ही — जीवन और तारा। दीवार खटकने लगी। जीवन का मन किया कि दीवार में छेद कर दे और तारा के पास पहुँच जाएँ। जब वह उसकी है तो फिर यह दीवार क्यों? परंतु है कहाँ? होनेवाली है। और अगर वह उसकी न हो पाई तो? अगर कल उसके मन में बम्बई लौट जाने की लहर उठ गई तो?

जीवन उठा और ड्रेसिंग गाउन पहनने लगा। सिगरेट को राखदानी में रगड़कर आहिस्ता से उसने दरवाज़ा खोला। लॉबी में सन्नाटा था। बाहर होकर उसने दरवाज़ा बंद किया और दबे पाँव जाकर तारा के दरवाज़े पर धीरे-से दस्तक दी। कोई उत्तर न था। अंदर निस्तब्धता थी। शायद वह सो गई थी। उसने दो बार फिर खटखटाया। एक मिनट खड़ा रहा। फिर ज़रा ज़ोर-से खटखटाया। अबकी भी कोई उत्तर न मिला। तारा वास्तव में सो रही होगी। नहीं, इतनी जल्दी नहीं सो सकती। जानकर वह चुप है। सोने का स्वाँग कर रही है। स्वाँग क्यों कर रही है? क्योंकि वह दरवाज़ा नहीं खोलना चाहती। जीवन निराश होकर बौखला गया। थोड़ी देर और मौन खड़े रहने के बाद आख़िरी बार खटखटाने को उसने हाथ बढ़ाया ही था कि पीतल का चमकीला गोलाकार दस्ता धीरे-धीरे घूमने लगा और फिर रुक गया।

"कौन है?" अंदर से आवाज़ आई।

"मैं," जीवन ने दबी आवाज़ में उत्तर दिया।

ताले में चाबी घूमने की आहट हुई। गोल दस्ता फिर घूमने लगा। दरवाज़े की भिड़ंत में बारीक-सी दरार पड़ी और इसी दरार में से तारा की स्पष्ट आवाज़ आई: "क्या है?"

जीवन ने कहा: "एक मिनट दरवाज़ा खोलो।"

"नहीं।"

"सुनो तो —"

"क्या है?"

"तुमसे एक बात कहनी है। मैं अंदर नहीं आऊँगा मगर ज़रा बात तो सुनो। तारा —"

दरार धीरे-धीरे चौड़ी होने लगी और फिर तारा का सर उसमें से झाँकने लगा। सर के पीछे, कमरे में, अँधेरा था। आँखें चार हुईं तो तारा ने पूछा: "क्या बात है?"

"मुझे नींद नहीं आती," जीवन ने कहा और किवाड़ ठेलकर अंदर चला गया।

व्यक्ति उस पर बलात्कार कर रहा है। उसकी आत्मा रो उठी। "हटो," उसने कहा। "यह क्या कर! ते हो"

"प्यार — तुम्हें प्यार कर रहा हूँ। मत रोको, तारा — मुझे मत रोको — मुझे प्यार करने दो।" जीवन ने तारा के वक्ष में मुँह गाड़ दिया, और फिर उसका समस्त शरीर तारा के शरीर पर भारी हो आया, मानो हाड़ माँस का बना जीवन इस्पात का बन गया हो। फिर जीवन का सर हिलने लगा, काँपने लगा।

तारा निस्तब्ध और अवाक् थी। यकायक उसने अपने वक्ष पर गर्म-गर्म बूँदें ढुलकती महसूस की। प्रेम-क्रीड़ा से, प्रेमप्रदर्शन से वह सर्वथा अनभिज्ञ थी। उसका सारा ज्ञान केवल उपन्यासों और चित्रों में पढ़े और देखे गए दृश्यों पर निर्धारित था, और इसीलिए जीवन के इस आकस्मिक प्रेमाक्रमण ने उसके होशोहवास उड़ाए हुए थे। परंतु बूँदों के स्पर्श से वह पिघलने लगी। वह सहज ही ताड़ गई कि जीवन रो रहा है। वह उसके सर के बालों में उँगलियाँ चलाने लगी, उसके सर को चुप थप-थपाने लगी। जीवन के आँसुओं से तारा का ब्लाउज़ भीगने लगा.... जीवन के सर को दोनों हाथों से थामकर तारा ने ऊपर उठाया तो उसकी डबडबाई आँखें देखकर वह अवाक् रह गई। होंठों पर मूँछें थीं और आँखों में पानी। पुलिस का डी. एस. पी. रो रहा था! उसका प्रेमी रो रहा था! .... 'मैं बड़ी दुष्ट हूँ,' उसने मन में कहा। 'बेचारे को कितना सताती हूँ! यह मुझसे प्रेम करता है और मैंने इसे रुला दिया।' उसका गला भर आया। "जीवन!" उसने कहा, "जीवन!" और जीवन को अपनी छाती से लिपटा लिया। तारा का संयम ढीला पड़ रहा था। उसका नियंत्रण टूट रहा था। अपने बालमित्र को, अपने प्रेमी को, अपने होनेवाले पति को वह सदा प्रसन्न और सुखी देखना चाहती थी। किसी का दिल दुखाना उसके स्वभाव में न था — और जीवन को आज उसने रुला दिया। बेचारा! जान देता है उस पर! ... जीवन की गीली पलकें उसके वक्ष की घाटी में फड़फड़ाने लगीं और जीवन का हाथ ब्लाउज़ पर पहुँचकर कुछ टटोलने, ढूँढ़ने लगा फिर पीठ की बटनें खोलने लगा। तारा सिहर उठी।

"नहीं, जीवन .... यह क्या करते हो!" तारा ने सचेत होकर कहा।

"तारा— तुम मेरी हो। मुझे इतमीनान दिला दो कि तुम मेरी हो। तारा —"

तारा विचित्र उलझन में थी। इतने दिनों से, इतने महीनों से यही उलझन उसे जकड़े हुए थी कि वह किसकी है। यह उलझन उसे खाए जा रही थी। वह भी चाहती थी कि यह उलझन एक बार सुलझकर रह जाए, उसकी समस्याओं का हल नकल आए, किसी तरह।

"नहीं, जीवन — अभी नहीं," उसने रुँधे हुए कंठ से कहा। "शादी से पहले नहीं — नहीं, जीवन —"

"क्यों नहीं? तारा, हम दोनों एक दूसरे से प्रेम करते हैं। हमारे बीच कोई रुकावट

"मेरे पास है — अ — आपके ड्रेसिंग टेबल पर रख दी है मैंने — जहाँ और भी उपहार थे वहीं — उन्हीं के साथ।"

"तुमने डिबिया खोलकर देखी? क्या है उसमें?"

"अँगूठी है, मेमसाहब। सफ़ेद रँग का नग है — हीरे जैसा।"

"ओह!" तारा का हाथ ढीला पड़ गया। अँगूठी है? तो क्या उस रात — उसके जन्म दिन की पार्टी के अवसर पर — कैलाश उसके लिए अँगूठी लेकर आया था? हीरे की अँगूठी देना चाहता था! अँगूठी! ओह! क्या कैलाश वास्तव में उससे प्रेम करता है? न करता होता तो अँगूठी कभी भी न लाता, कुछ और लाता, पार्कर नं. ६१ लाता, या कानों के लिए बालियाँ लाता, या साड़ी लाता, पर अँगूठी कभी न लाता। तो क्या कैलाश उस रात अपनी प्रेम-भेंट अँगूठी लेकर आया था? और तारा ने उससे झगड़ा किया उस रात! .... "हाँ, श्यामू — देखो — अ — तुम डिबिया सँभालकर अपने पास रखना। बेडरूम में ताला लगाकर चाबी अपने पास रखना।"

"आप इधर की कोई चिंता न करे, मेमसाहब। आप कब तक लौटेंगी, मेमसाहब?"

"जल्दी ही आउँगी। अच्छा, श्यामू।"

"नमस्ते, मेमसाहब।"

तारा ने टेलीफ़ोन रख दिया और घड़ाम्-से बिस्तर पर बैठ गई। मारे आनंद के वह इस घड़ी मर सकती थी। उसका मन ही नहीं, आत्मा भी प्रफुल्लित हो उठी खिल उठी — इतनी अधिक कि उसके मुँह पर मुस्कान भी उदित न हो पाई। पराकाष्ठा का आनंद शायद पहचाना नहीं जाता। आनंद ही क्यों, चित्त की हर भावना जब चरम सीमा को लाँघ जाती है तो अपनी विशेषता खो बैठती है। सपने में ऊँचाई पर से गिरने में, या आकाश में उड़ने से, पेट में जैसी गुदगुदी होती है, तारा के पेट में उसी प्रकार की गुदगुदी होने लगी; और फिर, बहुत देर बाद, तारा के सुन्न शरीर की धमनियों व शिराओं में रक्त प्रबल रूप से प्रवाहित हो पड़ा .... तारा का प्रेम विजयी हुआ था। मस्तिष्क ने मन को बहकाने के लिए कितनेकुछ यत्न नहीं किए, पर अंत में मस्तिष्क की हार और मन की जीत होकर ही रही। तारा की अंतः प्रेरणा सत्य प्रमाणित हुई थी। उसके मस्तिष्क की कल्पनाएँ झूठी थीं। उसकी आशंकाएँ झूठी थीं। उसका प्रेम सच्चा था। वह सच्ची थी। कैलाश सच्चा था। इसके अतिरिक्त और सब झूठ था, मिथ्या था, निरर्थक था, व्यर्थ था .... हाँ, जीवन मलहोत्रा भी मिथ्या था, तुच्छ था, व्यर्थ था। सोफ़े के पास अस्तव्यस्त खड़ा हुआ जीवन उसे उल्लू की तरह घूर रहा था। तारा का आचरण और उसकी भावभंगिमा देखकर वह चकित था।

तारा के चेहरे पर अंत में उल्लासमयी मुस्कान उदित हुई और वह मुस्कान केवल चेहरे पर ही नहीं वरन् उसके समस्त शरीर पर विस्तारित हो गई।

जीवन ने वहीं से पूछा : "क्या बात है, तारा ? डिबिया का क्या ज़िक्र था?"

तारा ने दृष्टि घुमाकर जीवन को ताका। रुदन और उत्तेजना के कारण उसकी शकल बिगड़ गई थी, बाल आँख पर आ रहे थे और ड्रेसिंग गाउन काँधे से फिसला हुआ था — बिलकुल किसी सस्ते स्टंट पिक्चर के सस्ते खलनायक की तरह लग रहा था।

"क्या बात है, तारा ? मैं भी तो सुनूँ," जीवन ने पास आते हुए कहा।

"कुछ नहीं। मैं एक डिबिया — उस दिन — आने की जल्दी में — भूल आई थी। मैंने कहीं गुमा दी थी — सो — मिल गई।"

तारा बहुत खुश थी, बहुत सुंदर लग रही थी, इतनी सुंदर वह पहले कभी न लगी थी। जीवन ने उसकी कमर में हाथ डाल दिया।

"काहे की डिबिया, तारा ?"

"अँ ? .... डिबिया — ज़ेवर की डिबिया थी।"

"ज़ेवर की डिबिया ? बड़ा ईमानदार है तुम्हारा नौकर श्यामू !" जीवन ने कहा। फिर तारा के मुँह के पास मुँह ले जाकर, उसकी आँखों में आँखें डालकर, मुस्कुराता हुआ बोला : "बड़ी भुलक्कड़ हो ! कहीं श्यामू चुरा लेता, तुम्हें न बताता तो ?"

तारा ने अपनी कमर से उसका हाथ हटाकर, उससे दूर होते हुए कहा : "तो मैं लुट जाती।"

जीवन ने साश्चर्य तारा की ओर देखा। वह खड़ी मुस्कुरा रही थी। वह तारा की ओर बढ़ा तो तारा ने उसे हाथ बढ़ाकर रोक दिया।

"बहुत रात हो गई ! अब जाओ, जीवन — अपने कमरे में जाओ।"

"अभीं नहीं। रात मैं तुम्हारे साथ ही रहूँगा। आओ, सोएँ एक साथ। तड़के ही उठकर चल दूँगा।" जीवन ने तारा का हाथ पकड़कर उसे पलंग की ओर खींचना चाहा।

तारा छिटककर अलग खड़ी हो गई। प्रकाशमान कमरे की चकाचौंध में जीवन का प्रेमालाप उसे असभ्य और भद्दा लगा, मिथ्या और अर्थशून्य लगा, व्यर्थ लगा। यह सोचकर कि अभी-अभी वह — तारा — कैलाश की तारा — इस कमरे की धुंधलाहट में, उस सोफ़े पर पड़ी हुई, किसी को अपना शरीर सौंपने चली थी, वह अपने को धिक्कार उठी। यह वेश्यावृत्ती उसमें अचानक कैसे उत्पन्न हो गई थी, उसकी समझ में न आया। वह अपने मन में आप तिरस्कृत हो उठी। जीवन ने उसे छूआ है। उसकी हिम्मत कैसे हुई ? तारा ने तुरंत ही जाकर दरवाज़ा खोल दिया।

"जाओ, जीवन। अपने कमरे में जाओ," उसने दृढ़तापूर्वक कहा। उसकी वाणी में विनय न था, आदेश था।

जीवन को तारा का बर्ताव विचित्र लगा। टेलीफ़ोन ने सारा मामला किरकिरा कर दिया था। वह जानता था अब बात न जम पाएगी। फिर तारा को अप्रसन्न करने

से कोई लाभ न था। वह बढ़ा और दरवाज़े पर पहुँचकर उसने तारा का हाथ अपने हाथ में लिया।

"तुम सच में चाहती हो कि मैं चला जाऊँ?"

"हाँ, गुडनाइट।"

"गुडनाइट," जीवन ने कहा और तारा की ओर देखा तो वह अपलक उसकी आँखों में सीधा देख रही थी। "गुडनाइट, तारा। कल सुबह मिलेंगे।"

जीवन अपने कमरे की ओर चला गया।

तारा ने दरवाज़ा बंद करके ताला लगाया, लाइट बुझाया, और फिर वह अपने पलंग के पास आई। ब्लाउज़ कहीं-कहीं जीवन के आँसुओं से गीला होकर उसके माँस से चिमटा जा रहा था। तारा को उस ब्लाउज़ से घृणा हो गई। उसने ज़ोर से झटका दिया तो चटाचट पीठ की बटनें खुलने, टूटने लगीं। ब्लाउज़ उसने नोच निकाला और एक ओर फेंक दिया। फिर साड़ी खोलकर बाथरूम में गई। वहाँ उसने बेसिन के गर्म पानी से मुँह-हाथ धोए, बदन पोंछा और नाइटी पहनकर वह बेडरूम में आई। काफ़ी ठंड हो रही थी। उसके शरीर के रोंगटे खड़े हो रहे थे। जल्दी से बेड लैम्प बुझाकर वह बिस्तर में, चादरों के बीच, फिसल पड़ी।

बिस्तर ठंडा था। रज़ाई ठंडी थी। धीरे-धीरे शरीर के सम्पर्क से गर्मी पैदा होने लगी। तारा, सर के नीचे दोनों हाथ बाँधे, उस सुखद अंधकार में एकटक देख रही थी, और उसी प्रशांत वातावरण में उसके विचार भटक रहे थे....'मेरे पत्थर के शिव में जान आ गई,' उसने मन में कहा। 'भक्त ने अपने भगवान को जीत ही लिया!' विजय और उल्लास से ओतप्रोत तारा मुस्कुराई। 'कैलाश! मैंने तुम्हें ग़लत समझा। मुझे माफ़ करना,' बिस्तर में पड़े-पड़े, अँधेरे में दोनों हाथ जोड़कर, तारा ने मन ही मन अपने आराध्यदेव से क्षमायाचना की। 'मैं आ रही हूँ, कैलाश — तुम्हारे पास.... जल्दी.... बहुत जल्दी.... तुम्हें सूचित किए बिना आऊँगी। आकर तुम्हारे पैरों से लिपट जाऊँगी। फिर मैं तुमसे कभी अलग न होऊँगी!' तारा का मन उत्तेजित व उतावला हो उठा — कैलाश से मिलने के लिए!

अब वह लौट जाएगी — अपने कैलाश के पास। लौटने के पूर्व जीवन से सब कुछ कहना होगा, मन की बात कहनी होगी। कैसे कहेगी? जीवन का प्रेम वह स्वीकार कर चुकी है। उससे प्रेम करने की हामी भर चुकी है। अब मुकर जाएगी तो उसे चोट लगेगी। लगा करे। वह क्या कर सकती है? उसके बस की बात नहीं। वह तो पहले ही से जीवन को इनकार किए हुए थी, पर वह नहीं माना और धाँधली मचाने लगा। उसका मन तो कैलाश से लगा हुआ था — वह जानती थी। मन भी विचित्र वस्तु है....यह मन क्यों लग जाता है किसी से? कौन जाने। शायद विधि का विधान है....पर उसे जीवन के साथ कुशलतापूर्वक वर्ताव करना होगा, अन्यथा अपने मन को खुश करने के लिए वह उसका मन सदा के लिए दुखा देगी। किसी का मन

नहीं दुखाना चाहिए। वह नहीं दुखाएगी। जानकर नहीं दुखाएगी। फिर भी दुख जाए तो उसका दोष नहीं। काश जीवन किसी प्रकार उससे नफ़रत करने लगता! काश जीवन के साथ वह कश्मीर न आती! .... काश यहाँ — उसके पास — इस समय उसका कैलाश होता! .... वह जाएगी .... जल्दी ही लौट जाएगी — कैलाश के पास, जो उसके रोम-रोम में समाया हुआ है, जिसे वह अपना रोम-रोम अर्पित कर चुकी है....

बिस्तर गर्म हो उठा और बिस्तर की गर्मी में तारा की सुखद विचारधारा हौले-हौले लोप होने लगी। उसका क्लान्त शरीर शिथिल होकर बिलकुल स्थिर हो गया। आँखें भारी हो आईं। उसे नींद आ गई।

वह इस प्रकार चुप और शांत पड़ी सो रही थी जैसे कोई वीर योद्धा, महीनों के, वर्षों के घमासान युद्ध के पश्चात् गढ़ जीतकर सोता है!

उस रात तारा ऐसी ही थकान और तृप्ति की नींद सोई।

सुबह जब तारा की आँख खुली तो कमरे में अँधेरा था, परंतु वह जान गई कि वह कश्मीर में है और दिन काफ़ी चढ़ आया है क्योंकि खिड़कियों के मोटे परदों पर सूर्य-किरणें थिरक रही थीं। उसने अँगड़ाई ली और फिर आँखे बंद कर लीं। रात वह ख़ूब सोई। इतनी अच्छी नींद उसे बहुत कम आई थी। आँखें खोलकर उसने करवट ली और बेड-टेबल पर रखी हुई अपनी नन्ही घड़ी के नन्हे डायल पर दृष्टि डाली तो पौने-नौ बज रहे थे। उसने पलंग से लटका हुआ स्विच दबाया फिर जाकर बाहर का दरवाज़ा खोल दिया। घंटी सुन बैरा अंदर आया। तारा ने उससे चाय लाने को कहा। बैरा चला गया। तारा फिर आकर पलंग पर लेट गई, तकिए में मुँह गड़ाकर औंधी लेट गई। सहसा वह उदास हो गई। कारण उसकी समझ में न आया, पर उसे लगा कहीं कुछ गड़बड़ है। वह उद्विग्न हो उठी। अनर्थ की चिंता ने उसे पीस डाला। कैलाश की याद में वह तड़प उठी। उसे विश्वास था इस समय कैलाश भी उसे याद कर रहा होगा। कैलाश की यादें उस तक — बम्बई से कश्मीर तक का लम्बा अंतर वातावरण मे पार करती हुईं — उसी क्षण पहुँचकर उसके हृदय में प्रवेश कर रही थीं। तारा भी कैलाश के प्रति सोचने लगी। वह जानती थी उसके विचार भी उसी क्षण कैलाश तक पहुँच रहे होंगे। सच्चे प्रेम में जब लगन पराकाष्ठा पर पहुँचती है तो ऐसा ही होता है — यह आज वह साक्षात् अनुभव कर रही थी।

बैरा चाय लिए अंदर आया और ट्रे मेज़ पर रख, दरवाज़ा बंद करके, चला गया।

तारा को रात याद हो आई, रात की घटना की याद आई। रात को कोई बुरा सपना देखने के बाद सुबह को उसके स्मरण से जी की जो दशा होती है, वही दशा इस समय तारा के जी की थी! .... कैसा पाजी है! एकदम अंदर घुस आया!

क्या-क्या कहने लगा! क्या-क्या करने लगा! .... उफ! .... कितनी विचित्र थी जीवन के शरीर की गंध! कैलाश की शरीर की गंध से कितनी पृथक् थी! कैलाश का शरीर भी तो जीवन के शरीर से पृथक् था। कैसा था कैलाश का शरीर? अच्छा था। तारा को लगा कि वह कैलाश के शरीर से ही नहीं बल्कि उसके रोम-रोम से परिचित है। तारा उसकी गंध से, उसकी भावनाओं से, उसके मस्तिष्क से, उसकी आत्मा से, उसके व्यक्तित्व से परिचित है; उस शक्ति से, अनुभूति से परिचित है, जिसका नाम कैलाश सिन्हा है।

यह तो अच्छा हुआ जो ऐन मोक़े पर टेलीफ़ोन आ गया। वरना क्या होता? वह जीवन की हो चुकी होती। जीवन से ब्याह करके जीवन के साथ दिल्ली चली जाती। जीवन का घर बसाती। नित वह उसके साथ सोता और उसे बच्चे देता .... जीवन के बच्चे! .... जीवन के शरीर की गंध! .... वह तो मर ही जाती। शरीर वह भले ही जीवन को सौंप देती परंतु मन से वह सदा कैलाश की ही रहती। यानी कैलाश से आंतरिक प्रेम करने पर भी तारा, गृहस्थी और संतान के लालच में, अपना शरीर जीवन को अर्पण कर देती! यानी जीवन की धर्मपत्नी अपने मनमंदिर में कैलाश की प्रतिमा बसाए रखती! फिर तारा और वेश्या में क्या अंतर रहता? देवी कहाने-वाली तारा में यह वैश्यावृत्ति कब और कैसे आई? क्या हर नारी में यदि देवीत्व होता है तो वेश्यावृत्ति भी होती ही है? कौन जाने! पर कदाचित् उसमें तो है, थी। वह खीज उठी, अपने आप पर खीज उठी। जीवन का कोई दोष नहीं। वह तो उल्लू का पट्ठा है। सारा दोष तारा का था, तारा अकेली का। उसने क्यों जीवन का हौसला बढ़ाया? क्यों वह उसके साथ कश्मीर चली आई? क्यों उसे रात कमरे में आने दिया? उसकी इतनी हिम्मत हो गई कि उसके शरीर को छूने लगा .... तारा लाज और ग्लानि के मारे मर गई।

तारा उठ बैठी। उठकर उसने ट्रे से केतली उठाई और प्याली में चाय बनाई। चाय रखे-रखे कड़ुई हो गई थी। उसने चाय छोड़ दी और प्याली जो रखने लगी ट्रे में तो उसकी दृष्टि, ट्रे के बाहर, मेज़ पर पड़ी हुई चिट्ठी पर पड़ी। ट्रे के साथ ही बैरा चिट्ठी भी रख गया था। लिखावट परिचित थी पर किसकी थी? जल्दी-जल्दी उसने लिफ़ाफ़ा फाड़ा और चिट्ठी बाहर आई। *जनता चित्र* के लेटर-हेड पर लिखी हुई थी। बम्बई से आई थी। आज सुबह की डाक से। नीचे अब्दुल रहमान के हस्ताक्षर थे। वह आतुर हो पढ़ने लगी।

तारा देवी, नमस्ते।

आपका भेजा हुआ ख़त मुझे मिला। उसी से पता चला कि आप कश्मीर में हैं। आप तो एकदम बिना मिले ही चली गईं। इस नाराज़गी का सबब मेरी समझ में नहीं आया।

ख़त से यह भी मालूम हुआ कि आप और मलहोत्रा साहब की शादी जल्दी ही होने जा रही है। इस ख़बर से ख़ुशी भी हुई और रंज भी। ख़ुशी इसलिए कि आपकी शादी हो रही है। और रंज इसलिए कि आपने मेरे जिगरी दोस्त, कैलाश, का दिल तोड़ दिया, जो आपसे बेहद मुहब्बत करता है। जबसे आप गईं, बेचारा आपकी जुदाई में तड़प रहा है। किसी तरह अपने को काम में लगाए रखने की कोशिश करता है, पर हालत देखते ही बनती है।

ख़ैर, ख़ुदा से हम सब यही दुआ माँगते हैं कि वह आपको हमेशा ख़ुश रखे।

आपने *ज्वालामुखी* के रिलीज़ की तारीख़ पूछी थी। १५ मई को *लिबर्टी* थिएटर मे रिलीज़ तय हुआ है।

आपका दोस्त,
अब्दुल रहमान

चिट्ठी पढ़ते-पढ़ते तारा की आँखें डबडबा आईं थीं। वह बार-बार चिट्ठी को चूमने लगी। जो बात उसके अंतःकरण में उठी थी, श्यामू ने टेलीफ़ोन पर अँगूठी की बात करके उस बात का मानो समर्थन कर दिया था। और अब रहमान की चिट्ठी ने तो उसकी अंतःप्रेरणा को और भी उज्ज्वल व प्रज्वलित कर दिया। कैलाश उससे प्रेम करता है — उसी तरह जैसे वह उससे करती है.... यानी दोनों सदा से एक दूसरे से प्रेम करते चले आए हैं! फिर कैलाश ने मन की भावना क्यों छिपा रखी? कोई कारण अवश्य होगा। कैलाश पर कोई दबाव रहा होगा। उसके अंतःकरण में कोई द्वन्द्व रहा होगा। तभी तो मन की भावनाएँ उसकी आँखों में न झलक पाईं। पर कौन जाने अगर झलकीं भी हों; तारा ही कैलाश की आँखों में उन भावनाओं को न देख पाई हो; वह दोनों एक दूसरे के सदा इतने अधिक निकट रहने के कारण-ही कदाचित् उनकी अंतरात्माओं का परस्पर प्रणयबद्ध होना उनकी दैहिक दृष्टि से वंचित रह गया हो.... हाय! कितना दुख उठाना पड़ा, दोनों को! अकारण ही उठाना पड़ा! ....प्रेम सदा ही उपस्थित था, दोनों हृदयों में उपस्थित था, परंतु दिखाई नहीं दिया! उनका प्रेम परदे के पीछे जाग्रत हुआ, परदे के पीछे ही पनपा, और परदे के पीछे ही फलीभूत भी हुआ! ....

तारा ने गालों पर बहते हुए प्रेमाश्रु पोंछे और बिस्तर से उठ खड़ी हुई। चिट्ठी को पर्स में डालकर उसने खिड़कियों के परदे हटाए। ढेर-सा सुनहरा प्रकाश कमरे में प्रविष्ट हो गया और तारा के प्रफुल्लित होते हुए मन ने कहा: 'आज का दिन अच्छा है!'

खिड़की के बाहर दृश्य सुंदर था। कश्मीर का बसंती यौवन उघड़ा पड़ा था। झील पर शिकारे थे, पेड़-पौधों में फूल थे, और फूलों में पराग था जो महक रहा था। प्रकृति बावली हो रही थी। तारा भी बावली हो उठी, थिरक उठी, गुनगुना उठी।

अपने बावलेपन में ही उसने नहाया-धोया, कपड़े पहने, और सँवरकर तैयार हुई। शीशे के सामने खड़े होकर उसने अपना निरीक्षण किया। वह मदमाती, अभिमानिनी, असीम सुंदरी थी। काश उसके पंख होते और वह उड़कर उस स्वर्गलोक में पहुँच जाती जिसका नाम बम्बई था, जहाँ उसका कैलाश रहता था। कश्मीर तुच्छ प्रतीत होने लगा। श्रीनगर से उसे घृणा ही गई। गंदा शहर है। यहाँ की झीलें गंदी हैं, नहरें गंदी हैं, लोग गंदे हैं, महीनों नहीं नहाते। सर्वत्र सड़ांध फैली रहती है। श्रीनगर उसे खाने को आने लगा। यह वह नरक है जहाँ वह आत्मा को बेचने चली थी!.... और यह नरकस्थान वह कभी न भूल पाएगी। उसे बम्बई याद आने लगा, बड़े ज़ोरों से याद आने लगा, बम्बई की बातें याद आने लगीं, बम्बईवाला याद आने लगा। वह प्रेमाकुल हो उठी। उसका दम घुटने लगा। वह बाहर का दरवाज़ा खोलकर लॉबी में निकल आई। लॉबी की चहलपहल में बावलापन दूर होने लगा, और जब आध इंच मोटे क़ालीन पर उसका पाँव पड़ा तो वह इकबारगी शांत होकर मुस्कुराने लगी।

काउन्टर पर जाकर वह बुकिंग क्लर्क से मिली और उससे बिल बनाने को कहा। फिर वह मैनेजर के कमरे में गई। उसे देख मैनेजर कुरसी से उठा खड़ा हुआ।

"आइए, मिस चौधरी। कहिए, क्या हुक्म है?" मैनेजर ने कहा।

"मैं आज जा रही हूँ।"

"जी बहुत अच्छा।"

"एअरोप्लेन पर एक सीट बुक करा दीजिएगा?"

"कहाँ के लिए?"

"बम्बई।"

"प्लेन दिल्ली जाता है, मिस चौधरी। दिल्ली से आपको फ़ौरन ही कनेक्टिंग प्लेन बम्बई के लिए मिल जाएगा।"

"जी हाँ, मुझे मालूम है।"

"मैं आपका बिल बनवाता हूँ।"

"मैंने बाहर बुकिंग क्लर्क से कह दिया है।"

"और कोई सेवा?"

"जी धन्यवाद।"

"मुझे उम्मीद है आपको होटल में कोई तकलीफ़ नहीं हुई होगी।"

"जी नहीं। मै आराम से रही। धन्यवाद।"

"आप फ़िक्र न करें। समझिए सीट बुक हो गई। प्लेन पर अगर एक भी सीट ख़ाली होगी तो वह आपको मिलेगी।"

तारा नमस्ते करके बाहर निकल आई। उसने देखा सामने से जीवन आ रहा था। बाहर से आ रहा था और उसकी बग़ल में बड़ा भारी पार्सल था।

पास आकर जीवन ने पूछा : "ब्रेकफ़ास्ट ले लिया ?"

"नहीं, वहीं जा रही हूँ। और तुमने ?"

"मैंने भी नहीं। चलो खाएँ।"

डाइनिंग-रूम लोगों से भरा पड़ा था। तारा सोच रही थी क्या सब के सब उसकी तरह रात देर तक जागते रहे हैं? पहाड़ पर जल्दी सोने की शायद मनाही है। कितने सारे विदेशी लोग हैं यहाँ! सब कैमरा लटकाए हुए आए हैं। कश्मीर की छब कैमरे में बंद करके ले जाएँगे। कैसी छब ? शायद वह अंधी है, तभी तो कश्मीर का सौंदर्य उसे दिखाई नहीं देता। लोगों ने 'संसार की प्रेयसी' कहा है कश्मीर को। कहा होगा। रातवाली फ़्रांसीसी युवती अपने 'प्रेमी' के साथ खाने में व्यस्त थी। रह-रह कर वह दोनों एक दूसरे की ओर देखते और मुस्कुराते जाते थे। तारा ने सोचा कश्मीर इन दोनों को स्वर्गसमान ही लग रहा होगा। कैसा होता है स्वर्ग ? उसका मन उछलने लगा। कैलाश की उसे याद आने लगी। जीवन ने बग़ल का पार्सल बाज़ूवाली कुरसी पर रखा और वह दोनों अपने टेबल पर बैठ गए।

"क्या है पैकेट में ?" तारा ने पूछा।

जीवन मुस्कुराया। "अपनी शादी के निमंत्रण पत्र", उसने कहा। "छपने दिए थे, सो अभी लेकर आ रहा हूँ।"

तारा ने सोचा जिस घड़ी का उसे इन्तज़ार था वह आ गई। जीवन से वह कह देगी कि वह शादी नहीं कर सकती, वह बम्बई जा रही है, आज ही। पर इसी समय बैरे ने प्लेटों में पॉरिज लाकर डाला और सामने किसी अजनबी विदेशी युवती के साथ बैठे खाता हुआ वहीं सिख उसे घूरने लगा। वह खा कम रहा था, पी अधिक। ब्रैंडी पी रहा था। पीनेवाले लोग कुछ और भी थे। अधिकतर बीअर ले रहे थे। गिमलेट-वाले भी कुछेक थे। विचित्र है कश्मीर। यहाँ तो सुबह से ही प्याले खनखते हैं और दौर शुरू हो जाता है। तारा चुप-चुप पॉरिज खाने लगी।

लोग खा रहे थे। काँटे-छुरी की ध्वनियों में लोगों के हँसने-बोलने की ध्वनियाँ मिलकर रेडिओ के संगीत को दबा रहीं थीं। परंतु ऐसे स्थानों पर संगीत सुनने के लिए थोड़े ही होता है, वह तो केवल उपस्थित जनों के दिलों में उल्लास भरने के लिए होता है। संगीत की पृष्ठभूमि पर तबीअत सदा ही निखर उठती है। एकांत में बैठकर सुनने का संगीत और होता है, खाने-पीने के साथ जिस संगीत की चाशनी मिलाई जाती है वह कुछ और। सहसा संगीत समाप्त हुआ और ख़बरें शुरू हुईं। खबरों से तारा को सदा ही चिढ़ थी। अपने घर वह सदा ही ख़बरें शुरू होने पर रेडिओ बंद कर दिया करती थी। पर यहाँ, होटल के डाइनिंग-रूम में, उसका बस नहीं चल सकता था। वह चुप बैठी खाती रही।

टेबल के नीचे जीवन के पाँव ने तारा के पाँव को छुड़ा। तारा ने ऊपर देखा तो जीवन मुस्कुरा रहा था।

"कश्मीर में कश्मीरियों ने एक से एक खूबसूरत चीज़ें देखी होंगी," वह बोला, "मगर जीवन मलहोत्रा की खूबसूरत दुलहन का मुखड़ा देखकर उनकी आँखे चकाचौंध हो जाएँगी। इतवार को शादी के बाद ही पार्टी रखी है मैंने। होटल के लॉन पर ही पार्टी होगी। बैंड बाजा नहीं रखा है। ऑर्केस्ट्रा का इंतज़ाम किया है। ठीक किया न?"

तारा अड़ी अब और न टाल सकी। "नहीं," उसने कहा। "ठीक नहीं किया।"

जीवन विस्मित हो बोला: "क्या ठीक नहीं किया?"

"यही — यही सबकुछ।"

"तुम्हें ऑर्केस्ट्रा पसंद नहीं?"

तारा ने नीचे देखते हुए ही कहा: "मुझे शादी पसंद नहीं।"

जीवन अवाक् हो तारा को घूरने लगा। फिर याचनायुक्त स्वर में बोला: "रात की बात तो नहीं लग गई तुम्हें? .... मुझे माफ़ कर दो, तारा। रात मैं पागल हो गया था। तुम्हें देखता हूँ तो न जाने मुझे क्या हो जाता है। रात तुम कमाल की लग रही थीं! ...."

जीवन क्या कहे जा रहा है तारा बराबर न सुन पाई। उसका ध्यान रेडिओ पर आती हुई ख़बर ने बरबस आकृष्ट किया हुआ था। कहीं आग लगी हुई थी।

रेडिओ बोल रहा था: "कल रात सात-बजकर-बीस-मिनट पर बम्बई में बॉम्बे स्टूडिओज़ को अचानक आग लग गई। लाखों की फ़िल्में जलकर राख हो गईं। सुप्रसिद्ध फ़िल्म निर्माता-निर्देशक कैलाश सिन्हा ने आग में कूदकर, अपनी जान की परवाह न करते हुए, एक पाँच बरस के बच्चे की जान बचाई। फ़ायर ब्रिगेड के सैनिक तीन घंटे के लगातार प्रयत्न के बाद आग पर क़ाबू पा सके; परतु तब तक स्टूडिओ और कई फ़िल्में जलकर राख हो चुकी थीं। जली हुई फ़िल्मों के नाम इस प्रकार हैं: *बड़ी बात*, *तारामती*, *ज्वालामुखी*, *ताश का घर*, और *टूटे सपने*। दूसरा समाचार...."

ख़बर सुनकर तारा को मानो साँप सूँघ गया हो, उसकी ऐसी दशा हो गई। *ज्वालामुखी* जल गया! इसकी वह नायिका थी। कैलाश की यह महान कलाकृति थी! ....

"च्-च्-च्! बेचारा कैलाश सिन्हा!" जीवन ने कहा। "सारी फ़िल्म जल गई!"

तारा से यह न छिप सका कि जीवन के उद्गार में जो सहानुभूति थी वह झूठी थी। उन उद्गारों में उसे व्यंग्य दिखाई दिया और उसके दिल के शीशे पर बाल आ गया। उसने जीवन की ओर देखा। जीवन सहम गया। तारा की आँखें आग उगल रहीं थीं।

"अच्छा हुआ, बहुत बढ़िया ख़बर है!" किसी ने कहा।

तारा ने आहत होकर तुरंत ही उस ओर देखा जिधर से आवाज़ आई थी।

डाइनिंग-रूम के बीच, सिख के पासवाले टेबल पर तीन अधेड़ पुरुष बैठे बीअर और गिमलेट पी रहे थे, हँस रहे थे, झूम रहे थे। उन्हीं में से एक गंजा था। वही बोल रहा था। उसने फिर कहा :

"काश इन फ़िल्म स्टूडिओज़ को रोज़ आग लगा करे और हर रोज़ एक स्टूडिओ ग़ारत हुआ करे!"

पड़ोस के कुछ लोग हँस पड़े।

उसके साथी ने गंजे के कंधे को दबाकर कहा : "श ऽऽऽ — धीरे बोलो.... सामने तारा चौधरी बैठी हुई है। फ़िल्म स्टार है वह।"

पर गंजे को चुप कराना किसी के बस का रोग न था। उसे इस समय जिन का ज़ोर था। "इन फ़िल्मों ने तो तबाही मचा रखी है," वह फिर बोला। नशे में उसकी ज़बान लड़खड़ा रही थी। "जहाँ देखो फ़िल्म की ही चर्चा, फ़िल्मी गानों का ज़िक्र, फ़िल्मी फ़ैशन का ज़िक्र, फ़िल्मी ऐक्टर्स, एक्ट्रेसेज़ का ज़िक्र — अच्छा है जितनी जल्दी यह फ़िल्मवाले तबाह हो जाएँ, अच्छा —"

तारा ने नारंगी का ग्लास फ़र्श पर ज़ोरों से दे मारा और गुस्से से तमतमाती उठ खड़ी हुई। गंजे की ओर ताककर वह चिल्ला पड़ी : "यह क्या बकवास लगा रखी है?"

गंजे ने तारा की ओर देखा। उपस्थित जनों की दृष्टियाँ गंजे और तारा के बीच विभाजित हो गईं। विदेशी यात्री भी आशंका से सतर्क होकर ताकने लगे।

"अँ? —" गंजे ने तारा को गिमलेट के प्याले के ऊपर से देखते हुए कहा। "मैं — मैं बकवास नहीं कर रहा — सच कह रहा हूँ।"

जीवन ने तारा का हाथ पकड़कर उसे खींचना चाहा। "तारा, बैठ जाओ। वह पीआ हुआ है।"

तारा ने घायल शेरनी की तरह जीवन को घूरा। "छोड़ो मेरा हाथ!" उसने हाथ छुड़ा लिया और फिर गंजे को ताककर परंतु सबको सुनाते हुए कहा : "फ़िल्मवालों को भलाबुरा कहने का आजकल फ़ैशन हो गया है। क्या बिगाड़ा है फ़िल्मवालों ने समाज का? .... फ़िल्म स्टार बनने से पहले मैं एक *सोसायटी गर्ल* थी, आपके समाज की ठोकरें खाती फिरती थी। समाज के ठेकेदारों ने मेरे साथ जो बर्ताव किया, अगर आप सुनें, तो शर्म से आपके सर झुक जाएँगे!"

गंजा हँसा। उसके साथी सकपकाने लगे। और बाज़ू में युवती के साथ बैठे हुए सिख ने अपना बीअर का ग्लास ज़ोरों से हाथ में जकड़कर गंजे को लाल-लाल आँखों से ताका। एक शराबी ने नशे में चूर होकर तारा जैसी सुंदरी का दिल दुखाया था।

तारा कहे जा रही थी : "सिनेमा ने क्या बिगाड़ा है आपका? पसीना बहाकर हम लोग रोटी कमाते हैं। अपने तमाम दुख-दर्द को मन में दबाकर हमें खुश-खुश

ऐक्टिंग करनी होती है। घर में माँ मर रही होती है और हमें स्टूडिओ में कैमरे के सामने काम करना होता है, हँसना होता है, गाना होता है। और यह सब किस लिए? ....आप लोगों के मनोरंजन के लिए, आप लोगों को ख़ुश करने के लिए।"

जीवन ने देखा तारा की दशा घायल शेरनी की तरह हो रही है। उसके नथने काँप रहे हैं और चेहरा लाल हो उठा है। उसे इसका भान नहीं, या परवाह नहीं कि ड्राइंगरूम में सुशिक्षितों, धनियों और सभ्य जनों का भी समाज उपस्थित है। वह तो रोष में कहे जा रही थी, और उसने फिर कहा :

"आप लोगो को मालूम भी है कि देश को जगाने में, समाज के बुरे रीत-रिवाजों को दूर करने में, और हिन्दी को अपने देश की राष्ट्रभाषा बनाने में फ़िल्मों ने कितना बड़ा हिस्सा लिया है? अगर आज सिनेमा बंद कर दिया जाय तो आप जानते हैं क्या होगा? लोगों के मनोरंजन का जो एकमात्र साधन है बंद हो जाएगा। शाम को हमारे युवक गंदी गलियों में तबीअत बहलाने का समान ढूँढ़ने लगेंगे। समाज के ठेकेदार खुद कोठों पर, जूआख़ानों और शराबख़ानों पर जा पहुँचेंगे। शहर के गुंडे चोरी, डाका करने लगेंगे, नक़ब लगाने लगेंगे। सिनेमा के कारण पचीस-तीस लाख आदमी-औरतें हर रोज़ शाम को चुपचाप बैठे फ़िल्म देखते है। पाँच आने में वह लोग अपनी तबीअत दो, तीन घंटे बहला तो लेते हैं। अगर सिनेमा बंद कर दिया जाय तो सिनेमा में काम करनेवाले लगभग एक लाख आदमी बेकार हो जाएँगे। लगभग बारह करोड़ रुपया वार्षिक हम लोग अपनी सरकार को सिर्फ़ टैक्स में देते हैं। इन्कम टैक्स अलग।"

जीवन को तारा का वक्तव्य देखकर आश्चर्य हुआ। वह बोल रही थी और उपस्थित जन मंत्रमुग्ध की नाईं सुन रहे थे। इस तरह बोलना कहाँ सीखा तारा ने? यह भी अवश्य ही कैलाश के सम्पर्क में सीखा है उसने। उसके भाषण में उसे बहुत से वाक्य कैलाश के दिखाई दे गए। बम्बई में इसी विषय पर एक बार उसकी बहस कैलाश से हुई थी। कैलाश ने उससे इसी प्रकार की और इसी आशय की दलीलें की थीं। तारा आज इस अवसर पर कैलाश की बातों को दुहरा रही थी। यानी ज़बान तारा की थी और कथन कैलाश का। कितनी गहरी छाप पड़ी है कैलाश की तारा पर!

"याद रखिए," तारा ने फिर कहा, "अगर हमारे स्कूल, कॉलेज देश की सेवा कर रहे हैं, अगर हमारे दफ़्तर, हमारी कचहरियाँ, हमारी पुलिस, और हमारे अस्पताल देश की सेवा कर रहे हैं, तो हमारा सिनेमा भी देश की सेवा कर रहा है। देश का मनोरंजन करना देश की सेवा करना ही है। यह भी एक बहुत बड़ी ज़िम्मेदारी है, एक बहुत बड़ा काम है।" तारा ने अपनी पैनी दृष्टि उस गंजे पर जमाई जो अब भी नशे में झूमता हुआ पीए जा रहा था। फिर तारा ने उन सब की ओर देखा जो पी रहे थे, और फिर उसकी आँख उस सिख पर गड़के रह गई। "....मगर इस बात को वह लोग क्या समझेंगे जो सुबह से ही शराब के प्याले खनखनाते हों, जो अपनी

धर्मपत्नियों को घर की चारदीवारी में बंद करके हर रोज़ बाज़ारू औरतों को बग़ल में लिए सड़कों पर और होटलों में आवारागर्दी करते हों!"

सिख को अभी होश था। शर्माकर उसने सर डाल दिया, फिर गुस्से से उसने तुरंत ही गंजे को घूरा जिसके व्यर्थ उद्गार ने एक सुंदरी को आहत किया था, एक शेरनी को जगाया था।

"बिना सोचे समझे ज़बान न चलाया कीजिए, समझे?" तारा ने मेज़ पर से अपना पर्स उठाते हुए सबको फटकारा। "आपकी तो ज़बान चलती है, हमारा कलेजा कटता है!"

सहसा जीवन ने देखा, लोगों ने देखा, तारा, गुस्से में तमतमाती हुई, डाइनिंग-रूम के बीच से होती बाहर की ओर चली जा रही थी। जीवन उठा और उसके पीछे लपका जाने लगा। सारे लोग चुप थे। उन्हें साँप सूँघ गया था। तारा जब डाइनिंग-रूम के बाहर ओझल हो गई तो लोगों में खलबली पैदा हुई और फुसफुसाहट होने लगी। एक सिनेमा अभिनेत्री ने आज सभ्य और प्रतिष्ठित समाज के मुँह पर तमाचा मारा था और मारकर वह साफ़ निकल गई। उपस्थित जनों की मान हानि हुई थी। वह तिलमिला उठे और मन ही मन तिलमिलाकर रह गए। किसी भी प्रकार के प्रतिकार के लिए वह सर्वथा असमर्थ थे। फलस्वरूप गंजा घिर गया। सिख भी बीअर का ग्लास छोड़कर उठा और लोगों के साथ गंजे को भला-बुरा कहने लगा। सारा दोष गंजे का था। इसी कम्बख़्त के कारण पीनेवालों को फटकार सुननी पड़ी। फटकार उनको भी चुभी थी जिन किन्हीं के दिल में चोर था। और ऐसों की संख्या कम न थी।

तारा लॉबी से होती हुई अपने कमरे के दरवाज़े पर आई। जीवन भी पीछे-पीछे लपका आ रहा था। दरवाज़ा खोलकर ज्योंही वह अंदर जाने को हुई कि जीवन ने उसकी बाँह पकड़ ली।

"यह तुमने अच्छा नहीं किया, तारा! जानती हो वहाँ कैसे बड़े-बड़े लोग बैठे थे? मिलिटरी ऑफ़िसर्स थे, बिज़नेस मेन थे, हाई कोर्ट जज थे, राजा-महाराजा थे—और तुमने उन सबको उलटी-सीधी सुना दी!"

तारा ने झटका देकर अपनी बाँह छुड़ाते हुए कहा: "उलटी-सीधी नहीं, खरी-खरी सुनाई है। और तुम—तुम—जो मुझसे शादी करना चाहते हो, जो कल मेरे पति कहलाओगे, अपनी पत्नी के विरुद्ध लोगों की टीका-टिप्पणी सुनते रहे? जब वह पियक्कड़ नशे में चूर होकर मेरी उपस्थिति में और मेरे ही सामने सिनेमावालों को भला-बुरा कहने लगा तो तुम चुप बैठे सुनते रहे! इतना न हुआ तुमसे कि उठकर उसकी ज़बान खींच लो?"

जीवन ने यह न सोचा था कि तारा उस पर भी दोषारोपण करेगी। परंतु वह गुस्से में थी और इस समय उससे वादविवाद करना व्यर्थ में झगड़ा मोल लेना था। "मैंने जाहिल के साथ बहस करना मुनासिब न समझा," उसने कहा। "फिर वह पीया हुआ था। उसके मुँह लगना ख़ामख़ा तमाशा दिखाना था।"

तारा ने जीवन को तीव्र दृष्टि से ताककर व्यंग्यात्मक कहा : "सिनेमा के विरुद्ध फबतियाँ सुनकर तुम्हारे तो मन की हुई होगी? तुम भी तो यही चाहते हो न कि सिनेमा को आग लग जाए?"

"तुम दरवाज़े पर खड़े होकर मुझसे क्यों झगड़ रही हो, तारा? लोग क्या समझेंगें? चलो, अंदर चलो।"

तारा को ठेलकर जीवन भी अंदर चला गया और दरवाज़ा बंद करके अंदर एक कुरसी पर बैठकर सिगरेट सुलगाने लगा। तारा ने दरवाज़ा खोलकर पट खुला रहने दिया और सोफ़े पर आकर वह भी बैठ गई। पर्स खोलकर उसने अपना *वैनिटी केस* निकाला और होंठों की लिपस्टिक ठीक करने लगी।

जीवन को सहसा पिछली रात याद हो आई। इसी कमरे में, इसी सोफ़े पर, जहाँ वह अब बैठी अपना मेकअप सँवार रही है, रात कैसा सुखद प्रेमप्रकरण चल रहा था! और रातवाली वही हिरनी अब, दिन के प्रकाश में, शेरनी की तरह गुर्रा रही है!

तारा, मेकअप सँवारकर, सोफ़े की पीठ से टिककर बैठ गई, फिर वैनिटी केस पर्स में रख उसने आँखें बंद कर लीं। आँखें बंद करते ही उसका गुस्सा शांत होने लग और मन में कैलाश की याद उसे व्याकुल करने लगी। *ज्वालामुखी* जल गया! कितनी लगन से बनाया था कैलाश ने यह चित्र! इस चित्रपर उसका भविष्य निर्भर था। उसे बड़ी आशा थी। उसकी आशाओं पर अब पानी फिर गया। पहले उसने तारा को खोया, फिर चित्र को भी खो बैठा। बेचारा! कितना दुखी होगा वह इस समय! तारा ने भी *ज्वालामुखी* में बड़ी लगन से काम किया था। सारी लगन, सारा परिश्रम अकारथ गया। उसका दिल भी रो उठा। कैलाश की, स्टूडिओ की, ग्रीस पेंट की उसे याद आने लगी। उसने महसूस किया कि सिनेमा और अभिनय उसके रोम-रोम में समाए हुए थे। वह सिनेमा को, अभिनय को, उस वातावरण को, बम्बई को, और कैलाश को छोड़कर नहीं रह सकती, उनसे दूर वह सुखी नहीं रह सकती, जीवित नहीं रह सकती। बम्बई में, कैलाश के सम्पर्क में, तारा के विशेष संस्कार हुए हैं। कला और कलात्मक वातावरण में वह पनपकर फूली-फली है। उस वातावरण से पृथक् होते ही वह उस प्रकार मुरझा जाएगी जैसे पौधे को मिट्टी से पृथक् करने पर पौधा मुरझा जाता है, या जैसे टहनी को तने से काटकर अलग करने से टहनी मुरझा जाता है। काश उसके पर होते! वह इसी दम उड़कर चली जाती और अपने कैलाश से लिपट जाती। बिना उसके कैलाश कितना अकेला पड़ गया होगा! उसे कितना अकेला-अकेला लग रहा होगा! जाकर वह कैलाश को प्रेरणा देगी, उसे हिम्मत बँधाएगी। वह फिर सजीव होकर उठ खड़ा होगा, फिर नया चित्र बनाएगा, बहुत-से चित्र बनाएगा, फिर अपनी प्रतिभा को स्थापित करेगा, हाँ, ज़रूर करेगा— उसका कैलाश, उसका सर्वस्व कैलाश....

सहसा तारा के माथे पर कोई चीज़ सटकर लगी, कोई चुभती-सी, गीली-सी

"अगर तुम जो कह रही हो सच है," उसने कहा, "तो रात तुम मुझे, यानी एक ग़ैर को आधी रात के समय, अपने कमरे में नहीं आने देतीं।"

तारा सोफ़े से उठ गई। "पहली बात तो यह है कि तुम ग़ैर नहीं हो, जीवन। तुम मेरे बचपन के मित्र हो। अतीत पर परदा कोई नहीं डाल सका है, जीवन; और न ही अतीत के चिन्हों को मिटा सका है कोई। मैं भी सहसा तुम्हें अतीत की स्मृतियों से भुला न सकी थी। तुमने मेरी मजबूरियों का, मेरी बेख़बरी का फ़ायदा उठाया और मुझे ज़िद करके तुम कश्मीर ले आए —"

"अगर तुम चाहतीं तो न आतीं। मैंने ज़िद ज़रूर की थी, पर तुम कोई बच्चा तो न थीं कि मैंने ज़िद की और तुम चली आईं!"

"मानती हूँ, और यह मैंने भूल की।"

जीवन उठा और तारा के पास आकर उसके दोनों कंधों को थामकर बोला: "तुम मुझे छोड़कर अब नहीं जा सकतीं, तारा। तुम मेरी हो। मैं तुम्हें अब बम्बई नहीं जाने दूँगा।"

"मैं जा रही हूँ।"

"मैं तुम्हें रोक लूँगा। इतवार को हमारी शादी होगी। तुम मेरी दुलहन बनोगी।"

"मैं जानती हूँ, जीवन, तुम मुझे माफ़ नहीं करोगे, मगर मैं जा रही हूँ। मैं यह भी जानती हूँ कि तुम मुझे जल्दी नहीं भूल पाओगे, पर फिर भी मुझे आशा है कि तुम मुझे भूलने की कोशिश करोगे। तुम्हारे लायक़ तुम्हें भी एक न एक दिन कोई मिल ही जाएगी जो तुम्हें सुखी कर सकेगी। मुझे रंज है मैं तुम्हें सुखी नहीं कर सकती। मैं लाचार हूँ, जीवन। मैं आज जा रही हूँ।"

जीवन की आँखें छलछला आईं। "अगर मैंने तुम्हारे साथ ज़बरदस्ती की — अगर मैंने तुम्हें ज़बरदस्ती रोक लिया तो?"

तारा का गला भी भर आया। अपने बालसखा की आँखों में ताकती हुई और उसके गालों को अपने दोनों हाथों से सस्नेह थपथपाती हुई वह बोली: "नहीं, तुम ऐसा नहीं करोगे।"

"और अगर मैंने ऐसा किया तो?"

"तो मैं मर जाऊँगी।"

स्टूडिओ को आग लगे चौबीस घंटे होने आए थे। कैलाश सिन्हा के बर्बाद हो जाने की ख़बर सारी इंडस्ट्री में फैल चुकी थी। हर अच्छी या बुरी ख़बर फ़िल्म इंडस्ट्री के लोगों में इसी तरह फैला करती है, ज़रा देर में फैला करती है, ऐसे फैला करती है जैसे फूस में आग फैलती है जब हवा अनुकूल हो। कैलाश सिन्हा की महत्त्वपूर्ण कलाकृति *ज्वालामुखी* जलकर भस्म हो चुकी थी और साथ ही साथ कैलाश का सर्वनाश हो चुका था। बिना किसी अपवाद के, सारे के सारे निर्माताओं और निर्देशकों ने संतोष की साँस ली। *ज्वालामुखी* से उन्हें भय था, क्योंकि वह एक महान् और सफल चित्र बनने जा रहा था। कैलाश सिन्हा से उन्हें ईर्ष्या थी, क्योंकि वह एक सफल और प्रतिभाशाली व्यक्ति था। कल को, *ज्वालामुखी* के उद्घाटन पर, सारा फ़िल्म समाज *लिबर्टी* पर टूट पड़ता और, हृदय की जलन हृदय में दबाए, तपाक और अपनत्व जताते हुए वह सारे कैलाश से हाथ मिलाते, उसे उसकी अद्भुत सफलता पर बधाइयाँ देते; परंतु आज, उसके सर्वनाश की ख़बर पाकर, इंडस्ट्री का काला कुत्ता भी शोक प्रकट करने उसके घर नहीं आया, न ही किसी ने टेलीफ़ोन तक किया।

कल से कैलाश *सागर तरंग* में अपने बिस्तर पर पड़ा हुआ है। उसकी हथेलियों पर और बाएँ हाथ की कोहनी के पास फफोले उठ आए हैं। अवस्था चिंताजनक कदापि नहीं, परंतु कल की दुर्घटना से सारा शरीर टूट रहा है और शरीर में दाह हो आया है। उसके मित्र जानते थे शरीर चार, पाँच, या सात दिन के अंदर स्वस्थ हो जाएगा, फफोले फूटकर भर जाएँगे। उन्हें कैलाश के शरीर की चिंता न थी, उन्हें चिंता थी उसकी आंतरिक व्यथा की।

कल शाम से ही रहमान और फ़्रांसिस बराबर कैलाश के पास बने थे। आधी रात के जब सलमा को पता चला था तो वह भी आ गई थी और तब से अभी तक यहीं बनी रही। कैलाश अक्सर कहा करता था कि वह बड़ा भाग्यशाली है क्योंकि उसे ऐसे मित्रों का लाभ हुआ है जो उस पर जान देते हैं। पर इस समय कैलाश को इसका भास न हो पाया, क्योंकि शारीरिक अस्वस्थता और मानसिक पीड़ा के बीच उसकी चेतन व विवेकशक्तियाँ लगभग जाती रहीं थीं। अपने बेडरूम में बिस्तर

पर वह चुप पड़ा हुआ छत को ताक रहा था। जब से तारा कश्मीर गई थी उसने शेव नहीं किया था, जिससे दाढ़ी और मूँछों के स्थान पर पाव इंच लम्बी काली खूँटियाँ निकल आई थीं और ऐसा लगता था मानो पलंग पर कैलाश की ज़िंदा लाश पड़ी हो।

रहमान और फ्रांसिस ने उसे बुलवाने की बहुतेरी कोशिश की परंतु वह न बोला। चुप पड़ा छत को तकता रहा। पागल होने के पूर्व मनुष्य की ठीक यही दशा होती है। क्या कैलाश पागल हो जाएगा? न खाता है, न पीता है, न सोता, न बोलता है! रहमान और फ्रांसिस चिंतित हो उठे। सलमा रो पड़ी। कैलाश के पलंग के पास घुटनों के बल बैठकर उसके हाथ पर उसने अपना सर रख दिया।

"कैलाश — कैलाश — मेरी तरफ़ देखो, कैलाश!" सलमा ने मिन्नत की।

कैलाश की आँखें छत पर से विचलित न हो सकीं परन्तु उसका हाथ हिला और सलमा के सर पर हौले-हौले फिरने लगा।

"कैलाश!" सलमा ने पुकारा। "कैलाश! .... बात करो, कैलाश। हमारी तरफ़ देखो। तुम्हें किस बात की फ़िक्र है, बताओ? .... पिक्चर के जल जाने का ग़म न करो, कैलाश। जान है तो जहान है। ऐसे सौ पिक्चर बनाओगे तुम .... तुम सोचते होगे नुक़सान कैसे पूरा करोगे, पैसा कहाँ से लाओगे, जिससे उम्मीद थी वह तो जल गया! .... नहीं, कैलाश, ऐसा नहीं सोचो! देखो — अपने दोस्तों की तरफ़ देखो। यह फ़्रांसिस है, यह रहमान, यह मैं हूँ — सलमा .... तुम्हारा नुक़सान पूरा हो जाएगा, कैलाश। तुम फिर पिक्चर बनाओगे, इससे भी अच्छा पिक्चर बनाओगे— चाहे इसके लिए हमें अपने आप को बाज़ार में बेचना ही क्यों न पड़े! कैलाश, तुम इतमीनान रखो — सब ठीक हो जाएगा।"

कैलाश, लाश की तरह, मौन पड़ा रहा। आँखें छत पर टकटकी लगाए थीं। क्या देख रहा था वह छत पर? वह छत पर नहीं, छत से परे देख रहा था, दूर कहीं! ....

रहमान अपने मित्र कैलाश को जानता था, समझता था। वह जानता था, कैलाश इस समय अपनी आर्थिक हानि के विषय में नहीं सोच रहा है। *ज्वालामुखी* के नष्ट हो जाने का असर उसके भविष्य पर अवश्य ही पड़ेगा, परंतु यह ऐसा संकट नहीं कि वह सर पीटने लगे, छत पर टकटकी बाँधे सतत तकता रहे। जिस कैलाश ने सदा ही संकटों का सामना किया है, जिस कैलाश ने जेब में फूटी कौड़ी के न होते हुए भी *मिट्टी* जैसे चित्र का निर्माण किया, जो कैलाश पत्थर में ठोकर लगाकर सुनहरे फ़ौवारे उड़ाना जानता है, वह कैलाश पागलों की नाईं टकटकी बाँधे छत को नहीं ताकेगा। रहमान के अंतःकरण ने उससे कहा कि कैलाश को फ़िल्म जलने का अफ़सोस ज़रूर हुआ है, और बहुत हुआ है; परंतु इस समय उसे जो बात विव्हल किए हुए है, जो उसे पागल बनाए हुए है, वह है तारा की याद। तारा उस पर हावी है। तारा की मुहब्बत उसका सुख-चैन छीने हुए है। तारा के लिए उसका दिल तड़प रहा है; और तारा के बिना अब वह मर जाएगा। तारा उसे सब से प्यारी है; दौलत, नाम,

सफलता और महत्त्वाकांक्षा से भी अधिक प्रिय उसकी तारा है। और तारा की उसे लौ लगी हुई है।

"कैलाश —" रहमान ने उसके माथे पर हाथ रखते हुए कहा, "इस तरह दिल न ख़राब करो, कैलाश! .... हिम्मत से काम लो। तारा चली गई तो जाने दो। एक लड़की के पीछे रोना तुम्हें नहीं ज़ेब देता। हौसला रखो, कैलाश। ऐसी दर्जनों तारा आएँगी।"

फ़्रांसिस भी कैलाश से यही कहना चाहता था पर उसने कहा नहीं, क्योंकि वह जानता था कुछ भी कहना इस समय उलटे घड़े पर पानी डालने के समान था। दीवार से टिका खड़ा हुआ वह कैलाश को एकटक देख रहा था और उसकी दशा पर आशंकित हो रहा था।

कैलाश पर रहमान की बातों का कुछ भी असर न हुआ, मानो कैलाश के कान बंद थे।

परंतु रहमान की बातों का असर सलमा पर हुआ। उसकी समझ में बात इकबारगी ही आ गई.... 'तो कैलाश की यह हालत तारा ने की हुई है!' उसने सोचा। 'तारा की जुदाई में यह तड़प रहा है, पागल हो रहा है। तारा को खोकर यह शायद मर ही जाएगा!' यह ख़याल सलमा को तीर की तरह चुभा। मुहब्बत की दास्तानें उसने बहुतेरी सुन रखी थीं। बहुतों ने उसके समक्ष, उसके लिए अपना प्रेमप्रदर्शन किया था, परंतु उसने सदा ही मुहब्बत को पानी का बुलबुला समझा था, धोखे के नाम से पुकारा था। किसी की मुहब्बत में किसी को पागल होते उसने आज ही देखा। और कल को किसी की मुहब्बत में किसी को मरते भी देख लेगी। तारा से उसे डाह होने लगा। कैलाश की मुहब्बत को उसने मन ही मन दाद दी और सलाम किया.... और फिर, अपने दिल पर पत्थर की एक चट्टान रखकर, वह उठ खड़ी हुई। उसने सहसा तय कर लिया कि वह कैलाश को पागल न होने देगी, मरने न देगी। और यह काम वह ख़ुद ही कर सकती थी, चाहे इसके लिए उसे पत्थर का कलेजा ही क्यों न करना पड़े! वह कैलाश को जीवित और सुखी देखने के लिए हर क़ीमत अदा करने को तैयार थी, हर आहुति के लिए तत्पर थी। इस विचार मात्र से वह सानंद व सगर्व पुलकित हो उठी। ज़िंदगी में पहली बार वह एक नेक काम करने चली थी, किसी के काम आने चली थी; वह एक ऐसी आहुति देने चली थी जो हर कोई देने की क्षमता नहीं रखता, जो एक दिलदार वेश्या या वेश्या की दिलदार बेटी ही दे सकती है।

"अभी तारा की शादी नहीं हुई होगी, कैलाश," उसने कहा। "मैं आज ही शाम के प्लेन से कश्मीर जाऊँगी। तुमसे मैं वादा करती हूँ, कैलाश — तुम्हारी तारा को मैं तुम्हारे पास लौटा लाऊँगी। कैलाश.... तुम सुन रहे हो, कैलाश, मैं क्या कह रही हूँ?...."

कैलाश की आँखें सहसा झपकने लगीं और उसकी टकटकी टूट पड़ी। धीरे-धीरे उसने आँखें घुमाईं और सलमा की ओर देखने लगा।

सलमा मुस्कुराई। "मैं तारा को लेने कश्मीर जा रही हूँ, कैलाश। मैं तुम्हारी तारा को तुमसे मिला दूँगी। सुना ?"

कैलाश की निस्तेज आँखों मे चमक पैदा होने लगी और फिर सलमा की आँखों में वह सीधा देखने लगा। उसके होंठ हिले और वह बहुत ही धीमे स्वर में बोल उठा : नहीं — वह — उसे लेने कोई नहीं जाएगा.... वह खुद ही गई है... खुद ही आएगी...... वह लौट आएगी.... तारा लौट आएगी।"

सलमा चुप हो गई। कैलाश ने आँखों में सीधा देखकर कहा था। सीधा देखकर जब वह कुछ कहता तो उसका कथन अटल होता। उससे बहस करना सलमा ने मुनासिब न समझा। रहमान की ओर उसने देखा तो रहमान ने उँगली द्वारा चुप रहने का संकेत किया। कैलाश की टकटकी छिन्न हो चुकी थी। वेदना की चरम सीमा को लाँघकर कैलाश सचेत व सजीव हो रहा था।

रहमान ने, फ़्रांसिस ने, सलमा ने संतोष की साँस ली। तीनों एक कोने में बैठे कैलाश को देख, उसकी सुधरती हुई हालत को देख संतुष्ट हो रहे थे। और कैलाश आँखें मीचे पलंग पर पड़ा था। कमरे में अँधेरा हो चला था। सात बजनेवाले थे। रहमान लाइट जलाने को उठा तो सलमा ने उसका हाथ पकड़ लिया। हलके-से उससे कहा कि लाइट न जलाए वरना प्रकाश से कैलाश की आँखें खुल जाएँगी। उसे चुप सोने दिया जाय। बड़ी देर बाद उसकी आँख लग रही है।

रहमान बैठ गया। सलमा ने ठीक ही कहा था। परसों रात से कैलाश सोया नहीं था। उसके लिए सोना बहुत ज़रूरी था। थोड़ी देर नींद आ जाएगी तो मन को शांति मिलेगी, शरीर को आराम मिलेगा। परंतु सलमा जानती थी, फ़्रांसिस व रहमान भी जानते थे कि कैलाश ने आँखें बंद की हैं पर वह सो नहीं रहा, और न उसे नींद ही आएगी। पहले जैसे वह टकटकी बाँधे छत से परे देख रहा था वैसे ही अब भी परे बहुत परे, बहुत दूर कहीं देख रहा है। फ़र्क़ इतना है कि पहले आँखें खुली थीं, और अब बंद हैं!

सहसा कैलाश ने आँखें खोल दीं। अबकी बार उसकी दृष्टि छत पर न जमी। घूमती हुई वह कमरे की खिड़की पर गई, फिर खिड़की से बाहर को वहाँ पर जहाँ नीलाकाश फैला हुआ था, जहाँ पर दिन-रात आलिंगनबद्ध हो रहे थे, जहाँ पर एक अकेला तारा चमक रहा था। शाम का पहला तारा इच्छापूर्ति के लिए प्रख्यात है। कैलाश उसे तकने लगा, सतत तकने लगा। बड़ी देर बाद उसके होंठ हिले।

"तारा आएगी," उसने कहा। "तारा लौट आएगी...."

सलमा, रहमान और फ़्रांसिस को कैलाश के उद्‌गार ने फिर आशंकित कर दिया और वह एक दूसरे के मुँह की ओर देखने लगे।

परंतु कैलाश पलंग पर शांत पड़ा हुआ आकाश में देख रहा था। उसे विश्वास था उसकी तारा लौट आएगी। उसका अंतःकरण और उसकी आत्मा तारा के आगमन की प्रतीक्षा में लीन हो रही थी।

कैलाश नहीं जानता था — या जानता था? — कि इसी समय, इसी अनंत नीलाकाश में कहीं, एक हवाई जहाज़ बम्बई की ओर उड़ा चला आ रहा था, जिसमें तारा बैठी हुई थी — कैलाश की तारा।

तारा बम्बई लौट रही थी।

कैलाश के पास।